॥ अस्य पुस्तकस्यानुक्रमणिका आरभ्यते ॥

॥ तत्र प्रथमं कर्पूरप्रकरग्रंथस्यानुक्रमणिका ॥

ग्रंथ कर्त्तायें प्रत्येक द्वारमां बे बे काव्य बांध्या छे. परंतु सातव्यसन द्वारें एवे काव्य वधु होवाथी प्रक्षेप जणाय छे. ते आहीं अर्थसहित लख्या छे.
॥ द्यूतं च मांसं च सुरा च वेश्या, पापर्द्धिचौर्यें परदारसेवा ॥ एतानि

सप्त व्यसनानि लोके, घोरातिघोरं नरकं व्रजन्ति ॥ पाठांतरं ॥ पापा धिके पुंसि सदा भवंति ॥ १०५ ॥ इति व्यसननामानि ॥ द्यूताद्राज्यवि नाशनं नलनृपः प्राप्तोऽथवा पांमवा, मद्यात् कुलनृपश्च राघवपिता पापर्द्धि तो दूषितः ॥ मांसाच्छ्रेणिकभूपतिश्च नरके चौर्याद्विनष्टा न के, वेश्यातः कृत पुण्यको गतधनोऽन्यस्त्रीरतो रावणः ॥ १०६ ॥ इतिव्यसनफलम् ॥ अर्थः– जुवटुं रमवुं, मांसभक्षण करवुं, मदिरापान, वेश्यासेवन, पापर्द्धि एटले हिंसा करवी, चोरी करवी, पारकी स्त्री सेववी ए सात दुर्व्यसन जे छे, ते लोकने विषे घोरातिघोर रूपी एवुं जे नरक तेने विषे लइ जायछे ॥ १०५ ॥ तेमां जूवटाथी नलराजा अने पांमवो पण राज्यभ्रष्ट थया, मदिराथी कुलराजा नी द्वारिकानो दाह थयो, हिंसाथी दशरथ राजाने श्रवणकावडीयाना मा वित्रोयें पुत्र वियोगनो शाप दीधो, ए दूषण पाम्यो, मांसथी श्रेणिकराजा अने बीजाउ नरकने विषे गया, चोरीथी घणा जीव नाश पाम्या, वेश्याथी कृतपुण्य राजा दुःखी थयो,अने पारकी स्त्रीने विषे प्रीति राखवाथी राज्यरूपी धन गमावनारा एवा रावणनो नाश थयो. माटे व्यसनोने सेववां नहीं.

बीजो ग्रंथ, श्रीभुवनभानु केवलीनो रास पृष्ठ १६ए थी प्रारंभ थयो छे. एमां श्रीभुवनभानुजीने व्यवहारराशिमां आव्या पछी पहेलवहेलुं जे वखत अनार्य मनुष्यमां उपजवुं थयुं छे,ते वखत रसगृद्धिमां लुब्ध थवाथी नरका दिकनां दुःख अनंतिवार पाम्यां छतां वचमां अनंतिवार कोइ वखत काणो, कोइ वखत क्लीब, कुरूपो आदिक विचित्र दुःखें करी अनंता पुजलपरावर्त्त अनार्य मनुष्यपणें कह्या छे तेमां देव,गुरु तथा धर्मनुं नाम पण जाण्युं नथी. एम मोहराजाना एकेका किंकरथी अनंतअनंतिवार मनुष्यादिक पणुं पा मीने अशातावेदी छे तेतो रही परंतु समकेत पाम्या पछी वमीने वलीपण मोहें मुंझायाथी जे दुःख पाम्या छे.ते सांभलतां भद्रकजीवोना रुंवाटां उभां थाय.

त्रीजो ग्रंथ, समकेतना षट्स्थानकना स्तवननी अनुक्रमणिका.

चोथो ग्रंथ दृष्टांत शतक छे तेनी अनुक्रमणिका पृष्ठ ३२१ थी मांडीने सो काव्य मांहेला प्रत्येक काव्यमां एकेकुं दृष्टांत छे ते अनुक्रमांके जाणवा.

अथ

॥ बालावबोधसहित कर्पूरप्रकर प्रारंभः ॥

॥ शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥

कर्पूरप्रकरः शमामृतरसे वक्रेंदुचंद्रातपः,शुक्लध्यानतरुप्रसूननिचयः पुण्याब्धिफेनोदयः॥मुक्तिश्रीकरपीडनेऽच्छसिचयोवाक्कामधेनोः पयो,व्याख्यालक्ष्यजिनेशपेशलरदज्योतिश्चयः पातु वः॥

अर्थः– (व्याख्यालक्ष्य के०) व्याख्याननी वेलानेविषे देखातो एवो (जिनेशपेशलरदज्योतिश्चयः के०) श्रीजिनप्रभुना मनोहर एवा जे दांत तेनी ज्योति जे कांति अर्थात् जिनदशनद्युति तेनो चय जे समूह ते (वः के०) तमोने (पातु के०) रक्षण करो. ते केवो छे जिनदशनद्युतिसमूह ? तो के (शमामृतरसे के०) शांतिरूप जे अमृतजल तेनेंविषे (कर्पूरप्रकरः के०) कर्पूरसमूहयुक्त एवो तथा वली (वक्रेंदुचंद्रातपः के०) मुखरूप जे चंद्रमा तेनी ज्योत्स्नारूप एवो, तथा वली (शुक्लध्यानतरुप्रसूननिचयः के०) शुक्लध्यानरूप जे वृक्ष तेना पुष्पनो छे समूह जेमां एवो अने (पुण्याब्धिफेनोदयः के०) पुण्य समुद्रना फीणनो छे उदय जेनेविषे एवो तथा (मुक्तिश्रीकरपीडनेऽच्छसिचयः के०) मुक्तिरूप जे श्री तेनीसाथें विवाहनेविषे स्वच्छ वस्त्ररूप एवो अने (वाक्कामधेनोः के०) वाणीरूप कामधेनुना (पयः के०) दुग्ध जेवो एवो जिनेशदंतज्योतिःसमूह छे, ते तमारी रक्षा करो. ए आशीर्वादकाव्य कह्युं. आ शार्दूलविक्रीडित काव्य छे तेम सर्व हवे पछीनां काव्य ते शार्दूलविक्रीडित वगेरे छंदोमां जाणवां ॥ १ ॥

हवे आ ग्रंथनेविषे कहेवानां द्वारनां नामो एक काव्यथी कहे छे.

भव्यालभ्ध्वार्यदेशं कथमपि नृभवं सत्कुलं साधुसंगं, बोधं देवादिशक्तीः कुरुत शमयतिश्रावकत्वव्रतानि ॥ सप्तक्षेत्री जिनार्चा नयविनय सुवैराग्य दानादिपुष्टिं, शब्दद्यूतक्रुधादेर्जयमपि सुकृताद्देषु सत्कर्म मुक्त्यै ॥ २ ॥

अर्थः– (भव्याः के०) हे भव्यजीवो (कथमपि के०) कोइएक पुण्यना उदयें करी (आर्यदेशं के०) आर्यदेशने तथा (सत्कुलं के०) सारा कुलनें तथा (नृभवं के०) मनुष्य जन्मने तथा (साधुसंगं के०) साधुपुरुषना संगने (लब्ध्वा के०) पामीने (मुक्त्यै के०) मुक्तिने माटे हवे कहेशुं एवां कार्य करो. ते कार्य केवां ? त्यां कहे बे. के (बोधं के०)सम्यक्त्वने (देवादि के०) देव, गुरु, धर्म, तेने विषे (शक्तीः के०) शक्तिने (कुरुत के०) करो. आहिं कुरुत ए क्रियापदनुं सर्वत्र योजन करवुं. तथा वली (शमयतिश्रावकत्वव्रतानि के०) शम, यति, श्रावकपणुं अने श्रावकना व्रतोनुं आराधन करो. तथा (सप्तक्षेत्री के०) सातक्षेत्र, सप्तक्षेत्री पदनुं ग्रहण बे माटे सात क्षेत्रनुं एक द्वार तथा एक श्रीसंघनुं अने सात क्षेत्रनां जुदां नाम लेइने सात द्वार. एवं नव द्वार ग्रहण करवां (जिनार्चानयविनयसुवैराग्यदानादिपुष्टिं के०) जिनअर्चन, नय, विनय, सुवैराग्य, एवं चार द्वार तथा वली दान, शील, तपोभावनानी पुष्टिने करो, एम समजवुं. ए पांच द्वार जाणवां. तथा (शब्द के०) शब्दादिक पंचविषयनां पांच द्वार जाणवां तथा (द्यूत के०) जुगार विगेरे सात व्यसनरूप सात द्वार अने आवमुं साते व्यसननुं एक, एम आव द्वार जाणवां तथा (क्रुधादेः के०) क्रोधादिक चार कषायनां चार द्वार अने पांचमुं समुच्चय कषायनुं एक द्वार. एवं पांच द्वार जाणवां. ए सर्वनो (जयमपि के०) जय जे तेने पण करो. तथा (सुकृताहेषु के०) सुकृत दिवसोने विषे (सत्कर्म के०) सारां कार्यने करो. एटले सुकृताहेषु एवुं पद कह्युं बे तेनां वीश द्वार ग्रहण करवां. आ श्लोकमां कहेलां कार्य, हे भव्यजीवो ! तमे करो ॥

आ काव्यमां लखेलां सर्व मली केटलां द्वार थयां ते कहे बे. १ आर्यदेश, २ मनुष्यभव, ३ सत्कुल, ४ साधुजननो संग, ५ सम्यक्त्व, ६ देव, ७ गुरु, ८ धर्म, ए कथमपि, १० बोध, ११ शक्ति, १२ शम, १३ यति, १४ श्रावकत्व, २६ बारव्रत, २७ सातक्षेत्र, २८ जिनबिंब, २ए जिनभुवन, ३० आगमपुस्तक, ३१ संघ, ३२ तपोधन, ३३ तपोधना, ३४ श्रावक, ३५ श्राविका, ३६ जिनार्चा, ३७ नय, ३८ विनय, ३ए सुवैराग्य, ४० दान, ४१ शील, ४२ तप, ४३ भावना, ४४ ए चार धर्मनी पुष्टि, ४५ शब्द, ४६ रूप, ४७ रस, ४८ गंध, ४ए स्पर्श, ५० सात दुर्व्यसन, ५१ द्यूत,

५२ मांस,५३ सुरापान, ५४ वेश्या, ५५ पापर्द्धि, ५६ चोरी,५७ परस्त्रीगमन, ५८ कषाय, ५९ क्रोध, ६० मान, ६१ माया,६२ लोन्न तथा सुकृत दिवसने विषे सत्कर्मनां वीश द्वार. एम सर्व मली ब्यासी द्वार थयां ॥२॥

हवे उपर लखेलां द्वारमां प्रथम सत्कुल द्वार कहे छे.

कोऽपि स्याल्लघुकर्मकः सुकृतधीर्देशेऽप्यनार्ये स्वत, स्तस्याप्यार्द्रकुमारवद्गुणचयः किंत्वार्यदेशाश्रयात् ॥ क्षाराब्धौ शशिनोऽथ कौस्तुन्नमणेः सा श्रीः कुतोयाऽन्नवत् , गंगाशालिनि शंन्नुमूर्ध्नि कमलागारे हरेश्चोरसि ॥ ३ ॥

अर्थः–(कोपि के०) कोइ पण (लघुकर्मकः के०) लघु कर्मवालो जीव, (अनार्ये के०) अनार्य एवा (देशेपि के०) देशनेविषेपण उत्पन्न थयो छतो (स्वतः के०) पोतानी मेले (सुकृतधीः के०) धर्मबुद्धि वालो जीव, (स्यात् के०) होय, (किंतु के०) तो पण (तस्यापि के०) ते पुरुषने पण (आर्यदेशाश्रयात् के०) आर्यदेशना आश्रयथकी (आर्द्रकुमारवत् के०) आर्द्रकुमारनी पेठें (गुणचयः के०) गुणनो संचय थाय छे, आहीं दृष्टांत कहे छे. ते केनी पेठें ? तो के (शशिनः के०) चंद्रमानी (गंगाशालिनि के०) गंगाथी शोन्नता एवा (शंन्नुमूर्ध्नि के०) शंन्नु एटले महादेव तेना मस्तकने विषे (अथ के०) वली (कौस्तुन्नमणेः के०) कौस्तुन्नमणिनी (हरेः के०)वासुदेवना (कमलागारे के०) लक्ष्मीने रहेवाना स्थानकरूप एवा (उरसि के०) हृदयनेविषे (या के०) जे (श्रीः के०) शोन्ना (अन्नवत् के०) होती हवी, (सा के०) ते शोन्ना (च के०) वली (क्षाराब्धौ के०) क्षारसमुद्रनेविषे (कुतः के०) क्यांथीज होय ? अर्थात् होयज नही. एटले ते बेहु वस्तुनुं उत्पत्तिस्थानक तो क्षार समुद्रज छे परंतु शिव अने विष्णुना आश्रयथी ते बेहु उत्तम गुणसंचयने पाम्यां ॥

आवेला वणिकना पुत्रोयें अभयकुमारनुं वर्णन ते आर्द्रकुमार पासें कर्युं. पूर्वेभवना स्नेहें करी आर्द्रकुमारने ते अभयकुमारनुं वृत्तांत सांभळतांज अनेह वृद्धिंगत थयो. पठी ते वणिक पुत्रोनी साथें अभयकुमारने भेट मोकली अने अभयकुमारें वीरभगवानना कहेवाथकी पूर्वभव व्यतिकर आर्द्रकुमारनो जाण्यो. तेवारें अभयकुमारें पट्टकूलें करी आच्छादित करी श्रीजिन प्रतिमानुं प्रेषण कराव्युं. ते प्रतिमाना दर्शनें करीनेज पूर्वभवनुं स्मरण आव्युं अने वैराग उत्पन्न थयो. तेवारें महोटा कष्टें करीने अनार्यदेशथकी आर्यदेशमां आवीने दीक्षा ग्रहण करी. वळी भोग्यकर्म बाकी रहेलां होवाथी गृहस्थाश्रम स्वीकार कर्यो. तिहां चोवीश वर्ष रही पठी दीक्षा ग्रहण करी मोक्ष पाम्या ॥ गाहा ॥ अप्पा विमोइओ भा,वबंधणा दव्व बंधणा उय ॥ जह्न जउ परतिछिसु, सो अद्दरिसी सिवं पत्तो ॥ ३ ॥

हवे बीजुं आर्यदेशोत्पन्न द्वार कहे ले.

आर्यं देशमवाप्य धर्मरहितोऽप्यन्यस्य धर्मक्रियां, ध
र्मस्थानमहांश्च वीक्ष्य सुगुरोः श्रुत्वा च धर्मं क्वचित् ॥
बोधं याति कुलोद्भनास्तिकमतो भूपः प्रदेशी यथा, स
त्यं चंदनसंगिनः क्षितिरुहो नान्येऽपि किं चंदनाः ॥४॥

अर्थः-(धर्मरहितोपि के०) धर्मरहित एवो पण जीव, (आर्यदेशं के०) उत्तम एवा आर्यदेशने (अवाप्य के०) पामीने (अन्यस्य के०) बीजा श्रद्धालु धर्मिजनोनी (धर्मक्रियां के०) धर्मक्रियाने तथा ते जनोना (धर्मस्थान के०) धर्मस्थानोने विषे (महान् के०) महोटाउत्सवोने (वीक्ष्य के०) जोइने (च के०) वळी (सुगुरोः के०) सुगुरुना मुखथकी (क्वचित् के०) कोइक वखत (धर्मं के०) धर्मने (श्रुत्वा के०) सांभळीने (बोधं के०) बोधने (याति के०) पामे ले. (यथा के०) जेम (प्रदेशीभूपः के०) परदेशी राजा बोधने पाम्यो, ते केवो ले? तोके (कुलोद्भनास्तिकमतः के०) कुळागत ले नास्तिकमत जेनुं एवो ले. (सत्यं के०) ते साचुं ले. केम के (चंदनसंगिनः के०) चंदन वृक्षना संगवाळा एवा (अन्येपि के०) बीजा पण (क्षितिरुहः के०) वृक्षो (किं न चंदनाः के०) शुं चंदन नथी थातां? अर्थात् थायज ले. एटले सारा जनना संगथकी मोक्ष प्राप्ति थाय ले ॥ ४ ॥

आंही परदेशी राजानी कथा कहे छे. श्वेतांबिका नगरीनेविषे नास्तिक मतस्थापक प्रदेशीराजा राज्य करतो हतो. एक दिवस ते नगरीना उद्यानमां श्रीपार्श्वनाथना शिष्य केशीगणधर आव्या, त्यां प्रदेशीराजायें आवी प्रश्न पूछ्यो के महाराज ! एकदिवस चोरें चोरी करी, तेने में निश्छिद्रमंजूषामां पूर्यो. पछी ते मरण पाम्यो त्यारें तेनो जीव क्यांथी निसरी गयो ? एटले आत्मा तो छेज नही, एम ते दिवसथी हुं मानुं छुं. ते वात सांभली गुरुयें जबाप आप्यो के छिद्र विनानी पेटीमां बेशीने कोइक पुरुष शंख वगाडे छे तो ते शंखनाद बाहेर रहेला जनो सांभले छे के केम ? राजा बोल्यो के सांभले छे. त्यारें गुरु कहे के मंजूषामां छिद्र तो पड्यां नही ने शब्द क्यांथी संभलायो ? तेनो उत्तर कांइपण राजायें दीधो नहीं. त्यारें गुरु कहे छे के हे राजन् ! एम चोरनो जीव पण मंजूषामांथी नीकली गयो माटे आत्मा छे एम निश्चें जाणवुं. आ दृष्टांतें करी प्रदेशी राजा निःसंशय थयो अने नास्तिकमतनो त्याग करी अर्हतमतने स्वीकारी स्वर्गमां गयो ॥४॥

उत्सर्पिण्यवसर्पिणीः क्षितिमरुत्तेजोप्स्वसंख्या वने,ऽनंता
स्ता विकले गणेयशरदो जात्या विपत्त्या नयेत् ॥ स
प्providedाष्टौ तु भवांस्तिरश्चि मनुजे जीवोंऽतरेत्राऽस्य चे,
द्धर्मस्तद्धरणेंऽवत्स सुगतिं प्राप्नोति तिर्यङ्कपि ॥ ५ ॥

अर्थः– (जीवः के०) जीव, संसारनेविषे भमतो छतो (क्षितिमरुत्तेजोप्सु के०) पृथ्वी, तेज, तथा वायु अने जलने विषे (असंख्याः के०) असंख्याति (उत्सर्पिण्यवसर्पिणीः के०) उत्सर्पिणी तथा अवसर्पिणी कालपर्यंत जन्ममरणने (नयेत् के०) पामे पछी (वने के०) प्रत्येक वनस्पतिअनंतकायनेविषे (ताः के०) ते (अनंताः के०) अनंतो कालपर्यंत रहे. ते पछी (विकले के०) बेंद्री तेंद्री अने चउरिंद्रीरूप विकलेंद्रियनेविषे (गणेयशरदः के०) संख्यातावर्ष (जात्या के०) जन्में करीने अने (विपत्त्या के०) मरणेकरीने रहे अने (तिरश्चि मनुजे के०) तिर्यंच अने मनुष्यनेविषे (सप्ताष्टौ के०) सात आठ (भवान् के०) भवने काढे. अर्थात् सात आठ भवपर्यंत रहे (तु के०) वली (अत्रांतरे के०) आ ए पूर्वोक्त भवांतनेरोविषे(अस्य के०) आ जीवने जो (धर्मश्चेत् के०) धर्मप्राप्त थाय, (त

त् के०) तो(तिर्यङ्ङपि के०) तिर्यंच पण (धरणेंद्रवत् के०) धरणेंद्रनी पेठें (सुगतिंके०) रूडीगतिने (स के०) ते (प्राप्नोति के०) पामे छे. जेम सर्प नो जीव हतो ते धर्मनी प्राप्तियें करीने धरणेंद्र थयो हतो ॥ ५ ॥

ते धरणेंद्रनी कथा कहे छे. वाराणसी नगरीनेविषे कमठनामनो तप स्वी पंचाग्निरूप तपने तपे छे. एक दिवसनेविषे गवाक्षमां बेठेला श्री पार्श्व नाथ भगवाने ते तापसनी पूजा करवा माटे पुरना जनोने गाम बहार जतां दीठां, तेमणें अवधिज्ञाने करीने ते तपस्वीनी धूणीना काष्ठमां बल तो एवो भुजंग जोयो. पछी त्यां जइने बलता काष्ठथी सर्पने बहार खेंची लीधो के तुरत ते सर्पें पार्श्वनाथस्वामीने नमस्कार कर्यो ते सर्प नवकार ना प्रभावथी धरणेंद्र थयो. पछी पार्श्वनाथ भगवान् तपस्वीने कहेवा लाग्या जे हे मूर्ख ! तुं आ अज्ञान तप करे छे ? दयाधर्मने जाणतो नथी ? इत्यादि वाक्योयें करीने ते तपस्वीने जनना समूहनी समक्षमां फिटकार आप्यो. पछी एकदा पार्श्वनाथ स्वामी, दीक्षा लीधा नंतर कायोत्सर्गें रह्या हता, त्यारे तेमनीउपर ते तापसनो जीव मरीने मेघमाली देवता थयो छे, तेणे मुशल धारायें करी वरसादनो उपसर्ग कर्यो तेने सहन करता एवा अने धरणें द्रना फणासंमंडलनी नीचें रह्या एवा भगवान् श्रीपार्श्वनाथने केवलज्ञान उ त्पन्न थयुं. त्यारें धरणेंद्रना भयथी बीतो थको मेघमाली देवता भगवानने पगे लागीने मिथ्या दुष्कृत देतो हवो. पछी ते धरणेंद्र स्वस्थानकें गयो ॥५॥

कालप्राणिभवाअनादिनिधनास्तत्सर्वजातौ सदा, जी
वेन भ्रमता मुहूर्त्तमपि हि प्राप्तं न किंचिध्दितम् ॥
मुक्ताशुक्तिकयेव वारि मणिकृधार्थौ क्वचिद्दैवत,स्तत्प्रा
प्याथ सकंबलेन शबलेनोद्धणेव धार्यं श्रिये ॥ ६ ॥

अर्थः– (कालप्राणिभवाः के०) कालधर्म युक्त प्राणीने जन्मो जे छे, ते (अनादिनिधनाः के०) अनादि अनंत वर्त्ते छे तेमां (सर्वजातौ के०) सर्वजातिनेविषे (सदा के०) निरंतर (भ्रमता के०) भमता एवा (जी वेन के०) जीव जे तेणे (मुहूर्त्तमपि के०) मुहूर्त्तमात्र पण (किंचित् के०) कांइ पण (तत् के०)ते (हितं के०) पुण्यरूप हित (न प्राप्तं के०) नहिं प्राप्त कर्युं (अथ क्वचिद्दैवतः के०) ते क्यारेंक दैवयोगें करी (तत्प्राप्य

के०) ते हितकारी पुण्यने पामीनें (श्रिये के०) मोक्षलक्ष्मीमाटें ते (धार्यं के०) धारण करवुं परंतु ते पुण्यने मूकवुं नही. ते जेम के (वार्द्धौ के०) समुद्रने विषे (मणिकृत् वारि इव के०) मोतीनुं करनार पाणी जेम (मुक्ता शुक्तिकया के०) मोतीनी छीपें धारण कराय छे. तिहां दृष्टांत कहे छे के जेम (सकंबलेन के०) कंबलनामा वृषनें युक्त एवा (शंबलेनउक्ष्णा इव के०) शंबलनामा वृषनें जेम पुण्यने मोक्ष लक्ष्मी माटे धारण कर्युं ॥६॥

हवे ते कंबल अने शंबल वृषलनी कथा कहे छे ॥ यथा ॥ महुराए जिणदासो, आनीर विवाहगो ण उववासो ॥ नंनीरमित्तवच्चे, नत्तेनागोहि आगमणं ॥ १ ॥ वीरवरस्स नगवउ, नावारूढस्स कासि उवसग्गं ॥ मिछ दिहि पर्ड, कंबल संबल समुत्तारे ॥ २ ॥ मथुरानगरीनेविषे कोइ जिनदास नामे शेठ वसे छे तेने अत्यंत स्नेहथकी आनीरलोकें पोताना विवाहानंतर कंबल अने शंबलनामा अत्यंत सुशोनित बे वृषन नेट कीधा. ते बेहु वृषनो प्राशुक आहार तथा जलें करी व्रत पालता एवा शेठनी धर्मासक्ति जोइने जातिस्मरण ज्ञान पाम्या तेथी पोताना पूर्वजन्मनी स्मृति उत्पन्न थइ. तेवारें श्रावकनी पेठें अष्टम्यादिक पुण्य तिथियोना दिवसनेविषे उपवास करवा लाग्या. एक दिवसें ते शेठना कोइक मित्रें नंनीर मित्रनामना यक्षनी यात्रा करवामां ते बेहु बेलने खेड्या तेथी रुधिरयुक्त थया थका मरण पामी नागकुमार देवो थया. एकदा नावमां बेसीने गंगा उतरता एवा श्रीवीरस्वामीने उपसर्ग करता एवा मिथ्यादृष्टि देवने ते बेहु देवोयें उपसर्ग करतो निवार्यो ॥ ६ ॥

क्षेत्रे नामलवालुके च लवणाकीर्णे च रोहेद्यथा,
बीजं किंचिदिहाखिले च फलति क्षात्रे च नानाफलैः ॥ देवे नैरयिके तिरश्चि मनुजे श्रेयःप्रसूतिस्तथा,
तस्मान्मेघकुमारवन्नरनवेऽनंतश्रिये त्वर्यताम् ॥ ७ ॥

अर्थः—(इह के०) आलोकने विषे (यथा के०) जेम (बीजं के०) बीज, (अमलवालुके के०) निर्मल जेमां रेती छे एवा (क्षेत्रे के०) क्षेत्रमां फले नही (च के०) तथा (लवणाकीर्णे के०) लवणाकीर्ण क्षेत्रनेविषे पण (न रोहेत् के०) उगे नहीं कदाच उगे तो फले नहीं (च के०)

वली (अखिले के०) सर्वजातिना क्षेत्रनेविषे जो उगे छे तो (किंचित्फलति के०) कांइक फले छे. (च के०) वली (क्षात्रे के०) खातरवाला एवा खेत्रने विषे (नानाफलैः के०) विविधप्रकारनां फलोयें करी फले छे. (तथा के०) तेवी रीतें (श्रेयःप्रसूतिः के०) बोधबीज जे समकेत तेनी उत्पत्ति (देवे नैरयिके तिरश्चि मनुजे के०) देव,निरय,तिर्यंच अने मनुष्योनेविषे पूर्वना क्षेत्रना दृष्टांतोथी अनुक्रमें जाणवी. आहिं श्रेयःप्रसूतिरूप बोध बीज जाणवुं. अमल वालुका क्षेत्रसमान देवभव जाणवो. अने लवणाकीर्णसमान नरकभव जाणवो. अखिल क्षेत्रसमान तिर्यंचनो भव जाणवो अने खात्रना क्षेत्र समान नरभव जाणवो. (तस्मात् के०) ते माटे हे लोको ! (नरभवे के०) मनुष्यभव प्राप्त थये उते (मेघकुमारवत् के०) मेघकुमारनी पेठें (अनंत श्रिये के०) मोक्ष लक्ष्मीनेमाटे (त्वर्यतां के०) उतावलथी उत्सुक थाउ अर्थात् मनुष्य भव जे छे ते सर्व देवादिकना भवथी उत्तम छे माटे तेमां मोक्ष पामवानो प्रयास करो. ए उपदेश कह्यो छे ॥ ७ ॥

आंही मेघकुमारनी कथा कहे छे. राजगृही नगरीनेंविषे श्रेणिकराजा पिता अने धारणी माताथी मेघकुमारनामा पुत्र उत्पन्न थयो हतो, ते मेघकुमारें आठ कन्यानुं पाणिग्रहण कर्युं तेनी रूद्धि श्रीज्ञातांगजीमां सविस्तर कहेली छे त्यांथी जाणवी. तें मेघकुमारें वीरभगवाननी वाणी सांभलीने आठे स्त्रीयोनो त्याग करी दीक्षा ग्रहण करी. पछी रात्रिनेविषे सुतां थकां साधुना पादप्रहारें करी दुःख पामवाथी दीक्षा उपर मनोभंग थयो. प्रभातें श्रीवीरभगवानें ते मेघकुमार साधुने देशना देवा मांमी. ते जेम के ॥ गाहा ॥ जललवतरलं जीयं, अथिरा लछी विभंगुरो देहो ॥ तुछा य काम भोगा, निवंधणं दुरक लरकाणं ॥ १ ॥ को चक्कवट्टि रूध्दिं, चइउं दासत्तणं समहिलसइ ॥ को वररयणाइं मुत्तुं, परिगएहइ उवलखंमाइं ॥२॥ नेरइआण वि दुरकं,जिझइ कालेण किं पुण नराणं ॥ ताण चिरं तुह होही, दुरकमिणं मासमुच्चियस्सु ॥३॥ ए त्रण गाथा कह्या पछी मेघकुमारना पूर्वभव कह्या. ते जेम के तुं वैताढ्यनेविषे सुमेरुनामा हाथी थयो ते सातसो हाथणीनो नायक थयो. त्यां वनाग्नि लागवाथी तरश्यो थयो थको तलावमां पेठो. तेवारें सामा हाथीयें कादवमां नाखी मारी नाख्यो,त्यार पछी विंध्याचलने विषे पांचशो हाथणीनो नायक मेरुप्रभनामा तुं हस्ती थयो. ते भव

मां दवाग्नि थयेलो जोइने तुने जातिस्मरण ज्ञान उत्पन्न थयुं. त्रण स्थंमिल कर्यां. त्यां शरीर खजवालवामाटे पग उंचो कर्यो, एवामां कोइक शशलो ताहरा पग नीचें आवी उन्नो रह्यो. पछी तें त्रणदिवस पर्यंत शशलानी कृपायें करी पग नीचें मूक्यो नही. चोथे दिवसें पग उपाडीने स्थापन करतां ते हस्ती मरीने तुं मेघकुमार श्रेणिकराजाने त्यां अवतर्यो. आ प्रकारनां वीरन्नगवाननां वचन सांन्नली करीने फरी वैराग्य उपन्यो, तेवारें अखंम संयम पालीने विजय विमाने देव थयो. माटे मनुष्य न्नव सर्वथी उत्तम छे, एम जाणवुं ॥७॥

वेलाकूले महति नृन्नवे प्राक्प्रसन्नेंडुवत्त, जी
वा मूढश्लथदृढधियः क्रीणते कर्म वस्तु ॥ क्रू
रा गुप्तिः कुगतियुगलीवर्णकः स्वर्डरंतो, येनां
ते स्याच्छिवपुरमुरुस्फूर्त्ति तेषां क्रमेण ॥ ८ ॥

अर्थः—(मूढ के०) मूढ,तथा (श्लथ के०) शिथिल तथा (दृढधियः के०) दृढबुद्धि वाला एवा त्रण प्रकारना (जीवाः के०) जीवो, (तत् के०) ते (कर्मवस्तु के०) कर्मरूप वस्तुने (क्रीणते के०) उपार्जन करे छे. क्यां उपार्जन करे छे? तो के (नृन्नवे के०) मनुष्यजन्मनेविषे. ते केवो नृन्नव छे? तो के (वेलाकूले के०) समुड समान (महति के०) विस्तीर्ण एवो. केनीपेठें? कर्मवस्तुने ग्रहण करे छे,तो के (प्राक्प्रसन्नेंडुवत् के०) पूर्वें थयेला प्रसन्नचंड्राजर्षिनी पेठें (येन के०) जे कर्मवस्तुयें करी (तेषां के०) ते पूर्वोक्त त्रण प्रकारना जीवोने (क्रमेण के०) अनुक्रमें त्रण गति प्राप्त थाय छे. तेमां (कुगतियुगलीवर्णकः के०) नरकतिर्यक्रूप जे गतिनुं युगल तेनो छे वर्णक जेमां एवी (क्रूरागुप्तिः के०) डुःखरूप छे गुप्ति एटले गृह जेनुं एवी गति,मूढबुद्धि वाला प्राणीने थाय छे. तथा शिथिल बुद्धिवालाने (अंते के०) अंतमां (स्वर्डरंतः के०) स्वर्ग पण डुःप्राप्य थाय छे अने दृढबुद्धिवालाने (उरुस्फूर्त्ति के०) अत्यंत छे प्रकाश जेनो एवुं (शिवपुरं स्यात् के०) मोक्षपद प्राप्त थाय ॥८॥

आहिं प्रसन्नचंड्राजर्षिनी कथा कहे छे. पोतनपुर नगरना स्वामी प्रसन्नचंड्राजायें पोताना राज्यें छमासना पोताना पुत्रने थापी दीक्षा ग्रहण करी. एकदा श्रीवीरस्वामी राजगृही नगरीनेविषे आवी समोसर्या. तेमनाथी केटलेक दूर उन्नो रहीने सूर्य सामी दृष्टि करी तथा उंचा हाथ क

री एक पगे ऊभो रही तप करवा मांड्युं. तेवामां एक दुर्मुखनामा श्रेणि कना पालायें आवीने ते राजर्षिने कह्युं जे हे मूढ! तुं शुं तप करे छे? वैरी ताहरा नगरने विंटी राज्य ग्रहण करी छमासना तारा बालकने मारी नाख शे. ते वात सांभलतांज ध्यानभंग थइ गयो. पोताना मनमां संग्राम करवा नो विचार थवा लाग्यो तेवामां श्रेणिक राजायें मनें करी वंदन कर्युं तो पण तेने धर्मलाभ न दीधो. तदनंतर श्रेणिकराजायें श्रीवीर पासें आवी ने प्रसन्नचंद्रराजर्षि आश्रयी पूछ्युं, तेवारें वीरभगवानें सप्तमनरक, मनुष्य जन्म अनें सर्वार्थ सिद्धिगमन, आ त्रणे प्रश्ननो प्रत्युत्तर प्रसन्नचंद्रराज र्षिना मनना परिणाम उपर दीधो अने चोथा प्रश्नमां प्रसन्न चंद्रराजर्षिने केवल ज्ञान उत्पन्न थयुं, एम कह्युं ॥ ८ ॥

तत्तादृशाऽभव्यपितुः सुतोपि, धर्मालसोयः
सुलसोऽभवन्न ॥ स किं विषाहेर्विषहृन्मणि
स्त, त्पंकान्न वा श्रीसदनं सरोजम् ॥ ए ॥

अर्थः—(यः के०) जे (सुलसः के०) सुलसनामा पुरुष (तादृशऽभव्यपि तुः के०) तेवा अभव्य पितानो (सुतोऽपि के०) पुत्र छे (तत् के०) तो पण (धर्मालसः के०) धर्मनेविषे आलस्ययुक्त (नाभवत् के०) न थतो हवो. अ र्थात् धर्मोद्यमी थतो हवो. आहिं कांही आश्चर्य जाणवुं नहिं कारण के (सः के०) सर्वजनोमां प्रसिद्ध एवो (विषहृत् के०) विषने हरण कर नारो (मणिः के०) मणि ते (विषाहेः के०) विषवाला सर्पथी उत्पन्न थयो एवो तो पण विषने हरण करनारो (किं के०) शुं (न के०) नथी थातो? अर्थात् थायज छे. (वा के०) अथवा (श्रीसदनं के०) लक्ष्मीने रहेवा नुं घर, (पंकात् के०) कचराथी उत्पन्न थयेलुं अने (तत् के०) ते सर्वत्र प्रसिद्ध एवुं (सरोजं के०) कमल (न के०) नथी शुं? अर्थात् छेज. तेम दुष्ट पिताथी उत्पन्न थयेलो एवो सत्पुरुष ते धर्मकृत्य करे छे ॥ ए ॥

आंहि सुलसनो दृष्टांत होवाथी तेनी कथा कहे छे ॥ राजगृहीनगरीने विषे कालकसौकरिकनामा कसाइनो पुत्र सुलस नामें हतो, ते अभयकुमा र नामा मंत्रीनी संगतिथी दयाधर्मपालक श्रावक थयो. पछी कालक सौक रिकने श्रेणिकराजायें वार्यो, तोपण नित्य पांचशें महिष मारवाना पापर्थ

निवृत्ति न पाम्यो. कालकसौकरिक दुर्लेश्यायें मरीने सातमे नरकें गयो. अने तेना पुत्र सुलसने स्वजनोयें आवी कह्युं के आपणें तारा पितानुं पाप सर्वें वेंची लेशुं त्यारें सुलसें पोताना पगपर कुवाडो मारीने सर्वने कह्युं के जेम तमे म्हारा बापना करेला पापने वेंचो छो तेवीरीतें आ मारी वेदनाने तमो सर्वे वेंची लीयो. ते सांजली सर्वे मौनव्रत धारण करी बेठा तेणे जीव वध न कस्यो ॥ गाहा ॥ अवइहृतिय मरणं, नय परपीडं करंति मणसा वि ॥ जे सुवियसुग्गइ पहा, सोयरिय सुउ जहा सुलसो ॥ ए ॥

बोधाय सद्धर्मकुलोद्भवाः स्त्रियोऽप्युदायनस्येव पुरा प्रजावती॥ सत्तीर्थता किं जलधेर्न गंगया, सद्वृत्तता वा शशिनोन राकया॥१०॥ इतिसत्कुलद्वारम्॥१॥

अर्थः–(सद्धर्मकुलोद्भवाः के०) प्रधानधर्मसहित जे कुल तेनेविषे छे उत्पत्ति जेनी एवी (स्त्रियोपि के०) स्त्रीयो पण (बोधाय के०) बोधने माटे होय छे. केनी पेरे? तोके (पुरा के०) पूर्वें (उदायनस्य के०) उदायन राजानी (प्रजावतीव के०) प्रजावती नामनी स्त्री जेम बोध पामी,तेम स्त्रीयो बोधने पामे छे. तेमां कांइ आश्चर्य नथी. केम के (जलधेः के०) समुद्रनी (सत्तीर्थता के०) सत्तीर्थता ते (किं के०) शुं (गंगया के०) गंगायें करी (न के०) न थाय. अर्थात् थायज छे. जुवो प्रत्यक्षप्रमाण के ज्यां गंगा समुद्रने मले छे त्यां प्रियमेलकनामा तीर्थ प्रसिद्ध छे. (वा के०) अथवा (शशिनः के०) चंद्रमानी (सद्वृत्तता के०) गोलाकारपणुं (राकया के०) पूर्णिमायें करी शुं (न के०) न थाय अर्थात् थायज छे ॥ १० ॥

आहिं प्रजावती नामनी राणीनो दृष्टांत छे. माटे तेनी कथा कहे छे. वीतजय पत्तनमां मिथ्यादृष्टि उदायननामा राजा राज्य करे छे. ते एकदिवस नदीना जलमां क्रीडा करतो हतो तेवामां एक पेटी जलमां तरती नजरें पडी. ते लइ पोताने घेर आणी. तेने तालां घणांज मजबूत दीधां हतां ते कोइथी पण उघाडी शकाणां नही. तेवामां चेटक महाराजनी दीकरी महासती प्रजावतीयें पोताना धर्मनुं श्रवण कराववा मांम्युं ने कह्युं जे मारा मनमां सुदेव सुगुरु अने सुधर्म जो होय तो आ पेटीनां तालां उघडजो. एवुं कहेवाथी तुरत तालां उघडी गयां. तेमांथी अतिशयें सहवर्त्तमान विद्युन्माली

देवतानी बनावेली देवाधिदेवनी प्रतिमा नीकली, ते प्रतिमाने राजायें जोइ ने तेज समयें ते राजा सम्यक्दृष्टि थयो. एकदिवस जिनमूर्त्ति सन्मुख नृत्यकरतुं अने गानकरतुं एवुं राणीनुं कवंध जोयुं एटले माथाविनानुं राणीनुं धड जोयुं. ते वात राजायें राणीने कही. राणीयें खराब चिन्हथी पोतानुं आयुष्य थोडुं जाणीने दीक्षा ग्रहण करी अनशन लइने सौधर्म देवलोकें देवता थइ तिहांथी पूर्वे स्नेहने लीधे राजापासें आवी राजाने प्रतिबोध कर्यो. तेथी राजायें कुगुरुवासनादि बोड्यां अने सद्गति पाम्यो माटे सद्धर्म पालनारी स्त्रीथी पण बोध थाय छे ॥ १० ॥ इति सत्कुल द्वारं ॥

अथ सुगुरुद्वारं ॥ जीवादितत्त्वविकलैर्विपुलैस्तपोभि, र्मुक्तो न तामलिरजातसुसाधुसंगः ॥ कः स्वर्णसिद्धिमधिगच्छति कूटकल्पैः, कोवांबुधिं तरति जर्जरयानपात्रैः ॥ ११ ॥

अर्थः—हवे सत्संग, एटले सद्गुरु संग तेनुं द्वार कहे छे. (अजातसुसाधुसंगः के०) नथी उत्पन्न थयो सारा साधुनो संग जेने एवो (तामलिः के०) तामलि तापस (जीवादितत्त्वविकलैः के०) जीवादि तत्वोयें रहित हतो तेथी (विपुलैः के०) विस्तीर्ण एवां (तपोभिः के०) तपोयें करी पण (न मुक्तः के०) मुक्त थयो नहिं अर्थात् संसारथकी अथवा कर्मथकी न मुकाणो. ते सत्य छे. जुवो के (कूटकल्पैः के०) खोटीवस्तुथी (कः के०) कोणपुरुष, (स्वर्णसिद्धिं के०) सुवर्णसिद्धिने (अधिगच्छति के०) प्राप्त थाय छे? अर्थात् कोइ पण प्राप्त थातो नथी. (वा के०) अथवा (जर्जरयानपात्रैः के०) जीर्णवाणेंकरी (अंबुधिं के०) समुद्रने (कः के०) कोण (तरति के०) तरे छे अर्थात् कोइ तरी शकतुं नथी. बीजुं तो सर्व सुगम छे ॥११॥

हवे आंही तामली तापसनी कथा कहे छे. ताम्रलिप्ति पुरीनेविषे तामलीनामा शेठ हतो तेणे तापसी दीक्षा ग्रहण करी. पछी ते मध्यान्हें गाममां जइ वोहरी लावे ते वहोरेला आहारना चार भाग करे,तेमां एक जलचर जीवोनो, बीजो स्थलचर जीवोनो, त्रीजो खेचर जीवोनो अने चोथो पोतानो, एम कल्पना करी त्रण भाग काढी नाखे अने चोथा भागनां अन्नने एकवीश वखत जलें करी धोइने भोजन करे. ए प्रकारनुं तप साठ हजार वर्ष कर्युं,पछी ईशान देवलोकमां इंद्र थयो तेणे अवधिज्ञानेंकरी ए

वुं जाण्युं जे में पूर्वजन्में जे तप कर्युं तेटला तपें तो सात जन मोक्षें जाय पण म्हारा तपमां सुसाधुसंगनो अन्नाव हतो. कहेलुं छे के ॥ यतः ॥ गाहा ॥ तामलित्तणो तवेण, जिणमय सिज्झइ सत्त जणाण ॥ सो अन्नाण वसेणा, तामलि ईसाणइंद गउ ॥ ११ ॥

गिरिपुष्पशुकाविवामलोंगी, गुणनाशोदयन्ना
ग् जडज्ञसंगात् ॥ जलदांबु विषं सुधा च न
स्यात्, कनकाडौ च किमिक्षुकानने च ॥ १२॥

अर्थः-(अमलोंगी के०) निर्मल प्राणी, (जडज्ञसंगात् के०) जडना अने ज्ञानीना संगथी (गुणनाशोदयन्नाक् के०) गुणनाश अने गुणोदय तेने नजनारो थाय छे. केनी पेठें (गिरिपुष्पशुकाविव के०) गिरि अने पुष्प नामा वे पोपट जेम. जुवो (च के०) वली (जलदांबु के०) मेघनुं जल, ते (कनकाडौ के०) धंतुराना ऊाडनेविषे (विषं के०) विष (च के०) अने (इक्षुकानने के०) शेरडीना वनमां (सुधा के०) अमृत (च के० वली)किं के०) शुं (नस्यात् के०) न थाय ? ना थायज ॥ १२ ॥

हवे गिरि अने पुष्पनामा बे शुकनी कथा कहे छे. चंपानगरीने विषे जितशत्रु राजा राज्य करे छे. ते कोइ दिवस विपरीत शिक्षित अश्वें बेठेलो तेथी अश्वें कुवाटें पमाड्यो पछी उग्रवनमां ते अश्व राजाने लइ गयो एटलामां एक ऊाडनी उपर पांजरामां रहेलो कोइक चोरोनो पोपट चोरोने त्यां कहेवा लाग्यो के अरे चोरो, तमारे लुंटवा होय तो लक्षपति माणस जाय छे माटे लुंटो लुंटो. ते सांनलतांज राजा त्यांथी नाशीने एकदम तापसना आश्रममां पेसी गयो. त्यां तापसनो शुक पांजरामां रहेलो हतो ते राजाने आवतो जोइ तापसो प्रत्यें कहेवा लाग्यो के हे मुनिवरो ! राजा आवे छे अन्युत्थान करो, आसन मांमी आपो, आचमन आपो, आतिथ्य करो, आवां वचन ते पोपटनां सांनली राजा हर्षित थयो. एवुं कौतुक जोइ शुकपासें आवी राजायें शुकने पूछ्युं जे एक पोपटें चोरोने कह्युं के आ खाज जाय ते माटे लुंटो अने तुं कहे छे जे आ राजाने सन्मान आपो माटे ते केवी जातनो पोपट अने तुं केवी जातनो पोपट छो ? त्यां तापसनो शुक बे श्लोक बोल्यो के हे राजा ! सांनल्य ॥ श्लोक ॥ माताप्येका पिताप्येको,

मम तस्य च पक्षिणः ॥ अहं मुनिभिरानीतः,सच नीतो गवाशनैः ॥१॥ गवाश नानां स गिरः शृणोति,अहं च राजन् मुनिपुंगवानाम् ॥ प्रत्यक्षमेतद् भवता च दृष्टं, संसर्गजादोषगुणा भवंति ॥ २ ॥ आ बेहु श्लोकनो भावार्थः– हे राजन्! अमारी बेहुनी माता पण एकज छे पिता पण एकज छे परंतु मने मुनि लोको पकडी लाव्या छे अने तेंने चोरो पकडी गया छे माटे ते दुष्टजननी वाणी बोले छे हुं मुनिपुंगवोनी वाणी बोलुं बुं. हे राजन्! ए तें प्रत्यक्ष दीठुं जे संसर्गथकी दोषो अने गुणो थाय छे साराना संगथी सारी बुद्धि आवेछे अने नरसाना संगथी नरसी बुद्धि आवे माटे सज्जननो संग करवो ॥१२॥

कोप्यन्यएव महिमाननु शुध्दृष्टे, यत् श्रेणिकोह्यवि रतोऽपि जिनोत्र भावी॥पुण्याग्गेलः किमितरोऽपि न सार्वभौमो,रूपच्युतोऽप्यधिगुणस्त्रिजगन्नतश्च ॥१३॥

अर्थः– (शुध्दृष्टेः के०) सम्यक्त्व वंत एवा जननो (कोपि के०) कोइपण (ननु के०) निश्चें (अन्यः के०) बीजो (महिमा एव के०)प्र भावज होय छे. (यत् के०)जे कारण माटे (अविरतोपि के०) अविरत एवो पण (श्रेणिकः के०)श्रेणिकराजा, (अत्र के०) आ भरतक्षेत्रनेविषे पद्म नाभनामा (जिनः के०) तीर्थंकर (भावी के०) थाशे (इतरोपि के०) बीजो नीच कुलमां उत्पन्न थयेलो एवो पण (पुण्याग्गेलः के०) पुण्याढ्य नामें (सार्वभौमः के०) चक्रवर्त्तिजेवोसर्वभूमिनोराजा (किं के०) शुं (न के०) न थयो. अर्थात् थयोज (च के०) वली ते (रूपच्युतोपि के०) रूपथकी भ्रष्ट थयेलो पण (अधिगुणः के०) अधिक गुणवान् थयो (त्रिजगन्नतः के०) त्रण जगतें जेने नमन करेलु छे एवो थयो ॥

आहिं श्रेणिक राजानी कथा कहे छे. श्रेणिकनामा राजा राजगृही नगरीने विषे राज्य करे छे. ते सम्यक्त्व पाम्या पछी त्रणेकालनेविषे जिननी अर्चा करतो हतो जिननी पासें प्रतिदिवस अष्टोत्तर शत सोनाना जवनो स्वस्तिक पूरतो हतो अने पात्रने दान देतो हतो, ते राजाना सम्यक्त्वनी प्रशंसा इंद्रे देवताउनी पासें करी हती ते देवतायें आहिं आवीने ते श्रेणिकराजानी सम्यक्त्वनेविषे परीक्षा करी. परंतु सम्यक्त्वथकी तें चलायमान थयो नहीं. तोपण ते अविरति छे स्वयंभू रमण समुद्रना मत्स्य

नक्षणनो नियम पण तेणे लीधो नहिं एवो अविरति श्रेणिक राजा पण क्षायिक सम्यक्त्वना लाजथकी आवती चोवीशीमां पद्मनाजनामा प्रथम तीर्थंकर थशे बोहोंतेर वर्षनुं आयु तथा स्वर्णवर्णकाय, शरीरें सात हाथ उंचो, सिंहना लांछन युक्त एवो श्रीवीरजगवाननी समान थशे.

हवे पुण्याढ्य राजानी कथा कहे ले. पद्मपुरने विषे तपन राजा राज्य करे ले. तेने ते नगरना रहेनारा कोइ शेठें एक हस्ती नेट कस्यो. ते हाथी राजानो पूर्वजवें मित्र हतो पढी ते हस्तीयें करी राजायें दिग्विजय कस्यो. नगरमां प्रवेश करता ते हाथीयें राजाने बोध करवा माटे एक रस्तामां प डेला खडीना कटकायें करी प्रतोली उपर एक श्लोक लख्यो. ते श्लोक॥ अविज्ञातत्रयीतत्त्वो,मिथ्यासत्त्वोल्लसद्भुजः ॥ हा मूढशत्रुवेषेण,मित्रप्लोषेण हृष्यति ॥ आ श्लोकनो अर्थ सर्व विद्वानोने पूठ्यो पण कोइयें तेनो अर्थ कह्यो नहिं परंतु आनंदसूरियें ते श्लोकनो अर्थ सारी रीतें कह्यो. तेवारें राजायें कह्युं के आ मारो हस्ती जेने राज्य आपे ते राजा. एम मंत्रीउने कहीने पोते व्रतग्रहण करतो हवो. पढी ते ज्ञानवान् हस्तीयें वनमांथी कोइ पांगलाने आणी राज्य आपी दीधुं. परंतु ते राजाने पंगु जाणीने कोइ प ण तेनी आज्ञा माने नही. बीजे दिवसे प्रातःकालमां कोइ अन्य राजाउ सायें संग्राम थये ठते हाथीपर बेठेला पांगलाना हाथनेविषे रहेलुं तृण ते देवताना प्रजावथकी वज्रतुल्य थयुं. तेवारें ते पंगु कहेवा लाग्यो जे मारी आज्ञा नहि माने तेने शिर आ वज्र पडशे. ते सांजली सर्व राजायें तेनी आज्ञानो स्वीकार कस्यो. पढी ते पंगुनुं पुण्याढ्य एवुं नाम सर्व लो कोयें पाड्युं. ते अनुक्रमें त्रण खंडनो राजा थयो पढी कालेंकरी ते हस्ती मरण पाम्यो. राजायें तेना स्थानकने विषे मोहोटो प्रासाद कराव्यो. प्र तिमानी पासें हाथीनुं रूप कराव्युं. एक दिवस राजा ते श्रीजिनप्रतिमाने देखतो ठतो करीरूपने जोतां शुजध्यानथकी केवलज्ञान पामीने मोक्षें ग यो परंतु पाठला जवमां पुण्याढ्यना जीवें मलिन गात्रवाला ऋषिना नेत्र थकी कांटो खेंची लीधो तेथी तेने निष्कंटक राज्य प्राप्त थयुं. अने ते म लिनगात्रवाला ऋषिने जोइ दुगंछा कीधी ते कर्में करी पंगुत्व प्राप्त थयुं ॥

प्राप्याल्पमप्यमलबोधवचश्चिलाती,पुत्रो यथाघम
लिनोऽपि बिभर्त्ति शुद्धिम् ॥ किं कोटिवेधि रसचंदनर
त्नबिंडु,स्पर्शेपि हेमशिशिरं च न तप्तलोहम् ॥१४॥

अर्थः- (चिलातीपुत्रः के०) चिलातीपुत्र, (यथा के०) जेम (अ ल्पमपि के०) अल्प एवा पण (अमलबोधवचः के०) निर्मल बोधवचनने (प्राप्य के०) पामीने (अघमलिनोपि के०) पापथकी मलिन डे तोपण (शुद्धिं के०) शुद्धिने (बिभर्त्ति के०) धारण करे डे. तेमां काहिं आश्चर्य नथी. जेम के? (कोटिवेधि के०) कोटिप्रमाण लोहने वेधनारो एवो (रस के०) रस अने (चंदनरत्नबिंडु के०) सर्वोत्तम चंदनरसनो बिंडु तेना (स्प र्शेपि के०) स्पर्शनेविषे पण (हेम के०) सुवर्ण (ह के०) अने (तप्तलोहं के०) तपावेलुं लोढुं ते (शिशिरं के०) शीतल (किं के०) शुं (न के०) न थाय ना था यज. तेम सुजनना संगथी शुं मूर्ख होय, ते ज्ञानी न थाय ? ना थायज.

आहिं चिलातीपुत्रनी कथा कहे डे. राजगृही नगरीने विषे एक धन श्रेष्ठी रहेतो हतो तेने पांच पुत्रो हता,तथा सुसीमा नामें एक दीकरी हती. तेने चिलाती नामे एक चाकर हतो ते सुसीमासाथें कुचेष्टा करवा लाग्यो तेथी शेठें तेने बाहेर काढी मूक्यो ते कर्मना वशें करी पल्लीपति थयो. चो रनी धाड लइनें तेज शेठना घरमां चोरी करवा रातें पेठो, अने धाडवा लाने कह्युं के जे धन मलशे ते तमें लेजो परंतु सुसीमा स्त्री डे ते हुं राखीश चोरोएं ते धनश्रेष्ठीनुं घर लूट्युं. चिलातीपुत्र सुसीमाने लइनें निकल्यो,तेनी पठवाडे ते सुसीमानो बाप आव्यो तेने जोइने चिलाती विचारवा लाग्यो के हवे आने लइने जवाय तेम नथी पठी ते चिलातीपुत्रें सुसीमानुं मस्तक पोता नी पासें तरवार हती तेणे करी काप्युं. ते जोइ धनश्रेष्ठी रुदन करीने पोतानी दीकरीनुं कलेवर लइ पाडो आव्यो. पठी आगल जतां ते चिलातीपुत्रें का योत्सर्गने विषे रहेला कोइ मुनिने नजरें जोयो,तेवारें तेनी समीप जइने चि लातीपुत्र केहेवा लाग्यो के माहाराज! थोडा अक्षरमां धर्म कहो,नहिं तो त मारुं माथुं कापी नाखीश. तेने मुनियें " उवसमविवेगसंवर, " ए गाथा क हीने आकाशमां गमन कर्युं. ते चिलातीपुत्र तेना स्थानमां रहीने ते गा थाना अर्थने चिंतवन करतो उतो कायोत्सर्गनेविषे रह्यो, तेना शरीरने मको

श्रावक थइने प्रवेश कर्यो. वंदन स्थानकनेविषे अभयकुमारने जुहार कर्यो. पछी अभय कुमारें रौहिणियाने साधर्मिकना मिषे पोताने घेर तेडी जइने भोजन करवा बेसाड्यो भोजनानंतर दहीमां नाखेला सुरापानें करी तेने अचेतन करी नाख्यो पूर्वें घणुंज सारुं धवल करेलुं घर हतुं तेमां शय्यामां सुवाड्यो, ज्यारें जाग्यो,त्यारे जीवता रहो आनंद रहो एम बोलती एवी अने चामर नाखती एवी देवांगना तुल्य वारांगनाउंनी सार्थे वार्त्ता करवा लाग्यो.

तद्दर्शनं किमपि सा सुलसाप येन, प्रादाज्जिनोपि म
हिमानममानमस्यै ॥ नैर्मल्यतः शशिकला नवकेत
कीत्वं, मालातुलां च हरमूर्ध्नि बभार गंगा ॥ १६ ॥

अर्थः–(तत् के०) ते (किमपि के०) अपूर्व एवा (दर्शनं के०) स म्यक्त्वदर्शनने (सा के०) ते (सुलसा के०) सुलसानामनी श्राविका (आप के०) पामती हवी. (येन के०) जे सम्यक्त्वे करीने (अस्यै के०) ए सुलसाने (जिनोपि के०) जिनभगवान् पण (अमानं के०) जेनुं प्र माण नथी एवा (महिमानं के०) महिमाने (प्रादात् के०) आपता हवा अर्थात् सुलसा श्राविकाना सम्यक्त्वने महावीर भगवाने वखाण्युं ते सम्य क्त्वनुं फल छे. त्यां दृष्टांत कहे छे. (शशिकला के०) चंद्रमानीकला तथा (गंगा के०) गंगा ते (नैर्मल्यतः के०) निर्मल पणाथी अनुक्रमें (हरमूर्ध्नि के०) शंकरना मस्तकनी उपर (नवकेतकीत्वं के०) नव केत कीपणाने (च के०) वली (मालातुलां के०) मालानी तुल्यतानें (बभा र के०) धारण करती हवी. अर्थात् ईश्वरना मस्तकने विषे चंद्रकला केत की रूपने शुं नथी धारण करती ? तथा गंगा जे छे ते कुसुममालानी तुल्य ताने शुं धारण करती नथी ? ना करे छे ॥

आहिं सुलसानी कथा कहे छे. राजगृहीनगरीनेविषे क्षायिक सम्य क्त्व धारणकरनारी शीलालंकारें भूषित एवी सुलसा नामनी श्राविका रहे ती हती एकदिवस अंबडनामा परिव्राजकना मुखथी श्रीवीरभगवाने धर्म लाभ ते सुलसाने कहेवराव्यो अंबड नामा पारिव्राजक राजगृहीमां जइने प्रथमना दिवसमां वैक्रिय शक्तियें करी पूर्व प्रतोलीमां चार मुखेंथी चार वेदनो उच्चार करतो हंसवाहनपर बेठो अने अर्द्धांगमां सावित्री छे जेने

एवो साक्षात् पोतें ब्रह्मा थइ बेठो तेने एक सुलसाविना बीजी सर्व प्रजा प्रणाम करवा माटे आवी. तदनंतर बीजे दिवसें दक्षिण प्रतोलीनेविषे गरुडपर बेठेला, लक्ष्मीयें सहवर्त्तमान सुशोभित तथा पीतांबरधारी, श्यामशरीरवाला अने चार हाथनेविषे शंख, चक्र, गदा, पद्म, तेने धारण करनारा एवा साक्षात् वैक्रिय शक्तिथी विष्णु थइ बेठो. तेना दर्शन करवां पण सुलसा शिवाय सर्वलोक गयां. पछी त्रीजे दिवसें पश्चिम प्रतोलिकानेविषे वृषभना वाहनवाला, तथा पार्वती अर्धांगें होवाथी शोभायमान, भस्में करी उद्धूलित अंगवाला, कंठनेविषे मरेला मनुष्यना तुंबडानी माला पेहेरनारा, जटा जूटथी सुशोभित मस्तकवाला त्रिशूलने धारण करनार, कपूर गौर शरीर वाला, एवा साक्षात् शंकरनुं रूपवैक्रिय शक्तिथी कर्युं तेनां दर्शन करवा सर्व सुलसा विना गया. तदनंतर वली चोथा दिवसनेविषे उत्तर प्रतोलीने विषे सोनाना, रूपाना,अने रत्नना ए त्रण प्राकारना मध्यनेविषे दिव्यसिंहासनपर बेठेला, मस्तकउपर त्रण छत्रने धारण करनार, भामंडल, धर्मध्वज, अशोकवृक्ष, धर्मचक्रादि समृद्धियें करी संशोभित, सुर असुर किन्नर तेनी कोडा कोडीयें सेव्यमान, पचवीशमो हुं तीर्थंकर छुं एवो जगत्मां उद्घोष करावतो साक्षात् पोतेंज तीर्थंकर थतो हवो ते दिवसें तेने वांदवा माटे ते गामना सर्व श्रावको आव्या, परंतु सुलसा श्राविका गइ नही. पछी ते अंबडे सुलसाने घेर जइने नमस्कार कर्यो अने कह्युं के तुने धन्य छे कारण के श्रीवीरभगवान पण तारा धर्मने वखाणे छे. इत्यादि वीरभगवाने करेली एवी प्रशंसा सर्वजन सांभले. तेम अंबडे कहीने ते पोतें पण दृढ सम्यक्त्वी थतो हवो ॥ १६ ॥

दूरेर्हतोस्तु महनादि नतीछयापि, श्रेयः सुरोजनि
न सेडुकदर्डुरः किं ॥ कल्पद्रुमः स्मरणतोपि न किं
फलाय, पार्श्वेपि वामृगमदोनहि सौरभाय ॥१७॥

नायें करी (सुरः के०) देव (किं के०) शुं (न के०) नहिं (अजनि के०) थयो. अर्थात् थयोज ? एटले सेडुकब्राह्मण वातें करी कुष्टी थयो ठ तो जलजल करतो मरण पाम्यो तेणें करीने तेने कोइ वावमां देडकानो अवतार आव्यो. तेने लोकोना कहेवाथकी श्रीवीरभगवाननी स्तुति सांभली ने जातिस्मरण उत्पन्न थयुं तेथी श्रीवीरभगवानने नमस्कार करवा चाल्यो तेटलामां रस्तामां घोडाना पगमां आववाथी ते नमन करवानी इच्छा सहित मरण पामवाथी प्रधान देवता शुं थयो नहि ? अर्थात् थयोज ॥

आहिं दृष्टांत कहे ठे. (कल्पद्रुमः के०) कल्पवृक्षनुं, (स्मरणातोपि के०) स्मरण करवा थकी पण (फलाय के०) फलने माटे (किं के०) शुं (न के०) न होय अर्थात् होय. वली बीजो दृष्टांत कहे ठे के (वा के०) वली (पार्श्वेपि के०) पडखामां रहेली एवी (मृगमदः के०) कस्तूरी ते (किं के०) शुं (सौरभाय के०) सुगंध माटे (नहि के०) न होय. ना हो यज. अर्थात् कस्तूरी पडखे पडी होय तो पण सुगंधने आपे ठे. अने कल्पवृक्ष पण स्मरण करवाथी वांछित फल आपे ठे. तेम भगवानने नमवानी इच्छा पण देवपणाने आपे एमां आश्चर्य नथी ॥ १७ ॥

हवे आहिं दर्दुरांग देवनो दृष्टांत होवाथी तेनी कथा कहे ठे. एक दिवस श्रीवीरभगवान् वैभारगिरिने विषे समोसर्या त्यां सर्वलोक वंदन करवाने गया. ए अवसरने विषे प्रतोलीपालक बुभुक्षित एवो सेडुक नामना ब्राह्मणने वडां आपी ते ठेकाणें ते सेडुकने राखीने सर्वलोक प्रभुने वांदवा गया. पछी ते सेडुक ब्राह्मण बीजे स्थानकें जवाने असमर्थ होतो हवो. पण तृषा लागवाथी मरण पामीने आगल रहेली वाव्यने विषे देडको थयो. ते वाव्यमां जल भरवा आवेली एवी श्राविकाना मुखथी श्रीवीरभगवान् आव्या एम सांभलीने जातिस्मरण ज्ञान उपनुं तेवारें वीर भगवानने वांदवाने देडको चाल्यो रस्तामां श्रेणिकराजाना घोडानी खरीथी चंपाइ देडको मरण पाम्यो त्यांथी ते दर्दुरांगनामनो देव थयो पछी ते देवें महोटी रुद्धि सहित श्रीवीरभगवान पासे आवीनें वंदन कर्युं ॥ १७ ॥

ध्यातः परोक्षेपि जिनस्त्रिशुध्या, जीर्णाभिधश्रेष्ठिवदिष्टसिध्यै ॥
सिंधुप्रवृध्यै कुमुदौघलक्ष्म्यै, चकोरतुष्ट्यै विधुरभ्रगोपि ॥ १८ ॥

अर्थः–(जिनः के०) भगवान् (परोक्षेऽपि के०) अप्रत्यक्ष होय तो पण (त्रिशुद्ध्या के०) मन वचन कायानी शुद्धियें करीने (ध्यातः के०) ध्यान कस्या बता (जीर्णाभिधश्रेष्ठिवत् के०) जीर्णनामाश्रेष्ठिनी पेठें (इष्टसिद्ध्यै के०) वांछितनी सिद्धिने आपे छे जेम (अभ्रगोपि के०) आकाशमां रह्यो एवो पण (विधुः के०) चंद्रमा जे ते (सिंधुप्रवृध्यै के०) समुद्रनी वृद्धिने माटे तथा (कुमुदौघजक्ष्म्यै के०) कमलना उधनी शोजानेमाटे तथा (चकोरतुष्टयै के०) चकोरपक्षीनी तुष्टिने माटे शुं न होय ? ना होयज.

आंही जीर्णश्रेष्ठीनी कथा कहे छे. चंपानगरीनेविषे श्रीवीरजगवान् चोमासुं रह्या त्यां जीर्णश्रेष्ठी आवीने वीरजगवानने कहे छे के महाराज! पारणाने दिवसे मारे घेर पारणुं करवा आवजो. पछी वीरजगवान् तो पारणाने दिवसे मिथ्यादृष्टि अभिनवश्रेष्ठीने घेर पारणुं करवा गया, तेणे आ जैनदर्शनी छे एवी बुद्धियें कुल्मापें करी पारणुं कराव्युं. तेना घरमां त्रीश कोडी स्वर्णरत्न अने रूपैयानी देवताउए वृष्टि करी पछी ते नगरना राजायें कोइ एक मुनिनी आगल कह्युं के महाराज! अमारुं नगर धन्य छे जेमां श्रीवीरजगवाने पारणुं कस्युं. पारणुं करावनार जाग्यवान् अभिनवश्रेष्ठी छे. त्यारें मुनियें कह्युं के हे राजा ! ते शेठें तो द्रव्यपारणुं कराव्युं परंतु जावपारणुं तो जीर्णशेठें कराव्युं छे जेने प्रसादें करी ते देवता थाशे माटे जावज प्रमाण छे. एम जाणवुं जाव विना सर्वे मिथ्या जाणवुं ॥ १८॥

नव्योगुरुः सुरतरुर्विहितामितर्द्धि,र्यत् केवलाय कव
लार्थिषु गौतमोऽजूत् ॥ तापातुरेऽमृतरसः किमु शौ
त्यमेव, नाप्रार्थितोऽपि वितरत्यजरामरत्वम् ॥ १९॥

अर्थः–(नव्यः के०) नवीन एवा (गुरुः के०) गुरु, ते (सुरतरुः के० कल्पवृक्ष समान छे. वली केवा छे? तो के (विहितामितर्द्धिः के०) अणयाच्यायका पण प्रमाण विनानी ऋद्धिना देवावाला छे (यत् के०) जे कारण माटे (गौतमः के०) गौतमऋषि तो (कवलार्थिषु के०) कवलनी याचना करनार, पारणार्थी तापसोने विषे (केवलाय के०) केवलज्ञानने माटे (अजूत् के०) थाता हवा अर्थात् गौतम ऋषि कवलनी याचना करनारने केवल ज्ञानना दातार थया (अप्रार्थितोपि के०) नहि प्रार्थना क

रेला एवा पण गुरु (अजरामरत्वं के०) अजरामरपणाने (नवितरति के०) नहि आपे शुं ? अर्थात् आपेज ले. जेम (तापातुरे के०) तापेंकरी आतुर एवा मनुष्यने विषे (अमृतरसः के०) अमृतरस (किमु के०) शुं (शैत्यमेव के०) शीतलपणाने न पामे शुं ? पामेज.

आहिं गौतमस्वामीनी कथा कहे ले. एकदिवस श्रीवीर मुखथकी गौतमें एवुं सांनल्युं के जे स्वलब्धियें करीने अष्टापद पर्वतउपर चढीने चोवीश जिनने नमस्कार करे ते तेज नवमां मोक्षने प्राप्त थाय ले तेवारें गौतमस्वामी गगनमार्गें करी अष्टापद पर्वतनेविषे गया. तेमने गगनमार्गेथकी आवता जोइने पन्नरसोत्रण तापसो चिंतववा लाग्या जे आ पुरुष केवी रीतें आठ योजन उंचा पर्वत उपर चडी शकशे ? तेटलामां तो गौतम गणधर,रविकिरणोनुं अवलंबन करीने गिरिपर चढी गया. त्यां चोविशजिनने नमस्कार कस्यो. रात्रें रह्या त्यां श्रीवज्रस्वामीना जीवें तिर्यक्जृंनकदेव पणे तेने बोध कस्यो. प्रातःकालमां गिरिथकी उतरता गौतमस्वामीयें रस्तामां पंदरसो ने त्रण तापसोने प्रतिबोध्या. पळी ङधना नरेला एकपात्रें करी सर्वेने पारणुं कराव्युं अक्षीणमहाणसी लब्धियेंकरी परम अन्ननी वृद्धि थइ. पांचशे साधुने नलुं करतां केवलज्ञान उत्पन्न थयुं अनेपांचसोने समवसरण जोतां केवल ज्ञान उत्पन्न थयुं. तथा पांचसोने श्रीवीरनगवाननीवाणी सांनलतां केवल ज्ञान उत्पन्न थयुं. कहेलुं ले के ॥ कोडिन्नदिन्नसेवा,लनाम एपंच पंचसय कलिए ॥ पडिबुद्धे गोयमदं, सणेण पणमामि सिद्धिगया ॥ १ ॥ १ए॥

कुबोधमतयोन्नितः कुगुरवोजमाल्यादिवत्, पुनः क्वचन वज्रवत्, सुगुरवोऽमलाजन्मतः ॥ करीरपिचुमंदवन्नघनसारसच्चंदना,घनान च खरोष्ट्रवक्रयतुरंगनद्रद्विपाः ॥२०॥ गुरुद्वारं २

अर्थः–(जमाल्यादिवत् के०) जमाल्यादिकनी पेरें (कुबोधमतयः के०) कुत्सितज्ञानमां ले मति जेनी एवा (कुगुरवः के०) कुगुरुउ जे ले ते मलवा तो (अन्नितः के०) सुलन ले (पुनः के०) वली (जन्मतः के०) जन्मथकी (अमलाः के०) निर्मल, एटले निष्पाप एवा (सुगुरवः के०) सुगुरु जे ले ते तो (वज्रवत् के०) वज्रस्वामीनी पेरें (क्वचन के०) कोइक ठेकाणेज होय. जेम (करीरपिचुमंदवत् के०) केरडा

लींबडा वगेरेना झाड घणा होय ढे पण (घनसारसच्चंदनाः के०) कर्पूर चंदननां वृक्षो (घनाः के०) झाझां (न के०) नथी होतां (च के०) व ली (खरोष्ट्रवत् के०) गर्दन ऊंटनी पेठें कुगुरु घणा होय ढे तथा (जय तुरंगनइद्विपाः के०) जेणें करी संग्राममां जीताय एवा जयजातना अश्वो तथा नइजातीना हाथीयो जे ढे ते घणा (न के०) नथी होता. तेम कु गुरु घणा होय ढे अने सुगुरु घणाज थोडा होय ढे.

आंहिं जमालीना तथा वज्रस्वामीनो दृष्टांत ढे. तेमां प्रथम जमालीनी कथा कहे ढे. श्रीमहावीरस्वामीना जमाइ जमालि नामा राजकुमारें पोता नी स्त्री सहित भगवान पासेंथी दीक्षा लीधी क्रमेंकरी तेने आचार्यपद प्राप्त थयुं तेना परिकरमां पांचशें साधु रहेता एक दिवस ते जमाली आचार्यने शरीरें ज्वर आव्यो त्यारें साधुने कह्युं के मारे माटे संथारो करो,के जेथी हुं सुइ जाउं, त्यारें ते साधुयें पथारी करवा मांमी एवामां वली पाढुं जमालीयें कह्युं के संस्तारण कर्युं के नहिं ? साधुयें कह्युं हा मा हाराज पधारो. ते सांभली जमाली आचार्य त्यां आव्या. पथारी कराती हती ते जोइने बोल्या हे साधुउ ! तमें तो सत्यवक्ता ढो ने खोटुं शुं कर वा बोल्या जे हा संस्तारक कर्यो ढे ? ते बोल्या महाराज अमे असत्य नथी बोल्या त्यारे सूरि कहे ढें के तमें खोटुं बोल्या ? कारण करेलुं कार्य होय ते नेज करेलुं ढे एम कहेवुं एम ते उत्सूत्रप्ररूपनार निन्हव थया. तेमां ते जमालीनी स्त्री महासती ते श्रीमाहावीरनी पुत्री हती, तेने कोइ एक कुं भकार श्रावके कांबलीना एक प्रदेशना ज्वालनें करी बोध कर्यो तेथी बोध पामी पण जमाली प्रतिबोध पाम्यो नही निन्हवज रह्यो.

हवे वज्रस्वामीनी कथा कहे ढे. श्लोक ॥ यः पालनस्थः,श्रुतमध्यगीष्ट, षाण्मासिकोयश्चरिताभिलाषी ॥ त्रिवार्षिकः संघममानयद्यः, श्रीवज्रनेता न कथं नमस्यः ॥ १ ॥ तुंबवनसन्निवेशें धनगिरिनामा श्रेष्ठीनी स्त्री सुनंदा नामें हती तेने वज्र नामें पुत्र थयो ते पारणामां रहेता तेवारें साध्वीउ एकाद शांगी भणती हती ते सांभलतावेंत भणी गया अने त्रणवरसना थया तेवारें तेणे दीक्षा ग्रहण करी. पढी दिन दिन गुणना वधवाथी तेनें गुरुयें आचा र्यपद दीधुं. एक दिवस श्रीवज्राचार्य विहार करता ढता कुसुमपुर नामे नगरें गया ते नगरमां नगरशेठने घेर उतरेली एवी साध्वीउयें श्रीवज्रस्वामीनी रू

के०) आकडाना दुधने (पश्येत् के०) जोवे? अर्थात् खाटी गास तथा आकडाना दूध सामुं जोवेज नहिं, तो नक्षण तो केमज करे.

अहिं शय्यंजव स्वामीनीकथा कहे छे. राजगृही नगरीने विषे मोटी स मृद्धि वालो शय्यंजवनामा जट्ट वसे छे. ते धर्मार्थी थको लोकोने यज्ञ क रावे छे. एटलामां पोताने पाट योग्य पात्रने जोता एवा प्रजव स्वामीयें तेना यज्ञमां बे साधु मोकल्या अने ते साधु बोल्या के अहो कष्ट महोकष्ट तत्त्व कोइ जाणतुं नथी. एवुं वचन सांजलीने शय्यंजवें साधुनें पूछ्युं. के तत्त्व ते शुं छे? ते कहो कारण के जैनदर्शनी कल्पांतमां पण असत्य जाषण करता नथी. त्यारें साधुयें कह्युं के अमारा गुरुपासें आवो ते तत्त्व कहेशे ते सांजली तेनी साथे तेमना गुरु आगल गया. अने गुरुने पूछ्युं के हे गुरो! तत्त्व ते शुं छे? त्यारे गुरुयें कह्युं के तमारो याजक कहेशे ते सांजली पाछा वली तत्काल शय्यंजवें उपाध्यायने पूछ्युं के तत्त्व ते शुं छे? ते कहो. कारण जैनो कल्पना अंतमां पण असत्य बोलता नथी. माटें जो तमे सत्य नहि कहो तो शिरछेदमांज तत्त्व छे एम वेदवाक्य छे माटे तमारुं शिर छेदी नाखीश. एम कही हाथमां खड्ग उपाड्युं तेवारें याज्ञिकोयें तेना यज्ञस्तंजनी नीचें रहेली शांतिनाथनी प्रतिमा देखाडी तेवारें शय्यंजव स्वामीयें प्रतिबोध पामीने सगर्जा स्त्रीने मुकीने गुरुनी पासे व्रतग्रहण करी अनुक्रमें आचार्यपद पाम्या. तेमना पुत्र मनकनुं शेष छ महीनानुं आयु रह्युं तेवारें पोताना पुत्रने माटे दशवैकालिक रच्युं. छ मासनी दीक्षा पालीने ते मनक पण देवलोकें गयो ॥ २१ ॥

लब्धे जडः कोपि हितेऽपि धर्मे, स्तौत्यक्षसौ
ख्यानि शशीव राजा ॥ न पंकजं जेक उपैति
पंकं, क्रमेलकोनाम्रमुपैति निंबम् ॥ २२ ॥

अर्थः–(कोपि के०) कोइ पण (जडः के०) मूर्ख प्राणी, (हिते के०) हित करनार एवा (धर्मेपि लब्धे के०) धर्म प्राप्त थये छते पण (शशी के०) शशी नामा (राजा के०) राजानी (इव के०) जेम (अक्षसौख्यानि के०) इंडियोनां सुखने (स्तौति के०) वखाणे. अर्थात् शशीराजा जिनधर्म पाम्या पछी पण इंडियसुखनें माटे आकांक्षी थयो तेनी पेरें ते जड पण

थाय ढे. आंही दृष्टांत कहे ढे के जेम (जेकः के०) मेडको (पंकजं के०) कमलने (नउपैति के०) प्राप्त थातो नथी परंतु (पंकं के०) गाराने प्राप्त थाय ढे तथा (क्रमेलकः के०) उंट ते (आम्रं के०) आंबाने (नउपैति के०) नथी प्राप्त थातो परंतु (निंबं के०) निंबवृक्षने प्राप्त थाय ढे ॥

आंही शशीराजानी कथा कहे ढे. शुक्तिमती पुरीने विषे सूर अने शशी बे जाइ राज्य करता हता एकदिवसें वेहुजण उद्याननें विषे श्रीशीलसागर उपाध्यायनी पासें धर्मनी देशना सांजलता हता, तेमां आ श्लोक श्रवण कस्रो ते जेम के ॥ मानुषं जवमवाप्य दक्षिणा.वर्त्त शंखमिव ये जवांबुधौ ॥ पूरयेत्सुकृतगांगवारिणा, पापवृत्तिसुरया न चोत्तमः ॥ जावार्थः—जे जीव मनुष्य देह पामीने जवांबुधिने विषे दक्षिणावर्त्त शंखनी पेठें सुकृतरूप गंगाजलने पूरे, ते उत्तमजीव जाणवो. तथा जे जीव जवांबुधिने विषे मनुष्यदेहरूप दक्षिणावर्त्त शंखने पापवृत्तिरूप मदिरायें करीने जरे ढे ते जीव उत्तम नहिं ॥ आ गुरुवाक्य सांजलीने सूरराजा बोध पाम्यो अने धर्माचरण करवा लाग्यो अने शशी राजा उपदेश समजीने इंद्रियसुखने जोगवे ढे, परंतु धर्मनुं आचरण करतो नथी. पढी वृद्धजाइयें घणो समजाव्यो तो पण तेणे विषयासक्ति ढोडी नही. पढी तेमरण पामी नरकें गयो. अने सूरराजा स्वर्गें गयो. त्यां अवधिज्ञानें करी जाइने नरकमां पडेलो जोयो तेवारें ते देव पोतें त्यां नरकमां गयो ते सूर राजानी समृद्धि जोइने शशी राजा पश्चात्ताप करे ढे अने जाइने कहे ढे के हे जाइ! त्यां जइने मारा देहनुं जेदन करो ढेदन करो अने मने स्वर्गसुख मले, तेम करो. ते सांजलीने तेने महोटो जाइ कहेवा लाग्यो के हे जाइ! जीवरहित जडदेहनी कदर्थना करे शुं थाय? पूर्वजन्में जीव होय तेवारें कष्ट कस्युं होय तोज तेने सुख मले, हवे शुं मले? एम कहीनें ते देव पोताना स्थानक प्रत्यें गयो. कह्युं ढे के ॥ नरयद्दो ससिराया, वहु जणइ देहलालणा सुहिर्ज ॥ पडिर्जमि जए जाउ, अंतो मे जाय तं देहं ॥ १ ॥ को तेण जीवरहिए, ए संपयं जाइ एए हुक्क गुणो ॥ जइसि पुरा जायंतो, तो नरए नेव निवडंतो ॥ २॥ जावा उ वसेसं जावय थोवोवि अह्ि विवसाउ ॥ नात कि क्क प्पहिअं, मार

अष्टाब्दोपि तथा विधव्रततपः स्वाध्यायकृत्यासहो,
प्युच्चैर्ध्यानबलेन कर्मरिपुन्निर्मुक्तोतिमुक्तोमुनिः ॥ श
क्त्या गच्छत तन्न किं हितपथं मुक्त्वा प्रमादोत्तरं, श्रूयं
ते च मदालसा तनुभुवो बाल्येपि योगोज्ज्वलाः॥२३॥

अर्थः—हे भव्यजीवो ! (अष्टाब्दोपि के०) आठ वरसनी उमर वालो एवो पण अने (तथाविधव्रततपःस्वाध्यायकृत्यासहोपि के०) जे शास्त्रोक्त रीतें करवा दुःकर एवां अहिंसादिक बारव्रत तथा तपःस्वाध्याय करवामां अशक्त कारण के अत्यंत नानो छे. एवो पण (अतिमुक्तः के०) अतिमुक्तनामा (मुनिः के०) मुनि ते (उच्चैर्ध्यानबलेन के०) उंचा एवा ध्यानबलें करीने (कर्मरिपुन्निर्मुक्तः के०) कर्मशत्रुथकी मुक्त थयो. (तत् के०) ते कारण माटे (शक्त्या के०) पोतानी शक्तियें करी हे भव्यो ! (प्रमादोत्तरं के०) प्रमादथकी उत्तर अर्थात् आलस्य तेने (मुक्त्वा के०) मूकीने (हितपथं के०) हितमार्गप्रत्यें (किं के०) केम (नगच्छत के०) जाता नथी? त्यां दृष्टांत कहे छे. जेम के (मदालसातनुभुवः के०) मदालसाना पुत्रो, (बाल्येपि के०) बालपणामां पण मातायें बोध कस्या छता दीक्षा लइने (योगोज्ज्वलाः के०) ध्यानमां निर्मल थइ गया. एम (श्रूयंते के०) संभलाय छे ॥

आंहिं अतिमुक्तऋषिनी कथा कहे छे. शावस्ती नगरीनेविषे रत्नादित्य नामा कोइ शेठ वसे छे. तेनो पुत्र अतिमुक्त नामा हतो. तेंणे छ वर्षनी उमरमां श्रीशीलंधराचार्यनी पासें दीक्षा ग्रहण करी. एक दिवस श्रीगुरुनी साथें बहिर्भूमिकायें गयो. गुरु जल लइने बीजे ठेकाणे जुदा गया. अने ते क्षुल्लक हतो ते पोतानी पासें कांचली हती तेनें लघु तलावनेविषे फेंकी दीधी अने ते काचली जलमां तरवा लागी त्यारे ते अतिमुक्तनामा क्षुल्लक कहेवा लाग्यो जे जुवो भाइर्ड आ मारी बेडी तरे छे ए प्रकारें बोलता ते पुत्रने गुरुयें दीठो. पछी ज्यारे पोताने स्थानकें आव्यो त्यारें गुरुयें कह्युं के, तुने मोहोटुं पाप लाग्युं कारण के तें मृत्तिकानी अने नीरनी विराधना करी. माटें ईर्यापथिकी रूडी रीतें पडिक्कम ते सांभली ते ईर्यापथिकीने अर्थथी प्रतिक्रमतो छतो " दगमट्टीमक्कडा " ए पद तथा अर्थनो उच्चार करतो शुक्लध्याने करी केवल ज्ञानने प्राप्त थयो.

आ काव्यमां बीजी मदालसानी कथा छे, ते कहे छे. कांचनपुरनें विषे ऋतुध्वज राजा राज्य करे छे. तेनी मदालसा नामे पट्टराणी हती. तेणें अनुक्रमें संसारभोगने भोगवतां पुत्र प्रसव्यो राजायें पुत्रजन्म महोत्सव कस्यो. ते बालक पारणामां पोढ्यो छतो रुदन करे छे. त्यारें ते मदालसा तेने हिंचकावती आ श्लोक कहे छे के ॥ मृत्योर्बिभेषि किं बाल, सच भी तं न मुंचति ॥ अजातं नैव गृह्णाति, कुरु यत्नमजन्मनि ॥ भावार्थः—हे बालक ! मृत्युथकी शा माटें भय पामे छे ? ते मृत्यु बीहीता प्राणीने पण मुकतुं नथी. अने जे उत्पन्न थातो नथी तेने काल पण ग्रहण करतो न थी. माटें तह्मारो फरी संसारमां जन्म न थाय तेवो उपाय कर. एवो अ र्थ जाणीने बालक पण वैराग्यने प्राप्त थयो. रुदन करतो बंध थयो आठ वरसनो थयो त्यांज तेणे योग ग्रहण कस्यो. एम सात पुत्रो मदालसाना उपदेशें करी बालपणामांज तपस्वी थइ गया ॥ २३ ॥

शीलं तपश्च बलदेवमुनिश्चरित्वा, दानं प्रदाय रथकृत्त्रितये ऽप्यशक्तः ॥ एणोमुदा तदनुमोदनया सुरोऽभूत्, योगाद्धि सिद्धिमगमच्चतुरंगितांह्रिः ॥ २४ ॥ शक्तिद्वारं संपूर्णम् ॥

अर्थः—(त्रितये के०) शील, तप, भावने विषे (अशक्तोपि के०) अ शक्त एवो पण (रथकृत् के०) रथकार सूत्रधार, (दानं के०) दानने (प्रदाय के०) दइने (सुरोऽभूत् के०) देवता थतो हवो. अने (बलदेवमुनिः के०) बलदेव मुनि, (शीलं के०) शीलनें (च के०) वली (तपः के०) तपने (चरित्वा के०) आचरण करी देवता थयो तथा (एणः के०) हरिण ह तो ते (मुदा के०) हर्ष थकी (तदनुमोदनया के०) दान शीलना अनु मोदनें करीनेज (सुरोभूत् के०) देवता थयो. (हि के०) यस्मात् (चतु रंगितांह्रिः के०) चतुरंगी इति प्रसिद्ध (योगात् के०) सारा जीवना यो गथकी (सिद्धिं के०) सिद्धिने (अगमत् के०) प्राप्त थयो.

आहीं बलदेवमुनिनी कथा कहे छे, नवम वासुदेव श्रीकृष्ण लघु भाइ विपन्न थये छते तेमना महोटा भाइ बलदेव वैराग्य पामी व्रत ग्रह ण करी तुंगिका पर्वतनी उपर तप करतो हतो एक दिवसें कोइ नगरने वि षे आहारने अर्थें जातां कूवाना कांठा उपर रहेली कोइ स्त्रीयें ते ऋषिने

हीग. ते मुनिनुं रूप जोवाथी आक्षिप्त थइ एवी ते स्त्रीयें घटने बदले पोताना बोकराना गलामां दोरडानो फांसो घाल्यो. रुषियें जोइने कह्युं के अरे आ शुं करे बे ? एम कही ते बोकराना कंठमांथी दोरडी काढी ली धी. पबी ते रुषियें जाएयुं जे धिक्कार बे मारा रूपने के जेथकी आवां अ कार्य थाय बे, माटे म्हारे आजथी कोइ दाहाडे पारणुं करवा नगरमां जा वुंज नही. पबी एक दिवसें ते पर्वतनेविषे काष्ठकापवानें माटे मोहोटा सा थने लेइने कोइ रथकार आव्यो तेने जोइ ते मुनिनी साथें रहेलो मृगलो जातिस्मरणज्ञानेकरीने ते बलदेवमुनिने पारणार्थें त्यां सुतार पासें लाव तो हवो. ते रथकार मध्यान्हें अतिथिने प्राप्त थयेला जोइने हर्षित थयो बतो अन्ननो पूरेलो पोतानो थाल लावी देवाने उत्सुक थतो हवो. रुषि यें पात्र धरी वहोरयुं ते वखत हरिणें ते दाननुं अनुमोदन कर्युं तेज अव सरनेविषे अर्ध कपाइ गयेली एवी झाडनी शाखा वायुना जोरथी नांगी गइ अने ते त्रणे उपर पडवाथी ते त्रणेय मरण पामीने ब्रह्मदेवलोकने विषे देवता थया कह्युं बे के ॥ अप्पहिय मायरंतो, अणुमोयंतो अ सुह गइं लहइं ॥ रहकार दाणअणुमो, अगोअ मिगो जहय बलदेवो ॥

शमेन सिध्यंति मतानि कृष्णा,नुजर्षिवत्तीव्रतपोस्तु वा मा ॥ दि नाधिनाथेन कृतेऽन्नपाके, संधुक्षणं कः कुरुतेऽनलस्य ॥ १५ ॥

अर्थः—(शमेन के०) समतायें करीने (मतानि के०) मनोनिष्ट (कृ ष्णानुजर्षिवत् के०) कृष्णानुजरुषिनी पेठें (सिध्यंति के०) सिद्ध थाय बे माटे (तीव्रतपः के०) तीव्रतप, (अस्तु के०) हो (वा के०) अथवा (मा के०) म हो. तथापि समतायें करी सर्व अनीष्टसिद्ध थाय बे. जेम कृष्णनो अनुज एटले नानेरो नाइ गजसुकुमाल रुषि तपविना श्वसुरे क रेला अग्निना कष्टने सहन करतो बतो सिद्धिने पाम्यो तेनी पेठे सिद्धिने पा मे बे. त्यां दृष्टांत कहे बे. (दिनाधिनाथेन के०) सूर्यें करी (अन्नपाके कृते के०) अन्नपाक करे बते (कः के०) कयो पुरुष, (अनलस्य के०) अग्निनुं (संधुक्षणं के०) सलगाववुं तेने (कुरुते के०) करे. ना कोइ न करे.

आंही गज सुकुमालनी कथा कहे बे. द्वारिका नगरीनेविषे श्रीकृष्णवासु देव राज्य करे बे. तेनो नानो नाइ गजसुकुमाल नामें हतो, ते सर्व दशार्ह

ने घणोज वालो हतो ज्यारें जुवान थयो त्यारें श्रीकृष्णे तेने बे कन्या प रणावी श्रीनेमीनाथनी पासें धर्म देशना सांजली प्रतिबोध पामी बेहु कन्या नो त्याग करी ते दिवसेंज व्रत ग्रहण करतो हवो. तेणे जगवानने पूछ्युं के महाराज! मने क्यारे क्यां मोक्षप्राप्ति थाशे प्रज्जुयें कह्युं के,हमणांज स्मशा नमां जो कायोत्सर्ग करे, तो मोक्ष थाय. आ वात गजसुकुमाल सांजली ने स्मशानमां जइ कायोत्सर्गमां उनो रह्यो. ते समयने विषे श्वसुर सोमि ल नामा ब्राह्मणें तेने जोयो अने ते केहेवा लाग्यो के हे पापी! मारी पु त्रीने मुकीने आवो आ पाखंड शुं करे छे? एम कहीने ते दुरात्मायें खे रना काष्ठना अग्निना अंगारानुं गाडुं तेनी उपर नाख्युं अने त्यांथी चा ल्यो गयो. ते गज सुकुमाल समता आणी उपसर्गने सहन करतो छतो बलतां बलतां केवलज्ञान पामीने सिद्धिने प्राप्त थतो हवो कहेलुं छे के॥ सपरिक्कम्मराउल,वा ईएण सीसे पलिवीए नियए॥ गयसुकुमालेण खमा,तहा कया जहा सिवं पत्तो ॥ १ ॥ ॥ २५ ॥

प्रीत्यै शमी स्वपरयोरपि चंडरुद्र, शिष्योयथात्मनि
गुरावपि केवलर्द्ध्या ॥ सप्तर्षिसंगतिमवाप्य विशा
खनामा,चौरोऽप्यनूद्विलसडुज्ज्वलदिव्यशक्तिः ॥२६॥

अर्थः-(शमी के०) उपशम करनारो प्राणी, (स्वपरयोरपि के०) पो ताने तथा परने पण (प्रीत्यै के०) प्रीतिने माटे थाय छे. (यथा के०) जेम (चंडरुद्रशिष्यः के०) चंडरुद्राचार्यनो शिष्य (केवलर्द्ध्या के०) केवलज्ञा ननी ऋद्धियें करीने (आत्मनि के०) पोतानेविषे तथा (गुरावपि के०) चंड रुद्राचार्यनामा गुरुने विषे प्रीति पात्र थयो. वली लुंटवाने आवेलो (विशाख नामा के०) विशाख नामा (चौरोपिः के०) चोर पण तीर्थयात्राने माटे आ काश मांथी उतरता एवा (सप्तर्षिसंगतिं के०) सात ऋषिनी संगतिने (अ वाप्य के०) पामीने (विलसडुज्ज्वलदिव्यशक्तिः के०) प्रकाशित छे उज्ज्वल दिव्य कीर्त्ति जेनी एवो थयो. वली "झाड घोडो संसार थोडो" एम बोलतो अने घोटकना वृक्षनी चोतरफ बार वरस फरतां फरतां ते दिव्यशक्तिवालो थयो तेज सात ऋषिना उपदेशथी वाल्मीकीऋषि एरीते प्रसिद्ध थयो.

आमां बे दृष्टांतमां प्रथम चंडरुद्रना शिष्यनी कथा कहे छे. ताम्रलिप्ति

नगरीनेविषे गंगदत्तनामा शेठनो सागर नामेंपुत्र हतो तेने पितायें रुडा कुल नी कन्या परणावी. ते पुत्र पोताना सालानी साथे चंमरुद्रगुरुने उपाश्रयें गयो. त्यारें तेना सालायें मशकरी करी जे हे कुमार! तुं शुं गुरुपासेंथी दीक्षा ग्रहण करीश? ताहरे तो गुरुनो पडखुं मूकवुं नहिं एम पोताना बनेवीने कहीने पछी गुरु प्रत्यें कहेवा लाग्यो हे महाराज! आने दीक्षा आपो. ए प्रकारें साले उपहासथी कहे छते गुरुयें कोपायमान थइ नस्में करी तेना शिरनुं लुंछन कखुं. पछी ते कुलीन पुत्र गुरुने कहेवा लाग्यो के, आ नगरने तमे मूकी दीयो, नहिं तर मारा स्वजनो मनें व्रतनो त्याग करावशे त्यारें गुरु कहे छे मारी पींमीमां चालवानी शक्ति नथी माटे हुं चाली शकुं नहिं. तेवारें ते शिष्य गुरुने पोताना स्कंधपर बेसाडीने रात्रियें गाम मूकी चाल्यो गयो उंची नीची जगामां चालतां गुरुने ज्यारे धशको लागे त्यारे ते गुरु शिष्यने दंमथी ताडन करे अने दुर्वचन कहे. जे हे पापिष्ट! सारा मार्गमां केम चालतो नथी? त्यारे शिष्य कहे के हे महाराज! क्षमायें करी महारो अन्याय सहन करो. हुं अपराधी छुं एम पोताना स्वरूपने निंदतो निंदतोज केवलज्ञान पाम्यो ते वात गुरुने जाणवामां आवी तेवारें गुरु पण ते शिष्यने पगें पड्यो अने मिथ्या दुष्कृत देता गुरुने पण केवल ज्ञान उत्पन्न थयुं.

हवे बीजी विशाख चोरनी कथा कहे छे. कांपिल्य नगरनेविषे बलन्न इ नामा श्रेष्ठी वसे छे. तेनो विशाख नामा पुत्र ते बापने अत्यंत वालो हतो. तेथी बालपणामांज ते पुत्रनें सर्वकलामां कुशल अने सर्व शास्त्रनो पारगामी कस्यो तेने यौवनावस्थामां सारी तदनुरूप कन्या परणावी एक दिवस रस्तामां चालतां कौतुकें करी जुगारना स्थानमां जइने बेठो. त्यां थोडे थोडे तेने द्यूत रमवानुं व्यसन थयुं. द्यूत रमतो छतो सर्वस्व हारवा लाग्यो पितायें वाख्यो तो पण रम्या विना रहे नहिं एम करतां बापना घरनी सघली पुंजी हारी गयो. एक दिवस ते पापीयें वनमां फरतां मूर्त्तिमंत उपशमरूप एवा सप्तऋषिउने जोया. तेवारें तेनी समीपें आवीने बेठो तेणें धर्मोपदेश कस्यो ते विशाख, लघुकर्मी होवाथी दीक्षा ग्रहण करी तेने अतिचार रहित पालीने सौधर्म देवलोकें देवता थयो. इतिशमप्रकरणं ॥

व्रतमपि बहु चीर्णं सातिचारं कुगत्यै,दिनमपि शुचि मुक्त्यै पुंमरीकादिवत्तत् ॥ अहह दहति चित्रावारिपूरोऽपिशस्यं, भृशमपि कृशपाथः स्वातिजं पाति जंतून ॥ ११ ॥

अर्थः-(व्रतमपि के०) व्रत जे छे ते पण (सातिचारं के०) अति चारोयें सहित (बहु के०) ऊणा दिवस सुधी (चीर्णं के०) पाल्युं होय, तो (कुगत्यै के०) माठी गतिने माटे एटले नरकने माटे थाय छे. (तत् के०) तेज व्रत, (दिनमपि के०) एक दिवस पण (शुचि के०) निरति चार पणायें करीने पाल्युं होय तो (पुंमरीकादिवत् के०) पुंमरीक कुंमरीक बे भाइउनी पेठें थाय छे. जेम कुंमरीकें घणा दिवस पर्यंत व्रत पाल्युं पण सातिचार व्रत पाल्युं तेथी तेने ते नरकने माटे साधनभूत थयुं अने पुंमरीक तेनो भाइ हतो तेणे थोडो काल व्रत अतिचाररहित पाल्युं तो तेने मुक्तिने माटे साधन थयुं. तेम बीजाने पण जाणवुं त्यां दृष्टांत कहे छे (अहह कें०) खेदकारक छे के (भृशमपि के०) अत्यंत एवो पण (चित्रावा रिपूरोपि के०) चित्रा नक्षत्रमां वरसेला मेघना जलनो समूह छे ते पण (श स्यं के०) धान्यने (दहति के०) बाली नाखे छे. अने (स्वातिजं के०) स्वातिनक्षत्रमां वरसेलुं एवुं (कृशपाथः के०) थोडुं एवुं जल ते (जंतून् के०) सर्व प्राणीने (पाति के०) रक्षण करे छे.

हवे आ ठेकाणे कुंमरीक तथा पुंमरीकनी कथा कहे छे. पुष्कलावती विजयमां पुंमरिकिणी नामनी नगरीनेविषे पुंमरीक कुंमरीक नामना बे भाइयो राज्य करे छे. एक दिवस ते बेहुयें गुरुनी पासें देशना सांभलीने बेहुजणा व्रत लेवाना अर्थी थया. एक कहे छे के हुं दीक्षा ग्रहण करीश. बीजो भाइ कहे छे हुं दीक्षा लइश, पछी कोइ रीतें वृद्ध भाइनी आज्ञा लेइने नानो भाइ कुंमरीक दीक्षा ग्रहण करतो हवो. तेणे हजार वरस दीक्षा पालन करी ज्यारें ते कुंमरीक मांदो थयो त्यारें ते ऋषिने पुंमरीक राजायें पोतानें घेर राखी सेवा करी. ते कुंमरीकें रसलांपट्यथकी दीक्षा मूकी दीधी. अत्यंत आहारना प्रयोगें करी गूढविशूचिकानो रोग उत्पन्न थवाथी वैद्योयें कह्युं के आ रसलोलुप छे माटे एने औषध करवुं अयोग्य छे एम मानी औषध न करवाथ। ते रौद्रध्यानेंकरी मरण पामी नरकमां गयो. पछी पुंम

रीक तो मनःशुद्धियें करी थोडा दिवसज दीक्षा पालीने सर्वार्थसिद्धिविमानने विषे देव थयो ॥ वास सहस्संपि जइ, काऊणं संजमं सुविउलंपि ॥ अंते कि लिठ्ठभावो, नवि सिज्झइ कंमरीउ व ॥१॥ अप्पेणवि कालेणं, केवि जहा गहिय सील सामन्ना ॥ साहंति नियय कज्जं,पुंमरीय महारिसि व जहा ॥२॥

व्रतेन शुचिनापि किं किमथ सद्गुरूपासनै, रुदायिनृपमारकश्रमणवत्सपापात्मनः ॥ शिरःस्थविषहृन्मणिः फणिगणः किमानंदनः,स चंदनवनस्थितः किमथ वा जगत्तापहृत् ॥ १८ ॥

अर्थः–(सपापात्मनः के०) पापयुक्त जेनुं मन छे एवा पुरुषने (शुचिना के०) पवित्र एवा (व्रतेनापि के०) व्रतें करीने पण (किं के०) शुं ? कांहिज नहिं. वली (अथ के०) ए थकी अनंतर (सद्गुरूपासनैः के०) सारा गुरुनी उपासनायें करीने पण (किं के०) शुं ? तो के कांहीज नहिं. केनी पेठें ? तो के (उदायिनृपमारकश्रमणवत् के०) उदायिनृपने मारनार श्रमणनी पेठें, जेम ते पापात्मा उदायि राजाने मारवाने माटे श्रमण थयो. हवे त्यां दृष्टांत कहे छे. (शिरःस्थविषहृन्मणिः के०) शिरने विषे रह्यो छे विषापहारी मणि जेने एवो (फणिगणः के०) सर्पसमूह, मनुष्यने (किं के०) शुं (आनंदनः के०) आनंदनो देनारो थाय छे. ना थातो नथी,परंतु प्रध्वंसक थाय छे. (अथवा के०) अथवा (चंदनवनस्थितः के०) चंदनवननेविषे रह्यो एवो (सः के०) ते सर्पगण (जगत्तापहृत् के०) जगतना तापने हरण करनारो (किं के०) शुं थाय छे ? ना थातो नथी.

आ ठेकाणे उदायिनृपमारक द्रव्यसाधुनो दृष्टांत होवाथी तेनी कथा कहे छे. श्रेणिक माहाराजाना पुत्र कोणिक नृपति तेनो पुत्र उदायी राजा पाडलीपुरने विषे राज्य करतो हतो. ते राजायें पोताना प्रचंमदोर्दंमना बलें करी सर्व सामंत राजाउने स्वाज्ञापालक कस्या. पछी ते सर्व राजाउयें द्वेषभावथी घणुं द्रव्य आपी कोइ एक अधम क्षत्रियने उदायिनृपने मारवाने माटे पाडलीपुरमां मोकल्यो. ते अधम क्षत्रियें बीजो उपाय न जडवाथी कपटें करी सूरिपासें व्रत ग्रहण कर्युं अने ते सूरि, अष्टमी, चतुर्दशी,पूर्णिमा,एटला दिवसने विषे सुधर्मना उपदेशने माटे राजभवनने विषे

साथें त्यां गयो पढी अवकाश जोइने लोहनी ढरीथी तेणे उदायि राजाने चीरी नारव्यो. गुरु जाग्या पढी धर्मना उड्डाहनी बीकथी गुरुयें पोतानुं शिर ढुरीथी कापी नारव्युं. कह्युं ढे के ॥ चेइयदव्व विणासे,रिसिघाए पवयणस्स उड्डाहे ॥ संजइ चउब्रु नंगे, मूलग्गीबोहि लान्नस्स ॥ १ ॥ २७ ॥

साधोरह्वाय सिद्धिः सुचरणकरणैः श्रावकस्यापि हि स्या,
न्मध्येष्टानां नवानां शशिविशदगुणानंदनानंदवृत्तेः ॥
चेन्नौनिः शीघ्रगान्निर्जलधिजलपथैस्तीरदेशेषु पांथाः, के
चिद्यांत्याशु नान्ये हयकरनरथैर्नूपथैः किं क्रमेण ॥ २८ ॥

अर्थः-(साधोः के०) साधुनां (सुचरणकरणैः के०) रूडां एवां चारित्रनां करणें करीने (अह्नाय के०) शीघ्र (सिद्धिः के०) सिद्धि, (स्यात् के०) होय (श्रावकस्यापि के०) श्रावकनी पण (शशिविशदगुणानंदनानंदवृत्तैः के०) चंड्रमा सरखा निर्मल आनंदश्रावकना वर्त्तनेंकरी (हि के०) निश्चें (अष्टानां के०) आठ एवा (नवानां के०) नवनी (मध्ये के०) मध्यमां सिद्धि थाय ढे. त्यां दृष्टांत कहे ढे (पांथाः के०) पथिक जनो (शीघ्रगान्निः के०) उतावलथी चालती एवी (नौन्निः के०) नौकायें करीने (जलधिजलपथैः के०) समुड्रांतर्जलमार्गें करीने (तीरदेशेषु के०) समुड्रना कांगने विषे (यांतिचेत् के०) जाय ढे खरा. परंतु (केचित् के०) कोइ एक (अन्यें के०) बीजा पथिको (हयकरनरथैः के०) घोडा, हाथी अने रथेंकरी (नूपथैः के०) नूमिमार्गें करी (क्रमेण के०) अनुक्रमें (किं के०) शुं (आशु के०) उतावलथी (न यांति के०) नथी जाता?

आ ठेकाणे आनंदश्रावकनो दृष्टांत होवाथी तेनी कथा कहे ढे. आनंद नामा कौटुंबिक श्रीवीरवचनना प्रतिबोधें करी बोध पामेलो हतो श्रमणोनी उपासकतायें करी जगत्मां कीर्त्तिपात्र थयो हतो. तेने घेर चार गायोनां गोकुल हतां. तथा तेनां पांचशें वाहाण चालतां हतां, तथा पांचशें हल खेडाय तेटली जमीन तेने हती. तथा बार करोड ड्व्य हतुं. एम घणो आरंन हतो ते ढतां पण तेना शुद्धमनें करी तेनो मोक्ष थोडा अवतारमां थयो. कहेलुं ढे ॥ मनःशुद्धिमबिभ्राणा ये, तपस्यंति मुक्तये ॥ त्यक्त्वा नावं नुजाभ्यां ते, तितीर्षंति महार्णवम् ॥ १ ॥ तदवश्यं मनःशुद्धि,र्मिडता

पुरुषेण वै ॥ तपःश्रुतयमप्रायैः, किमन्यैः कायदंमनैः ॥२॥ आ श्लोकनो भावार्थः— मननी शुद्धिने न धारण करता एवा जे पुरुष मुक्तिने माटे तप करे छे ते केवा जाणवा के जेम कोइ मूर्ख मनुष्य नावने मूकी समुद्रने हाथथी तरवाने इछे तेवा जाणवा ॥ माटे अवश्यें करी मनःशुद्धिने इछनार पुरुषने बीजा तपादिकें करीने शुं? कांहीज नहिं. जो मनःशुद्धि होय तो सर्व लाभ प्राप्त थाय छे मनःशुद्धि विना जे करीयें ते सर्व व्यर्थ थाय छे ॥२ए॥

सम्यक्त्वोदारतेजा नवनवफलदा वर्त्तरूपव्रतालिः, सिद्धांतोक्तैकविंशत्यमलगुणगतिः श्राद्धधर्मस्तुरंगः ॥ प्रापय्यांतं भवाद्रेर्नयति शिवपुरं कामदेवादिवत्तत् , मिथ्यात्वाधीशशंकादिकहयहरतोः यत्नतोरक्षणीयः ॥ ३० ॥ श्रावकत्वं ॥

अर्थः— (सम्यक्त्वोदारतेजाः के०) सम्यक्त्वरूप छे उदार तेज जेने विषे एवो तथा (नवनवफलदावर्त्तरूपव्रतालिः के०) नवीन नवीन फलदायक चक्रकुंभाली समान द्वादशव्रतपंक्ति छे,जेमां एवो तथा (सिद्धांतोक्तैकविंशत्यमलगुणगतिः के०) सिद्धांतोयें कहेला एवा एकवीश गुणो ते रूप छे गति जेने एवो (श्राद्धधर्मस्तुरंगः के०) श्रावकना धर्मरूप अश्व, ते (कामदेवादिवत् के०) कामदेवादिक श्रावकोनी पेठें (भवाद्रेः के०) संसार पर्वतना (अंतं के०) अंतने (प्रापय्य के०) पमाडीने (तत् के०) ते (शिवपुरं के०) मोक्षनगर प्रत्यें (नयति के०) पमाडे छे, माटे ते (मिथ्यात्वाधीशशंकादिकहयहरतः के०) मिथ्यात्वरूप राजाना शंकाकांक्षादिकरूप अश्वचोरो ते थकी (यत्नतः के०) यत्नें करी (रक्षणीयः के०) रक्षण करवा योग्य छे.

आंहि कामदेवादिकनो दृष्टांत होवाथी तेनी कथा कहे छे. कामदेवनामा कौटुंबिक ते रूद्धियें करी पूर्वें कह्यो एवो आनंदश्रावक समान छे. ते दृढ सम्यक्त्व पालनारो होवाथी अष्टम्यादिक पर्वतिथिनेविषे स्मशानमा कार्योत्सर्ग करे छे. एक दिवस इंद्रमहाराजें दृढसम्यक्त्वविषे तेनी प्रशंसा करी. ते सांभली कोइक देवतायें आवी मदोन्मत्त हाथीनुं तथा भुजंगनुं तथा व्याघ्रनुं, सिंहनुं चित्रविचित्ररूप विकुर्वी कायोत्सर्गमां रहेला कामदेवने क्षोभ पमाडवा उपाय कर्या, परंतु तेथी ते लगारमात्र पण क्षुभित थयो नही. कहेलुं छे के, देवेहिं कामदेवो, गिहिवि नविचालिउ तवगुणेहिं ॥

मत्तगयंद भुयंगम, रक्खस घोरडुहामेहिं ॥ ४ ॥ धन्नासन्नाहणिक्का० ॥ ३० ॥

॥ अथ मृषावादद्वारं ॥

धर्माणां गुरुरेव जंतुषु दयाधर्मस्ततः संस्थितः,
श्रीवज्रायुधचक्रवर्त्तिसदृशां नो संगमादेर्हृदि ॥ चू
लायां कनकाचलस्य रमते कल्पद्रुमोनो मरौ, किं
चैरावणवारणः कुनृपतेर्द्वारेस्ति यः स्वःपतेः ॥ ३१ ॥

अर्थः-(जंतुषु के०) प्राणीयोने विषे (दयाधर्मः के०) दयारूप जे धर्म, ते (धर्माणां के०) धर्मोनी मध्ये (गुरुरेव के०) श्रेष्ठज छे. (ततः के०) तेमाटे (श्रीवज्रायुधचक्रवर्त्तिसदृशां के०) श्रीवज्रायुध चक्रवर्त्ति समान पु रुषोना (हृदि के०) हृदयनेविषे (संस्थितः के०) दयारूप धर्म रहेलो छे ते दयाधर्म, (संगमादेः के०) संगमादिक नव अभव्यना हृदयनेविषे (नो के०) नथी रहेतो ते नव अभव्योनां नाम कहे छे ॥ संगमय कालसूरि,क विला अंगार पालयाडुन्नि ॥ नोजीव गुठ माहिल, उदाइनिव मारठ चे व ॥ १ ॥ ए नव अभव्य जाणवा. संगमदेव अभव्य हतो तेणे श्रीम हावीरस्वामीने उपसर्ग कस्यो. आहिं दृष्टांत कहे छे. (कल्पद्रुमः के०) क ल्पवृक्ष, (कनकाचलस्य के०) मेरुपर्वतनी (चूलायां के०) चूलिकानी उ पर (रमते के०) रह्यो छे. परंतु (मरौ के०) मरुस्थलिनेविषे (नो के०) रहे नहिं. तथा वली (यः के०) जे (ऐरावणवारणः के०) अहिरावण नामा हस्ती ते (स्वःपतेः के०) इंद्रना (द्वारे के०) द्वारनेविषे (अस्ति के०) छे (च के०) वली (कुनृपतेः के०) दुष्टराजाना घरनेविषे (किं के०) शुं होय ? ना होयज नहिं. तेम दयाधर्म सकलधर्ममां मोहोटो छे ते वज्रायुध जेवा महोटा पुरुषोना हृदयमां रह्यो छे एम जाणवुं ॥

अहिं हवे वज्रायुध तथा संगमदेवना दृष्टांत होवाथी वेहुनी कथामां प्रथम वज्रायुधनी कथा कहे छे. कांचनपुरनेविषे श्रीवज्रायुध नामा राजा राज्य करे छे. ते महापराक्रमी होवाथी शरणें आवेला जीवोनी रक्षा करवा मां कुशल हतो. तेथी तेनुं नाम जगतमां वज्रपंजर करी सहु कहेता हता. एक दिवस सभानेविषे इंद्रमहाराजें तेनुं दयाधर्मसंबंधि पराक्रम वर्णव्युं. ते वातमां अश्रद्धा राखनारा बे देवताउ प्रत्यक्ष पराक्रम जोवाने माटे आ

व्या. तेमां एकजणें पारेवानुं रूप धारण कर्युं अने एकजणे शीचाणा पक्षी नुं रूप धारण कर्युं तेमां पारेवानुं रूप धारणकरनार देवता मारी रक्षाकर मारी रक्षा कर. एवां वचन बोलतो बोलतो वज्रायुधना खोलामां आव्यो. पछ वाडे सींचाण पक्षीना रूपने धरनार एवो देव बोल्यो के ए मारुं नक्ष्य छे ते तुं मने आप. एम बोलतो बोलतो आव्यो. अने कहेवा लाग्यो के हे राजन् ! तुने क्यां दया छे जेमाटे मारुं नक्ष्य जे पारेवुं पक्षी तेतें ग्रहण कर्युं. तेने राजाए कह्युं के तुने जे रुचे ते तुं खावानुं माग्य. त्यारे सींचाणे कह्युं के मांसविना मने काइ रुचतुं नथी माटे महामांस मने तुं आप. त्यारे राजाये पोताना अंगनुंज छेदन करीने अर्पण करवा मांम्युं. ते पछी त्राजवुं मगावी, एकत्राजवामां पारेवाने बेसाड्युं अने एक छाबडामां पोतें बेठो. एवुं तेनुं साहस तथा शरणागत रक्षणत्व जोइनें देवता तुष्टमान थया अने प्रत्यक्ष थइ कहेवा लाग्या के तारी कीर्त्ति अमे इंद्रमहाराजपासें सांनली पण ते वात उपर अमोने श्रद्धा न थइ तेथी तारी पासें प्रत्यक्ष पारखुं जोवा आव्या. परंतु शरणागतना रक्षणमां प्राण खोवामाटे पण तुं उत्कंठित थयो एम कहीने ते देवता देवलोकमां गया. ते राजा वज्रायुधना नवथकी त्रीजे नवें ज श्रीशांतिनाथनामा शोलमा तीर्थंकर थया. यतः ॥ जो अत्तणोहिएसी,अनयं जीवाण दिक्ष निच्चंपि ॥ जह वज्जाउह जम्मे,दिन्नं सिरिसंति नाहेणं ॥ १ ॥

हवे बीजी संगमदेवनी कथा कहे छे. एक दिवस सौधर्मेंद्रे देवताउनी आगल वीरनगवाननुं सत्त्व वखाण्युं. जे त्रण नुवनमां पण श्रीवीरनगवानने कोइ क्षोन करी शके नही. ते वचन न मानतो एवो संगमदेव, अनार्यदेशमां पोलास चैत्यने विषे कायोत्सर्गमां रहेला एवा श्रीवीरनगवाननी समीप आवीने तिहां हस्तीनुं रूप विकुर्वीने पोताना शुंमादंडे उपाडी उपाडी नें प्रनुने गगनने विषे उलाली नाख्या. तो पण वीरनगवान् क्षोन न पाम्या पछी प्रनुनी उपर रजनी वृष्टि करी. पछी सर्प थइने नगवानने मश्या, एम एकज रात्रिमां वीश उपसर्गो कर्या. तो पण क्षोन न पामता एवा प्रनुने जोइने प्रनुना मस्तकनी उपर चक्र मूक्युं. तो पण परानव न पाम्या. एवा माहासत्त्ववाला प्रनुने मानीने पगे पड्यो. पछी सौधर्म देवलोक प्रत्यें जतां इंद्रे तेने वज्रें करी मार्यो अने स्वर्गथकी ते दुष्ट देवने काढी मूक्यो ते हाल मेरुनी चूलिका उपर रहेलो छे ए अनव्य जीव अनंतसंसार पर्यटन करशे ॥

गंधमय थाय छे. तथा (इक्षुरपि के०) शेरडीनो सांठो पण (पीलने के०) पीलवामां (अद्भुतरसः के०) अद्भुतरस रूप थाय छे. अर्थात् अपूर्व स्वाद मय थाय छे ॥ ३३ ॥

आहिं कालिकाचार्यनी कथा कहे छे. तुरमिणी नगरीनेविषे दत्तराजानो मातुल कालिकाचार्य आव्या,तेमने एकदिवस दत्तराजायें पूछ्युं के महाराज ! यज्ञ करवानुं शुं फल छे ? त्यारें गुरुयें कह्युं जे एमां हिंसा होवाथी महापाप थाय छे. त्यारें दत्तराजायें कह्युं के महाराज ! हुं पूछुं बुं तेथी उलटो जबाव शा माटे आपो छो ? हुं तो यज्ञ करवाथी फल शुं थाय ? एम पुछुं छुं तेने गुरुयें कह्युं के नरकमां जवुं एज यज्ञनुं फल छे वली राजायें पुछ्युं के तेवारें हुं मरीने क्यां जइश ? गुरुयें कह्युं तुं नरकमां जइश. ते सांभली क्रोधायमान थइने राजायें पुछ्युं के तमे मरण पामीने क्यां जाशो, तेवारें गुरुयें कह्युं के हुं स्वर्गमां जइश. तेवारें राजायें पूछ्युं महारुं आयु केटलुं छे ? तेने गुरुयें कह्युं सातदिवसनुं ताहरुं आयुष्य छे, ते सांभली राजा गुरुनी पासें सीपाइउनी चोकी राखीने पोताने घेर जइ बेशी रह्यो. सातमे दिवसें प्रधानोयें दत्तराजाने राज्य उपरथी उगाडी तेलनी कडाहमां नाखी तेनुं शरीर पचावीने कुतराने नक्षण कराव्युं ते मरीने नरकें गयो. गुरुपासें बेसाडेला सीपाइउ नाशि गया. ए रीतें कालिकाचार्यने प्राणांत कष्ट प्राप्त थयुं तो पण असत्य नाषण न कर्युं. माटें मरणांते पण असत्य बोलवुं नही ॥

घोरां दुर्गतिमेत्यलीकलवमप्यभ्यर्थितोऽपि ब्रुवन्, वादे नारदपर्वताख्यसुहृदोर्यद्वसुर्नृपतिः ॥ चक्रेऽर्चांविधुरोविरंचिरनृतात् केतक्यनिष्ठा मृषा, साक्ष्यात्किं न हरिर्भवेन महितः,सत्यात्परीक्षाक्षणे ॥ मृषावादद्वारं ॥३४॥

अर्थः—बीजा कोइयें (अभ्यर्थितोपि के०) अभ्यर्थित कर्यो छे तो पण कोइ प्राणी (अलीकलवमपि के०) असत्यवाक्यना लवने पण (ब्रुवन् के०) बोलतो छतो (घोरां के०) नयंकर एवी (दुर्गतिं के०) दुर्गतिने (एति के०) पामे छे. (यद्वत् के०) जेम (नारदपर्वताख्यसुहृदोः के०) नारद अने पर्वत नामना बे स्नेहीना (वादे के०) विवादमां (वसुर्नृप

यनी पत्नीनी करेली प्रार्थनायें करी कूटसाक्षी भरवाथी वसुराजा डुर्गतिने प्राप्त थयो. त्यां लौकिक दृष्टांत कहे बे. (भवेन के०) ईश्वरें (विरंचिः के०) ब्रह्माने (अनृतात् के०) असत्य भाषणथकी (अर्चाविधुरः के०) पूजारहित शुं (नचक्रे के०) न कस्या, ना कस्याज, अद्यापि ब्रह्मा बे ते लोकोयें पूजाता नथी. वली शंकरें (मृषासाक्ष्यात् के०) खोटी साक्षी भरवाथकी (केतकी कें०) केतकीने, (अनिष्टा के०) अनिष्ठित (किंन के०) शुं न करी. अर्थात् करीज. जेमाटे ईश्वरने आजदिन पर्यंत केतकी चडती नथी ए प्रत्यक्ष वात बे. तथा इश्वरें (परीक्षाक्षणे के०) परीक्षा नी वेलाने विषे (सत्यात् के०) सत्यभाषणथकी (हरिः के०) विष्णु, (किं के०) शुं (नमहितः के०) न पूजाया अर्थात् पूजायाज एटले श्रीकृष्ण अद्यापि जगत्मां पूजाय बे ते सत्यभाषणथकी जाणवुं ॥ ३४ ॥

इहां दृष्टांतमां वसुराजा तथा ब्रह्मादिकनी कथा कहेवी जोइयें. तिहां प्रथम ब्रह्मा विष्णुनी कथा कहे बे एकदा ब्रह्मा अने विष्णुने वाद थयो के शिवना लिंगनो आपणने पार पामवो. तेने महादेवजीयें कह्युं के उपर तथा नीचें महारुं लिंग पारविनानुं बे माटे तेनो कोइ पार पामी शके नही तो पण ते वेहु देव पार पामवाने चाल्या, तेमां ब्रह्माजी विष्णुना ना भिप्रदेशथी निकलीने ब मास पर्यंत उपर चाल्या अने विष्णु ब मास पर्यंत नीचें चाल्या, तो पण महादेवजीना लिंगनो पार आव्यो नही एवामां शंकरनां मस्तक उपरथी केतकी नीचें उतरी तेने ब्रह्मायें पूब्युं के तुजने शिवना मस्तक उपरथी उतरतां केटला दिवस थया? तेवारें केतकीयें कह्युं के ब महीना थया ते सांभली ब्रह्मायें विचार्युं जे मने ब महीना थया पण हुं पार पाम्यो नही एम चिंतवी केतकीनें कह्युं के तुं शिवनी पासें एवी साक्षी आपजे के मुझने तमारा मस्तक उपरथी ब्रह्मायें आणी बे. एटलुं असत्य बोलजे. ते वात केतकीयें कबुल करी तेवारें ब्रह्मा त्यांथी पाबा वल्या अने विष्णुने आवी कहेवा लाग्या के हुं ईश्वरना लिंगनो पार पाम्यो तेने टेको आपवा केतकीयें खोटी शाक्षी पूरी तथा श्रीकृष्ण तो सत्यज बोल्या के हुं तो ब महीना पर्यंत ईश्वरनो पार पामवा माटे नीचो गयो पण पार पाम्यो नही एवी रीतें ब्रह्मायें असत्य भाषण कर्युं माटे शिवजीयें ते ब्र

ब्रह्माने अपूज्य कस्या. ते अद्यापि जगत्‌मां कोइ ब्रह्माजीने कोइ पूजतो नथी अने केतकीयें जूठी साक्षी नरी तेथी शिवजीयें तेनो त्याग कस्यो जेमाटे आजपर्यंत केतकीनां फूल महादेव उपर चडतां नथी अने विष्णु सत्य बो ल्या तो तेने महादेवे जगत्‌मां पूज्य कस्या, ते अद्यापि पूजाय छे माटे गमे तेवुं दुःख पडे तो पण सर्वथा असत्य नाषण करवुंज नही असत्य नाषण करनारो पुरुष जे होय ते ब्रह्मा अने केतकीनी पेरें थाय छे.

हवे वसुराजानी कथा कहे छे. शुक्तिमतिपुरीने विषे वसुराजा राज्य करे छे. त्यां क्षीरकदंब उपाध्याय रहे छे. ते पोताना पुत्रने तथा राजाना पुत्र वसुराजाने तथा नारदने ए त्रणने नणावे छे. एक दिवस उपलीनूमियें उपाध्याय रात्रिनेविषे ध्यान करता हता. तेवामां आकाशमार्गेथकी बे मु निनुं एवुं वाक्य सांनल्युं जे आ आचार्यनी पासें त्रण जणशास्त्र नणे छे तेमां बे जण नरकगामी थाशे अने एक जण स्वर्गें जशे. पछी उपाध्या यें त्रणे जणने कुर्कुट वधने माटे मोकल्या तेमां नारद विना बे जणे तो कुर्कुटवध कस्यो माटे ते बेहु जण नरकगामी थाशे अने नारदें वध न कस्यो माटे ते स्वर्गगामी थाशें. अनुक्रमें उपाध्याय मरण पाम्या, तदनंतर पर्वतें तो " अजैर्यष्टव्यं " ए वाक्यनो आम अर्थ कस्यो जे पशुयें करी य ज्ञ करवो, तेने नारदें कह्युं के हे नाइ! उपाध्यायें तो अज शब्दनो अर्थ त्रण वर्षनी जुनी व्रीहि कहेली छे. एम बेहु जणनो विवाद थतां थतां एक बीजायें एवुं पण लीधुं के जेनुं बोलवुं खोटुं ठरे, तेनी जिह्वानुं छेदन करवुं. ते बेहुजणे कबुल कस्युं. अनें वसुराजा जे उपाध्यायनो त्रीजो शिष्य हतो तेणे पर्वतनी माताना उपरोधेंकरी खोटी साक्षी पूरी ने कह्युं के अज ए टले बकरो जाणवो एम उपाध्यायें कह्युं हतुं आवीरीतें खोटुं बोल्यातांज शासनदेवीयें तेने सिंहासन उपरथी ऊंधो नाखीने चपेटीयें करी मरण प माड्यो ते मरीने नरकमां गयो, माटे जे कोइ असत्य नाषण करशे तथा असत्य साक्षी नरशे ते वसुराजानी पेरें दुःखी थाशे. ए वैराग्यद्वार पूरुं थयुं.

वैराग्यशस्त्रहतमोहतमोऽमलांत, दृष्ट्या पटिष्टपरि
दृष्टहिताहितार्थः ॥ चौरोपि शुध्यति शमेन दृढ
प्रहारी, वांछति वा दवजवोजलदेन किं न ॥ ३७ ॥

नानाकलाविदपि लाघवमेति चौर्या, द्विद्यानताम्रफ
लचौर इव प्रियार्थे ॥ दोषो महानधिगुणेपि हि लांछ
नाय, रत्नाकरे कुजलवच्छशवत् सुधांशौ ॥ ३६ ॥

अर्थः–(नानाकलाविदपि के०) नानाप्रकारना कलाने जाणनार एवो पुरुष पण (चौर्यात् के०) चोरपणाथी (लाघवं के०) लघुपणाने (एति के०) प्राप्त थाय छे. केनी पेठें ? (प्रियार्थे के०) पोतानी स्त्रीने माटे (विद्यानताम्रफलचौर इव के०) विद्यायें करीने नम्र करेला एवा आंबाना फलना चोरनी पेठें. इहां दृष्टांत कहे छे. (हि के०) निश्चें (अधिगुणेपि के०) अधिक गुणवाला एवा पुरुषनेविषे पण (महान् दोषः के०) महोटो दोष, (लांछनाय के०) कलंकने माटे थाय छे. जेम (रत्नाकरे के०) समुद्रने विषे (कुजलवत् के०) क्षार जल जेम लांछनने माटे थयुं छे, तथा (सुधांशौ शशवत् के०) निर्मल चंद्रमाने विषे, शश एटले मृगनुं चिन्ह जे छे ते जेम लांछनरूप थयो छे. तेम घणा गुणमां एक महोटो दोष ते लांछनने माटे थाय छे ॥ ३६ ॥

चोरनी कथा कहे छे. चेलणाराणीनें एकस्तंभुं धवलगृह कराववानी इच्छा थइ. माटे श्रेणिक राजायें देवनुं आराधन करी एकस्थंभवालुं घर बनाव्युं. तेनी पासे एक वाडीमां अत्यंत उंचा आंबाना वृक्ष छे. तेना फल कोइ लइ शके नही. ते नगरमां कोइ आकर्षणी विद्याना जाणोला चांमालनी स्त्रीने आम्र फल खावानो दोहलो उपन्यो. तेवारें चांमालें आकर्षणीविद्यायें आम्र फल ग्रहण कर्यां. चांमालना स्पर्शें आम्र सुकाइ गया. कोइ युक्तिथी अजय कुमारें ते चांमालने पकड्यो तेवारें ते आकर्षणीविद्या श्रेणिकने आपीने छूटो.

ता के०) सुन्नगता प्राप्त थइ. ते केम तोके (ताः के०) ते पोतानी प्रसिद्ध
एवी आठ (प्रियाः के०) स्त्रियो ते (मुदा के०) हर्षें करी (अनेन सम
के०) आ जंबूस्वामीनी साथें (व्रतं के०) दीक्षाने (न्नेजुः के०) न्नजती हवी
(च के०) वली (केवलश्रीः के०) केवलज्ञान रूप लक्ष्मी, ते (अन्याः
ता के०) अन्यने विषे आसक्तिरहित एवी थकी. (सह के०) जंबूस्वामीनी
सार्थेज (जगाम के०) जाती हवी. कारण के, जंबूस्वामी पछी कोइने केवल
ज्ञान उपनुं नथी. ए बे वानां जंबूस्वामीने सुन्नगता दर्शावनारां ठे. केम वे
जेनुं अंत पर्यंत खरुं सौन्नाग्य होय ते स्त्री, पोताना न्नर्त्तारनी सहचरी थाय
ठे. तेम जंबूस्वामीनी आठे स्त्री सार्थेज मोक्षे गइ अने केवलज्ञानरूप स्त्री
पण जंबूस्वामीनी साथें मोक्ष गइ अन्य जीवोने विषे आसक्त रही नहीं।

आंहिं जंबूस्वामीनी लेशमात्र कथा कहे ठे. कुसुमपुरने विषे धनदत्त
नामा शेठना न्नवदत्त अने न्नवदेव नामना बे पुत्रो हता. तेमां न्नवदत्ते
दीक्षा ग्रहण करीने, वली कालांतरें पोताना न्नाइनें बोध देवा माटे त्यां
आव्यो. ते वखत न्नवदेव अर्धी शणगारेली पोताने परण नारी कन्याने मू
कीने महोटा न्नाइने वांदवा गयो. महोटा न्नाइयें वार्त्ता करावतां गुरुनी
पासें पहोंचाड्यो. गुरुयें तेने प्रतिबोधी दीक्षा आपी. ते तेणे न्नावविना
पालवा मांमी. जेवारें महोटो न्नाइ न्नवदत्त साधु मरण पाम्यो तेवारें न्हानो
न्नाइ फरी न्नोगनी अन्निलाषा करतो नगरमां आव्यो, ते वात पूर्वें परणवा
माटे सज्ज थयेली अर्ध शणगारेली स्त्रीयें जाण्याथी तेणें तेने बोध कस्यो
पछी ते मरण पामीनें पुंमरीकिणी नगरीयें पद्मरथ राजानी वनमाला नामे
राणीनी कूखें शिवकुमार एवे नामें पुत्रपणें उपन्यो, बापें तेनें बत्रीश कन्या
उ परणावी. तेणें पूर्वजन्मना न्नाइ सागरचंद मुनि पासेंथी धर्म श्रवण
करी संवेग पामी ब्रह्मचर्यव्रत ग्रहण कस्युं. पछी दीक्षा लेवानी इछा करी
त्यारें अशक्त जाणी तेना पितायें वास्याथी ते दृढधर्मा श्रावक थइने प्राशुका
न्ननो आहार वहोरी एकांतरें उपवास करीने पारणुं करे. पछी वली चोवी
श वर्षपर्यंत यावत् ठठ तपें पारणामां आंबेल कस्युं ते मरीने विद्युन्माली
नामें देव थयो, त्यांथी च्यवीने राजगृहीनेविषे ऋषन्नदास शेठनी धारिणी
स्त्रीनी कूखें पुत्रपणें उपन्यो, एनुं नाम जंबू पाड्युं. तेणे इछा विना पण
पितानां आग्रहथी आठ कन्या परणीने एकेक स्त्रीने नवी नवी कथा सं

जलावी प्रतिबोध पमाडे बे, तेवामां प्रजवनामा चोर ते जंबूकुमारना घर मां पांचशें चोरोनी साथें चोरी करवा आव्यो. तेणें बानो जनो रहीने जंबूकुमारें स्त्रीउने करेलो बोध सांजली वेराग्य पामी दीक्षा लीधी. ते व्रत पालीने देवता थयो. अने जंबूकुमार तथा तेनी आठे स्त्रीयो मोक्ष पामी॥ ३७॥

न व्रजतः सकलशर्मकृतश्चलन्ति धीराः सुदर्शन इव व्यसने धनेऽपि॥ शेषोऽब्धिवृद्धलहरीचलशैलव ल्गद्भूजुग्नमौलिरपि विश्वजरं बिजर्त्ति ॥ ३८ ॥

अर्थः–(सकलशर्मकृतः के०) समस्त सुकृतने करवावाला एवा (धीराः के०) धैर्यवान पुरुषो (व्यसने के०) संकट आव्या बतां अथवा (धनेपि के०) धन प्राप्त थया बतां पण (सुदर्शन इव के०) सुदर्शन शेठनी पेठें (व्रजतः के०) धर्मथी (न चलंति के०) चलायमान थता नथी. त्यां दृष्टांत कहे बे. (शेषः के०) नागेंद्र ते, (अब्धिवृद्धलहरीचलशैलवल्गद्भूजुग्न मौलिरपि के०) सागरना मोटा मोजाथी चंचल थयेला एवा जे पर्वत तेथी ध्रुजती अने विदारण पामती एवी जे पृथ्वी तेणें करी वक्र थयुं बे मस्तक जेनुं एवो बतो पण (विश्वंजर के०) जगतनो जार तेने (बिजर्ति के०) धारण करे बे. पण मूकतो नथी. तेम मोटा लोको धर्मने क्यारें पण मूकता नथी॥

इहां सुदर्शन श्रेष्ठिनी कथा कहे बे. चंपानगरीमां दधिवाहन राजा तेने अजया नामें राणी बे. ते नगरीमां सुदर्शन नामें शेठ वसे बे. तेनी देवांगना सरखी मनोरमा नामें स्त्री बे. तेना पांच पुत्रो बे. एकदा सुदर्शन शेठनुं रूप जोइने अजया राणी अनुरागणी थइ त्यारें शेठने तेडवा माटे पोतानी सखीनें मोकली. शेठने बुद्धि उपनी तेथी कह्युं के हुं नपुंसक बुं, माटे ए काम करवाने शक्तिमान नथी. दासीयें पण ते प्रमाणेंज राणीने कह्युं. वली एकदा शेठना पुत्रोने मार्गें जता जोइने राणीयें विचार्युं के नपुंसकने संतति होय नही, माटे शेठें मने बेतरी बे. तो हवे एनुं फरीथी उपाय करीश. एक दिवसे कोइ कार्यनिमित्तें शेठने उपाडी लावीने राणीयें प्रार्थना करी ते शेठें न मानी त्यारें तेणे स्त्री चरित्र करी बुमो पाडी जे शेठें महारी लज्जा लीधी एवो होकार करवाथी राजायें शेठने शूलीयें चडाव्यो. त्यां शीलना प्रजावथी शूली ते सिंहासन रूप थइ पबी राजाना सेवकोयें खड्गना प्रहार कर्या

ते मुकुट, कुंमल, हार, बाजुबंधादिक आभूषण रूप थता हवा. ए रीतें कष्ट पडतां पण शेठें अंगीकार करेलुं शीलव्रत न मूक्युं ॥ ३७ ॥

विश्वोपकारि धनमल्पमपि प्रशस्यं, किं नंदवत् फलम
मानपरिग्रहेण ॥ प्रीत्यै यथा हिमरुचिर्न तथा हिमौ
घः, स्याद्वा यथाऽत्र जलदो जलधिस्तथा न ॥३ए॥

अर्थः—(अल्पमपि के०) अल्प एवुं पण (धनं के०) धन, (विश्वोप कारि के०) सर्वलोकना कार्यने साधवावालुं ठतुं (प्रशस्यं के०) वखाणवा योग्य थाय ठे. परंतु (अमानपरिग्रहेण के०) संख्याविनाना परिग्रहें करी (नंदवत् के०) नंदराजानी पेठें (किं फलं के०) शुं फल होय ठे? अर्थात् कांहीपण फल ते धननुं न थयुं. आहीं दृष्टांत कहे ठे. (यथा के०) जेम (हिमरुचिः के०) चंद्रमा, (प्रीत्यै के०) लोकने प्रीतिने माटे (स्यात् के०) होय, (तथा के०) तेवीरीतें (हिमौघः के०) हिमनो समूह (न के०) न होय, (वा के०) अथवा (यथा के०) जेम (जलदः के०) मेघ ते (अत्र के०) आ जगत्ने उपकारी थाय ठे, (तथा के०) तेम (जलधिः के०) समुद्र, ते क्षारजलें करी निरुपयोगी ठे माटे (न के०) थतो नथी.

आहीं नंद राजानी कथा कहे ठे, पाटली पुरनेविषे उदायिन राजाने कोइक पुरुषें साधुवेष धारण करीने कंकलोहनी बुरीयें मारी नांख्यो! ते राजाने ठोकरो न होवाथी राज्य रेढुं थयुं, ए अवसरे हजाम पिता अने गणिका मातानो पुत्र नंदनामा हतो तेणें पोताना आंतरडायें वीटायला पाटलीपुरने स्वप्नमां दीतुं. प्रातःकालें स्वप्नपाठकने स्वप्ननुं फल पूछ्युं, पाठकें पण पोतानी दीकरी तेने परणावीने पठी कह्युं के तमने आ पुरनुं राज्य मलशे. नंदपण ते कन्या परणीने घेर आव्यो. अनुक्रमें पंचदिव्य हाथीयें नंदने अभिषेक कस्यो, नंद राज्य गादीयें बेठो, परंतु कोइ मंत्री प्रमुख ते नंदनी आज्ञा माने नही. त्यारें नंदें भिंत उपर चित्रेला असवारोनी सामुं जोयुं. के तरत ते चित्रेला स्वारोयें उतरीने अनेक सामंतोने पाडी नांख्या. ते जोइ सर्व सामंत भय पामीने तेनी आज्ञा पाली ते पठी ते नंदनी गादीयें जे वेसे ते नंद कहेवाय, ते सर्वे नंद त्रणे खंमना अधिपति थया. सोनाना पर्वतो कराव्या; पण ते द्रव्य कोइ सुकार्यमां वपरायुं नहि ॥ ३ए ॥

धन्यः परिग्रहमितैः सुखभाङ्न पापी, प्राङ्मम्मणो व
णिगिवेंधहदीश्वरोऽपि ॥ वंद्यः कृतादरमहो जगतोमित
श्रीः, पश्याधिकाऽधिकवसुः शशभृत् कलंकी ॥ ४० ॥

अर्थः—जे मतिमान् पुरुष, (परिग्रहमितैः के०) परिग्रहना मानें करी वर्त्ते, ते (धन्यः के०) धन्य जाणवो. तथा (सुखभाक् के०) सुखभोगवनारो जाणवो परंतु (पापी के०) लोभी पुरुष (न के०) सुखभाग् नथी. केनी पेरें? तो के (प्राक् के०) पूर्वें (ईश्वरोपि के०) कोटी धनवालो पण (इंधहृत् के०) नदीना पूरथी तणातां लाकडांनो लावनार (मम्मणोवणिगिव के०) मम्मण शेठज जेम कहेलुं ठे के ॥श्लोक॥ असंतोषवतः सौख्यं, न शक्रस्य न चक्रिणः ॥ जंतोः संतोषभाजोय,दभयस्यैव जायते ॥ भावार्थः— असंतोषवाला इंद्रने तथा चक्रीने पण सुख होतुं नथी अने निर्धन होय परंतु संतोषी होय तो ते सुखी जाणवो. (पश्य के०) जो के (शशभृत् के०) चंद्रमा, (मितश्रीः के०) थोडी लक्ष्मीवालो होय त्यारे (अहो के०) आश्चर्य ! (कृतादरं के०) कस्यो ठे आदर जेने विषे एवो जेम तेम (जगतः के०) जगतने (वंद्यः के०) वंदन करवा योग्य होय ठे. अने (अधिकाधिकवसुः के०) अधिकवसु वालो चंद्रमा, तथा अधिकवसुवालो पुरुष, (कलंकी के०) कलंकवालो होय ठे अने कोइने नमन करवा लायक होतो नथी. पुरुष पक्षें वसु एटले द्रव्य जाणवुं अने चंद्रपक्षें वसु एटले किरण जाणवां.

आहिं मम्मण शेठनी कथा कहे ठे. राजगृही नगरीयें श्रेणिक राजा राज्य करे ठे. एक दिवस चेलणाराणी गवाक्षमां बेठां, तेवामां अर्द्धरात्रिने समयें अत्यंतपवने युक्त वरसाद वरसवा मांमयो, तेथी नदियें पूर आव्युं तेवारें नदीमां तणातां एवा लाकडाउने बाहिर खेंचता एवा कोइ वृद्ध पुरुषने विजलीना उद्योतें करीने, राणीयें दीठो. तेवारें श्रेणिक राजाने राणीयें कह्युं के महाराज ! मेघ राजानी पेठें तमें पण भरतामांज भरो ठो? परंतु जुवो आवा दुःखी दरिद्री आपणा नगरमां वसे ठे. तेना भरण पोषणनी तमे चिंता पण करता नथी वाह !! तमारुं आतो मोहोटुं चातुर्य भासे ठे ? तदनंतर श्रेणिक राजायें पण तणातां काष्ठोने खेंचनार वृद्धपुरुषने गोखमांथी जोयो, तेथी तेने बोलाव्यो अने पूछ्युं के अरे तुं

कोण छो ? त्यारें ते बोल्यो के हुं वणिक छुं, मारुं नाम मम्मण छे. मह्रारे एक बलद सुवर्ण रत्ननो छे अने बीजो बलद मेलववा माटे आ काम करुं छुं तेपछी ते कौतुक युक्त थइने श्रेणिक राजायें चेलणा राणीनी सार्थे जइ ते मम्मण शेठना घरमां त्रीजी भूमिने विषे सुवर्ण अने रत्न समूह्थी जडेला एवा शीगडावाला बे वृषभोने नजरें दीठा. ते जोइने श्रेणिकराजा चेलणा राणीने कहे छे के हे स्त्रि ! आवी समृद्धि मारा भंमारमां पण नथी. वली श्रेणिक राजा ते मम्मण शेठने पूछे छे के एटली समृद्धि छतां तमो नदीमांथी काष्ठने शामाटे खेंचीलीयो छो ? त्यारें मम्मण शेठें कह्युं के हे राजन् ! आकाष्ठोनां रत्न थाशे. त्यारें राजायें कह्युं के थोडी किम्मतनां काष्ठोयें करी रत्न ते केम थाय ? त्यारें तेणें कह्युं के आ बावना चंदननां घणी किम्मतनां काष्ठो हुं लउं छुं ते वात सांभली साश्चर्य थइने राजा तथा राणी बेहु पोताने घेर गयां. ए रीतें जन्मपर्यंत मम्मण शेठें छते धने कोइने कांही पण आप्युं नहिं तेम खाधुं वापर्युं पण नहीं ॥ ४० ॥

सीमस्थिते जलनिधौ निजकालमाने, शीतातपांभसि च जीवति जीवलोकः ॥ दिग्मानमानमपि जंतुहिताय तद्वत्, स्याच्चारुदत्तवदिहाप्रयतोति दुःखी ॥ ४१ ॥

आंहिं चारुदत्तनी कथा कहे छे. मिथिलापुरीने विषे भीमक शेठनो पुत्र चारुदत्त नामा हतो, तेने परणाव्या पछी तेना पितायें चतुराइने माटे वेश्याने घेर मूक्यो. त्यां तेणे वेश्याना व्यसनें करी पोतानुं घर पण छोड्युं तेना पितायें मरती वखतें ते चारुदत्तने बोलावी कह्युं के हे भाइ! जन्म पर्यंत तें मारुं वाक्य पाळ्युं नहिं. हवे बीजुं कांहिं कहेतो नथी परंतु एटलुंज कहुं छुं के कष्टना वखतमां नवकारनुं स्मरण करवुं एम कहीने चारुदत्तनो पिता मरण पाम्यो. पछी तेनुं द्रव्य बधुं क्षीण थइ गयुं. तेवारें निर्धन थको पृथ्वीमां भमतां भमतां ते चारुदत्तने कोइ योगी मळ्यो तेणें सुवर्णरस लेवा माटे रसकूपिकामां नाख्यो त्यां कूपिकामां मरण पामता एवा कोइ पुरुषने तेणे नवकार संभळाव्यो अने पोतें चंदनघोने पुछडे वळगीने कुवाथी बाहेर नीकळी पोताना मामाने गाम गयो. तिहां मामायें अने पोतें कपास ग्रहण कर्यो, ते कपासने अरण्यमां लइ जता हता, तेवामां दावाग्नियें करी कपास बळीने राख थइ गयो. पछी मामो कहेवा लाग्यो जे आपणे एक चामडानी धमणमां प्रवेश करीने रहियें, तो मांसना लोभी भारंड पक्षीयो आपणने उपाडी उडीने सुवर्णद्वीपमां लइ जाशे. तिहां सुवर्ण ग्रहण करशुं? एम कही मामायें पोताना लीधेला बे बकराने मारवा मांड्या तेने चारुदत्तें वार्यो तो पण मामायें सांभळ्युं नही चारुदत्तें पोताने बेसवा माटे जे मामायें बकरो आप्यो हतो तेने मरती वखतें नवकार संभळाव्यो पछी मामो भाणेज बेहु जण ते बकराउनी खालनी धमणमां बेठा तेवारें भारंडपक्षीयें ते बेहुने मांसनी भ्रांतिथी उपाडी लीधा, ते सुवर्णद्वीपें लइ नाख्या, त्यां खोलमांथी निकळीने ते चारुदत्त एक मुनिनी पासें गयो. जेवामां ते गुरुनी पासे बेसे छे तेवामां एक देदीप्यमान कांतियें विराजमान देवता तिहां आव्यो, तेणे प्रथम चारुदत्तने वांदीने पछी मुनिने वंदन कर्युं ते जोइ कोइ बीजा त्यां बेठेला पुरुषें मुनिने पूछ्युं महाराज आ देवतायें प्रथम चारुदत्तने वांदी पछी मुनिने वंदन करवारूप विपरीत वंदन केम कर्युं? गुरुयें कह्युं एणे पूर्वले भवे आ देवताना जीवने नवकार संभळाव्यो हतो तेना प्रभावथी ए देवता थयो छे माटे एनो गुरु होवाथी एणे चारुदत्तने वंदन कर्युं. पछी चारुदत्तने ते देवें केटलुं एक द्रव्य आप्युं अने पाछो तेने स्वस्थानकें पोहोंचाड्यो. अर्थात् ए चारुदत्त बहुकर्मी हतो परंतु तेणे पो

ताना पिताना उपदेशथी नमस्कार आपवानो नियम राख्यो तो ते पाछो सुखी थयो अने देवतायें पण पूर्वजन्मनो गुरु मानीने नमस्कार कस्यो.

न गम्यं नागम्यं क्वचिदकृतदिग्यानविरतेः, कथं वा स्याद्विश्वे सततगतिरेकत्र वसतिः ॥ द्वितीयद्वीपांतर्गतभरतमाक्रांतजलधि, र्नकिं द्रौपद्यर्थे हरिरमरकंकापुरमगात् ॥ ४१ ॥

अर्थः– (अकृतदिग्यानविरतेः के०) नथी करी दिग्गमननी विरति जेणे एवा सदा भ्रमण शील जीवनें (नगम्यं के०) नही जवा लायक तथा (नागम्यं के०) नही आववा लायक एवुं स्थानक (क्वचित् के०) कोइपण कालें नथी कारणके (विश्वे के०) जगतमां (सततगतिः के०) निरंतरगति करनारो एवो जे वायु ते (एकत्रवसतिः के०) एकस्थलने विषे रहेनारो (कथं के०) केवी रीतें (स्यात् के०) होय ? ना होयज नहिं. अहिं दृष्टांत कहे छे. (हरिः के०) श्रीकृष्ण, (द्रौपद्यर्थे के०) द्रौपदी वालवाने माटे (आक्रांतजलधिः के०) उल्लंघन कस्यो छे समुद्र जेणे एवा छता (द्वितीयद्वीपांतर्गतभरतं के०) बीजो द्वीपजे धातकी खंड तेमां रहेला भरतक्षेत्रमां (अमरकंकापुरं के०) अमरकंकापुर प्रत्यें (किंनअगात् के०) शुं न जता हवा ? एम दिशिनुं प्रमाण न करनारा पुरुषने सर्वत्र फरवुं प्राप्त थाय छे. तेमाटे दिग्परिमाण व्रत अंगीकार करवुं ॥ ४१ ॥

आहिं श्रीकृष्णनी कथा कहे छे. द्वारिकानगरीने विषे श्रीकृष्ण राजा राज्य करे छे. अने पांच पांडवो हस्तिनापुरमां राज करे छे एक दिवस द्रौपदी पांडवनी स्त्री, काचमां मोढुं जोतां हतां तेवामां नारदमुनि आव्या तो तेने द्रौपदीयें सन्मान आप्युं नही तेथी नारदजीयें तेनी उपर कोपायमान थइने धातकी खंडमां अमरकंकापुरीने विषे पद्मोत्तर राजानी पासें द्रौपदीना स्वरूपनुं वर्णन कस्युं ते सांजली पद्मोत्तर राजायें देवनुं आराधन करी, देवना बलें करी द्रौपदीने पोताना नगरमां मगावी लीधी ते पछी नारदमुनियें आवी श्रीकृष्णने सर्व वात कही ते सर्व वृत्तांत जाणीने श्रीकृष्ण, पांडवोये सहवर्त्तमान समुद्रनुं उल्लंघन करीने धातकी खंडमां अमरकंकायें आवीने संग्रामने विषे पद्मनाजराजानो पराजय कस्यो नृसिंहरूप धारण करीने ते नगरनो किल्लो तोडी नाख्यो तेवारें स्त्रीनुं रूप धारण करी पद्मो

ताना पिताना उपदेशथी नमस्कार आपवानो नियम गम्यो तो ने पाछो सुखी थयो अने देवतायें पण पूर्वजन्मनो गुरु मानीने नमस्कार कर्यो.

न गम्यं नागम्यं क्वचिदकृतदिग्यानविरतेः, कथं वा स्याद्विश्वे सततगतिरेकत्र वसतिः ॥ द्वितीयद्वीपांतर्गतभरतमाक्रांतजलधिं, र्नकिं द्रौपद्यर्थे हरिरमरकंकापुरमगात ॥ ४७ ॥

अर्थः- (अकृतदिग्यानविरतेः के०) नथी करी दिग्गमननी विरति जेणे एवा सदा भ्रमण शील जीवनें (नगम्यं के०) नही जवा लायक न था (नागम्यं के०) नही आववा लायक एवुं स्थानक (क्वचित् के०) कोइपण कालें नथी कारणके (विश्वे के०) जगतमां (सततगतिः के०) निरंतरगति करनारो एवो जे वायु ते (एकत्रवसतिः के०) एकस्थलने विषे रहेनारो (कथं के०) केवी रीतें (स्यात् के०) होय ? ना होयज नहिं. अहिं दृष्टांत कहे छे. (हरिः के०) श्रीकृष्ण, (द्रौपद्यर्थे के०) द्रौपदी वालवाने माटे (आक्रांतजलधिः के०) उल्लंघन कर्यो ने समुद्र जेणे एवा छता (द्वितीयद्वीपांतर्गतभरतं के०) बीजो द्वीपजे धातकी खंड तेमां रहेला भरतक्षेत्रमां (अमरकंकापुरं के०) अमरकंकापुर प्रत्यें (किंनअगात् के०) शुं न जता हवा ? एम दिशिनुं प्रमाण न करनारा पुरुषने सर्वत्र फरवुं प्राप्त थाय छे. तेमाटे दिग्परिमाण व्रत अंगीकार करवुं ॥ ४२ ॥

अहिं श्रीकृष्णनी कथा कहे छे. द्वारिकानगरीने विषे श्रीकृष्ण राजा राज्य करे छे. अने पांच पांडवो हस्तिनापुरमां राज करे छे एक दिवस द्रौपदी पांडवनी स्त्री, काचमां मोढुं जोतां हतां तेवामां नारदमुनि आव्या तो तेने द्रौपदीयें सन्मान आप्युं नही तेथी नारदजीयें तेनी उपर कोपायमान थइने धातकी खंडमां अमरकंकापुरीने विषे पद्मोत्तर राजानी पासें द्रौपदीना स्वरूपनुं वर्णन कर्युं ते सांभली पद्मोत्तर राजायें देवनुं आराधन करी, देवना बलें करी द्रौपदीने पोताना नगरमां मगावी लीधी ते पछी, नारदमुनियें आवी श्रीकृष्णने सर्व वात कही ते सर्व वृत्तांत जाणीने श्रीकृष्ण, पांडवोये सहवर्त्तमान समुद्रनुं उल्लंघन करीने धातकी खंडमां अमरकंकायें आवीने संग्रामने विषे पद्मनाभराजानो पराजय कर्यो नृसिंहरूप धारण करीने ते नगरनो किल्लो तोडी नाख्यो तेवारें स्त्रीनुं रूप धारण करी पद्मो

वान कीधो मार्गे चालतां वर्षाकाल आववाथी राजा, दशपुरनगरें रह्यो तिहां पर्यूषण पर्व आववाथी उदायिराजायें उपवास कर्यो अने चंम्रप्रद्योतने रसोइयो पूछवा गयो के आपना सारुं केवी रसोइ बनावीयें ? चंम्रप्रद्योतें कह्युं के जे उदायिराजा सारु बनावो तेज रसोइ म्हारा वास्ते बनावजो तेने रसोइयें कह्युं के उदायिराजाने आज उपवास छे ते सांजली चंम्रप्रद्योतने शंका उपनी जे आज एणे मने जेर आपवानो विचार कर्यो जणाय छे माटेज जुदी रसोइ बनाववानुं कहे छे एवा जय थी बोल्यो जे म्हारे पण आज उपवास छे अने हुं पण जैनधर्मी छुं उदायीनो साधर्मीजाइ छुं पण मने विस्मरण थइ गयुं तेथी रसोइ करवानुं कह्युं तेवात रसोइये जइ उदायिनराजा आगल कही तेवारे उदायिनें विचार्युं जे ए धूर्त्तताथी बोल्यो छे खरो तो पण म्हारो साधर्मीजाइ थइ चूको माटे एनी साथे मिछाडुक्कड आप्याविना शुद्ध सामायिक करवुं सूजे नही पछी उदायि राजायें चंम्रप्रद्योतने कह्युं के म्हारी साथे मिछाडुक्कड कर्य तेणे कह्युं म्हारुं राज्य पाछुं आप्य पछी बीजो कोइ उपाय नही होवाथी तेने छोडी मूकीने पाछुं उज्जयणीनुं राज्य आप्युं अने पूर्वे उदायिराजायें ते चंम्रप्रद्योतना ललाटमां दासीपति ए राजा छे एवा अक्षरनो डांम दीधो हतो ते डांमने ढांकी मूकवाने माटे तेने सोनानो पट्ट बंधावी सन्मान करीने उज्जयणी नगरीयें मोकली दीधो ते दिवसथी चंम्रप्रद्योतना कपालमां सुवर्णपट्टबंध निरंतर रह्यो एवीरीतें अविज्ञात पणाथी उपवासादि सामायिक करे तो पण लाज थाय तेवारे विज्ञातपणाथी फलप्राप्ति थाय तेमां तो कहेवुंज शुं ? माटे सामायिक अवश्य करवुं ॥४७॥

देशावकाशिकमपास्य सकाकजंघ, कोकाशवद्विप
दमेति जनः प्रमादी ॥ धत्ते प्रज्ञां दिनचरोन निशा
करोऽपि,न स्तूयतेऽपि च पयोमृदकालदृष्टः ॥४८॥

अर्थः–(जनः के०) मनुष्य, (देशावकाशिकं के०) देशावकाशिकव्रतने ग्रहण करीने पछी (प्रमादी के०) आलसु थयो छतो. ते देशावकाशिक व्रतने (अपास्य के०) तजीने (सकाकजंघकोकाशवत् के०) काकजंघ सहितकोकाशनीपेठें (विपदं के०) छुःखने (एति के०) पामे छे. एज अ

थीनो दृष्टांत कहे छे. (दिनचरः के०) दिवसे विचरनारो एवो (निशाकरोपि के०) चंद्रमा पण (प्रजां के०) कांतिने (न धत्ते के०) धारण करतो नथी. (च के०) वली (पयोभृत् के०) मेघ, (अकालवृष्टः के०) अकालें वरसे तो (न स्तूयते के०) वखणाय नही. तेम देशावकाशिकने त्यागनारो कोकाशनामा सूत्रधार, अने काकजंघनामा राजा काकजंघनी तोरें जे वर्त्ते, ते सकाकजंघ कोकाश जाणवो. तेनी पेरें थाय ॥ ४९ ॥

आहिं काकजंघकोकाशनो दृष्टांत होवाथी तेनी कथा कहे छे. विदृद्दा नगरीनेविषे काकजंघनामा राजा अने कोकाशनामा सूत्रधार वसे छे. ते कांकजंघराजा लाकडाना संचायें गोठवेला एवा गरुडपर बेसीने फरे छे तथा ते कोकाशिक लाकडाना संचावाला अश्वउपर बेसीने फरे छे. ते सूत्रधारने लोको कोकाशी एवे नामे कहे छे. ते काकजंघ परमजैन हतो, पोतानी विद्याना बलेंकरी समेतशिखर पर्वत तथा अष्टापद प्रमुख तीर्थने विषे श्रीदेवाधिदेव अरिहंत प्रभुने नमस्कार करे छे एकदिवस ते काकजंघें, प्रातःकालनेविषे गुरुनी पासें जइ आ नगरथी माहारे बाहेर जावुं नही. एवा देशावकाशिक व्रतने ग्रहण कर्युं. पछी एक दिवस ते एक पोतानाज गामनेविषे संचायें करी चालता एवा काष्ठना घोडा उपर बेसीने गगनमार्गनेविषे चालवा लाग्यो गामबाहेर निकली गयो दैवयोगें ते काष्ठना अश्वनी कीलिका भांगी. तेवारें आकाश थकी पर्वतनी उपर पड्यो. त्यां मरण पामवाथी व्रतनी विराधनायेंकरीने ते काकजंघ डुर्गतिने पाम्यो. माटे व्रत ग्रहण करवुं ते कोइ दिवस अजाण पणायें पण छोडवुं नही ॥ ४९ ॥

गुरुवचनवियोगाऽज्ञातदेशावकाशो, विपदि तरतिपुण्याच्चेद्यथा लोहजंघः ॥ हयमयवृषभावाः स्वामिना वाह्यमानाः सततमभितगत्या किं हितं स्वस्य कुर्युः ॥ ५० ॥ देशावकाशिकव्रतद्वारं ॥

हतो ते गुरुना वचनविना देशावकाशक व्रतमां अज्ञात थयो बतो विपत्ति मां आव्यो तो पण तस्यो, ते पुण्यथकीज तरतो हवो त्यां दृष्टांत कहे छे. (हयमयवृषन्नावाः के०) अश्व, उंट, बेल ए सर्वे (स्वामिना के०) स्वामियें (वाह्यमानाः के०) वहन कस्या बता (सततं के०) निरंतर (अमितगत्या के०) अप्रमित गतियें करी (किं के०) शुं (स्वस्य के०) पोताना (हितं के०) हितने (कुर्युः के०) करे? ना नज करे ॥ ५० ॥

आहिं लोहजंघनो दृष्टांत होवाथी तेनी कथा कहे छे. उज्जयिनी नगरीनेविषे चंम्प्रद्योत नामा राजा राज्य करे छे. तेनो लोहजंघ नामा दूत हतो. ते प्रतिदिवस चोवीश योजन चालतो हतो. एकदा सामंत राजाउयें विचास्युं के ज्यारें ए लोहजंघ पोताना राजानी सेवा माटें आपणा नगरमां आवे, त्यारे तेने युक्तियें करीने मारवो कारण के ते आपणा समाचार लइ जाय छे, तेथी आपणने कष्ट थाय छे. एम विचारी एक सलाह करीने पछी ज्यारें ते लोहजंघ तेमना गामथी पाछो वल्यो, त्यारें तेने संबलनें माटें विष मिश्रित लाडु करीने आप्यो. जेवामां ते रस्तामां खावानो आरंन्न करे, तेवामां त्रण छीक थइ त्यारें तेने शंका पड्याथी ते लाडु खाधो नहिं, अने जोयुं तो विषमिश्रित लाडु दीठो पछी पोतें उजयणीमां चंम्प्रद्योत राजा पासें आवीने ते लाडुनुं वृत्तांत सर्व संन्नलाव्युं अने ते मोदक राजाने आप्यो. राजानी पासें ते वखत अन्नयकुमार बंदीवान हतो तेने राजायें पूछ्युं जे हे कुमार! आ मोदकमां शुं छे? त्यारें अन्नयकुमारें कह्युं के, आमां दृष्टिविष सर्प उत्पन्न थयो छे. त्यारें ते लाडु राजायें ली लाखडवाला वननेविषे नाखी दीधो. तेमांथी निकलेला सर्पनी दृष्टियी थोडाज वखतमां ते लीलुं वन सुकाइ गयुं. ए देशावकाशिकव्रत संपूर्ण थयुं.

हवे पौषधव्रतनुं द्वार कहे छे.

शुचिपौषधेन मुनितुल्यतेति किं, जिनतापि मेघ
रथवन्नवेत् क्रमात् ॥ किमु निर्धनस्य मणिनेष्टदा
यिना, धनितुल्यतैव नृपतुल्यता न किं ॥ ५१ ॥

अर्थः—(शुचिपौषधेन के०) पवित्र पौषधें करी गृहस्थने पण (मुनितुल्यता के०) मुनिनुं तुल्यत्व थाय छे (इति के०) ए प्रकारें होय तेमां (किं के०)

शुं केहेवुं वली तेने (मेघरथवत् के०) मेघरथनी पेठें (जिनतापि के०) तीर्थंकर पणुं पण प्राप्त थाय छे. ते मेघ रथनो जीव अनुक्रमें दशमे नवे श्रीशांतिनाथ नामें तीर्थंकर थयो. त्यां दृष्टांत कहे छे. जेम के (इष्टदायिना के०) इच्छित पदार्थने देनारा एवा (मणिना के०) चिंतामणियें करीने (धनितुल्यताएव के०) धनवाननी तुल्यताज (नवति के०) होय छे? परंतु (नृपतुल्यता के०) राजानी तुल्यता (किं के०) शुं (न के०) न होय. ना होयज अर्थात् व्रतें करीने गृहस्थने केवल मुनितुल्यताज थाय अने जिनता न थाय एम जाणवुं नहिं परंतु जिनता पण थायज.

आहिं मेघरथ राजानो दृष्टांत होवाथी तेनी कथा कहे छे. शावस्ती नगरीने विषे मेघरथ राजा राज्य करे छे. एकदा ते राजानी सनामां निमित्तियो आव्यो. ते निमित्तियाने मंत्रीयें पूछ्युं जे कांइक निमित्त कहो त्यारें नैमित्तियें कह्युं के आजथी सातमे दिवसें आ राजाना मस्तक उपर वीजली पडशे. ते वचनथी सर्व जनो नयभ्रांत थइ गया. पछी राजायें पूछ्युं के हवे मारे केम करवुं? त्यारें केटलाएकें कह्युं के वाणमां बेशीने समुद्रमां जावुं, केटलाएकें कह्युं के गिरिगुफामां जइने रहेवुं. त्यारे तेनो एक सुबुद्धि नामें प्रधान हतो,तेणें कह्युं के ए सर्व जवा द्यो अने देवधर्माराधन करो. जेणें करी सर्व विघ्नोनो नाश थइ जाय. पछी राजायें नवीन पाषाणनो यक्ष कराव्यो अने तेने राज्यानिषेक कराव्यो. अने पोतें सर्व त्याग करी जिनालयमां बेसी पौषध व्रत धारण कर्युं, सातमो दिवस ज्यारे आव्यो, त्यारें वीजली पाषाणना यक्ष उपर पडी, तेथी ते यक्ष तरत फाटी गयो एटले राजाने मूकी यक्षनी उपर विद्युत् पडी. अने राजा पौषधव्रतना प्रतापें करी बची गयो ते राजाना जीववाथी सर्व जनोने परम प्रमोद थयो. ते राजा अनुक्रमें दशमे नवें श्रीशांतिनाथ नामा तीर्थंकर थया. एम पौषधना प्रतापें करी मरण दुःख मट्युं तथा अनुक्रमें तीर्थंकरपणुं प्राप्त थयुं. माटे सर्व नव्य जीवें पौषधव्रत धारण करवुं ॥ ५१ ॥

अर्थः-(यत् के०) जे (औषधं के०) औषधसमान एवुं (सत्पौषधं के०) उत्तम एवुं पौषधव्रत, (विविधसिद्धिदं के०) अनेक प्रकारनी सिद्धिने देना रुं छे. अने (तद्भावनाशमरसार्द्रहृदग्निलीढः के०) ते पौषधनी भावना तेज शम तद्रूप जे रस,तेणें आर्द्र एटले अकठोर नम्र एवुं जे हृदय तेज अग्नि, तेणें करी आस्वादित एवो (सागरेंदुः के०) सागरचंद्र नामा राजा, (स्फुटहेम मूर्त्तिःके०) प्रगट छे सुवर्ण समदेह जेनो एवो छतो.(स्वः के०) स्वर्गने विषे (अजनि के०) उत्पन्न थयो. बीजुं सुवर्ण पण रससंयोगें करी अग्नियें करी फूंक्युं होय तो शुद्ध थाय छे. केनी पेरें ? तो के (अब्धिमंथा के०) मेरु नामनो (अद्रिरिव के०) पर्वत तेज जेम (और्वाग्नितप्तविमलः के०) वाडवाग्निना तापें करी निर्मल थाय छे तेनी पेरे. मनुष्य पण प्रधान पौ पध व्रतें करी शुद्ध थाय छे एटले ते प्राणीना कर्ममलनो नाश थाय छे.

आंहिं सागरचंद्रनो दृष्टांत होवाथी तेनी कथा कहे छे. द्वारिकाने विषे श्रीकृष्णनो श्वसुर उग्रसेन राजा हतो तेना पुत्रनुं नाम नभसेन हतुं. तेने परणाववा माटे तेना पितायें कमलामेला नामनी कोइ एक कन्या जोइ मुकेली हती, पछी नभसेनने घेर नारदमुनि आव्या, तेनुं सन्मान नभसेनें कर्युं नहीं तेथी रुष्ट थइने नारदें कमलामेलानुं रूप पट्टमां लखीने बलदेवना पुत्र सागरचंद्रनी पासें देखाड्युं. ते कन्यानुं चित्र जोइने सागरचंद्र, कमला मेलानुं नाम गांफानी पेरें बोलवा लाग्यो, अने भूताभिनिवेश जेम थाय, तेम थइ गयो, ते पछी बाकछलें करी सांबकुमारें ते कमला मेला सागर चंद्रने परणावी आपी. नभसेन ते कन्या पोताने न परणवाथी सागरचंद्र सायें द्वेष वहन करवा लाग्यो, एकदा श्रीनेमीनाथनी पासें सागरचंद्रें श्रा वकनां व्रत लीधां तेने पालन करतो स्मशानमां कायोत्सर्ग रात्रियें करतो हतो तिहां भमतां भमतां दैवयोगें नभसेनें ते सागरचंद्रने कायोत्सर्गमां

किमपिफलमपूर्वं संविन्नागस्य साधो, र्यदनिलषित सि
द्धयै मूलदेवेऽपिमाषाः॥ कृशमपि हि सुपात्रे न्यस्तमुच्चैः
फलद्धयै, ननु तृणमपि धेनोर्दुग्धपीयूषवृद्धयै ॥ ५३ ॥

अर्थः—(यत् के०) जे (संविन्नागस्य के०) संविन्नाग व्रतनुं (किम पि के०) काइक अनिर्वचनीय (फलं के०) फल, (अपूर्वं के०) अपूर्व थाय ले. जेम (मूलदेवेपि के०) मूलदेव नामा राजाने विषे पण (साधोः के०) साधुने आपेला (माषाः के०) अडदना बाकला, ते अनिलषितसि द्धयै के०) इच्छित पदार्थनी सिद्धिने माटे थया. (हि के०) निश्चे ते वात घटे ले जेम के (सुपात्रे के०) सुपात्रने विषे (कृशमपि के०) थोडुं पण (न्यस्तं के०) आरोपण करेलुं लतुं (उच्चैः फलद्धयै के०) ऊंचा फलनी ऋद्धिने माटे थाय ले. केनी पेठे? तो के (धेनोः के०) गायने दीधेलुं ए वुं (तृणं के०) घांस पण (दुग्धपीयूषवृद्धयै के०) दुग्धरूप अमृतनी वृ द्धिने माटे थाय ले तेम ए पण जाणी लेवुं ॥ ५३ ॥

आंहिं मूलदेवनो दृष्टांत होवाथी तेनी कथा कहे ले. कौशांबी नगरीने विषे रिपुमर्दननामा राजा तेनो पुत्र मूलदेव करीने हतो, ते अत्यंतदान नो व्यसनी हतो एक दिवस कोइना मुखथी नवुं काव्य सांनलीने तेने एक लक्ष्द्रव्य आपतो हवो, ते सांनली तेना पितायें दाननो निषेध कर्यो. त्यारें ते लानो मानो घरथकी निकली गयो. अनुक्रमें एक अटवीमां आ व्यो त्रणदिवसें ते अटवी उत्तरी गयो त्यां कोइक नगरीनेविषे नमतां नमतां ते मूलदेवने वाफेला बाकला कोइयें आप्या. ते बाकला पोते न खाधा अने नाव सहित कोइ एक साधुने वहोरावी आप्या. ते जोइ ते वननी देवीयें तुष्टमान थइ मूलदेवने कह्युं वरदानके माग्य, कहेलुं ले के ॥ धन्नाणं सुनराणं, कुम्मासाहुंति साहु पारणए ॥ गणियंच देवदत्तं, दंति सहस्सं च रज्जं च ॥ १ ॥ तेवारें मूलदेवें एक हजार हाथी युक्त राज्य मा ग्युं, देवीयें पण तेज वरदान आप्युं, त्यार पली नगर प्रत्यें जातां कोइक गामनेविषे पर्णकुटीमां सुतो, त्यां पोताना मुखमां चंद्रप्रवेश थयो एवुं स्वप्न दीठुं प्रनातें उठीनें मूलदेवें तेनुं फल कोइ स्वप्नपाठकने पूछ्युं. तेवारे ते स्वप्नपाठकें प्रथम तो मूलदेवनें पोतानी पुत्रीनुं पाणिग्रहण कराव्युं.

के०) समग्र धान्यनो लालची होय, (सः के०) ते (किं के०) शुं (केवल शालितंडुलान् के०) केवल शालितंडुलनेज वावे छे. ना सर्व धान्यने वावे छे.

आहिं संप्रतिराजानो दृष्टांत होवाथी तेनी कथा कहे छे. पाडलीपुर नगरे मौर्यवंशने विषे अलंकार रूप चंद्रगुप्त राजा राज्य करे छे. तेना पुत्र नुं नाम बिंदुसार तेनो पुत्र अशोक तेनो पुत्र कुणाल तेनो पुत्र संप्रति राजा थयो ते जन्म्या पछी दशमे दिवसेंज राज्य पाम्यो ते राजा वासुदेव नीपेठे त्रण खंमनो जोक्ता थयो एकदिवस गवाक्षमां बेठा राजायें रस्तामां जतां आर्यसुहस्ति सूरिने जोया. तेना दर्शन करतांज संप्रति राजाने जा तिस्मरण उत्पन्न थयुं तेथी तरत आवीने सूरीने वंदन कर्युं. राजायें पुछ्युं हे जगवन्! अव्यक्त सामायिकनुं शुं फल छे? गुरुये कह्युं के. राज्य प्राप्त थाय. पछी गुरुजीये ते संप्रति राजानो पूर्वजव कहेवा मांड्यो. हे राजा! तुं पूर्वजवनेविषे कोइक रंक हतो अमारा साधुपासे लाडुनी याच ना करी हती. अमोयें कह्युं के तुं जो अमारो शिष्य थायतो लाडु आपी यें त्यारें तें मोदकनी इच्छाथी प्रव्रज्या ग्रहण करी. ते पछी ते मोदकादि अति स्निग्धाहारथी गूढ विशूचिकायें करी पीडा पामतो छतो पण धर्मनुं अनुमोदन करतो मरण पामीने हमणां तुं संप्रति राजा थयो छो. ए अ व्यक्त सामायिकनुं फल छे एवुं गुरुवचन सांजली वली गुरुपासें दीक्षा ले वानी प्रार्थना करी. त्यारे गुरुयें कह्युं के तारे राज्य संबंधि जोगावली कर्म शेष रह्यांछे ते सांजली राजायें पोताना नगरनेविषे दान शाला उ मंमावी तथा श्रीजिनप्रासादें मंमित पृथ्वी करी एक लाख, जिनबिंबो कराव्यां अनार्य देशोमां पण धर्मनी प्रवृत्ति करावी. चतुर्विध श्रीसंघनी ज क्ति करवा मांमी, अंते मरण पामीने स्वर्गें गयो माटे सातक्षेत्रमां आपना र प्राणी सजतिने पामेछे तेमां शंका जाणवी नहीं ॥ ११ ॥

कैकमपि के०) एकेक एवुं पण (क्षेत्रं के०) क्षेत्र, (सुजुष्टं के०) सारी रीतें सेवन करेलुं (सर्वमपि के०) सर्व प्रकारना महोटा एवा पण फलनुं आपनार थाय छे. केनी पेठें? तो के (कल्किजवत् के०) कल्किना पुत्र दत्त नी पेठें. त्यां दृष्टांत कहे छे (यत् के०) जे (पुण्यं के०) पुण्य (आरात्त्रिकसप्तदीपैः के०) आर्त्तिना सात दीवायें करीने थाय छे (तत् के०) ते पुण्य (मंगलदीपकेन के०) एक मंगलदीपें करीने पण थाय छे ॥ ५६ ॥

आहिं कल्किपुत्र दत्त राजानो दृष्टांत होवाथी तेनी कथा कहे छे. श्री महावीरना निर्वाण दिनथी बे हजार वर्षना प्रांतमां पाटलीपुरमां कल्कि राजा थाशे. ते पूर्वजवना मित्र देवतायें आपेला त्रिशूलें करी जरतना त्रण खंमने साधशे, तेनो पुत्र दत्त नामा थाशे, ते श्रीजिनना प्रासादोयें करी पृथ्वी अखंमित करावशे, परंतु श्री सर्वज्ञना जांखेला वचनने छद्मस्थ जाषितनी पेठें असंबद्ध जाणशे. हवे ते कल्किना पुत्र दत्तराजें जिनप्रासाद रूप एकक्षेत्र सेवन सारी रीतें कर्युं, तो पण तेथी ते सुखी थयो ॥ ५६ ॥

बिंबं महल्लघु च कारितमत्र विद्यु, न्माल्यादिवत् परजवे
ऽपि शुजाय जैनम्॥ ध्यातुर्गुरुर्लघुरपीप्सितदायिमंत्रः,
प्राग्दौःस्थ्यजाविघनविघ्नजिदे न किं स्यात्॥ ५७ ॥

अर्थः-(अत्र के०) आ जवने विषे जो (महत् के०) अत्युत्कृष्टथी पांचशे धनुष प्रमाण अने (लघु के०) न्हानुं अंगुष्टपर्व समान एवुं (जैनं के०) जिननुं (बिंबं के०) बिंब (च के०) वली (कारितं के०) करावेलुं होय, तो ते (विद्युन्माल्यादिवत् के०) विद्युन्मालि देवादिकनी पेठें (परजवेऽपि के०) परजवने विषे पण (शुजाय के०) शुजने माटे थाय छे. कह्युं छे के "उक्कोसपणधणुसय, लहुआअंगुठ पव समा" ए वचन छे. हासा प्रहासा देवांगनाना अधिकारने विषे स्वर्णकारनो जीव विद्युन्माली देव, तेणें जिनबिंब कराव्युं, ते तेने लाजने माटे थयुं. इहां दृष्टांत कहे छे (गुरुः के०) गुरु, अने (लघुरपि के०) लघु एवो पण (ध्यातुः के०) ध्यान करनारने (इप्सितदायि के०) इच्छित पदार्थने आपनारो एवो (मंत्रः के०) मंत्र जे छे ते (प्राग्दौःस्थ्यजाविघनविघ्नजिदे के०) पूर्वजन्मनां करेलां जे डुष्कर्म तेणें

करी थयेला एवा जे निविड विघ्नो तेना भेदवाने माटे (किं के०) शुं (नस्यात् के०) न थाय? अर्थात् थायज ॥ ५७ ॥

आहिं विद्युन्माली देवतानी कथा कहे छे. चंपानगरीने विषे कुमारनंदी स्वर्णकार रहेतो हतो. ते अत्यंत विषयी हतो, ते एक दिवस हासाप्रहासा व्यंतरीयोनुं रूप जोइने वाणमां वेशी पंचशैल द्वीपप्रत्यें गयो. त्यां ते बेहु व्यंतरीयोयें कह्युं के, आ सात धातुनुं बनेलुं एवुं जे तारुं शरीर तेनाथी अमारे कांइ प्रयोजन नथी. एम कही ते बेहु जणीउयें तेने मूकी दीधो. परंतु तेना रूपथी मोह पामेलो एवो ते सोनी तेने मित्रें वार्यो तो पण अग्निनीमरणने साधतो हवो. त्यांथी मरण पामीने हासाप्रहासा व्यंतरीयोनो भर्त्ता थयो, परंतु आभियोगिक देवमां उपन्यो छे माटे आभियोग कर्मे करी अत्यंत शोक करतो हतो. त्यारें देवता थयेला एवा तेना पूर्वभवना मित्र देवें तेने कह्युं के हे मित्र! हवे शोक कर नही. तुं नवीन जिनबिंब कराव्य, के जेथी ते पुण्यें करीने तारी सजति थाय, एवा पोताना मित्र देवना वचनें करी ते विद्युन्माली देवतायें चंदननी मूर्त्ति करावी. तेने लाकडानी पेटीमां मूकीने समुद्रमां तरती मूकी. क्रमें करीने ते पेटी उदायी राजाना हाथमां आवी. ते पुण्यना योगें करी ते विद्युन्माली देवता थोडाज भवोमां सिद्धि पामशे ५७

निर्मायाऽर्हतबिंबमार्हतपदस्थानाग्रिमं धार्मिकः,स्वा
त्मानं च परं च निर्मलयति स्तुत्यर्चनावंदनैः ॥ मंत्रि
श्रेणिकसूरिवार्द्रकसुतं मोहांधकारे स्थितं,दीपः पुण्य
ति कस्य कस्य न मुदं श्रेयः श्रियामास्पदम् ॥५८॥

अर्थः-(धार्मिकः के०) धार्मिक एवो पुरुष ते (आर्हतबिंबं के०) जिनबिंबने (निर्माय के०) निर्माण करीने (स्वात्मानं के०) पोताना आत्माने (च के०) वली (परं के०) परना आत्माने (आर्हतपदस्थानाग्रिमं के०) अरिहंत सिद्ध पवयवणेत्यादिने विषे अग्रिम स्थान एटले प्रथम स्थानप्रत्यें पमाडे छे. अथवा आर्हत्पदवीनुं स्थान जे मोक्ष ते मोक्षमार्गने विषे अग्रेसरपणाने पमाडे छे. इहां दृष्टांत कहे छे. (मंत्रिश्रेणिकसूरिव के०) श्रेणिकनो पुत्र अभयकुमार मंत्री जे तेज जेम (मोहांधकारेस्थितं के०) मोहरूप अंधकारने विषे रहेला एवा (आर्द्रकसुतं के०) आ

कुमारनें (स्तुत्यर्चनावंदनैः के०) जिनबिंबनां स्तुति, अर्चन, अनें वंदनें करी (निर्मलयति के०) निर्मल करता हवा. ते वात घटे छे. (च के०) वली (श्रेयःश्रियामास्पदं के०) कल्याण अने लक्ष्मीना स्थानकरूप एवो (दीपः के०) दीप ते (कस्यकस्य के०) केना केना (मुदं के०) हर्षने (नपुष्यति के०) नथी पोषण करतो ? अर्थात् करेज छे ॥५७॥ द्वार अठावीशमुं ॥

आहिं अभयकुमारनी कथा कहे छे. राजगृही नगरीने विषे श्री श्रेणिक राजानो पुत्र अभयकुमार मंत्री, राज्यव्यापारने चलावतो हतो, ते एक दिवसें वीरभगवानने पोतानो पूर्वभव पूछवाथी पोताना पूर्वभवनो मित्र अनार्यदेशमां उपन्यो जाणीने अत्यंत शोक करवा लाग्यो. पछी ते मित्रने बोध करवा माटे पोताना मित्र वणिक पुत्रना हाथथी श्री जिनबिंबने आर्द्रकुमार पासें मोकलतो हवो. ते वखत पूर्वें नही जोयेला एवा जिन बिंबने जोइने आर्द्रकुमार, चिंतववा लाग्यो के आ केवुं आभरण मारा मित्रें मोकल्युं छे ? एम समजीने पोताना मस्तकें मूक्युं वली पाछुं त्यांथी लइने पोताना बेहु हाथमां बांध्युं, तो पण कोइ ठेकाणे ते आभरण बंध बेठुं नही ? पछी सिंहासननी उपर स्थापन कर्युं, तेथी अत्यंत शोभवा लाग्युं. ते जोइने आर्द्रकुमार चिंतववा लाग्यो के आ ते केवुं आभरण ? जे कोइ ठेकाणें महारा जोवामां ते आव्युंज नहिं ? एम उहापोह करतां करतां जातिस्मरण ज्ञान उत्पन्न थयुं. तेथी पोतानो पूर्व भव जोयो पछी वैराग्य उपज्यो, तेवारें व्रत ग्रहण करीने सिद्धिने प्राप्त थयो ॥ ५७ ॥

हवे तीर्थद्वार कहे छे.

तीर्थं मुदे स्वपरयोरपि कीर्त्तिपाल,भूपालकारित
तुरंगमबोधवत्स्यात्॥उद्यानसारसहकारवनं फल
र्द्ध्यै, किं वप्तुरेव न पुनस्तदुपासकानाम् ॥ ५९ ॥

अर्थः– (स्वपरयोरपि के०) पोताने तथा परने पण (मुदे के०) हर्षने माटे (तीर्थं के०) तीर्थ, ते भरुच्चक्षेत्र, (कीर्त्तिपालभूपालकारिततुरंगमबोधवत् के०) कीर्त्तिपालभूपालें करावेला तुरंगम बोधनी पेरें (स्यात् के०) थाय. त्यां दृष्टांत कहे छे. (उद्यानसारसहकारवनं के०) प्रधान एवा आम्रना वृक्षनुं वन. (वप्तुरेव के०) वावनारनेज (फलर्द्ध्यै के०) फलनी स

मृद्धिने माटेज थाय बे? (पुनः के०) वली (तडुपासकानां के०) ते स
द्दकार वननी उपासना करनार प्राणीयोने (किं के०) शुं (न के०) नथी
थातुं? ना थाय बेज. अर्थात् वावनारने तो फल मले,तेमां शुं आश्चर्य, परंतु
तेने उपासन करनार प्राणीने पण ते फलरूप रुद्धिने आपनार थाय बे ५ए

आंहिं अश्वबोध तीर्थनो दृष्टांत होवाथी तेनी कथा कहे बे. प्रतिष्ठान
पुरमां सुमित्र नामा श्रेष्ठी वसे बे. तेनो परम मित्र जिनदास नामें श्राव
क परमजिनधर्मी रहे बे. ते सुमित्र श्रेष्ठी प्रतिदिन कुपात्रने दान आपे बे.
तेने जिनदास मित्रें वार्यो तो पण दीधाविना रहेतो नथी. एम करतां सु
मित्र आर्त्तध्यान वशें मरण पामीने अनुक्रमें नृगुकन्नपुरने विषे राजानो पट्ट
तुरंगम थयो. अने जिनदासनो जीव, मरीने स्वर्गमां जश्ने तिहांथी चवी श्री
मुनिसुव्रत जिन तीर्थंकर थयो. ए अवसरमां नृगुकन्नो राजा ते पट्टाश्वने
प्रातःकालमां अश्वमेध यज्ञने माटे कुंममां होमशे. एम जाणीने श्रीमुनि
सुव्रत तीर्थंकर तेने बोध करवा माटे रातमां साव योजन पृथ्वी उल्लंघन
करी प्रातःकालें नृगुकन्नें आवी समवसर्या. तेवारें ते राजा तेज घोडा उपर
बेसीने स्वामीने वंदन करवा माटे आव्यो. तीर्थंकरना दर्शनें करी अश्वनें
जातिस्मरण ज्ञान उत्पन्न थयुं. तेथी पोताना पगना मावलाथी नूमि खो
दीने अश्रुपात करवा लाग्यो. राजानी पासें श्रीमुनिसुव्रत स्वामीयें पोतानुं
तथा ते अश्वनुं वृत्तांत सर्व कही आप्युं. पन्नी ते अश्वें पूर्वनवना जातिस्मृति
ज्ञानें करी अनशन व्रत ग्रहण कर्युं. ते मरीने अष्टमस्वर्गमां देवता थयो.
पन्नी ते नृगुपुरमां कीर्त्तिपाल नूपालें त्यां अश्वावबोध एवे नामे श्रीजिन
प्रासाद कराव्यो. ते राजा पण तेज नवमां दीक्षा लश्ने मोहें गयो. अने
त्यां अश्वाववोध नामक तीर्थ थयुं, माटे तीर्थथी परोपकार थाय बे॥५ए॥

वित्तं स्थिरं सुकृतकीर्त्तिकरं च बाहु, बव्यादिवद्धिवि
धतीर्थनिवेशिकानाम् ॥ केतूल्लसन्नरतपुण्ययशोर्थ
वाद, मष्टापदं कश्व नानमदद्य यावत् ॥ ६० ॥

अर्थः—(विविधतीर्थनिवेशिकानां के०) अनेक प्रकारना तीर्थमां धनने
निवेश करनार पुरुपोनुं, (वित्तं के०) ड्व्य, ते (सुकृतकीर्त्तिकरं के०) सुकृतने
अने कीर्त्तिने करनारुं थाय बे. (च के०) तथा (स्थिरं के०) ते ड्व्य स्थिर

थाय छे. एम जाणवुं. कोनी पेठें ? तो के (बाहुबल्यादिवत् के०) बाहुब ल्यादिकनी पेठें. बाहुबलीयें पोताना द्रव्यथी जेम श्रीऋषभ पादुकारूप ती र्थ, तक्षशिलाने विषे स्थापन कर्यु. ते अद्यापि पर्यंत 'हक्क' एवे नामें उलखाय छे. आहिं (इव के०) इव शब्द जे छे ते अलंकारार्थ छे. (केतूल्लसद्भरतपुण्य यशोर्थवादं के०) केतुना मिषें करी उल्लसित एवुं भरत राजानुं पुण्य तथा यश तेनी प्रशंसाने कहेवा वालुं एवुं (अष्टापदं के०) अष्टापद तीर्थ, तेने (कः के०) कयो पुरुष, (अद्ययावत् के०) अद्यापि पर्यंत (नभनमत् के०) न नमतो हवो ? अर्थात् सर्वे ते तीर्थने नमेज छे ॥ ६० ॥

आंहि प्रथम बाहुबलीनो दृष्टांत होवाथी तेनी कथा कहे छे. तक्षशिला पुरीने विषे बाहुबली राजा राज्य करे छे. एक दिवस श्रीऋषभदेवजी छद्मस्था वस्थायें विचरता थका तक्षशीला नगरीना उद्यानमां पधार्या. ते आराममां रहेनारे आवी बाहुबलीने तेनी वधामणी आपी. बाहुबली राजायें संतुष्ट थइने वधामणीयाने पोताना अंगनो शृंगार सर्व आप्यो. पछी राजायें वि चार्युं जे हमणां सांज पडवा आवी माटें प्रातःकालमां महोटा आडंबरें स्वामीने वांदवा जाइश. पछी ज्यारें रात्रि गइ, अने सूर्योदय थयो त्यारें जेवामां बाहुबली राजा चतुरंगिणी सेना सहित श्रीऋषभ देवजीने वांदवा आव्यो, तेवामां श्रीऋषभदेवजी तो, अन्यस्थलमां विहार करी गया. बाहुबली यें स्वामीने न देखवाथी माहाक्लेश करवा मांड्यो. पछी जिहां स्वामी रात्रि रह्या हता ते दिशानी सन्मुख थइने परिवार सहित राजायें नमस्कार कर्यो. अने ज्यां स्वामी पधार्या हता, त्यां रत्नमय बे पादुकायें युक्त धर्मचक्रनुं नि र्माण कर्युं. त्यां हाल म्लेछ लोकोनुं हक्क एवा नामनुं तीर्थ थयुं छे.

हवे बीजी अष्टापद तीर्थनी उत्पत्तिनी कथा कहे छे. अयोध्या नगरीने विषे श्री ऋषभदेव स्वामी वीश लाख पूर्व कुमरपणामां तथा त्रेशठ लाख पू र्व राज्य भोगवीने सर्व मली त्र्याशी लाख पूर्व गृहस्थाश्रममां रही भरतने राज्य आपी पोतें दीक्षा लीधी. हजार वर्ष दीक्षा पालीने केवलज्ञान पामीने श्रीअष्टापद गिरिने विषे मोक्षने प्राप्त थया. पछी स्वामीना निर्वाणना स्था नकनी उपर भरत राजायें बे गाउ पहोलो अने चार गाउ लांबो अने त्रण गाउ उंचो चार दरवाजायें सहित सिंहनिषद्या एवा नामवालो नंदीश्वरद्वी पादि शाश्वत प्रासादने अनुसरतो सर्व तीर्थंकरना पोतपोताना शरीरनां

माल, अने शरीरना वर्णें करी सरखी एवी चोवीशे जिनप्रतिमाउयें करी अ लंकृत एवो प्रासाद बनाव्यो. ॥ ६० ॥ इति चैत्यद्वार.

ज्ञानं जगन्नयहितं पुनरप्यधीते, ज्ञोप्यार्यरक्षित
इवेतरशास्त्रपाठैः ॥ ये स्वर्णधीकनककाचकृतादरा
स्ते, हेमैव सत्यमधिगम्य किमु त्यजंति ॥ ६१ ॥

अर्थः-(ज्ञोऽपि के०) विद्वान् एवो जन पण (जगत्त्रयहितं के०) त्रण जगतना हितने करनार एवा (ज्ञानं के०) ज्ञानने (पुनरपि के०) वली पण (अधीते के०) जणे बे. केनी पेठें ? तो के (आर्यरक्षितइव के०) श्रीआर्यरक्षितजीनी पेठें ? (इतर शास्त्रपाठैः के०) अन्य जैनशास्त्रना पाठ करवा एटले जेम आर्यरक्षित ब्राह्मण चउदविद्यानो पारगामी हतो तथापि पोतानी माताना कहेवाथी तथा तेनी प्रेरणाथी चौद पूर्व शास्त्र जणवा गयो. त्यां दृष्टांत कहे बे. के (ये के०) जेउ (स्वर्णधी के०) सोनानी बुद्धियें करी (कनककाचकृतादराः के०) सोना समान काचनेविषे कस्यो बे आदर जेणे एवा बे, (ते के०) ते पुरुषो (सत्यमेव के०) सत्य एवुंज (हेम के०) सुवर्ण तेने (अधिगम्य के०) प्राप्त थइने (किमु के०) शुं (त्यजंति के०) ते खरा सुवर्णनो त्याग करे बे? ना त्याग करता न थी. अर्थात् जेणें अजाणपणे पीला काचना कटकाने सुवर्ण मानी लीधुं हतुं ते पुरुषने जेवारें खरा सुवर्णनी प्राप्ति थाय तेवारें ते खरा सुवर्णनो त्याग करे? ना ते नहींज करे ॥ ६१ ॥

आहीं आर्यरक्षित ब्राह्मणनो दृष्टांत होवाथी तेनी कथा कहे बे. माहेश्वरी नगरीने विषे सोमदेव ब्राह्मणनी फल्गुमित्रा नामें स्त्री हती, तेने आर्यरक्षित नामापुत्र हतो,ते अत्यंत विद्या जणवामां रसिक होवाथी परदेशें जइ चउद विद्या शीखीने पोताने घेर आव्यो, मातापिताने प्रणाम कस्यो. ते आर्यरक्षितने जणेलो सांजली सहु लोक खुशी थयां. परंतु पोतानी मातानी अप्रसन्नता जोइने आर्यरक्षितें पूब्युं के हे माताजी ! सहु मारी विद्याथी खुशी थयां, ने तमे केम नाराजी थया बो? त्यारें माता बोली के हे पुत्र! जो तुं चौद पूर्व जणीने आव्यो हत,तो मुने हर्ष थात, त्यारें तेणे पूब्युं के ते चौद पूर्व कोण जणावे बे? मातायें कह्युं के तारो मामो पुष्पमित्राचार्य

जणावे छे. ते सांजली तरत ते चौदे पूर्व जणवा माटे बाहेर निकळ्यो रस्ता मां प्रथम साडानव इक्षुदंड नेट थयेला जोवामां आव्या, पछी ढढ्ढर श्राव कना प्रयोगथी वंदन विधि शीखीने आचार्यनी सान्निध्यें जइ कह्युं के महा राज! चउद पूर्व मने जणावो. त्यारें सूरियें कह्युं के जे दीक्षित होय तेना थीज ते पूर्वो जणाय छे. गृहस्थथी जणाय नहिं. ते सांजली दीक्षा लेइ साडानव पूर्व पर्यंत जणीने गुरुने कह्युं के हे महाराज! हवे केटलुं जणवुं छे? त्यारे सूरियें कह्युं के हजीतो तुं समुद्रमांथी एक बिंदु जणेलो छे. समुद्र तो अखंड छे आ वात सांजलीने तरत जग्नोद्यम थइ गयो. त्यारें सूरियें कह्युं के इक्षुदंडना योगें करी अमोयें जाण्युं जे तुं एटलांज पूर्व जणीश. त दनंतर तेणें माता पिताने पण दीक्षा लेवरावी ॥ ६१ ॥

पठ पठति यतस्वान्नादिना लेखय स्वैः, स्मर वितर च साधौ ज्ञानमेतद्धि तत्त्वं॥ श्रुतलवमपि पुत्रे पश्य शय्यंज्ज वोऽदा, जगति हि न सुधायाः पानतः पेयमन्यत् ॥६२॥

अर्थः—हे साधो! तुं पोतें (ज्ञानं के०) ज्ञानने (पठ के०) जण. तथा (पठति के०) जणेला जनने विषे (अन्नादिना के०) अन्नादिकथी (यतस्व के०) यत्न कर (स्वैः के०) पोताना (द्रव्यैः के०) द्रव्यें करी (लेखय के०) ज्ञानने लखाव. (स्मर के०) ज्ञाननुं स्मरण कर. अने (सा धौ के०) सुजनने विषे (च के०) वली (वितर के०) जणाववा माटे यत्न कर. आ संसारने विषे (एतत् के०) ए (ज्ञानं के०) ज्ञान (हि के०) निश्चें (तत्त्वं के०) तत्त्व छे. (पश्य के०) जुवो. के (पुत्रे के०) पुत्रने विषे (शय्यं जवः के०) श्रीशय्यंजवस्वामी (श्रुतलवमपि के०) श्रुतनो लवज (अदात् के०) आपता हवा. (हि के०) ते वात घटे छे जुवो के (जगति के०) जगतने विषे (सुधायाः के०) अमृतना (पानतः के०) पानथकी (अन्यत् के०) बीजुं कांइ (पेयं के०) पान करवा लायक (न के०) नथी ॥६२॥

हवे आंहिं पण शय्यंजवनो दृष्टांत छे पूर्वें तेनी कथा जो केकहेली छे तो पण स्थानशून्यना हेतु माटे कांइक शय्यंजवस्वामीनी कथा कहे छे. चउद पूर्वमांथी दशवैकालिक नामा ग्रंथ काढीने शय्यंजव गणधरें पोताना पुत्र मनकने जणाव्यो मनकना मरण पछी शय्यंजव गणधर रडवा लाग्या,

त्यारें यशोभद्र मुनियें पूछ्युं के हे भगवन्! आ शुं कहेवाय? गुरुयें कह्युं के संसारनो स्नेह तो एवोज छे. आ वृत्तांत सांभळीने साधु सर्व खेद पाम्या.

लोकेभ्योनृपतिस्ततोपि हि वरश्चक्री ततोवासवः, सर्वे
भ्योपि जिनेश्वरः समधिकोविश्वत्रयीनायकः ॥ सोऽ
पि ज्ञानमहोदधिं प्रतिदिनं संघं नमस्यत्यहो, वैरस्वा
मिवदुन्नतिं नयति तं यः स प्रशस्यः क्षितौ ॥ ६३ ॥

अर्थः– (लोकेभ्यः के०) सर्वलोकोथी (नृपतिः के०) राजा (वरः के०) श्रेष्ठ जाणवो. वळी (ततोपि के०) ते थकी पण (हि के०) निश्चें (चक्री के०) चक्रवर्त्ती श्रेष्ठ जाणवो. अने (ततः के०) ते चक्रीथकी (वासवः के०) इंद्र श्रेष्ठ जाणवो. तथा ते पूर्वोक्त (सर्वेभ्योपि के०) सर्वथकी पण (विश्वत्रयी के०) त्रण जगतना (नायकः के०) नायक, एवा (जिनेश्वरः के०) जिनेश्वर श्रीतीर्थंकर देव ते (समधिकः के०) रूडे प्रकारें अधिक जाणवा. (सोपि के०) ते जिनवर पण (ज्ञानमहोदधिं के०) ज्ञानरूप समुद्र छे जेमां एवा (संघं के०) चतुर्विध श्रीसंघने (अहो के०) आश्चर्ये (प्रतिदिनं के०) रात्रिदिवस (नमस्यति के०) नमस्कार करे छे. माटे (तं के०) ते श्रीसंघने (यः के०) जे पुण्यवान् मनुष्य, (वैरस्वामिवत् के०) वैरस्वामीनी पेठें (उन्नतिं के०) उन्नति प्रत्यें (नयति के०) पमाडे छे, (सः के०) ते (क्षितौ के०) पृथ्वीने विषे (प्रशस्यः के०) प्रशंसा करवा लायक जाणवो. जेम वज्रस्वामी माहेश्वरी नगरीनेविषे बौद्ध राजानी आगळ श्रीसंघनी उन्नति करता हवा. तेम संघनी उन्नति बीजा पण पुण्यवान् प्राणीयें करवी ॥ ६३ ॥

आंहि वज्रस्वामीनी कथा पूर्वें कही छे तो पण यत्किंचित् कहे छे. प्रभावकचक्रवर्त्ति श्रीवज्रस्वामीनी पेठे शासनरूप गगनें उद्योत करवो. एकदा वार वरसनो दुष्काळ पड्यो, ते वखत श्रीवज्रस्वामी साधु तथा श्रावकना संघने पट्टमां वेसारीने गगन मार्गें करी माहेश्वरी नगरी प्रत्यें पहोंचाडता हवा. त्यां महासुभिक्ष वर्त्ते छे. एवा समयमां पर्यूषण पर्व आव्युं, ते समयें श्रीसंघ आठ दिवस नवनवा महोत्सव करे छे. त्यां ईर्ष्या करनारा बौद्धोयें राजानी आज्ञा लइने जिनभगवानने पुष्प चडाववां निषेध करा

व्यां, ते जाणीने श्रीवज्रस्वामी गगन मार्गेथी हुताशन देवने घरे गया. श्री वज्रस्वामीना आदेशें करी ते देव,मंदारना पुष्पोयें नरेला लक्ष करंमिया माहेश्वरी नगरीने विषे लाव्यो, ते प्रनाव जोइने बौद्धो हतप्रनाव थइ गया. अने ते नगरीनो राजा बौद्ध हतो ते पण ते दिवसें जैनधर्मी थयो ॥ ६३ ॥

कोप्यन्योमहिमास्त्यहो नगवतः संघस्य यस्य स्फुर,
त्कायोत्सर्गबलेन शासनसुरी सीमंधरस्वामिनं ॥
नीत्वा तत्कृतदोषशुद्धिमुदितां यक्षार्यिकां चानयत्,
किंचैतन्ननुतत्प्रनावविन्नवैस्तीर्थंकरत्वं नवेत् ॥ ६४ ॥

अर्थः-(नगवतः के०) समर्थ एवा (संघस्य के०) चतुर्विध संघने (कोपि के०) कोइ पण अनिर्वचनीय एवो (अन्य के०) बीजो (महिमा के०) महिमा (अहो के०) आश्चर्ये (अस्ति के०) छे. केम के (यस्य के०) जे श्रीसंघना (स्फुरत्कायोत्सर्गबलेन के०) प्रकाश थतुं एवुं जे कायोत्सर्ग तेना बलें करीने (तत्कृतदोषशुद्धिमुदितां के०) पोताना नाइने पर्यूषण पर्वमां तप करवाथी मरण प्राप्त थवाना दोषोनी शुद्धिने इछती एवी (यक्षार्यिकां के०) यक्षा साध्वीनें (शासनसुरी के०) शासननी अधिष्ठायिका देवी (सीमंधरस्वामिनं के०) ते श्रीसीमंधर स्वामीनी पासें (नीत्वा के०) लइ जइने बे चूलिकानुं दान कराव्युं. माटे (किंच के०) शुं (एतत् के०) आ (तनुप्रनावविन्नवैः के०) श्रीसंघना तनु एटले थोडा प्रनावना विन्नवोयें करी (तीर्थंकरत्वं के०) तीर्थंकरपणुं (नवेत् के०) होय, एवो श्री संघनो महिमा जाणवो ॥ ६४ ॥

आंहिं यक्षासाध्वीनी कथा कहे छे. पाडलीपुरने विषे शकमाल मंत्रीनी दीकरी यक्षा हती तथा ते शकमालनो पुत्र श्रीयक नामा हतो, तेणें श्री नंदराजानो कारनार घणा दिवस पर्यंत कस्यो. पछी वैराग्य पामीने श्रीयकें दीक्षा ग्रहण करी. परंतु ते श्रीयक तप करवाने समर्थ हतो नहीं तेथी क्रिया अनुष्ठान करतो हतो, एम करतां पर्यूषण पर्व आववाथी ते श्रीयक मंत्रीनी बेन यक्षार्यायें आग्रह करी तेने उपवास कराव्यो तेथी ते सांजे मरण पाम्यो. त्यारे तेनी बेने कह्युं जे मने ऋषिहत्या लागी. पछी

क्षार्यिकाने संतोष थयो नहिं. त्यारे श्रीसंघें कायोत्सर्ग कर्युं. ते करवाथी शासन देवता आवी तेणें ते यक्षार्यिका साध्वीने उपाडीने श्रीसीमंधरस्वामीपासें पोहोंचाडी. त्यां नगवानें कह्युं के तुने कांइ पण रुषिहत्या लागी नथी. परंतु उलटुं पुण्य थयुं. ते वखतें तेने आगतानिज्ञानने माटे बे चूलिका आपी पढी ते शासन देवतायें पाछी यक्षार्यिकाने स्वस्थाने पोहोंचाडी. श्रीसंघें कायोत्सर्ग पार्यो. सर्वने आनंद थयो पढी ते बे चूलिकानुं दशवैकालिक सूत्रनी अंतें अद्यापि स्थापन कर्युं छे. एम श्रीसंघना महिमाथी ते सर्व कार्य बन्युं. माटे ए चतुर्विध श्रीसंघनी ते महत्ता जाणवी ॥ ६४ ॥

नवति हि नवपारः शुद्धया साधुनक्त्या, धनगृहपतिजीवानंदवैद्येशवत् प्राक् ॥ पृथुरपि हि पयोधिस्तीर्यते चारुतर्या, तिमिरनरनृतोध्वा दीप्तया दीपयष्ट्या ॥ ६५ ॥

अर्थः-(शुद्धया के०) शुद्ध एवी (साधुनक्त्या के०) साधुनी नक्तियें करी (प्राक् के०) पूर्वे नवनेविषे (धनगृहपतिः के०) धनसार्थवाहनो जीव तथा (जीवानंदवैद्येशवत् के०) आदिनाथनो जीव जे जीवानंद वैद्य, तेनी पेठे (नवपारः के०) संसारनो पार (नवति के०) थाय छे. अर्थात् ते जीवानंदसाधुनी नक्तियें करी संसारनो पार पाम्या. त्यां दृष्टांत बे कहे छे. (पृथुरपि के०) मोहोटो एवो पण (हि के०) निश्चें (पयोधिः के०) समुद्र, (चारुतर्या के०) मनोहर एवी नौकायें करी (तीर्यते के०) तराय छे. तथा (दीप्तया के०) प्रकाशित एवी (दीपयष्ट्या के०) दीपपंक्तियें करीने (तिमिरनरनृतोध्वा के०) अंधकारें नरेलो एवो रस्तो शुद्ध थाय छे तेम साधुनक्तिथी सर्व पदार्थ लन्य थाय छे ॥ ६५ ॥

आंहिं जीवानंद वैद्यराजनी कथा कहे छे. महाविदेह क्षेत्रमां पुंमरिकिणी पुरीने विषे जीवानंद नामा वैद्य वसे छे. तेने एक राजानो पुत्र, एक मंत्रीनो पुत्र,एक श्रेष्ठीनो पुत्र,एक सार्थवाहनो पुत्र,ए चार मित्र हता,एक दिवस जीवानंदने घेर चारे मित्र आवीने बेग हता तेवामां एक महा कर्मी युक्त कुष्ट रोगना उपद्रवें करी दुःखी एवो साधु वहोरवा माटे त्यां आव्यो, ते साधुने जोइने ते सर्वें कहेवा लाग्या के हे वैद्यराज ! आ बिचारा साधुने साजो करो त्यारे जीवानंद वैद्यें कह्युं के मारे त्यां लक्षपाक तेल छे प

रंतु तेथी शुं थाय? बीजुं रत्नकंबल तथा चंदन जोइयें ते तमो लावो तो ए नो उपाय थाय. आ वात सांजली ते साधुने त्यां बेसाडी चंदनकाष्ठनी डुकान मांमनार वाणीआनी डुकानपर गया. लक्ष द्रव्य ते वणिक पासें मूकीने कह्युं के तमो रत्नकंबल तथा गोशीर्ष चंदन आपो. तेवारें ते वाणीयें गरीबनो पण पुण्यनो आदर जोइने धर्मथीज रत्नकंबल अने चंदन ए बेहु वानां मफत आप्यां अने पोतें पण वैराग्य पामी प्रव्रज्या ग्रहण करीने तेज जवने विषे सिद्धिने प्राप्त थयो. पढी ते पांचे जण एकत्र थइने ते मुनिने रोग मटाडवा माटे वनमां लेइ गया. प्रथम लक्षपाक तैलें करी ते साधुने अभ्यंग कर्युं. पढी रत्नकंबलें करी एनुं अंग ढांक्युं तेवारें कृमी हता, ते सर्व बाहेर निकली गया. पढी ते साधुना अंगने चंदनें करी विलेपन कर्युं, एम त्रण वार करवाथी ते साधुना शरीरथी कुष्ट मूलमांथी जतो रह्यो. अने ते मुनि नीरोगी देहवालो थयो ते जीवानंदनो जीव ते पुण्यना प्रजावें करी चार जव करीने आदीश्वर जगवान थइ श्रीतीर्थंकर पदने प्राप्त थयो ॥ ६५ ॥

दानैः प्रासुकजक्तपानवसनावासौषधानां मुने,
वैयावृत्यकृतेश्च विस्मयकरा जोगा बलं चाप्यते ॥
श्रीमद्बाहुसुबाहुवत्परजवे सा कामगव्यप्यहो, स
च्चारीजलदानकोमल करस्पर्शैरलं तुष्यति॥६६॥

अर्थः—(प्रासुकजक्त के०) प्रासुकएवो जात, तथा (पान के०) जल, (वसन के०) वस्त्र, (आवास के०) उपाश्रय, तथा (औषधानां के०) औषधो तेनो (मुनेः के०) मुनिने (दानैः के०) दानदेवे करी (च के०) वली (वैय्यावृत्यकृतेः के०) वैयावच्च करवाथकी (परजवे के०) परजवने विषे (श्रीमद्बाहुसुबाहुवत् के०) शोजायमान एवा बाहु अने सुबाहु, पांचशे साधुने जक्त पान आवास विश्रामण करवायकी बेहु श्रीरुषजदेवजीना पुत्र थया तेनी पेठें (विस्मयकराः के०) विस्मयने करनारा एवा (जोगाः के०) जोगो, (च के०) वली (बलं के०) बल, तेने (आप्यते के०) प्राप्त थाय छे. अर्थात् साधुजक्ति एवुं फल आपे छे पण (अहो के०) आश्चर्ये (सा के०) ते प्रसिद्ध एवी (कामगवी अपि के०) कामधेनु पण (सच्चारीजलदानकोमलकरस्पर्शैः के०) सारो चारो, जलपान,

करस्पर्शी एटले हाथेथी खजवालवुं तेणें करी (अलं तुष्यति के०) परिपूर्ण संतोष पामे छे अने फलदायक थाय छे अर्थात् गायने जेम सारो चारो आपवाथी तथा जलदान एटले पाणी पीवराववाथी तथा करस्पर्शेकरी एटले हाथफेरववे करी दुग्ध वगेरेनी देनारी थाय छे तेम साधुसेवा रूप गाय पण वैयावृत्यादि सारो चारो आपवाथी तथा फासु जलनुं दान देवाथी तथा पगचंपी वगेरे करस्पर्श करवाथी सारा फलनी देवावाली थायछे माटे साधुसेवा अवश्य करवी ॥ ६६ ॥

अहिं बाहुबलीनी कथा कहे छे. महाविदेह क्षेत्रने विषे पुंमरिगीणी नामनी नगरीयें वज्रसेन राजा राज्य करे छे. तेने पांच पुत्र हता तेनां नाम, एक वज्रनाभ, बीजो सुबाहु, त्रीजो बाहु, चोथो पीठ, पांचमो महापीठ,ए पांच पुत्र हता ते पांचपुत्रोये पण संसार सुख भोगवीने तीर्थंकरनी पासें दीक्षा ग्रहण करी. तेमां प्रथम पुत्र चौदपूर्व शास्त्र भणी आचार्य थयो. अने बीजा चारेजण हता ते अग्यार अंगधारक थया. तेमां बाहुनामा मुनि नित्य पांचशे साधुने भात पाणी लावी आपता हता. अने सुबाहुनामा मुनि पांचशे साधुनुं वैयावच्च करे तथा पीठ अने महापीठ नामा बेहु मुनि ते बाहु अने सुबाहु ए बेहुमुनिनो महिमा सांभलीने तेनी ईर्ष्या करता हवा, हवे वज्रनाभनो जीव तो श्रीयुगादि देवआदिनाथ भगवान् थया. अने बीजा चार तो अनुक्रमें भरत अने बाहुबली तथा ब्राह्मी अने सुंदरीपणे आवी उत्पन्न थया. तेमां बाहुना जीवने भरतना भवमां परिपूर्ण भोगफल प्राप्त थयुं. अने सुबाहुना जीवने बाहुबलिना भवमां समग्र बाहु बल लन्यमान थयुं, एम तेउ साधुसेवा थकी उत्तमताने पाम्या ॥ ६६ ॥

धर्मःपुंप्रभवोयदेतदिदमेवार्याऽपिपूज्यापुन,र्यस्या
धर्मसमुद्भवा गुरुजनेष्वप्युन्नतिर्यत्पुरा ॥ सौनंदे
यनृपेऽन्निकासुतगुरौ श्रीचंदनायां न किं, ब्राह्मी पु
ष्पवतीसुता किलमृगावत्यप्यभून्मुक्तये ॥ ६७ ॥

अर्थः–(यत् के०) जे कारण माटे(पुंप्रभवः के०) पुरुषथकी छे उत्पत्ति जेनी एवो (धर्मः के०) धर्म, (एतत् के०) ए वात, (इदमेव के०) एमज छे. कहेलुं छे के "धम्मोपुरिसप्पभवो, पुरिसवरदेसिउ पुरिसजिट्ठो" इत्यादि

सर्व ठेकाणे कहेलुं छे. (पुनः के०) परंतु तेमां (आर्यापि के०) आर्या एटले तपोधना स्त्री ते पण (पूज्या के०) पूजवा लायक होय छे. कारण के (यस्याः के०) जे आर्यानी (धर्मसमुद्भवा के०) धर्मथकी उत्पन्न थइ एवी (उन्नतिः के०) उन्नति एटले गुरुता ते (गुरुजनेष्वपि के०) गुरुजनने विषे पण मुक्तिने माटे थाय छे. जुवो (यत् के०) जे कारण माटे (पुरा के०) पूर्वे (किल के०) निश्चें (सौनंदेयनृपे के०) सुनंदा पुत्र बाहुबलि राजाने विषे तातश्री ऋषभदेवजीयें प्रेरेली एवी (ब्राह्मी के०) ब्राह्मी बेहेन ते 'हेभाइ हाथी थकी हेठो उतरय' एवुं वाक्य कहेती छती (मुक्तये के०) मुक्तिने माटे (अभूत् के०) थाती हवी. तथा (अन्निकासुतगुरौ के०) अन्निकापुत्र गणधरनेविषे (पुष्पवतीसुता के०) पुष्पवतीनी पुत्री पुष्पचूला साध्वी मुक्तिने माटे थइ तथा (श्रीचंदनायां के०) श्रीचंदनबाला साध्वीनेविषे (मृगावती के०) मृगावती साध्वी (किं के०) शुं (न के०) मुक्तिने माटे न थइ ? ना थइज छे. अर्थात् साध्वीउ पण गुरुजननी मुक्तिने माटे साधनभूत थाय छे ॥ ६७ ॥

आ श्लोकमां ब्राह्मी तथा पुष्पचूला अने मृगावती ए त्रणेनो दृष्टांत होवाथी त्रणेनी कथामां प्रथम ब्राह्मी साध्वीनी कथा कहे छे. श्रीभरतचक्री षट् खंम पृथ्वी जीत्या, पण न्हाना भाइ बाहुबलीयें आज्ञा न मानी तेथी भरतचक्री पोताना भाइने जीतवानी इछाथी सैन्यसहित बाहुबलीनी तक्षशिलानगरीयें गयो. त्यां ते बेहु भाइने मोहोटुं युद्ध थयुं. अनेक मनुष्यनो संहार थयो. पछी इंद्रें आवी युद्ध बंध करावीने बाहुबलीनी साथें वाग्युद्ध, मुष्टियुद्ध, बाहुयुद्ध, दृष्टियुद्ध, अने दंमयुद्ध ए पांच युद्ध करवां ठेराव्यां, सर्वे युद्धमां बाहुबलीयें भरतनो पराजय कस्यो. तेवारें भरत राजायें चक्र मुक्युं ते बाहुबली कुटुंबनो होवाथी तेने लाग्युं नही त्यारें बाहुबली मुष्टि उपाडीने भरतनी सन्मुख दोड्यो ते वली पोतेज विवेकें करीने ते मुष्टि भाइने मारी नही. परंतु उत्तम पुरुषनी मुष्टि पाछी फरे नही माटे वैराग्य पामी ते मुठीयें करी पोताना मस्तकना केशनो लोच करी पोतानी मेलें प्रव्रज्या ग्रहण करीने त्यांज कायोत्सर्ग करी रह्या. त्यां शीतोष्ण कष्टने सहन करता हता, ते वात जाणीने श्रीऋषभदेवजीयें महासती एवी बाहुबलीनी भगिनी ब्राह्मी हती तेने मोकली. ते बाहुबलीनी पासें आवीने कहेवा लागी के हे भाई ! गजथी हेठो उतरय. ते बाहुब

लीयें विचार करीने जोयुं तो जाण्युं जे आंहिं गज तो नथी पण तेनो कहे वानो अभिप्राय एवो छे के मानरूप गज थकी उतख एम समजीने पछी माननो त्याग कस्यो तेवारें तुरत तेने केवल ज्ञान वर्ष प्रांतमां उत्पन्न थयुं.

हवे पुष्पचूलानी कथा कहे छे. पुष्पपुरने विषे पुष्पकेतुनामा राजा तेनी पुष्पवती नामनी राणी हती तेना पुत्रनुं नाम पुष्पचूल अने पुत्री नुं नाम पुष्पचूला पाड्युं, ते बेहुनाइ बेन युवावस्थाने प्राप्त थयां परस्पर स्नेह होवाथी बेहुनुं समान रूप जोइने राजायें विचार कस्यो जे बेहु जणा नो वियोग करीयें ते सारुं नही ? माटे भाइ भगिनी बेहुनो परस्पर विवा ह कस्यो ते अधर्म तेनी माता पुष्पवती जोइ शकी नही तेथी दीक्षा लइ मरण पामीने देवता थइ. ते देवता ते बेहु जणने स्वप्नामां आवी अधर्म करी थतां नरकनां डुःखो देखाडवा लागी. ते डुःखथकी बीहीती एवी पुष्प चूलायें वैराग्य पामीने अन्निकापुत्र आचार्यनी पासें जइने दीक्षा ग्रहण करी. ते आचार्य क्षीणजंघाबल होवाथी साध्वी आहार लावी आपती सा ध्वीने केवलज्ञान उपन्युं एकदिवस वर्षाकालें गुरुने माटे अन्न लावी त्यारें गुरुयें कह्युं के हे सति ! अचित्त प्रदेशविषे अन्न लावता विराधना कां करे छे ? त्यारें साध्वीयें कह्युं एमां विराधना थइ नथी त्यारे गुरुयें कह्युं के तें केम जाण्युं के आ अचित्त स्थल अने आ सचित्त स्थल कहेवाय ? त्यारे पुष्पवती कहे छे के भगवन् ! तमारा प्रसादथकी में जाण्युं. ते सांभली केवलज्ञान उपनुं जाणी मिथ्याडुष्कृत दइने गुरुयें पूछ्युं के मने केवल ज्ञान क्यारे उत्पन्न थशे. त्यारें तेणें कह्युं जे गंगा उतरतां तमने केवल ज्ञान उत्पन्न थाशे ते पछी नावें करी गंगाने उतरता एवा सूरिने पूर्वभवना वैरी देवता यें त्रिशूलें करीने माख्या, त्यां गुरुने ध्यान ध्यावतां अप्काय जीवोनी उ पर दया उत्पन्न थई ते दयायें करी केवल ज्ञान उत्पन्न थयुं. देवोयें केव लज्ञाननो महोत्सव कस्यो त्यां प्रयागनामा तीर्थ थयुं ते लोकमां अद्या पि प्रसिद्ध छे ॥ ए पुष्पचूलानो संबंध थयो.

हवे मृगावतीनी कथा कहे छे. कौशांबी नगरीनेविषे शतानीक नामा रा जा राज्य करे छे. तेनी पट्टराणी चेटक राजानी दीकरी मृगावती नामा हती. तेणें ज्यारें पोतानो स्वामी मरण पाम्यो तेवारें पोताना पुत्रने रा ज्य उपर स्थापीने पोतें वैराग्य पामीने श्रीवीरस्वामी पासें दीक्षा ग्रहण

करी. एकदा ते बीजी साध्वीयोनी साथें श्रीवीर भगवानने वांदवाने समवसरणमां आवी. ते दिवसें श्रीवीरभगवानने वांदवा माटे सूर्य चंद्र पण विमानसहित आवेला हता. तिहां बीजी साध्वीउ तो दिवस अस्त थया पहेलां पोताने उपाश्रयें आवीयो अने मृगावती तो चंद्रसूर्य स्वस्थाने गयानंतर अंधकारनो प्रसार थयो तेवारें उपाश्रयें आवी. त्यां चंदनबाला सुती हती ते तेने कहेवा लागी. के हे भद्रे ! तुं महोटा कुलमां उत्पन्न थयेली छो. तने रात्रिमां फरवुं योग्य नथी. एम शिक्षा करतां करतां चंदनबालाने निद्रा आवी, अने मृगावती तेना चरणमां मस्तक मूकीने कहेवा लागी के हे भद्रे ! क्षमा करो. एम क्षमा मागतां मागतां ते मृगावतीने केवल ज्ञान उत्पन्न थयुं. पछी चंदनबालाने पण मृगावतीने पगें पडतां क्षमा मागतां केवलज्ञान उत्पन्न थयुं ॥ ६७ ॥

किं पूज्या श्रमणी न सा श्रुतरसा दुर्बोधहृन्मोहहृन्,
मात्रासक्तकुबेरदत्तदयिता साध्वीवजातावधिः ॥ धन्या
एव चिरंतना व्रतधना अप्याधुनिक्यः शुभा, याकि
न्याहरिभद्रवादि मुकुटः सोऽबोधिवाङ्मात्रतः ॥ ६८ ॥

अर्थः—(किं के०) शुं (सा के०) ते (श्रुतरसा के०) सांभल्यो छे शास्त्ररस जेणे एवी (श्रमणी के०) साध्वी (न पूज्या के०) पूजवा लायक नथी. ना छेज. कारण के जुवो (दुर्बोधहृत् के०) माठा बोधने हरण करनार, तथा (मोहहृत् के०) मोहने हरण करनार, एवी (मात्रासक्तकुबेरदत्तदयिता के०) मातानेविषे आसक्त एवो जे कुबेरदत्त तेनी दयिता एवी जे कुबेरदत्ता ते (जातावधिः के०) उत्पन्न थयुं छे अवधिज्ञान जेने एवी (साध्वी इव के०) साध्वी जे छे तेनी पेठें केम पूजवा योग्य थाय नहीं अर्थात् थायज. वली (आधुनिक्यः के०) आधुनिक एवी अने (शुभाः के०) पवित्र एवी (चिरंतनाः के०) घणा कालनी (व्रतधनाः के०) व्रतरूप छे धन जेने एवी साध्वी (धन्याःएव के०) धन्यज जाणवी. जुवो (याकिन्या के०) याकिनी नामा साध्वीयें (सः के०) ते (हरिभद्रवादिमुकुटः के०) वादकरनाराउनेविषे मुकुटसमान एवा जे श्रीहरिभद्रसूरि, तेने (वाङ्मात्रतः के०) एक गाथामात्रेकरीने (बोधितः के०)

बोध पमाड्यो. माटे साध्वीथी पण मोह्होटा पुरुषोने ज्ञान प्राप्त थाय छे.

आ श्लोकमां कुबेरदत्तानो तथा याकिनी साध्वीनो दृष्टांत होवाथी प्रथम कुबेरदत्तानी कथा कहे छे. मथुरा नगरीनेविषे वसंततिलका नामा एक वारांगना रहे छे. एकदिवस ते वारांगनाने बे बालक उत्पन्न थयां के तुरत पोतानी नामांकित मुद्रिका सहवर्त्तमान पेटीमां नाखी पेटीने यमुना मां तरती मूकी, तेमां छोकरो तथा छोकरी हती पछी तरती तरती ते पेटी शौर्यपुरमां गइ. ते शौर्यपुरना बे वेपारी हता तेने ते पेटी मली तेमांथी एक पुत्र, अने एक पुत्री अतिस्वरूपवान् मल्यां, तेवारें बेहुजणने संतान न होवाथी एकें कन्या लीधी अने एकजणे पुत्र लीधो ते बेहु वेपारीयें ते बेहु भाइबेनने विवाह कस्यो पछी एक दिवस कुबेरदत्तायें पोतानी तथा पोताना भाइनी मुद्रिका जोइने समानता देखीने विचार्युं जे अमो बे भाइ बेन छैयें एम जाणवाथी कुबेरदत्तने कह्या विना एकदम दीक्षाग्रहण करी. एकदा कुबेरदत्त वेपारने माटें मथुरामां ज्यां पोतानी माता गणिका रहेछे त्यां आव्यो. तेणे पोतानी माताने गणिका जाणी भोगववा मांमी. तेथकी तेने एक पुत्र उत्पन्न थयो. तदनंतर कुबेरदत्ता साध्वीने अवधिज्ञान उत्पन्न थवाथी ते त्यां आवीने ते सुतेला बालकने अढार नात्रां थयां ते प्रकट करवामाटें रमाडवा लागी अने हिंचको नाखतां केहेवा लागी के हे पुत्र! सांभल्य ॥ श्लोक ॥ भ्रातासि तनुजन्मासि, वरस्यावरजोपि च ॥ भ्रातृव्योसिपितृव्योसि, पुत्रपुत्रोसि चार्भक ॥१॥ यश्च ते बालकपिता, समे भवति सोदरः ॥ पिता पितामहो भर्त्ता, तनयः श्वसुरोपि च ॥२॥ याच बालक ते माता, सा मे मातापितामही ॥ भ्रातृजायावधूःश्वश्रूःसपत्नीचभवत्यहो ॥ ३ ॥ आ श्लोकनो भावार्थः- तुं मह्हारो भाइ, पुत्र, देर, भत्रीजो, काको, दीकरानो दीकरो, थाय छे अने हे अर्भक! ताह्हरो जे बाप ते माह्हरो भाइ थाय छे. पिता थाय छे, पितामह थाय छे, स्वामी थाय छे, पुत्र थाय छे, अने श्वसुर पण थाय छे, वली हे बालक!! जे तारी माता ते माह्हरी माता तथा पितामही थाय छे. अने भाइनी वहु थाय छे. वहु थाय छे. सासु थाय छे अने शोक्य थाय छे. आम अढार संबंध कह्या. ते सांभली कुबेरदत्त नीचें आवीने पूछवा लाग्यो के हे साध्वी! आ शुं कहो छो अने तमे कोण छो? त्यारें साध्वीयें सर्व बनेलो

संबंध कही आप्यो, ते सांजली कुबेरदत्तने वैराग्य उपन्यो तेवारें संसार छोडी दीक्षा ग्रहण करी. स्वर्गने प्राप्त थयो.

हवे याकिनी साध्वीनी कथा कहे छे. नफूलकपुरनेविषे चउद विद्याने जाणनारो अनेक वादनेविषे महा प्राज्ञ एवो हरिनइनामा नट्ट रहेतो हतो,तेनी एवी प्रतिज्ञा हती के जेनुं कहेलुं हुं न जाणुं, तेनो हुं शिष्य थाउं. एक दिवस ते हरिनइ नामा नट्ट, साध्वीनी शाला प्रत्यें जाता हता, तेवामां महासती एवी याकिनीयें कहेली एवी गाथा सांजली ते जेम के ॥ गाहा ॥ चक्किडुगं हरिपणगं, पणगं चक्कीण केसवो चक्की ॥ केसवचक्की केसव, डुचक्कि केसीय चक्कीय ॥ १ ॥ आ गाथा सांजली तेनो अर्थ न जाणता हरिनइसूरियें पूछ्युं, हे आर्ये! चाकचक्य बहु ए गाथामां करेलुं नासे छे. त्यारें ते आर्यायें कह्युं के नवीनलिपित नूमिनेविषे चाकचक्य थाय छे. ते पछी वाणीयें करी छलेला जाणीने गाथाना अर्थनुं अविज्ञातत्व जाणीने हरिनइ नट्ट साध्वीने पगे लागीने कहेवा लाग्यो के हे साध्वी! तमें मने शिष्य करो पछी ते साध्वीयें तेने आचार्यनी पासे दीक्षा अपावी. अनुक्रमें ते श्रीहरिनइसूरि, याकिनीपुत्र नामनुं विरुद धारण करनारा थया. एमणे चौदशें चुम्मालीश प्रकरण कर्यां श्रीजिनशासनमां महाप्रानाविक थया.

अकृत नरतचक्रीविश्वसाधर्मिकार्चा, कुरुत तदनुमा
नाच्छ्रेयसेऽत्रोद्यमं तत् ॥ यदिसकलधरित्रीं प्रीणयत्यं
बुवाहः, किमु न तदरघट्टःक्षेत्रमात्रं पृणातु ॥ ६ए ॥

अर्थः–(नरतचक्री के०) नरत चक्रवर्त्ती (विश्वसाधर्मिकार्चा के०) सर्व साधर्मिक नाइउनी अर्चाने (अकृत के०) करता हता, (तत् के०) तेमाटे (तदनुमानात् के०) तेना अनुमानथी (अत्र के०) आंहीं साधर्मिकना वात्सल्यने विषे (श्रेयसे के०) मोक्षरूप कल्याण माटें (उद्यमं के०) उद्यमने हे नव्यजनो! (कुरुत के०) करो. जुवो (यदि के०) जो (अंबुवाहः के०) मेघ, (सकलधरित्रीं के०) सर्व पृथ्वीने (प्रीणयति के०) पूरे छे (तत के०) त्यारे (अरघट्टः के०) अरहट्ट (क्षेत्रमात्रं के०) क्षेत्रमात्रने (किमु के०) शुं (नपृणातु के०) न पूर्ण करे? करेज अर्थात् नर

तचक्रवर्त्तियें सर्व साधर्मीनुं पोषण कर्युं तेथी आपणथी तेटलुं न बने तो यथाशक्तिपणें साधर्मी वात्सल्य करवुं जेम वरसाद तो आखी पृथ्वीने तृप्त करे छे, परंतु अर्हट्ट जे छे ते पण एक क्षेत्रनें तृप्त करे छे ॥ ६ए ॥

आंहिं भरतचक्रवर्त्तीनो दृष्टांत होवाथी तेनी कथा कहे छे. अयोध्या नगरीनेविषे भरतचक्रवर्त्ती राज्य करे छे. एक दिवस श्रीऋषभदेवजी चोराशी हजार साधुयें युक्त उद्यानमां समोसर्या. तेनी भरतचक्रवर्त्तीने खबर पडवाथी अशन, पान, खादिम, स्वादिमनां सहस्रशकट भरीने समवसरणनेविषे गया. स्वामीने वंदन करीने भरतचक्रवर्त्तीयें कह्युं के स्वामिन्! आ सर्व अन्नपानादि साधुना पारणाने माटे ग्रहण करो. त्यारें स्वामीयें कह्युं के आ अन्नादिकमां घणाज दोषो छे, एकतो आंहि लाव्यो तेमां जीवहिंसा दोष, बीजो अभ्याहृत दोष, त्रीजो राजपिंम दोष, एम अनेक दोषो छे माटें ए अमारे सर्वथा कल्पे नहिं. ते सांभली भरत राजा अत्यंत पश्चात्ताप करवा लाग्यो. त्यारें स्वामीयें कह्युं के मध्यम पात्र श्रावको छे, माटें ते साधर्मिक छे तेथी श्रावकोनी भक्ति तुं कर्य. पछी ते भरतचक्रवर्त्तीयें सर्वत्र उद्घोषण देवरावी जे सर्व श्रावकोयें माहरें घेर जमवुं. अने रसोयाउनें पण कह्युं के जे श्रावक आवे तेउने भोजन करावजो. एम करवाथी सर्व लोको त्यांज जमवा लाग्या. पछी रसोया थाकी जवाथी भागी गया. चक्रवर्त्तियें जाण्युं जे आ तो सर्व जण भोजन करवा आवे छे, माटें श्रावकनी परीक्षा करीने पछी जमाडवा अने तेनें कांइक चिन्ह करवुं एम विचारीने चक्रवर्त्तियें श्रावकनी परीक्षा करी तेमना कंठमां काकिणी रत्नें करी त्रण रेखा करी. एम छ छ मासें परीक्षा करवा मांमी. तेथी श्रावकनी अने बीजानी व्यक्ति थवा लागी. एवी रीतें भरतचक्रवर्त्तियें साधर्मीवात्सल्य कर्युं.

श्राद्धानां सदुपासका बहुमताएवैकधर्मत्वतः, साधूनामपिजातु गौरवपदं वीतस्पृहाणाममी ॥ रुग्नाशाडुपसर्गहृत्स्तवनतःश्रीभद्रबाहोर्यथा, चंद्रार्काब्दवदुत्तमेषु सहजंविश्वोपकारिव्रतं ॥७०॥

अर्थः—(सदुपासकाः के०) श्रेष्ठ उपासना करनारा (एकधर्मत्वतः के०) एक धर्मपणाथी एटले साधर्मिपणाथी (श्राद्धानां के०) श्रावकाने (बहुमताएव के०) अति अभीष्ट एवाज (अमी के०) आ उपास

को (जातु के०) कोइ समये (वीतस्पृहाणां के०) निःस्पृह एवा (साधूनामपि के०) साधुउने पण (गौरवपदं के०) गौरवना स्थानरूप (जवंति के०) थाय बे. (यथा के०) जेम (श्रीजद्रबाहोः के०) श्रीजद्रबाहुना उपासको (रुग्नाशात् के०) रोगने नाश करनार एवा (उपसर्गहृतस्तवनतः के०) उपसर्गहर स्तोत्रथी गौरवताना स्थानरूप थया तथा (उत्तमेषु के०) उत्तम पुरुषोने विषे (चंद्रार्काब्दवत् के०) चंद्र सूर्य अने मेघनी पेठें (सहजं व्रतं के०) स्वाजाविक व्रत जे बे ते (विश्वोपकारि के०) विश्वनो उपकार करनार बे. अर्थात् जेम सूर्य, चंद्र अनें मेघ ए त्रणे स्वजावेज परोपकारी बे तेम उत्तम जननेविषे पण विश्वने उपकार करनारुं एवुं व्रत स्वाजाविक होय बे एम जाणी लेवुं ॥ ७० ॥

आ श्लोकमां जद्रबाहुनो दृष्टांत होवाथी तेनी कथा कहे बे. पोलासपुरनगरनेंविषे सोमदत्त ब्राह्मणना पुत्र जद्रबाहु अने वाराहमिहर नामे बे जाइ हता. तेणें एकदा गुरुनी वाणी सांजली वैराग्य पामी दीक्षा लीधी बेहु जाइ सर्व शास्त्रना जाणनारा थया. तेमां जद्रबाहुने अधिक गुणवालो जाणी गुरुयें आचार्यपद आप्युं.तेथी वाराहमिहर खेद पामीनें दीक्षानो त्याग करी पुनः संसारासक्त थयो. एक दिवस वाराहमिहरें राजा पासें आवी कह्युं के, आ कुंमालानेविषे बावन पलनुं मत्स्य आकाशमांथी पडशे अने श्रीजद्रबाहु गुरुयें कह्युं के कुंमथकी बाहेर पडशे. तेंवार पबी श्रीजद्रबाहुयें जेम कह्युं हतुं तेज प्रमाणें थयुं. एक दिवस वाराहमिहिरें राजाना पुत्रनुं आयुर्दा सोवर्षनुं वरत्युं अने कह्युं के तमारो पुत्र सो वर्ष जीवशे. त्यारें जद्रबाहु गुरुयें

स्त्रीपुंसोप्यधिका त्रिपक्षविशदा पुंरत्नखानिर्यतः, स्वा
मिन्या मरुदेवया तु सदृशी नूता नना विन्यपि ॥ वि
श्वार्यौ जिनचक्रिणौ प्रथमतो यत्पुत्रपौत्रावहो, याप्रागे
व शुनेह्नि य नूच्छिवपुरप्रस्थानकस्था प्रनोः ॥ ७१ ॥

अर्थः– (पुंसःअपिअधिका के०) पुरुष थकी पण अधिक एवी तथा जे (त्रिपक्षविशदा के०) मातृपक्ष, पितृपक्ष, अने श्वसुरपक्ष, एवा त्रणे पक्षोयें करी निर्मल, एवी वली (यतः के०) जे कारण माटे (स्त्री के०) ते स्त्री (पुंरत्नखानिः के०) पुरुष रूप रत्ननी खाण एवी (मरुदेवया के०) मरुदेवा (स्वामिन्या के०) स्वामिनी (सदृशी के०) सरखी कोइ पण (ननूता के०) नथी थइ तथा (ननाविनीअपि के०) थवानी पण कोइ नथी. वली (अहो के०) आश्चर्ये (यत्पुत्रपौत्रौ के०) जे मरुदेवीना पुत्र श्रीरुषनदेव अने पौत्रा श्रीनरत ते केवा छे तो के (विश्वार्यौ के०) सर्व विश्वमां आर्य छे तथा वली कहेवा छे तो के (जिनचक्रिणौ के०) ए श्रीरुषनदेव जिनेश्वर तीर्थंकर थया छे तथा बीजा श्रीनरत ते चक्रवर्त्ती थया छे. वली (या के०) जे मरुदेवी (प्रनोः के०) श्रीरुषनदेव तीर्थंकरनी (प्रागेव के०) प्रथमज (शुनेह्नि के०) शुनदिवसनेविषे (शिवपुरप्रस्थानकस्था के०) शिवपुर प्रत्यें प्रस्थानने विषे रहेनारां (अनूत् के०) थतां हवां. जेम बीजो कोइ पुरुष पण महोटा कार्यने माटे जती वखते प्रथमथी प्रस्थान मूके छे तेम ज्यां नगवान् श्रीरुषनदेवजी शिवपुर प्रत्यें आवनार छे तेना प्रस्थानने माटे प्रथमथी श्रीमरुदेवी माताजी पोतेंज प्रस्थानने विषे रहेतां हवां. एवी स्त्री जगत्मां उत्तम जाणवी ॥ ७१ ॥

आ श्लोकमां मरुदेवीनो दृष्टांत होवाथी तेनी कथा कहे छे. अयोध्याने विषे नानिराजानी स्त्री मरुदेवीजीना पुत्र श्रीरुषन देवजी हता तेमणे पोताना सो पुत्रने राज्य आपी दीक्षा ग्रहण करी पछी पोताना पुत्रना दुःखें करीने मरुदेवीनां चक्षुने पडल आव्यां ते ज्यारें रुषनदेवजीने पुरिमतालनेविषे वडनी नीचें केवलज्ञान उत्पन्न थयुं, त्यारें तेमना पुत्र नरत चक्रवर्त्ती मरुदेवीजीने हस्तीउपर बेसारीने श्रीरुषनदेवजीने वंदन करवा गया त्यां श्रीरुषनदेवजीनी वाणी सांनलीने मरुदेवि माताने हर्ष उ

त्पन्न थयो तेथी आंखनां पडल उघडी गयां. त्यां पोताना पुत्रनी समृद्धि जोइने पोताने पण केवल ज्ञान उत्पन्न थयुं तरत मुक्तिने पामतां हवां ॥ ७१ ॥

या श्राविकाप्यमलशीलपवित्रितांगी, सा श्लाघ्यतेत्रिभुवनेऽपि यथा सुभद्रा ॥ यस्यास्त्रिवारिचुलकाहितलोकतुष्टेः स्रोतःसहस्रकृतमुत्सदृशी क्व गंगा ॥ ७२ ॥

अर्थः—(या के०) जे (अमलशीलपवित्रितांगी के०) निर्मल एवा शीलें करी पवित्रित छे अंग जेनां एवी (श्राविका के०) श्राविका छे (साऽपि के०) ते पण (त्रिभुवनेपि के०) त्रण भुवननेविषेपण (श्लाघ्यते के०) वखणाय छे. केनी पेठे ? तो के (सुभद्रा यथा के०) सुभद्रा श्राविका छे तेज जेम ? वली (त्रिवारिचुलकाहितलोकतुष्टेः के०) पाणीनी त्रण अंजलिने छांटवेकरीने करी छे सर्वलोकनी तुष्टि जेणें एवी (यस्याः के०) जे सुभद्रा श्राविका ते (सदृशी के०) समान (गंगा के०) गंगानदी (क्व के०) क्यांथी होय ? अर्थात् नज होय. कारण के सुभद्रा श्राविकायें तो त्रण अंजलिथी त्रण द्वार उघाड्यां अने गंगा नदी तो वली (स्रोतःसहस्रकृतमुत् के०) पोताना हजारो पाणीना प्रवाहोयें करी लोकोने हर्ष देनारी थाय छे अर्थात् सहस्रप्रवाहें करी जगत्नुं कल्याण करे छे अने आ सुभद्रा श्राविका तो पाणीनी त्रण अंजलियेंज जगतने संतोष दायक थइ छे माटे गंगाथकी सुभद्रा श्राविका अधिक छे ॥ ७२ ॥

आहिं सुभद्रानो दृष्टांत होवाथी तेनी कथा कहे छे. चंपापुरीनेविषे जिनदत्तनामा श्रेष्ठी रहे छे. तेनी दीकरी परम जैनधर्म पालनारी सुभद्रा नामें हती ते बौद्धना भक्त बुद्धदास नामा व्यवहारीना पुत्रनी साथें परणी. एकदा सुभद्राने घेर कोइ जिनकल्पी साधु आव्या. ते साधुनी आंखमां वांसनुं फोतरुं पडेलुं हतुं तेने जिह्वायें करी लइ लीधुं. तेवारे सुभद्राना कपालमां सिंदूरनुं तिलक हतुं ते मुख अडवाथी साधुना भालमां सिंदूर लागी गयो, हवे ते सुभद्रानी नणंद महा दुष्ट हती तेणे पोताना भाइने कह्युं के भाइ ! आ मारी भाभीने में साधुसाथें संग करतां नजरें जोइ, ते जो खोटुं मानोतो जुवो आ मारी भाभीना कपालमां लगावेलो सिंदूर ते एक बीजाना मुखे मुख मलवाथकी साधुने लाग्यो छे ते वात सांभलीने

जुवे तो साधुने कपालें सिंदूर लागेलो दीठो. के तरत ते सुनडाने असती मानीने तेना स्वामीयें तेनो त्याग कस्यो पछी सुनडा कायोत्सर्ग करवा बेठी तेवारे शासनसुरी प्रगट थइने कहेवा लागी के हे सुनडे ! तारुं कलं क हुं उतारीश तेनी तुं चिंता करीश नहिं एम कही गामना त्रणे दरवाजा ना बारणां ते शासनदेवीयें कोइथकी न उघडे एवां कमाड बंध करी दीधां. राजायें बीजा उपाय करवा मांड्या तेवारें आकाशमांथी शासनदेवीयें कह्युं के जो कोइ सती काचा सूतरना तांतणायें बांधेली चारणीएं करी सि चेलो जल द्वारने छांटे, तो ते द्वार उघडे, परंतु बीजा कोइ उपायथी उ घडे तेम नथी. पछी गाममां जे सती स्त्रीयो हती ते सर्वने राजायें बोला वी अने तेमने काचे तांतणे चारणीयो बांधी कूवामांथी जल काढवानो ठेराव कस्यो परंतु कोइथी ते बन्युं नहिं एम सर्व सतीनो मदनंग थयो. त्यारे सुनडा पोताना सतीपणानी परीक्षा देवा माटे त्यां आवी काचे ता तणे बांधेली चारणीयें करी कुवामांथी जल काढ्युं काढीने त्रणे दरवाजा उपर एक एक छांट जलनी नाखी के तरत ते त्रणे दरवाजानां कमाड उ घाड्यां अने कदापि कोइ बीजी स्त्री कहे के ए रीतें तो हुं पण उघाडी आपुं तो तेने उघाडवा माटे एक दरवाजो रहेवा दीधो ॥ ७२ ॥

पुष्पाक्षताद्भुतगुणस्तवनादिनेदात्, त्रैविध्यतःप्रति
दिनंजिनपादपूजा ॥ श्रीश्रेणिकादिजनवज्जिनतादि
दत्ते, चक्रादयःकलशतामिवनृद्दलस्य ॥ ७३ ॥

अर्थः–(पुष्पाक्षताद्भुतगुणस्तवनादिनेदात् के०) पुष्प, अक्षत, अद्भु त एवा गुण स्तवनादिक तेना नेदें करीने (प्रतिदिनं के०) प्रति दिवस, (जिनपादपूजा के०) जिननगवानना पगनी पूजा (त्रैविध्यतः के०) त्रणे प्रकारें करी करवी. आ ठेकाणे आदिशब्द प्रत्येक नेदें जाणवो. जेम के पुष्प छे त्यां पुष्पादि, अक्षत छे त्यां अक्षतादि, स्तवन छे त्यां स्तवनादि एम आ दिशब्द लेवो अने जे देह उपर चढे छे ते पुष्पादि पूजा जाणवी. अने जे देवनी पासें मूकीयें ते अक्षतादि पूजा जाणवी अने जे गीतनाटक करियें ते पूजा स्तवनादिकमां जाणवी. ए पूजाना त्रण प्रकार जाणवा. ते जिनपू जा (श्रीश्रेणिकादिजनवज्जिनतादि के०) श्रीश्रेणिकादि राजानी पेठें तीर्थंक

रादिक पदवीने (दत्ते के०) आपे छे. आहिं आदिशब्दें करी वासुदेव, बल देव राज्यादिक पण लेवां एटले जिनपूजा करनारने ए सर्व पदवी प्राप्त थाय छे. केनी पेठें. तो के (मृद्दलस्य के०) मृत्तिकाना दलना (चक्रादयः के०) चक्र, लाकडी, दोरडी, कुंनारप्रमुख जेछे, ते (कलशतामिव के०) कुंनादिकने जेम आपे छे. तेम जिनपूजा पण तीर्थंकरादिकपणाने आपे छे ॥७३॥

आ ठेकाणे श्रेणिक राजानो दृष्टांत होवाथी पूर्वें श्रेणिक राजानी कथा कही छे तो पण फरीने किंचित्मात्र कथा कहे छे. श्रेणिक नामा राजा परम जैनी क्षायिक सम्यक्त्वने धारण करनारो हतो त्रण काल श्रीजिननगवाननुं पूजन करतो हतो. ते राजा प्रति दिवस एकशो आठ सोनाना यवोयें करी श्रीजिननगवाननी पासें स्वस्तिक पूरतो हतो. ए प्रकारनी श्रीजिननक्तियें करी तीर्थंकर नामकर्म उपार्जन ते राजायें कर्युं. ॥ ७३ ॥

स्याज्जिनार्चनकृतस्त्रिकशुध्ध्या, शंविपद्यपियथा दवदंत्याः ॥
स्वस्तरुःफलति किं नहिरोरे, नेंडुरस्यतितृषंचचकोरे ॥ ७४ ॥

अर्थः—(त्रिकशुध्ध्या के०) मन, वचन अने कायानी शुद्धियें करी (जिनार्चनकृतः के०) जिननुं अर्चन करनारने (विपद्यपि के०) विपत्तिने विषे पण (शं के०) सुख (स्यात् के०) होय. केनी पेठे ? तो के (दवदंत्याःयथा के०) दवदंतीनी पेठे जेम (रोरे के०)दारिद्र्येंकरी परानव पामेला एवा पुरुषने विषे (स्वस्तरुः के०) कल्पवृक्ष (किं के०) शुं (नहिफलति के०) नथी फलतो ना फलेज छे. (च के०) वली (इंडुः के०) चंद्रमा, (चकोरे के०) चकोर पक्षीने विषे (तृषं के०) तृष्णाने (न अस्यति के०) नथी फेंकतो ? अर्थात् फेंकेज छे ॥ ७४ ॥

आहीं दृष्टांतमां दवदंतीनी कथा कहे छे. अष्टापद पर्वतनी पासें धन्य नामा गाम छे. तेनो मम्मण नामें राजा हतो, तेनी वीरमती नामें स्त्री हती. एक दिवस ते राजा आयडो करवा नीकल्यो तेने जैनसाधु सामो मलवाथी अपशुकन थयुं एम मानीने ते साधुने पकडीने बार प्रहर राख्यो पछी वीरमतीयें राजाने समजावीने ते साधुने छोडाव्यो. साधुयें धर्मोपदेश दीधो वीरमती श्राविका थइ पांचशें आंबिल कर्यां वली अष्टापद उपर जइने चोवीश जिननगवानने मणिमय तिलक कराव्यां. ते पछी ते वीरमती

मरण पामीने कुंडिनपुरनेविषे श्रीभीमनृपनी कन्या दवदंती नामें थइ. म म्मणनो जीव नल राजा थयो. ते दवदंतीने परण्यो ते दवदंतीना कपाल मां जन्मतांज स्वाभाविक रविमंडल जेम शोभे तेवुं देदीप्यमान तिलक थइ रह्युं हतुं. एकदा जुगारें रमता नलराजा राज्यादिक सर्व हार्या. बार व रस ते स्त्री पुरुषने परस्पर वियोग रह्यो. दवदंतीने स्थानस्थानमां विकट दुःखो आव्यां हतां ते सर्व जिन अर्चनना प्रभावथकी लय थइ गयां बार वरसना अंतमां नलराजाने फरीने राज्य प्राप्त थयुं. इति जिनपूजनाधिकार.

श्रीरामवद्भोनयएव सेव्यः, प्रजानुरागव्रतवित्तमूलं ॥ कोद
क्षिणावर्त्तमुपेत्यशंखं, त्यजेन्मुधाश्यामलचित्रकंवा ॥ ७५ ॥

अर्थः—(भो के०) हे भव्यजनो ! (प्रजानुरागव्रतवित्तमूलं के०) प्रजाने विषे अनुरागप्रतीति, व्रत, आचार, अने द्रव्यना मूलरूप एवो (नयःएव के०) न्याय तेज (श्रीरामवत् के०) श्रीरामचंद्रनी पेठे (सेव्यः के०) सेववा योग्य छे. त्यां दृष्टांत कहे छे के (मुधा के०) खोटा एवा (श्यामलचित्रकं के०) काली चित्र वल्लीरूप कोडाने (उपेत्य के०) पामीने (दक्षिणावर्त्त के०) दक्षिणावर्त्त नामना (शंखं के०) शंखने (कःवा के०) कयो पुरुष, (त्यजेत् के०) त्याग करे ? कोइ त्याग करे नही ॥ ७५ ॥

आ ठेकाणे श्रीरामनो दृष्टांत होवाथी तेनी कथा प्रसिद्ध छे तो पण कहे छे. कौशला नगरीनेविषे रामचंद्रजी राज्यने भोगवे छे तेनी पट्टराणी सीताजी हतां, ते रामना भाइ लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न, एवे नामें हता. बा पनी आज्ञाथी राज्यनो त्याग करीने बार वरस वनवास भोगव्यो. न्याय मार्गने अनुसरी रावण प्रतिवासुदेवने मारीने तेणे हरण करीने लइ गयेली निष्कलंक एवी पोतानी स्त्री सीताने पाछी वाली. ते पछी दशहजार वरस पर्यंत न्यायें राज्य भोगव्युं, लोकमां पण सारुं देखतुं राज्य होय तो राम राज छे एम अद्यापि पर्यंत ख्याति छे एवुं राज्य चलाव्युं ॥ ७५ ॥

मनसि वचसि शश्वत्न्यायएवोत्तमानां, यदमरवर
लब्ध्या पारदारिक्यचौर्ये ॥ अनुविषयमरौत्सीच्चक्र
भृद्ब्रह्मदत्तः, कसुरसरितिपंकः केशचंद्रे कलंकः ॥७६॥

अर्थः—(मनसि के०) मनने विषे (वचसि के०) वाणीने विषे (शश्व

त् के०) निरंतर (उत्तमानां के०) उत्तमोने (न्यायएव के०) न्यायज योग्य छे. (यत् के०) जे कारण माटे (अमरवरलब्ध्या के०) प्रधानदेव तानी प्राप्तियें करी (पारदारिक्यचौर्यं के०) परदारानी चोरीना कार्यने (अनुविषयं के०) देशदेश प्रत्यें (चक्रभृत् ब्रह्मदत्तः के०) ब्रह्मदत्त नामा चक्रवर्त्ती (अरौत्सीत् के०) निवारण करतो हवो. त्यां दृष्टांत कहे छे. के जेम (सुरसरिति के०) स्वर्गगंगाने विषे (पंकः के०) कचरो (क के०) क्यां थी होय, तथा (ईशचंद्रे के०) शंकरना शिर उपर रहेला चंद्रने विषे (कलं कः के०) कलंक ते (क के०) क्यांथी होय. नाज होय ॥ ७६ ॥

आंहिं ब्रह्मदत्तचक्रवर्त्तीनी कथा कहे छे. ब्रह्मदत्तें वनने विषे कोइक दे वतानी स्त्रीने कोइ पुरुष साथें रमती जोइने ते स्त्री पुरुष बेहुनुं ताडन कर्युं. ते स्त्री त्यांथी जइने पोताना स्वामी प्रत्यें कहेवा लागी के हे स्वामिनाथ ! मने आवी रीतें ब्रह्मदत्तचक्रीयें मारी, पछी तेना पति नागकुमार देवने सहेज तरतज कोप चड्यो, अने तरत त्यां आव्यो. ते वखतें ते ब्रह्मदत्त चक्री पोतानी स्त्रीने घरमां कहेतो हतो के हे स्त्री ! में कोइ स्त्रीने कुकर्म करती जोइने मार मार्यो छे, ते वाक्य सांभलतांज नागकुमार देव प्रसन्न थयो थको प्रगट थइने कहेवा लाग्यो के हे राजन् ! वरदान मागो. त्यारें ब्रह्मदत्तें कह्युं के तमें अवधिज्ञानथी सर्व वात जाणो छो, माटे मारा देशमां परस्त्रीनी चोरी जो थाय, तो मने आवीने कहेवुं, तेने हुं शिक्षा आपीश. ए वरदान मागुं छुं. पछी ते प्रमाणें ते देवें कर्युं अने ब्रह्मदत्तचक्रवर्त्तीयें पण तेमज कर्युं ॥ ७६ ॥

विद्याविभूतिमहिमव्रतधर्म्ममोक्ष, संपत्तये विनय
एव विभुः किमन्यैः ॥ किं किं नमिः सविनमिर्जिनतो
न लेभे, पूज्यांघ्रिरेणुरपि पश्य नमस्यएव ॥ ७७ ॥

अर्थः–(विद्या के०) विद्या, (विभूति के०) लक्ष्मी वा संपत्ति, (महिम के०) महिमा (व्रत के०) व्रत, (धर्म के०) धर्म, (मोक्ष के०) मोक्ष तेनी (संपत्तये के०) संपत्तिने माटे (विनयएवविभुः के०) विनय तेज समर्थ छे. (अन्यैःकिं के०) बीजाउयें करीने शुं ? (सविनमिः के०) ते विनमियें सहित एवो (नमिः के०) नमि ते (जिनतः के०) श्रीऋषभदेव तीर्थंकरथकी (किंकिं के०) शुं शुं. (न लेभे के०) न पामतो हवो. अर्थात

सर्व राज्यादि लक्ष्मीने प्राप्त थतो हवोज. माटे (पश्य के०) हे भव्यजन ! जुवो. (पूज्यांघ्रिरेणुरपि के०) पूज्य एवा तीर्थंकरना चरणनी रज पण (नमस्यएव के०) नमन करवा योग्यज ले माटे विनय राखवो ॥ ७७ ॥

आहिं नमि विनमिनी कथा कहे ले. नमि अने विनमि बे क्षत्रिय ते कछ महाकछना पुत्र ते श्रीरुषभदेवजीना अंगरक्षक होता हवा, ते बेहु कोइक कार्यने विषे देशांतर गया. तदनंतर श्रीरुषभदेव स्वामीयें दीक्षा ग्रहण करी पढी, ते जेवारें पाछा आव्या तेवारें स्वामी ज्यां विहार करे, त्यां सा थें फरता रहे. प्रातःकालमां श्रीरुषभदेवजीना चरणने कमलें करी पूजीने कहे के हे स्वामी ! राज्य देनारा थाजो. एम मागता हता. एक दिवस धर णेंड, श्रीरुषभदेवना वंदन माटे आव्यो ते बेहु जणने जोइने कहेवा ला ग्यो. के तमो बेहु भरतचक्रवर्त्ती पासें जाउ ते तमोने राज्य आपशे. त्यारे तेणें कह्युं के शुं रुषभदेवजी नहिं आपे ? वचमां तमारे बोलवानुं शुं काम ले ? तमारे जावुं होय तो जाउ. अमोने तो ज्यारें स्वामी राज्य आपशे, तेवारें लेशुं. अमारे कांइ भरतनी साथें प्रयोजन नथी. ते सांभली धरणेंडे तुष्टमान थइने चोराशी हजार विद्याउ आपी. अने वैताढ्य पर्वतने विषे दक्षिण श्रेणी अने उत्तर श्रेणीनुं राज्य वेंचीने बेहु भाइउने धरणेंडें आप्युं, ते तेणें लीधुं ॥ ७७ ॥

किं मर्त्यस्त्रिदशोप्यपास्तविनयोम्लानेः सहानेः पदं,
यक्षोवृद्धकरः किमार्यखपुटाचार्येण ना शिक्षितः ॥
किंवा विष्णुकुमारतोन नमुचिर्मृत्वाऽगमद्दुर्गतिं, नद्यो
घस्तरुमुन्नतं रुजति वा नम्रं तु नो वेतसम् ॥ ७८ ॥

अर्थः—(अपास्तविनयः के०) त्याग कर्यो ले विनय जेणें एवो (त्रिदशोपि के०) देवता पण (सहानेः के०) हानियें सहित एवा (म्लानेः के०) पराभवनुं (पदं के०) स्थानक थाय. जुवो (वृद्धकरः के०) वृद्ध कर नामा (यक्षः के०) यक्ष तेने (आर्यखपुटाचार्येण के०) आर्यखपुटा चार्यें (किं के०) शुं (नाशिक्षितः के०) न शिक्षा कर्यो ? ना कर्योज ले. तो (मर्त्यः किं के०) माणसनुं तो शुंज कहेवुं ? हवे ते वृद्धकर यक्ष केवो हतो ? तो के जिनशासननो द्वेषी, साधुने डुःख दायक हतो अने हुं महा

ज्ञानी छुं. एम अभिमान कर्युं तेथी आर्यखपुटाचार्यें प्रासादनो अंतराय करे छते गुरुयें तेने प्रतिपत्तिने पमाड्यो. पछी गुरुयें बोध कर्यो (वा के०) वली (विष्णुकुमारतः के०) विष्णुकुमार जे मुनीश्वर तेथकी (नमुचिः के०) नमुचि नामा प्रधान ते (मृत्वा के०) मरीने (दुर्गतिं के०) दुर्गतिने (किंनअगमत् के०) शुं न पामतो हवो? कवि कहे छे ते वात घटे छे. जेम (वा के०) वली (नद्योघः के०) नदीना जलनो समूह, (उन्नतं के०) उंचा एवा (तरुं के०) वृक्षने (रुजति के०) भंग करे छे परंतु (नम्रं के०) नम्र एवा (वेतसं तु के०) वेतस नामा वृक्षने तो (नो के०) भंग करतो नथी. अर्थात् अभिमाननो तो भंग पण थाय छे. परंतु विनयनो भंग कोइ ठेकाणें थतोज नथी. एम जाणवुं ॥७७॥

आ श्लोकमां बे दृष्टांत होवाथी प्रथम वृद्धकर यक्षनी कथा कहे छे. गूढशस्त्र नगरने विषे भुवनमुनियें वृद्धकर नामा बुद्धमुनिनो वादमां विजय कर्यो. ते मरीने यक्ष थयो. पछी ते यक्षें संघने उपद्रव करवा मांड्यो. तदनंतर त्यां श्रीखपुटाचार्य दैवइछायें आव्या. गुरु ते यक्षना घर प्रत्यें जइने यक्षना कर्णनें जुना खासडानो निवेश करी तेनी छातीने विषे पोतानो पग मूकी वस्त्रें करी ते यक्षनुं अंग ढांकीने खपटाचार्य सुता, ते प्रभातें यक्षना पूजन करनारें जोइने सर्व वृत्तांत राजाने निवेदन कर्युं. राजायें तिहां आवीने सेवकोना हाथें कोरडायें करी गुरुने मारवा मांड्यो. ते कोरडाना प्रहार राजाना अंतःपुरमां लाग्या, ते जोइ आचार्यने पगे लागीने राजायें क्षमा मागी. तेवारें गुरु त्यांथी उठ्या अने गुरुयें तिरस्कार पमाडेला यक्षें चतुर्विधसंघनी रक्षा करी. पछी ते गुरुयें यक्ष विनायक रुद्रादि देवतायें युक्त थया छता पुर प्रत्यें जइ बे पाषाणनी कुंभीउ नगरने दरवाजे स्थापन करी सर्व देवताउने रजा आपी. देवो पोताने स्थानकें गया. ते अद्यापि पर्यंत पाषाणनी कुंभिकाउ प्रतोलिकामां देखाय छे. कोइ पण तेने चलावी शकतुं नथी.

हवे विष्णुकुमारनी कथा कहे छे. पद्मपुर नगरने विषे पद्म नामा चक्रवर्त्ती राज्य करे छे. तेनो नमुचि नामा मंत्री हतो. तेने एक दिवस नास्तिक मतने प्ररूपण करता थकां सुस्थिताचार्यना लघु शिष्यें सर्व लोकोनी समक्ष जींती लीधो. एकदा नमुचियें कोइ कार्य करीने चक्रीने अत्यंत प्रसन्न कर्यो. तेवारें चक्रीयें कह्युं तुं माग, ते हुं आपुं. तेणें सात दिवस पर्यंत राज्य

माग्युं. ते राजायें पण सात दिवस राज्य आप्युं. नमुचि मंत्री राज्यासने बेठो. अने साधुउने कहेवा लाग्यो के मारी पृथ्वीनो तमो त्याग करो, नहिं तो हुं सर्वे साधुउने हणीश. पढी कोइक साधुयें गगनमार्गें मेरुना शिखरप्र र जइने श्रीपद्मचक्रवर्त्तीना ज्ञाइ श्रीविष्णुकुमारनी पासें नमुचिनुं वृत्तांत स र्व कह्युं. विष्णुकुमार त्यांथी आवीने नमुचिने कहेवा लाग्या के हे राजन्! आ साधुउने उपद्रव करवो तुजने घटे नहिं? केटली एक पृथ्वी तुं साधु उने आप के जे ठेकाणे सर्वे साधुउ निवास करे. त्यारें मंत्री कहेवा ला ग्यो के त्रण पगलां पृथ्वी अमो आपीयें बैयें, माटे जाउ तेटली पृथ्वीमां रहो. ते सांजली विष्णुकुमार मुनियें लाख योजननुं वैक्रियरूप धारण क रीने पृथ्वीने उल्लंघन करी एक पगलुं पूर्वसमुद्र उपर मूक्युं, अने एक प गलुं पश्चिम समुद्रें मूक्युं. पढी विष्णुकुमार कहेवा लाग्या के हे पापी! त्रीजुं पगलुं हुं क्यां मूकुं? ते मने कहे. एम कही तेना मस्तकपर एक पग मूक्यो ते पगना प्रहारें करी तेने चूर्ण करी नाख्यो. पढी विष्णुकुमारें पो तानुं वैक्रियरूप संहरण करी लीधुं पोते आलोयणा लेता हवा ॥ ७८ ॥

राज्यं शक्रकृताज्ञिषेचनमहो रूपं त्रिलोकेऽप्यस,
त्सारूप्यं च सनत्कुमारनृपतेः सोऽप्यंगवैराग्यतः ॥
चक्रे चारुतपः सलब्धिरपि तत् स्वं नाचिकित्सत्पुना,
रज्येद्वा प्रतिकर्मनिर्मलरुचौ कः कुप्यपात्रे सुधीः॥७ए॥

अर्थः-(शक्रकृताज्ञिषेचनं के०) इंद्रें कर्यो ढे अज्ञिषेक जेनो एवुं (राज्यं के०) राज्य, (च के०) तथा (अहो के०) आश्चर्यें (त्रिलोकेऽपि के०) त्रण लोकनेविषे पण (असत् के०) नथी विद्यमान (सारूप्यं के०) समानपणुं जेनुं एवुं (रूपं के०) रूप, ते बेहु (सनत्कुमारनृपतेः के०) सनत्कुमाररा जाने हतां, (सोऽपि के०) ते सनत्कुमारनृपति, पण (अंगवैराग्यतः के०) ते अंगनेविषे वैराग्यथकी (चारुतपः के०) मनोहर एवा तपने (चक्रे के०) करतो हवो. तथा (सलब्धिरपि के०) ते लब्धियें सहित थयो तो पण ते सनत्कुमारराजा (पुनः के०) फरीने (तत् के०) ते (स्वं के०) पोताना अं गने सारुं करवानो (नाचिकित्सत् के०) उपाय न करतो हवो, एटले शरीर बगड्युं तो पण तेनी प्रतिक्रिया करी नही. कवि कहे ढे. ते वात घटे ढे कारण

के (सुधीः के०) रूडी छे, बुद्धि जेनी एवो (कः के०) कयो पुरुष,(प्रतिकर्मनिर्मलरुचौ के०) प्रतिकर्मेकरीने छे निर्मल कांति जेनी एवा (कुप्यपात्रे के०) ताम्रपात्रनेविषे (रज्येद्वा के०) राजी थाय वारु? नज थाय. तेम वैराग्य थवा पछी कूप्यादि सदृश देहादिकनेविषे कोण राजी थाय? ॥ ७९ ॥

आंही सनत्कुमारनी कथा कहे छे. अयोध्यानगरीनेविषे सनत्कुमार नामा चक्री राज्य करे छे. एकदिवस सनत्कुमारनुं रूप इंद्रे पोतानी सन्नामां वखाण्युं, तेनुं रूप जोवाने तत्काल बे देवता आव्या, ते वखत चक्रवर्त्ती स्नान करवा बेठा हता, तेनुं रूप जोइने ते बेहुजण विस्मय पामी गया. चक्रवर्त्तीयें कह्युं के हे देवताउ! हुं जेवारें सिंहासन उपर बेसुं, तेवारें तमो माहरा स्वरूपने जो जो. पछी जेवारें सन्नामां सिंहासन उपर बेठा, तेवारें सनत्कुमारनुं रूप जोता बेहु देवोनां मुख विछाय थयां. जोइने ते बेहुने चक्रवर्त्ती कहेवा लाग्यो के केम तमारुं मुख विछाय देखाय छे? देवतायें कह्युं के तमारा शरीरमां कुष्टादिक रोग थवाथी अमोयें स्नानवखतें जेवुं तमारुं रूप जोयुं हतुं, तेथी हमणां अत्यंत हीन थइ गयुं. आ वात देवताना मुखथी सांनली चक्रीने तुरत वैराग्य उत्पन्न थयो, तेथी राज्य छोडीने दीक्षा ग्रहण करी. पछी तेने कुष्टादिक आठ रोग उत्पन्न थया. सातशो वर्षरोगनुं दुःख सहन कर्युं. परंतु पोतामां लब्धि छते पण तेना निवारणनो कोइ उपाय कर्यो नहिं. वली ते उसड करे छे के नहिं एवी तेनी परीक्षा करवा माटे बे देवताउ वैद्य थइ आव्या परंतु सनत्कुमार मुनियें वैद्यें कहेलो उपाय कांइ पण कर्यो नहिं. माटे वैराग्य छे तेज ज्ञानसाधन छे ॥ ७९ ॥

आजन्मांतमनंतदुर्मुदि नवे वैराग्यमस्त्येव त, द्व्यक्तं हेतु
षु सत्सु किंतु नवति प्रत्येकबुद्धेष्विव ॥ सूर्याश्मन्यनलं प
यः शशिमणौ स्वर्णं सुवर्णावनौ, कोऽद्राक्षीत् पुनरर्कचंद्र
हुतन्नुग्र्योगात् कुतोप्येति वा ॥ ८० ॥ वैराग्यप्रक्रमः ॥

अर्थः-(आजन्मांतं के०) जन्मथी आरंनीने मरण पर्यंत (अनंतदुर्मुदि के०) अनंत छे दुःखाकुलमुद्र जेमां एवा (नवे के०) संसारने विषे (वैराग्यं के०) वैराग्य (अस्त्येव के०) होय छेज. (तद्व्यक्तं के०) ते स्पष्ट देखाय छे (किंतु के०) केम? तो के (सत्सु के०) प्रसिद्ध एवा

(हेतुषु के०) वृषभादि हेतु छते (प्रत्येकबुद्धेष्विव के०) प्रत्येक बुद्धोने विषे जेम वैराग्य (भवति के०) थयो. त्यां कवि कहे छे. दुःखदायक संसारने विषे पण वैराग्य रह्यो छे. केनी पेठें तो के (सूर्यरश्मनि के०) सूर्यमणिने विषे (अनलं के०) अग्निने (कोऽद्राक्षीत् के०) कोण जोतो हवो कोइ नहि तथा (शशिमणौ के०) चांद्रमणिने विषे (पयः के०) अमृतरूप दुधने कोण जोतो हवो तथा (सुवर्णावनौ के०) सुवर्णमय पृथ्वीने विषे (स्वर्णं के०) सुवर्णने कोण जोतो हतो, अर्थात् ते पूर्वोक्त सर्व वस्तु एटलाने विषे अदृष्टज छे. परंतु (पुनः के०) वली (अर्कचंद्रहुतभुग्योगात् के०) सूर्यमणि, चंद्रमणि, सुवर्ण तेनें एटले अनुक्रमे सूर्यमणिनें सूर्यनो, चंद्रमणीनें चंद्रनो तथा स्वर्णभूमिने अग्निनो योग होवाथी अग्नि, दुध, अने सुवर्ण उत्पन्न थाय छे (वा के०) तेम (कुतोपि के०) क्यारेंक पण देह थकी वैराग्य (एति के०) उत्पन्न थाय छे. एम जाणवुं. जेम पूर्वोक्त पदार्थ सूर्यादिकना योगथी थाय छे तेम कोइक वखतें देहादिकथी वैराग्य उत्पन्न थाय छे ॥ ८० ॥ इति वैराग्यप्रक्रमः ॥

आंहिं चार प्रत्येक बुद्धनो दृष्टांत होवाथी तेनी कथाउमां प्रथम करकंडु प्रत्येक बुधनी कथा कहे छे. कलिंग देशें काकंदी नगरीमां करकंडु राजा राज्य करे छे. तेणें एक दिवस राजमार्गमां जतां एक गोकुलने विषे जाडा कांधवालो, उंची कोट वालो, धोला दांत वालो, अने महाबलवान्, पोतानी त्राडथी दिशाउने गजवतो, अत्यंत सुशोभित,एवो एक वृषभ दीठो. तेथी राजाना मनमां अत्यंत प्रमोद उपनो. वली केटला एक वर्ष पछी पाछा तेज रस्ते चालता ते राजायें जर्जरीभूत गात्रवालो पडी गयेला छे दांत जेना एवो तथा जेना मोढामांथी लाल पडती जाय छे बिभत्स मुखवालो अने पशुउथी दुःख सहन करतो शोभा रहित एवा तेज वृषभने जोयो ते जोइने राजा विचार करे छे के जेवी दशा आ वृषभनी थइ तेवी दशा आ माहारा कलेवरनी पण थशे? एम चिंतवता वैराग्य उत्पन्न थवाथी ते करकंडु राजा पोतेंज दीक्षा ग्रहण करी कर्मनो क्षय करी सिद्धिने प्राप्त थयो. ए करकंडु प्रत्येक बुद्धनी कथा.

हवे दुम्मुहराजानी कथा कहे छे. पंचाल देशमां कांपिल्यपुरने विषे दुर्मुख नामा राजा हतो. ते एक दिवस नगरथी बाहेर निकल्यो छे तेणें रस्तामां नगरना घणा लोकोयें पूजन करेलो, तथा जेनी आगल शृंगार

सजेली एवी स्त्रीयोनां वर्गें गान करेलो अनें नानाप्रकारनां याचक लोको यें स्तुति करेलो तथा हजार ध्वजायें करी शोभायमान जाणीयें साक्षात् इंद्र होय नहिं. एवा इंद्र स्तंभने जोइने राजाना मनमां विस्मय थयो. पाछो फरीने राजा तेज रस्तामां सायंकालें गयो त्यां दरिद्रयुक्त पृथ्वीने विषे पडेलो शोभा रहित एवा तेज स्तंभ जोइने राजाने वैराग्य उपन्यो, तेवारें चारित्र लइ मोक्षसुख पाम्यो ए डुमुख प्रत्येक बुद्धनी कथा कही.

हवे नमि प्रत्येक बुद्धनी कथा कहे छे. श्रीमिथिला नगरीने विषे नमि राजा राज्य करतो हतो. ते अत्यंत स्वरूपवान् तथा लक्ष्मीने पण तिरस्कार करनारी देवांगना सरखी पांचशो स्त्रीयोनी साथें भोग भोगवतो सूर्यना उदय अस्तनी पण तेने खबर नथी. एक दिवस ते नमि राजाना अंगने विषे दाहज्वर उत्पन्न थयो. तेथी राजा कोइ ठेकाणें सुखने न पाम्यो. ते अवसरें राजाना अंगने शीतलता थवाने माटे पांचशें स्त्रियोयें चंदन घसवा मांम्युं, तिहां स्त्रीयोना हाथमां पहेरेली चुडीयोना खणखणाटथी राजाने कंटालो आव्यो, तेवारें एकेक चूडी सर्व स्त्रीयोने राखवानो हुकुम कर्यो. ते सांभली सर्व स्त्रीयोयें एकेक कंकण हाथने विषे राख्युं, ते वखत राजाने समाधि थइ, अने मनमां विचार्युं के जाजाना संगथी मोहोटुं दुःख थाय छे, माटे एकलोज रहेवुं ते सारुं छे. ए द्वारें वैराग्य उत्पन्न थयो तेवारें पांचशे स्त्रीयोनें तथा राज्यनें छांमीने प्रव्रज्या ग्रहण करी. तेनी इंद्रें ब्राह्मणनुं रूप विकूर्वी अनेक प्रकारें परीक्षा करी, तो पण चलायमान थया नही. ए नमि प्रत्येक बुद्धनी कथा कही.

हवे चोथा नग्रति प्रत्येक बुद्धनी कथा कहे छे. गांधार देशने विषे माहिष्मती नगरीमां नग्रति नामें राजा राज्य करे छे. एक दिवस ते राजा वनने विषे क्रीडा करतां थाकी गयो. ते समयें मनोहर नवपल्लवनी शोभायें विराजमान, नवी आम्र मंजरीयें करी सुशोभित, पाकेला फलें करी देदीप्यमान अने अत्यंत छायायुक्त एक आम्रवृक्षने राजायें जोयो. तेनी नीचें जइने घणीवार सुधी विश्रांति लीधी. फरी केटलाएक कालें पाछो राजा ते वनमां गयो. त्यां तेज आम्रने सुकाइ गयेलो पत्र रहित मालविनानो जोइने ते नग्रति राजाने वैराग्य उत्पन्न थयो. तेवारें व्रत ग्रहण करी केवलज्ञान पामीने मुक्तिने प्राप्त थयो ॥८०॥ इति वैराग्यप्रक्रमः संपूर्णः ॥

सुप्रापं शुद्धपात्रं धनमपि विशदं किंतु निष्पुण्यकानां, नो वित्तं पात्रदानं प्रति भवति मतिर्यत्र शुद्धाशनाद्यैः ॥ आद्यो ऽर्हन् वर्षमेकं प्रतिदिनमगमच्छुद्धभैक्ष्येऽपि देशे, श्रेयांस स्त्वेकमाद्यं सुकृतिषु कृतवान् स्वं प्रभोः पारणेन ॥ ८१ ॥

अर्थः—जे दानथकी (यत्र के०)जे वित्तने विषे (शुद्धाशनाद्यैः के०) शुद्ध एवा अशनादिकोयें करी दान देवानी (मतिः के०) बुद्धि, उत्पन्न थाय तथा तेवुं दान अने (शुद्धपात्रं के०) शुद्धपात्र, (सुप्रापं के०) प्राप्त थयेलुं होय तथा (धनमपि के०) द्रव्य पण (विशदं के०) शुद्ध होय (किंतु के०) तो पण (निष्पुण्यकानां के०) पुण्य रहित जनोनुं (वित्तं के०) द्रव्य, ते (पात्रदानंप्रति के०) पात्रदान प्रत्यें (नोभवति के०) थतुं नथी. त्यां दृष्टांत कहे छे के (आद्योऽर्हन् के०) आदिनाथ जे श्री ऋषभदेवजी तीर्थंकर ते, (वर्षमेकं के०) एक वर्ष पर्यंत, (शुद्धभैक्ष्येऽपि के०) शुद्ध छे भैक्ष्य एटले अन्न जेमां एवा (देशे के०) देशने विषे (प्रतिदिनं के०) प्रतिदिन (अगमत् के०) जता हवा, परंतु शुद्ध अशनादिक कोइयें पारणा माटे आप्युं नहिं. अने (सुकृतिषु के०) एक सुकृतिजनने विषे कृतार्थ एवो (श्रेयांसस्तु के०) श्रेयांस राजा जे छे तेज (आद्यं के०) अदन करवा योग्य (एकं के०) एक एवा (स्वं के०) पोतानी पासे रहेला शेरडीना रसने (प्रभोः के०) श्रीआदिनाथना (पारणेन के०) पारणाने कराववे करीने सार्थक (कृतवान् के०) करतो हवो ॥ ८१ ॥

आंहिं श्रेयांस राजानी कथा कहे छे. गजपुर नगरने विषे छद्मस्थ अवस्थायें विहार करता एवा श्रीऋषभदेवजी मध्याह्नने समयें भिक्षाने माटे भमे छे परंतु ते समये भिक्षा ते वळी शुं? अने कोण भिक्षाचर होय. ते वात कोइ पण जाणतुं न हतुं, एवामां पोताना घरनी ऊंची बारीमांथी श्री श्रेयांस कुमारें श्रीऋषभदेवजीने जोया. ते जोता वेंतज ते श्रेयांस कुमारने जातिस्मरण ज्ञान उत्पन्न थयुं, तेवारें श्रेयांसकुमार त्यांथी उठी प्रभु पासें जइने प्रभुने पोताने घेर तेडी लाव्यो. तेवामां कोइक जन घणा एक शेरडीना रसना कुंभ भेट लाव्यो. तेज शेरडीना रसथी प्रभुने पारणुं कराव्युं ते समय पांच दिव्य प्रगट थयां आकाशमांथी सुवर्णनी वृष्टि थइ. कहे

लुं ले के " रिसहेस समं पत्तं, निरवजं इक्कुरससमाहारं ॥ सेयंस समो नावो, हविज जइ मग्गियं हुजा ॥ १ ॥ एम सुपात्रने दान आपवाथी तेज नवमां श्रेयांस मुक्तिने प्राप्त थयो ॥ ७१ ॥

यदपि तदपि शुद्धं चंदनावत्प्रदत्तं,ऊटिति फलति पात्रेऽन्यत्र नो चार्वपि स्वं ॥ जलधिजलमसारं वारिवाहेऽमृती स्यात्, मधुरमपि हि दुग्धं पन्नगास्ये विषी स्यात् ॥ ७२ ॥

अर्थः—(यदपितदपि के०) सरसविरसएवुं पण (शुद्धं के०) बहेंतालीश दोषरहित एवुं दान, (चंदनावत् के०) चंदनबालानी पेरें (पात्रे के०) पात्रनेविषे (प्रदत्तं के०) दीधेलुं होय तो (ऊटिति के०) उतावलथी (फलति के०) फले ले (अन्यत्र के०) कुपात्रनेंविषे (चार्वपि के०) सारुं एवुं अने (स्वं के०) पोतानुं इव्य दीधुं होय तो पण ते (नो के०) नथी फलतुं. केनी पेरें ? तो के (असारं के०) साररहित एवुं जे (जलधिजलं के०) समुइनुं खारुं जल ले ते (वारिवाहे के०) मेघनेविषे (अमृती स्यात् के०) अमृतवालुं थाय अर्थात् अमृत समान मिष्ट थायले,अने (मधुरमपि के०) मधुर एवुंपण (दुग्धं के०) दूध ले तो पण ते (हि के०) निश्चें (पन्नगास्ये के०) सर्पना मुखने विषे (विषी स्यात् के०) विषवालुं थाय ले अर्थात् सुपात्रने दान आपेलुं अमृतसदृश फल आपे अने कुपात्रने आपेलुं दान विष जेवुं फल आपे ले ॥

आहीं चंदनबालानी कथा कहे ले. चंपानगरीनेविषे दधिवाहनराजा तेनी धारिणी नामा पटराणी हती. ते राजाने वसुमती नामनी दीकरी हती. पली शतानीकराजायें चंपानगरी नग्न करी, तेवारें एक प्यादो हतो तेणे ते वसुमती कन्यानुं हरण कर्युं, तेने कौशांबी नगरीमां आणी. ने वेचवा काढी. त्यां धनावहनामा श्रेष्ठियें ते इव्यआपीने वेचाती लीधी. घेर आणी पोतानी पुत्री करी राखी, तेनुं चंदनबाला एवुं नाम स्थाप्युं. पली ते धनावह श्रेष्ठीनी मूला नामें स्त्री हती तेना मनमां एवी शंका थइ जे आ कुमरीने महारो धणी स्त्री करी राखशे, एवा हेतुथी तेने दुःख देवा माटें लल जोती रहे ले. एकदा शेठ बीजे गाम गया तेवारें अवसर पामीने ते मूलायें चंदनबालानुं शिर मुंमन करावीने बंधीखाने नाखी. पली धनावह श्रेष्ठी पालो आव्यो

एवा अडदना बाकला सूपडाना खुणामां नाखीने आप्या. अने तेने उंबरा उपर बेसाडी पोतें तेनी बेडी भंगाववा माटे लुहारने तेडवा गयो. एवा समयमां श्रीवर्द्धमान स्वामी छमासी तपना पारणा माटे त्यां आव्या. ते वखतें त्रणउपवासना अंतमां ते बाकला चंदनबालायें वर्द्धमानस्वामीने आप्या. त्यां पांच दिव्य प्रगट थयां. साडाबार कोटि सुवर्णनी वृष्टि आकाशमांथी पडी. नवो वेणिदंम आव्यो. अने लोढानी बेडीयो हती ते सुवर्णनी थइ गइ, पछी चंदनबाला, भगवान् पासे दीक्षा लइ केवलज्ञान पामीने मोक्षसुखने प्राप्त थइ. ए चंदनबालाये पात्रदान आप्युं, तेथी सद्गतिने पामी ॥८१॥ दानप्रक्रमः॥

स्त्रीविभ्रमैश्चलति लोलमनानधीरः, श्रीस्थूलभद्र
इव तादृशसंकटेपि ॥ चूर्णीभवेदृषदयोपि विलीय
ते च, वैडूर्यमेति विकृतिं ज्वलनात् पुनर्न ॥ ८२ ॥

अर्थः—(लोलमनाः के०) चंचल छे मन जेनुं एवो पुरुष, (स्त्रीविभ्रमैः के०) स्त्रीना हावभाव कटाक्षादिकें करी (चलति के०) चलायमान थाय छे परंतु (धीरः के०) धीर पुरुष जे छे ते (न के०) चलायमान थतो नथी. केनी पेठें ? तो के (श्रीस्थूलभद्रइव के०) श्रीस्थूलिभद्रनी पेठें. ते जेम (तादृशसंकटेपि के०) कोश्यागणिकाना संकटने विषे पड्यो छतो पण चलायमान न थतो हवो. कवि कहे छे खरी वात छे. जुवो (ज्वलनात् के०) अग्नियकी (दृषद् के०) पाषाण ते (चूर्णीभवेत् के०) चूनो थइ जाय छे (च के०) वली (अयोपि के०) लोह पण (विलीयते के०) विशेषें करी लय पामे छे परंतु (वैडूर्यं के०) वैडूर्य नामा रत्न, जे छे ते (विकृतिं के०) विकारने (नएति के०) प्राप्त थतुं नथी. (पुनः के०) परंतु विशेषें करी देदीप्यमान थाय छे ॥ ८२ ॥

आंहिं श्रीस्थूलिभद्रजीनी कथा कहे छे. पाटलीपुर नगरें नंदराजानो प्रधान शकडाल नामें हतो तेनो एक स्थूलिभद्र अने बीजो सरियो ए बे पुत्र हता तेमां स्थूलिभद्रें तो कोशावेश्याने त्यां साडी बार करोड सुवर्णनो व्यय कर्यो अने नाना प्रकारना भोग भोगव्या. पछी पोताना पिता शकडालनुं मरण सांभलीने ते स्थूलिभद्रने तरत वैराग्य उत्पन्न थवाथी श्रीसंभूतिविजय गुरुनी पासे दीक्षा ग्रहण करी. चोमासुं करवा माटे श्रीगुरुनी

आज्ञाथी चार मास कोशावेश्याने घरे चित्रशालीयुक्त घरमां रह्यो त्यां अनेक प्रकारना हाव, भाव, कटाक्ष ते वेश्यायें कस्या. परंतु तेथी लगार पण चलायमान थयो नहिं. एम कामराजने जींतीने कोशावेश्याने बोध कस्यो. चातुर्मासी पूर्ण थयेथी गुरुयें त्रण वार दुःकरकार कहीने तेनां वखाण कस्यां. कह्युं छे के, "वेश्या रागवती सदा तदनुगा, षड्भीरसैर्भोजनं, शुभ्रं धाम मनोहरं वपुरहो नव्यं वयोयौवनं ॥ कालोयं जलदागमस्तदपियः कामं जिगाय क्षणात्, तं वंदे युवतिप्रबोधचतुरंश्रीस्थूलभद्रं गुरुं ॥ १ ॥ भावार्थः—जे स्थूलभद्रने कोशावेश्या अनुराग वाली तथा पोताना कहेवा प्रमाणे चाल नारी अने ते कोशावेश्याना घरमां रहेवाथी षट्रस भोजन मलतुं हतुं अने मनोहर धाममां रहेता हता. पोतानुं तथा वेश्यानुं पण नवयौवन हतुं तेमज समय पण वर्षाऋतुनो हतो तो पण स्थूलिभद्रमुनियें महाप्रबल कोइथी न जींताय एवा कामदेवने जींतीने ते कोशावेश्याने पण एक क्षणमांज बोध कस्यो. एवा ते श्रीस्थूलिभद्र महामुनिने कवि कहे छे के हुं वारंवार प्रणाम करुं छुं, कारण कोइथी न बने तेवुं तेणें काम कस्युं ॥ ७३ ॥

सद्रूपयौवनगुणागतसानुराग, वित्तेशदत्ततनयान
यनेष्वभेदात् ॥ वज्रेण वज्रमुनिना स्वयशोऽर्ण
साऽसत्, संगाशुचि क्वचिदपूयत शीलमेव ॥७४ ॥

अर्थः—(सद्रूप के०) सारुं रूप (यौवन के०) सारुं यौवन अने (गुण के०) साराशुणो तेणें करी (आगतसानुराग के०) आव्यो छे अत्यंत स्नेह जेने एवी (वित्तेशदत्ततनया के०) धनदत्तनामा व्यवहारीनी कन्या ते तेना पितायें आपी(नयनेष्वभेदात् के०)तो पण ते कन्याना नयनबाणें करी नभेदाणा एवा (वज्रेण के०) वज्रसमान (वज्रमुनिना के०) वज्रमुनियें (क्वचित् के०) कोइ वखत (असत्संगाशुचि के०) असत्संगथकी अपवित्र थयेलुं एवुं (शीलमेव के०) शीलनेज (स्वयशोऽर्णसा के०) पोताना यशरूप जलेंकरी (अपूयत के०) पवित्र करता हवा. अर्थात् स्त्रीना हावभावथी नहिं पराजय पामेला वज्रस्वामीयें कोइक दिवस कुसंगथी अपवित्र थयेला एवा शीलने यशरूपजलें करी पवित्र कस्युं ॥ ७४ ॥

आंहिं वज्रस्वामीनो दृष्टांत होवाथी ते पूर्वे कथा कही छे तो पण फरी

संक्षेपथी कहे छे, कह्युं छे के ॥ जो कन्नाइ धणेणय, निमंतिउ जुव्वणंमि गिहि वयणे ॥ नयरम्मि कुसुमनामे, तं वयररिसिं नमंसामि ॥ १ ॥ एक दिवस धनदत्तव्यवहारीना गृहनेविषे आवेली साध्वीउयें दत्तव्यवहारीनी पुत्री पासें वज्रस्वामीना रूपनुं वर्णन कर्युं. ते सांजली ते कन्यायें मनमां विचार्युं जे महारे वज्रस्वामीनेज परणवुं अने जो तेम नहीं बने तो अग्निमां पडीने मरण करवुं पण अन्यजननुं पाणिग्रहण करवुं नहिं. पछी ते कन्यानो बाप कोटि धन लइने वज्रस्वामी पासें आव्यो अने कह्युं के हे स्वामिन्! आ कन्याने अने धनने अंगीकार करो. त्यारें वज्रस्वामीये कह्युं के अमें जो प्रमदाने इछीयें तो अमारुं यतिपणुं क्यां रहे? ते विचार करो. एवा तेमना उपदेशथकी कन्याने पण बोध थयो. तेवारें ते कन्यायें पण वैराग्य पामीने वज्रस्वामीना हाथथीज दीक्षा ग्रहण करी ॥ ७४ ॥

तपःशिवकुमारवच्चरति मंदिरस्थोऽपि यः, सदेवपरिषद्यपिद्युतिमहत्त्वविस्फूर्त्तिभृत् ॥ कृशान्वकृशतापनोल्लसितवर्णिकं कांचनं, न धातुषु विशिष्टतां नृपतिमौलितामेति च ॥ ७५ ॥

अर्थः—(यः के०) जे पुरुष, (मंदिरस्थोऽपि के०) मंदिरने विषे रह्यो छतो पण (शिवकुमारवत् के०) शिवकुमारनी पेठें एटले जेम जंबुस्वामीनो जीव पूर्वला नवे शिवकुमार नामे हतो तेणे मंदिरने विषे रह्या छतां पण पांचशो अंतःपुरीमध्यें बार वर्ष पर्यंत तप कर्युं अने पारणामां आंबिल कर्युं, तेनी पेठें (तपः के०) तपने (चरति के०) कोइ पण पुरुष घरने विषे रह्यो छतो पण आचरण करे छे तो (सः के०) ते पुरुष, (देवपरिषद्यपि के०) देवताउनी सन्नाने विषे पण (द्युतिमहत्त्वविस्फूर्त्तिभृत् के०) तेजना महत्त्वनी विस्फूर्त्तिने धारण करनारो थाय छे. त्यां दृष्टांत कहे छे के (कृशान्वकृशतापनोल्लसितवर्णिकं के०) अग्निना महोटा तापें करी प्रकाशित छे वर्ण जेनो एवुं (कांचनं के०) सुवर्ण जे छे ते, (धातुषु के०) सर्व धातुउनें विषे (विशिष्टतां के०) विशेषपणाने शुं (न एति के०) न पामे? ना पामे छे (च के०) वली (नृपतिमौलितां के०) राजाना मुकुटपणाने शुं नथी प्राप्त थातुं ? ना प्राप्त थायज छे. एम घरमां बेशी तप करनारा पण महाअग्निमां तपावेला सुवर्णनी पेठें सर्वने विषे उत्तमताने पामे छे. एम जाणवुं.

आंहिं शिवकुमारनी कथा कहे छे. शिवकुमार पूर्वनवने विषे अर्हमंमित्ता स्त्रीना पतिपणामां चारित्रने विराधवे करी दीक्षा लेवामां समर्थ थयो नहिं. परंतु त्यां बत्रीश अंतःपुरीना मध्यमां रहीने निरंतर छठ छठ तपने पारणे आंबिल करतो एरीतें तेज नगरमां दृढधर्मी श्रावक पासें रह्यो थको साधुनी पेठें अन्न पाणी वहोरी लावीने जोजन करतो हतो, एम बार वर्ष पर्यंत एवुं तप कर्युं. पछी ते मरण पामीने महाद्युतिमान् देव थयो. ते देवनुं अत्यंत कांतिमत्त्व जोइने श्रेणिक राजाना मनमां विस्मय थयो. तेवारें ते वात श्रीवीरजगवानने पूछी श्रीवीरस्वामीयें शिवकुमारना पूर्वना सर्व नव कह्या. वली कह्युं के ए देवता एज नगरीनेविषे कृषजदेव नामा श्रेष्ठी रहे छे, तेनी धारिणी नामनी स्त्रीनी कूखें आवी श्रीजंबु कुमार नामें पुत्रपणे अवतरशे. ते चारित्र लइ केवलज्ञान पामीने मोक्षने प्राप्त थाशे. ते सांजलीने त्यां जंबुस्वामीनो पितृव्य अनादृत नामा देव हतो ते नृत्य करवा लाग्यो ॥ ७५ ॥

तपःसकलकर्मजिद्विविधलब्धिकृन्निश्चितं, गृहे पुरि च डुर्नगो
प्यहह नंदिषेणोद्विजः॥ व्रते शमतपःपरःसुरनरैकवंद्योऽजव,
त्रविज्वलनतापितः,श्रयति दीप्तिमामोघटः ॥७६॥ तपोद्वारं ॥

अर्थः-(सकलकर्मजिद् के०) सर्व कर्मने जेदनारुं अने (विविधलब्धि कृत् के०) अनेक प्रकारनी लब्धिने करनारुं एवुं (तपः के०) तप (निश्चितं के०) निश्चें छे (अहह के०) खेदें (गृहे के०) घरने विषे (च के०) वली (पुरि के०) पुरने विषे (डुर्नगोपि के०) डुर्नाग्य एवो पण (नंदिषेणोद्विजः के०) नंदिषेण नामा ब्राह्मण, (व्रते के०) व्रतने विषे (शमतपःपरः के०) शम अने तपने विषे तत्पर छतो (सुरनरैकवंद्यः के०) देवताने अने मनुष्यने एकज वंदन करवा योग्य (अजवत् के०) थतो हवो. त्यां दृष्टांत कहे छे. के जेम (आमोघटः के०) माटीनो काचो घडो, होय ते (रविज्वलनतापितः के०) सूर्य अने अग्नि तेणे ताप पमाड्यो छतो (दीप्तिं के०) दीप्तिने (श्रयति के०) आश्रय करे छे. एटले प्रकाशने पामे छे ॥ ७६ ॥

आंहिं नंदीषेण ब्राह्मणनी कथा कहे छे. कोइ नंदिषेण ब्राह्मण हतो ते जन्मतांज तेनां माता पिता मरण पाम्यां. कोइ रीतें करी तेना संबंधी

उयें पोषण करी महोटो कस्यो. जन्मथी आरंजीने डुर्जागी हतो, तेने ते ना मामायें कह्युं के माहरे सात दीकरीउ छे तेमांथी तुने हुं एक दीकरी आपीश. तेवा लोजमां नाखी तेनें घरनां काम करवामां राख्यो. परंतु ते डुर्जागी होवाथी कोइ पण दीकरी तेने परणवानी इछा करती न हती. तेवारें नंदिषेण मरवानो विचार करी कोइ पर्वत उपर चढयो. त्यां साधुयें प्रतिबोध आप्यो, तेथी प्रव्रज्या ग्रहण करी. महोटुं तप कर्युं, ते नंदिषे णनां वखाण इंद्रें पोतानी सजामां कर्यां. ते सांजलीने बे देवतायें त्यां आवीने ते नंदिषेणनी परीक्षा करी. तो पण ते रुषि सत्यथकी चलायमा न थयो नहिं. हजारो वर्ष तप करी अंतमां दौर्जाग्यना स्मरणथकी एवुं नियाणुं कर्युं जे हुं आवता जवमां स्त्रीवल्लज थाउं! एम विचार करतां म रण पामीने वसुदेव दशार्हपणे उत्पन्न थयो. त्यां स्त्रीयो, तेनुं पडखुं क्यारें पण मूकती न हती. अने सर्वत्र क्रीडा करतो हतो. तेवुं जोइने सर्व गामना महाजनें समुडविजय राजा पासें जइने कह्युं के आ महोटो अधर्म छे जे सर्वत्र वसुदेव दशार्ह निर्लज्ज थको क्रीडा करे छे. ते वात सांजली राजायें कह्युं के, वसुदेवें पोताना घरना कोटमांज क्रीडा करवी. बीजे स्थलें बाहेर क्यांही फरवुं नही. ते वात दासीना मुखथी वसुदेवें जाणी. नें पोतानुं अ पमान थवाथी वसुदेवें बाहेर जइने बहोंतेर हजार राजकन्याउ तथा वि द्याधर कन्याउ परणी. ते जन्ममां ते वसुदेवें पूर्ण जोग जोगव्या ॥ ७६ ॥

दानं वित्तव्ययेनापरयुवतिरतित्यागतःशीललीला, ना
नाहाराप्रचारात्तपइह तदहोहद्यपध्यानहीनाः॥ जावं कु
र्वंतु येनाप्यखिलसुखनृतां वल्कलस्येव मुक्ति,र्मिष्टास्वा
दैर्यदि स्यान्ननुतनुपटुतां कोन तां कारयेत्तत् ॥ ७७ ॥

अर्थः-(वित्तव्ययेन के०) ड्व्यना व्ययें करी एटले ड्व्य वावरवे क री (दानं के०) दान देवाय छे, अने (अपरयुवतिरतित्यागतः के०) प र स्त्रीने विषे रतिना त्यागथकी (शीललीला के०) शीलनी लीला प्राप्त थाय छे तथा (नानाहाराप्रचारात् के०) नानाप्रकारना आहारना परित्या गथकी (इह के०) आ लोकने विषे (तपः के०) तप, थाय छे (तत् के०) तेमाटे (अहो के०) आश्चर्य हे जव्यजनो! ते पूर्वोक्त तप वगेरेमां (ह

दि के०) हृदयने विषे (अपध्यानहीनाः के०) डुष्टध्यानरहित बता (ज्ञावंकुर्वंतु के०) ज्ञावने करो. कारण के (येन के०) जे ज्ञावें करी (अखिलसुखनृतांअपि के०) समग्र सुखने धारण करनारा एवा पुरुषोनी मध्यें पण (वल्कलस्य इव के०) वल्कलमुनिनी जेम (मुक्तिः के०) मुक्ति थइ, तेम पूर्वोक्त ज्ञावयुक्त दानादिकें करी बीजा जननी मुक्ति थाय बे, वली (यदि के०) जो (मिष्टास्वादैः के०) मिष्टज्ञोजनोयें करी मुक्ति (स्यात् के०) थाय (तत् के०) तो (ननु के०) वितर्के (कः के०) कयो पुरुष, (तां के०) ते (तनुपटुतां के०) शरीरपटुताने (नकारयेत् के०) न करे. ते कारण माटे सद्भावना शिवाय ए दानादिक सर्व व्यर्थ जाणवुं. अर्थात् सद्भावना युक्त दानादिक करवाथी मुक्ति थाय बे.

आ श्लोकमां वल्कलमुनिनो दृष्टांत होवाथी तेनी कथा कहे बे. पोतनपुर नगरने विषे सोमचंद्र राजा हतो तेनी धारिणी नामें स्त्री हती तेनें प्रसन्नचंद्र नामा पुत्र थयो. एकदा राजायें पोताना मस्तकमां पली जोधुं तेथी तरत वैराग्य उत्पन्न थवाथी पोतें पोतानी ज्ञार्या सहित तापसी दीक्षा ग्रहण करी. पाबल प्रसन्नचंद्र पबी तेनो पुत्र, राज्य करवा लाग्यो. अने ते प्रसन्नचंद्र राजानी माता तापसणी हती तेनें केटला एक दिवस पबी वननेविषे एक पुत्रनो प्रसव थयो ते तापसी सूतिकाना रोगथकी मरण पामी. पबी ते पुत्रने सोमचंद्र तापसें हलु हलु उबेरीने महोटो कर्यो. ते पुत्रनुं नाम वल्कलचीरी पाड्युं. पबी ते वल्कलचीरी पोताना पिताने माटे वनमांथी फलफूल लावी आपतो हतो, एकदा प्रसन्नचंद्र राजाने खबर पडी के माहारो ज्ञाइ वनमां बे अने माता मरण पामी बे माटे मारा ज्ञाइने वनमांथी तेडावी लावुं. एम विचारी गाममां पटह वगडाव्यो जे माहरा ज्ञाइ वल्कलचीरीने जे गाममां तेडी लावे, तेने जे अज्ञीष्ट मागे ते आपुं. ते वात गामनी गणिकाउयें स्वीकार करी पबी तापसीनो वेश धारण करीने ते वनमां गई. वल्कलचीरीयें ते गणिकाउने पूब्युं जे क्यां तमारा आश्रमो बे ? कया वनमां तमारो निवास बे ? त्यारें ते कहेवा लागीउ जे अमें पोतनपुरमां रहीयें बेयें, माटे अमारा वनमां तमो आवो. अमें पण तमारी प्रतिपत्ति करशुं. एम कही ते तापसीउयें लाडु हता ते वल्कलचीरीने आप्या. तेने वल्कलचीरीयें पूब्युं के आ शुं

छे? त्यारें ते स्त्रीउयें कह्युं के,आ अमारा वनना फल छे. पछी ते वेश्याउयें पोताना अंगनो स्पर्श कराव्यो. वल्कलें पूछ्युं आ शुं? गणिकाउ कहेवा लागी के जे पोतनपुरमां आवीने फलो खाय छे, तेने आ प्रकारनां फल मले छे. एम करी लोभ पमाडीने ते वल्कलचीरीने लइने पोताना नगरमां गणिकाउ आवी. ते वल्कलचीरी मुनि लाडुमां लोभ पाम्यो थको नित्य वेश्याने घेर जवा लाग्यो, तदनंतर वेश्याउयें पोतानी दीकरीनी सार्थे पाणिग्रहण कराव्युं,ते लगननी वखत मृदंगनो शब्द थवा लाग्यो, अने धवल गावा मांम्यां तेनो नाद चोतरफ प्रसार थयो ते सांभली पोताना भाइना न आववाथी शोकातुर थयेला प्रसन्नचंद्र राजायें पूछ्युं जे आ महोत्सव कोने घेर थावा मांम्या छे? तेने लोकोयें कह्युं के वेश्याने घेर तेमनी कन्यानो विवाह थाय छे, तेनो महोत्सव वर्त्ते छे. ते सांभली राजायें वेश्याउने बोलावी पूछ्युं वेश्याउयें कह्युं के तमारा भाइने अमो तेडी लाव्यां छैयें अने अमारी कन्यानुं पाणिग्रहण पण कराव्युं. ए वचन सांभली राजा संतोष पाम्यो, अने तेने घटे तेवुं द्रव्य आप्युं. पछी राजा ते वल्कलचीरीनें पोताने घेर तेडी लाव्यो. त्यां थोडो थोडो व्यवहार जाणवा लाग्यो कारण के पशुउ पण शीखव्या छता व्यवहारने जाणे छे, तो मनुष्य जाणे, तेमां शुंज कहेवुं? एक दिवस पोताना पिताने वांदवाने माटें प्रसन्नचंद्र राजा वनमां गयो, वल्कलचीरी पोताना बापनी पर्णकूटीमां गयो. त्यां पोताना बापना उपकरणनुं प्रतिलेखन करतां छतां ते वल्कलचीरीने वैराग्य उत्पन्न थयो तदनंतर केवलज्ञान पामी मुक्तिने प्राप्त थयो ॥८७॥

योदानं न ददौ तथैव न तपःशीलार्हदर्चागमे, य
स्यानार्ययुजोऽत्र केवलमभूद्भावादिलानंदने ॥ स्व
र्णादौ ज्वलनेन वह्निदृषदोर्गाढं मिथोघट्टनै, रादर्शे
रविणा महौषधिवने किं तु स्वभावेन भा ॥ ८८ ॥

अर्थः—(यः के०) जे इलापुत्र, (दानं के०) दानने (नददौ के० आपतो न हतो (तथैव के०) तेमज वली (शीलाऽर्हदर्चागमे के०) शील अने जिननी पूजा तथा आगम श्रवण तेने विषे (अनार्ययुजः के०) अनार्य लोकोने योजना करता एवा (यस्य के०) जे इलापुत्र तेने (नतपः

के०) तप न हतुं परंतु (अत्र के०) इहां ए (इलानंदने के०) इलानंदनने विषे (भावात् के०) भावना भाववा थकीज (केवलं के०) केवलज्ञान (अभूत् के०) होतुं हवुं. त्यां दृष्टांत कहे छे. के (स्वर्णादौ के०) सुवर्णादिने विषे (ज्वलनेन के०) अग्नियें करी (भा के०) कांति उत्पन्न थाय छे, अने (वह्निदृषदोः के०) चकमकना पाषाणनेविषे (गाढंमिथोघट्टनैः के०) अत्यंत परस्पर घसवा थकी प्रकाश उत्पन्न थाय छे. अने (आदर्शे के०) दर्पणनेविषे (रविणा के०) सूर्यथकी कांति उत्पन्न थाय छे (किंतु के०) शुं वली तो के (महौषधिवने के०) महौषधिना वनने विषे (स्वभावेन के०) स्वभावें करीने पण कांति थाय छे. एम जीवमां पण जाणवुं ॥ ७७ ॥

आंहिं इलापुत्रनी कथा कहे छे. सांकेतिक पुरनेविषे धनदत्त नामा श्रेष्ठी वसे छे. तेने इलाची नामापुत्र हतो, एक दिवस तेणें गवाक्षमांथी सुरूपवती कोइ नटडीने जोइने मोह पामी नाटकीयाने कोइने मुखें कहेवराव्युं के तारी पुत्री मने तुं परणाव्य. ते सांभली नट कहेवा लाग्यो के ए वटलीने अमारी न्यातमां आवे तो हुं मारी पुत्री आपुं. तेवारें कन्याना लोभें करी इलाचीपुत्रें ते वात अंगीकार करी वटलीने नट थयो अनेक नाटक करी घणुंज द्रव्य उपार्जन कर्युं. एक दिवस जितशत्रुराजानी पासें नाटक करवा माटे इलापुत्र, वांसडा उपर चड्यो छे ते समय जाणीयें विजलीनो जबकारोज होय जी ? एवी नीचें उभेली नटीनी उपर राजानी दृष्टि पडी. तेने जोइ मोह पामीनें राजा मनमां विचारे छे जे जो आ वांसडेथी नीचें पडीने मरण पामे तो हुं ए नटीने ग्रहण करुं. एवी राजाना मननी वात इलाचीपुत्रें पण जाणी जे हवे राजा मने दान आपतो नथी अने एनी नजर मारी स्त्रीनी उपर पडी छे राजा एनी उपर आसक्त थयो छे. ते समयमां कोइ व्यवहारीने घेर वहोरवा आवेला साधुने व्यवहारीयानी स्त्रीयें अन्नतुं दान आप्युं, ते साधुनी दृष्टि अन्न उपर हती पण ते स्त्री उपर पडी नही. अने तेवी तेनी भावना पण थइ नहीं ते साधुनी तथा राजानी दृष्टिने जोइने इलाचीपुत्रने मनमां वैराग्य उत्पन्न थयो. त्यारें विचारतो हवो के अरे धिक्कार हजो मने जे हुं महोटा कुलमां उत्पन्न थयेलो छतां केवी मारी बुद्धि मने उपनी के जे बुद्धि कोइ हीन जातिवाला मनुष्यने पण न थाय? अरे में विषयासक्तियेंकरी मारा आत्मानें दुर्गतिमां पाड्यो ए प्रकारें संसा

रथकी मन उतर्युं अने स्वस्वरूपमां मन तल्लीन थतां थतां एलाचीपुत्रने वंश उपर रह्यां रह्यांज केवल ज्ञान उत्पन्न थयुं. पछी त्यां शासन देवतायें आवी रजोहरणादिक साधुनो वेश आप्यो. त्यांज एलाचीपुत्रें देशना देवा मांमी. राजादिकने प्रतिबोध आप्यो ॥ ८८ ॥

मातुर्गर्भावतारे चतुरधिकदशस्वप्नसंसूचितौप्राक्, जातौ यावेकरात्रौत्वजितसगरयोः पुण्ययोः पश्य जातिं ॥ आगर्भोत्पादमिंद्रैरसुरसुरनरैः सेवनीयस्त्रिलोकी, नाथोऽर्हन्नेक आसीद्भरतनृपनतोऽन्यश्च चक्री द्वितीयः ॥ ८९ ॥

अर्थः—(प्राक् के०) पहेलां (मातुः के०) माताना (गर्भावतारे के०) गर्भावतारने विषे (चतुरधिकदशस्वप्नसंसूचितौ के०) चउद स्वप्नायें करी भाग्यसंपत्तिवाला एवा (यौ के०) जे बेहु (एकरात्रौ के०) एक रात्रिनेविषे (जातौ के०)उत्पन्न थया ते (तुके०)वली (पुण्ययोः के०) पुण्यशाली एवा (अजितसगरयोः के०) श्रीअजितनाथ तीर्थंकरनी अने सगरचक्रीनी (जातिं के०) जातिने हे भव्यजनो! (पश्य के०) जुवो (एकः के०) एक श्रीअजितनाथतो (आगर्भोत्पादं के०) गर्भे रहेवाना आरंभथी ते उत्पत्तिपर्यंत (इंद्रैः के०) इंद्रोयें तथा (असुरसुरनरैः के०) असुर देवो तथा मनुष्योयें (सेवनीयः के०) सेवन करवायोग्य अने (त्रिलोकीनाथः के०) त्रण लोकना नाथ एवा (एकः के०) एक (अर्हन् के०) तीर्थंकर थया (च के०) वली (अन्यः के०) अन्य (द्वितीयः के०) बीजा (भरतनृपनतः के०) भरतक्षेत्रना राजाउने नमस्कार करवा लायक एवा (चक्री के०) चक्रवर्त्ती थया ॥ ८९ ॥

आहिं श्रीअजितनाथनो तथा सगरचक्रवर्त्तीनो दृष्टांत होवाथी प्रथम श्रीअजितनाथ तीर्थंकरनी कथा कहे छे. शावस्तीनगरीने विषे जितशत्रु राजा तेमनी विजया नामे राणीना पुत्र श्रीअजितनाथ भगवान ते ज्यारें गर्भमां रह्या त्यारें तेमनी मातायें वृषभादिक चउद स्वप्नो दीठां तथा प्रभुजी गर्भगत थया, ते दिवसथी राजा साथें विजया राणी रमे तो तेमां राणीज जीतवा लाग्यां. त्यारें राजायें विचार्युं जे आ प्रभाव एना पेटमां गर्भ रहेलो छे तेनो जाणवो परंतु कांहि मंत्रजंत्रथी राणी जींतती नथी. माटे प्रसवथया पछी तेनुं नाम अजित पाड्युं. पछी जन्मथया नंतर जन्मोत्सव

थयो उपन्न कुमारीकायें आवी सूतिका कर्म कर्युं. चोशठइंद्रोयें मेरुपर्वतनी उपर स्नात्रमहोत्सव कर्यो. ते स्वामीनो सुवर्ण सम वर्ण हतो, अने गजनुं लांछन हतुं. साडाचारसो धनुषनुं शरीरमान हतुं बोहोंतेरलाख पूर्व आयुष्य हतुं राज्यभोगवी सांवत्सरिकदान दइ चारित्र लइ,आठे कर्मनो नाश करी केवल ज्ञान पामी. तीर्थंकरनी लक्ष्मीनो उपभोग करीने मुक्तिने प्राप्त थया.

हवे सागरचक्रवर्त्तीनी कथा कहे छे. विनीता नगरीयें सुमित्र नामे राजा तेनी यशोमती राणीनी कुक्षिमां केसरी सिंहनी पेठें सगरचक्री उत्पन्न थया. गर्भरहेवाने समयें तेमनी माताने पण वृषभादिक चौद स्वप्न थयां पुत्र जन्म्या पछी तेनुं नाम सगर पाड्युं आयुधशालामां सगर कुमार गया, त्यां आयुधशालाने चलायमान करतो चक्र रत्न उपन्या पछी दक्षिण भरतार्द्धना त्रणखंड साधिने उत्तर भरतना त्रण खंडने साध्यानंतर अयोध्यामां आव्या पछी बत्रीश हजार राजायें सगरचक्रीने चक्रवर्त्तिनुं पद आपी अभिषेक कर्यो. एकदिवस अजितनाथ स्वामीनी वाणीने सांभली ते चक्रीयें श्रीशत्रुंजयपर्वतनी उपर ताम्रमय श्रीजिन प्रासाद करावी तेमां रत्नमय बिंबो पधराव्यां संघपति थइने अति विस्तारथी तीर्थ यात्रा करी अंते प्रव्रज्या ग्रहण करीने मुक्तिरूप लक्ष्मीने वरता हवा ए सगरचक्रवर्त्तीनी कथा.

तुल्यं तीर्थाधिपत्यं बलमपि सदृशं सर्वतीर्थंकराणां, किं
तु श्रीमल्लिनाथः प्रथयति सुकृतैः किंचिदाश्चर्यमुच्चैः ॥
पूर्वाह्णे यस्य जज्ञे व्रतमपि सुलभं केवलं चापराह्णे,
ज्ञानं नाभेयवीरप्रभृतिजिनपतेरप्यभूद्यच्चिरेण ॥ ९० ॥

अर्थः– (तीर्थाधिपत्यं के०) तीर्थाधिपतिपणुं ते (सर्वतीर्थंकराणां के०) सर्व तीर्थंकरोनुं (तुल्यं के०) तुल्य छे तथा (बलमपि के०) बल पण सर्वतीर्थंकरोनुं (सदृशं के०) सरखुं छे, (किंतु के०) तो पण (श्रीमल्लिनाथः के०) श्रीमल्लिनाथ (उच्चैः के०) उत्तम एवा (सुकृतै. के०) सुकृतोयें करी (किंचित् के०) कांइक (आश्चर्यं के०) आश्चर्यने (प्रथयति के०) विस्तार करे छे, शुं आश्चर्य विस्तारे छे तो के (यस्य के०) जे श्रीमल्लिनाथने (पूर्वाह्णे के०) पूर्वप्रहरने विषे (व्रतमपि के०) व्रत पण प्राप्त थयुं (च के०) वली (अपराह्णे के०) अपराह्ण कालने विषे (सुलभं

के०) सुलभ एवुं (केवलज्ञानं के०) केवल ज्ञान (जज्ञे के०) उपन्युं अने (नाभेयवीरप्रभृतिजिनपतेःअपि के०) ऋषभदेवथी वीरभगवान् प्रमुख जिनपतिने पण (यत् के०) जे केवलज्ञान (चिरेण के०) घणाकालें (अभूत् के०) थयुं. अर्थात् सर्व तीर्थंकर थकी मल्लीनाथ तीर्थंकरनो एटलो विशेष के बीजा तीर्थंकरने दीक्षा लीधा पछी घणाकालें केवलज्ञान थयुं अने मल्लिनाथने एकदिवसमांज व्रतादि सर्व प्राप्त थयां ॥ ए० ॥

आहीं मल्लीनाथनी कथा कहे छे. मिथिलानगरीनेविषे श्रीकुंभनामा राजानी स्त्री प्रभावती राणीयें चउदस्वप्नायें सूचित तथा नील जेनो वर्ण छे, कुंभनुं जेने लांछन छे, पचवीश धनुष जेना देहनुं प्रमाण छे एवा मल्लिनाथ तीर्थंकरने जन्म आप्यो. इंद्रोयें जन्ममहोत्सव कर्यो यौवन अवस्थामां पण जन्मथीज ब्रह्मचारी होवाथी पाणिग्रहण कर्युं नही अने राज्य पण ग्रहण कर्युं नहिं. सांवत्सरिक दान दीधा पछी स्वयमेव दीक्षा ग्रहण करी दिवसना प्रथम प्रहरमां व्रतनुं ग्रहण थयुं अने तेज दिवसना बीजा प्रहरमां प्रभुने केवलज्ञान उत्पन्न थयुं ॥ ए० ॥ इति धर्मप्रकरः समाप्तः ॥

श्रुत्वाह्वानंस्त्रियस्तामनुसरतिरसोहंसकोन्नादपादे, ना
शोकः स्पृष्टमात्रस्तिलककुरुबकौचुंबनालिंगनाभ्यां ॥
पुष्येद्वक्राब्जवासाधिकरससुरयाकेसरश्चेद्विकारो, ऽप्ये
षांतत्सत्यकीवाधिकविषयरतिर्यातुकिं नो भवार्त्तिं॥ए१॥

अर्थः–(स्त्रियः के०) स्त्रीना (आह्वानं के०) आह्वानने (श्रुत्वा के०) श्रवण करीनें (रसः के०) पारो, ते (तां के०) ते स्त्रीने (अनुसरति के०) अनुसरे छे, एटले तेनी पछवाडे जाय छे. तथा (हंसकोन्नादपादेन के०) नेपुरें करी, अधिक नाद करता एवा स्त्रीना पगे करीने (स्पृष्टमात्रः के०) स्पर्श कराणो एवो (अशोकः के०) अशोक वृक्ष ते (पुष्येत् के०) पोषणने प्राप्त थाय छे. तथा (तिलककुरबकौ के०) तिलक अने कुरबकनो वृक्ष, (चुंबनालिंगनाभ्यां के०) स्त्रीना चुंबन अने आलिंगनथकी पोषणने प्राप्त थाय छे. अर्थात् बेहु वृक्षनां पुष्पो विकसित थाय छे. (वक्राब्जवासाधिकरससुरया के०) कामिनीना मुख कमलना परिमलें करी अधिक छे रस जेमां एवी मदिरायें करी छांट्यो एवो (केसरः के०) केसर नामा वृक्ष पोषण था

य छे. (चेत् के०) जो वली (एषामपि के०) ए पूर्वोक्त वृक्ष वगेरे एकेंद्रि य जीवोने पण (विकारः के०) विषय विकार उत्पन्न थाय छे (तत् के०) तो (सत्यकीव के०) सत्यकीनी पेठे (अधिकविषयरतिः के०) अधिक छे विषयमां प्रीति जेने एवो जीव, (नवार्त्ति के०) संसारना दुःखने (किं के०) केम (नो के०) नहि (यातु के०) पामे. अर्थात् एकेंद्रियने पूर्वो क्त विषयरसनी आसक्ति छे,तो सत्यकीनी पेठें वीजाने थाय तेमां तो शुंज कहेवुं ? तथा तेने संसार दुःखनी वृद्धि प्राप्त थाय तेमां शुं नवाइ ? ॥ए१॥

आंहिं सत्यकी विद्याधरनी कथा कहे छे. चेडाराजानी सुज्येष्ठा नामे महोटी दीकरी साध्वी थइ हती तेनें घणी स्वरूपवाली जोइने पेढालविद्या धरे भ्रमरनुं रूप धारण करीने जोगवी तेने सत्यकी नामें पुत्र थयो तेणें रो हिणी प्रज्ञप्ति प्रमुख विद्याउ साधी पोतानी माताना शीलना लोपक पेढाल ने मारी नाख्यो ते सत्यकी महा समकेत धारी त्रणे काल जिनार्चामां त त्पर थइ तीर्थंकर नामकर्म उपार्जन करतो हवो. तदनंतर ते स्त्रीलंपट थ यो थको राजादिकनी स्त्रियोने विद्यावलथी लइ आवीने जोगववा लाग्यो, एकदा तेने मारवा माटे उज्जयणी नगरीयें चंडप्रद्योतन राजायें उद्घोषण कराव्युं तेवारें उमा नामें वेश्यायें राजाने आवी कह्युं के सत्यकीने हुं व श करीश पछी तमे मारजो एम कही शृंगार सजीने उमा वेश्या सात्यकीने मोह उपजाववा माटे जेवी रीतें सात्यकी तेना अंगने जूए तेवी रीतें उ घाडां अंग मूकीने प्रतिदिवस अगासीमां आवी वेसे. एक दिवस तिहां वेठेली उमावेश्याने जोइने ते सत्यकीने मोह थयो तेवारें लुब्ध थइने वी जी स्त्रियोथी विरक्त थइ तेज स्त्रीने जोगववा लाग्यो. एकदा उमायें तेनें ए कांतमां पूछ्युं जे, तमारी पासे शी शी विद्या छे ? त्यारे तेणें कह्युं के मारें रोहिण्यादिक विद्याउ छे तें मारा अंगमां छे परंतु ज्यारें मैथुन करुं छुं त्यारें तेने मारा खडमां राखुं छुं त्यारें मारुं वल क्यांइ चालतुं नथी ते सर्व वा त उमायें राजानी पासें निवेदन करी. वली उमायें कह्युं के शब्दवेधि जो कोइ पुरुष होय तो जे वखत ए मारे विषे आसक्त थयेलो होय ते वखत ते सिद्ध एने मारे तो तरत मरण पामे अन्यथा मरे नही, पछी राजायें शब्दवेधि पुरुषोनी परीक्षा करवाने अर्थे एकशो आठ कमल पत्र जेदाव्यां ते पुरुषें उमानी साथें मैथुनमां आसक्त थयेला सत्यकीने मारी नाख्यो,

सात्यकी मरीने नरकें गयो पछी तेना मित्र कालसंदीपक विद्याधरें नगरने चूरण करवा माटे एक शिला नगर उपर विकूर्वी. राजा ज्यारें नोगादि करे, त्यारे ते विद्याधर सात्यकीनो मित्र आवीने कहे के जो तुं मिथुनावस्थाने रूपें करी सात्यकीने पूजे, तो तुजने जीववा दइश नहिं तो तारो नाश करीश आ वात सांजलीने राजायें जलाधारीमांहिं लिंगस्थापना करी तेनुं पूजन कर्युं ते दिवसथी लोकोमां लिंगपूजानो प्रचार चाल्यो. एम विषयासक्त प्राणी नरकें जाय ॥ ९१ ॥

संसारारण्यमध्ये मधुरसुखकटुप्रांतभृत्कामधूर्त्तो, दक्षान्मूढांश्च तत्तत्सुखलवभजनैः प्राणिनोविप्रतार्य ॥ हत्वा तत्पुण्यवित्तं गमयति कुगतिं ब्रह्मदत्तं यथातत्, पूर्वभ्रातेव धीरःशिवमटति पुनस्तं तपोऽस्त्रेणभित्वा ॥ ९२ ॥

अर्थः–(संसारारण्यमध्ये के०) संसाररूप वगडानेविषे (मधुरसुखकटुप्रांतभृत् के०) प्रथम मधुर अने अंते कडवा फलनो देनार एवो (कामधूर्त्तः के०) काम रूप धूर्त्त, (तत्तत्सुखलवभजनैः के०) ते तुच्छ विनिश्वर एवा लवमात्र सुखना नोगववायें करीने (मूढान् के०) मूढ (च के०) वली (दक्षान् के०) माह्या एवा (प्राणिनः के०) प्राणियोने (विप्रतार्य के०) बेतरीने (तत्पुण्यवित्तं के०) तेना पुण्यरूप वित्तने (हत्वा के०) हरण करीने (ब्रह्मदत्तं यथा के०) ब्रह्मदत्तनेज जेम तेम (कुगतिं के०) नरकगति प्रत्यें (गमयति के०) पमाडे छे. (पुनः के०) वली (तं के०) ते कामदेवने (धीरः के०) धीर एवो (तत्पूर्वभ्राताइव के०) ते ब्रह्मदत्तनो पूर्वजन्मनो नाइ, जेम (तपोस्त्रेण के०) तपरूप अस्त्रें करीने (भित्वा के०) नेदीने (शिवं के०) मोक्षप्रत्यें (अटति के०) अटन करे छे. अर्थात् मोक्ष प्रत्यें जातो हवो. एम जाणवुं ॥ ९२ ॥

आंहिं ब्रह्मदत्तनी कथा कहे छे. कांपिल्यपुरने विषे ब्रह्मदत्तचक्री राज्य करे छे. एक दिवस त्यां तेनो पूर्वनवनो मित्र कोइक साधु आव्यो, तेने जोइने चक्रवर्त्तीने मोहोटो हर्ष उत्पन्न थयो. तदनंतर ते साधुयें ते चक्रवर्त्तीने पूर्वजन्म कहेवा मांम्या के हे राजन्! सांजल्य मारा अने तारा पूर्वनव हुं कहुं छुं ॥ श्लोक ॥ आश्वदासौ मृगौ हंसौ, मातंगावमरौतथा ॥

एषानौषधिकाजाति, रन्योन्याभ्यांवियुक्तयोः ॥ १ ॥ भावार्थः—आपणे बे पेहेलां घोडाना रखवाल हता त्यांथी मरी मृग थया, त्यांथी हंस थया, पछी हाथी थया, पांचमे भवे देवताउ थया अने आ आपणो छठो भव छे ॥ १ ॥ तेमां पूर्वभवें तें रूडीरीतें चारित्र पाल्युं, तेथी तुं चक्रवर्त्ती थयो छो अने हुं पुरिमतालने विषे धनदत्त व्यवहारीनो चित्रक नामा पुत्र थयो. तिहां श्रीगुरुनी वाणी सांभली वैराग्य उत्पन्न थवाथी में महाव्रत ग्रहण कर्यां. हमणां मुजने अवधिज्ञान उपन्युं छे तेथी हुं तने बोध करवा माटे आव्यो छुं. जे हवे तुं धर्माचरण कर. एम घणुं ते साधुयें कह्युं तोपण धर्माचरण न करतो छतो चक्री राज्य भोगववा लाग्यो, अने मरीने सातमे नरके गयो अने ते तेनो मित्र साधु हतो ते रूडीरीते व्रत आराधन करीने मोक्षने प्राप्त थयो ॥ ए२ ॥ इति विषयद्वारं ॥

गीतामृतातिरतिकर्णपुटस्त्रिपृष्ठ, पर्यंकपालइवक
ष्टमुपैति घोरम् ॥ सब्बललुब्धककृताद्भुतगीतलु
ब्धं, बद्धं विलोकय मृगं भयविह्वलांगम् ॥ए३॥

अर्थः—(गीतामृतातिरतिकर्णपुटः के०) गीतरूप अमृतनेविषे छे अत्यंत प्रीति जेने एवा छे कर्णपुट जेना एवो (त्रिपृष्ठपर्यंकपालइव के०) त्रिपृष्ठराजानो शय्यापालक तेज जेम, एटले ते शय्यापालकने त्रिपृष्ठ राजायें कह्युं के हुं ज्यां पर्यंत निद्रा न पामुं त्यां पर्यंत तुं गान थवा देजे, पछी गान बंध करावजे. हवे जेवारें राजाने निद्रा आवी तेवारें गान मांहे आसक्त थयेला एवा शय्यारक्षकें ना न पाडवाथी ते गान चालवा लाग्युं, तेथी ते शय्यापालक (घोरं के०) घोर एवा (कष्टं के०) कष्टने (उपैति के०) प्राप्त थयो. वली जुवो के (सब्बललुब्धककृताद्भुतगीतलुब्धं के०) छल युक्त एवा पाराधीयें करेला अद्भुत गीतनेविषे लोभायेलो एवो अने ते गाने करी (बद्धं के०) बंधायेलो तथा तदनंतर ते लुब्धकना (भयविह्वलां गं के०) भयें करी कंपायमान जेनुं अंग छे अर्थात् लुब्धकें कंपावेला एवा (मृगं के०) मृगने (विलोकय के०) हे भव्यजनो ! तमें जुवो ॥ ए३ ॥

आंहिं त्रिपृष्ठी राजाना शय्यापालकनी कथा कहे छे. द्वारवति पुरीने विषे त्रिपृष्ठी नामा वासुदेव राज्य करे छे. एक दिवस तेनी आगल रूडा स्वरवा

स्यात् क्षुल्लकाभिधकुमारवदस्थिरेषु, स्थैर्याय गीतम
पि बोधकरं कदाचित् ॥ बालोपि निर्वृतिमुपैति निशम्य
सम्यक्, मात्रोदितानि कलमन्मथगीतकानि ॥ ए४ ॥

अर्थः—(अस्थिररेषु के०) अस्थिर पदार्थोने विषे (स्थैर्याय के०) स्थैर्यने माटे (गीतमपि के०) गीत पण (कदाचित् के०) क्यारेंक (क्षुल्लकाभिधकुमारवत् के०) क्षुल्लक नामा कुमारनी पेठें (बोधकरं के०) बोध करनारुं (स्यात् के०) होय. (बालोपि के०) बालक पण (मात्रोदितानि के०) मातायें कहेलां एवां (कलमन्मथगीतकानि के०) मनोहर काम गीतोने (सम्यक् के०) रूडे प्रकारें (निशम्य के०) सांभलीनें (निर्वृत्तिं के०) निर्वृतिने (उपैति के०) प्राप्त थाय अर्थात् सुगीतथी पण बोध थाय बे ॥

आ श्लोकमां क्षुल्लककुमारनो दृष्टांत होवाथी तेनी कथा कहे बे. पूर्वें चंपापुरीनेविषे वज्रबाहु राजा राज्य करे बे, केटला एक कालें राजा मरण पाम्यो तेनो जाइ वज्रजंघ राजा राज्यगादीयें बेगे तेवारें वज्रबाहु राजानी स्त्री पोताना पुत्रना संरक्षणने माटे पुत्रने लइने त्यांथी नाशीने मथुरामां आवी सूरिजीनी पासे पुत्र सहित प्रव्रज्या ग्रहण करीने एक साध्वीनी पासें रही, अने तेनो क्षुल्लककुमार पुत्र श्रीगुरुनी पासें शास्त्रने जणतो

रह्यो. केटला एक काळें ते क्षुल्लककुमारें व्रतने मूकवानी इच्छा करवा मांमी, त्यारें तेनी मातायें तथा महोटा महोटा जनोयें उपाध्यायोयें आचार्यों यें मळी समजाववाथी तेनी दाक्षिण्यतायें करी बार वरस पर्यंत दीक्षा पाळी. पछी पोताना काका वज्रजंघें राज्य दबावेलुं हतुं तेने लेवा माटे पोताने गाम गयो, त्यां राजसन्नामां नाटक थतुं हतुं. ते समयमां नाटक करनारनी स्त्री नटी थाकी गयेली होवाथी ते समय वृद्ध एवी कोइक स्त्रीयें गीतमध्यें एक गाथा कही. ते जेम के " सुहुगाइअं सुहुवाइयं, सुहु नच्चियं साम सुंदरी ॥ अणुपालियं दीहराईयं, उसुमिणंते मा पमायए ॥ १ ॥ ए गाथा सांनळतां वेंत क्षुल्लक कुमारें रत्नकंबल ते वृद्ध नाटिकाने आप्यो, अने व्यवहारीनी स्त्रीयें रत्नजडित सोनानुं कंकण हतुं ते अर्पण कर्युं तथा मंत्री बेठो हतो तेणें सोनानी मुद्रिका आपी. राजाना पुत्रें एकावल हार समर्पण कर्यो, अने हस्तिपालकें कनकनो अंकुश अर्पण कर्यो. त्यारे ते सर्व आपनारने राजायें पूछ्युं जे तमोयें एने दान केम आप्युं? त्यारें क्षुल्लकें राजग्रहणादि सर्व स्वरूप कह्युं ते सर्व क्षुल्लक कुमारनी सार्थे प्रतिबोध पाम्यां क्षुल्लककुमार श्रीगुरुनी समीप जइने प्रायश्चित्त ग्रहण पूर्वक दीक्षाराधन करीने रूडी गतिने प्राप्त थयो. ए प्रमाणें एक गाथाना गीतें करी बोध पाम्या.

नोविंदत्युष्णशीताद्यपि न सदसदप्युक्तमाविष्करोति, दुः
सद्गंधान्न वेत्ति प्रथयति न रसान् रूपनिर्मग्नदृष्टिः ॥ तद्दृ
ष्टैकेंद्रियेऽस्मिन्नहितहितमतिः कः कुमाराग्रनंदौ, चंपापूः
स्वर्णकारे विवशहृशि यथा पंचशैलेशदेव्योः ॥ ८५ ॥

अर्थः—(रूपनिर्मग्नदृष्टिः के०) रूपने विषेज छे निमग्न दृष्टि जेनी एवो पुरुष, (उष्णशीताद्यपि के०) उष्ण शीतादिकने पण (नोविंदति के०) जाणतो नथी विचारणायें विचारतो नथी एणें करी शरीरेंद्रियनो नाव कह्यो, वळी (सत् के०) सारुं अने (असत्अपि के०) खराब (उक्तं के०) कहेलुं तेने पण (नआविष्करोति के०) प्रगट करतो नथी. काने आणतो नथी एणें करी कर्णेंद्रियनो नाव कह्यो, तथा (दुःसद्गंधान् के०) सुगंध दुर्गंधने (नवेत्ति के०) जाणतो नथी एणें करी घ्राणेंद्रियनो नाव कह्यो. तथा (रसान् के०) रसोने पण (नप्रथयति के०) विस्तार करतो नथी अर्थी

त् पट्रस पण जाणतो नथी एणें करी रसनेंद्रियनी भावरहितता कही. ए टले ए सर्व इंद्रियोने विषे भावरहितपणानुं प्रतिपादन करवाथी मात्र (अ स्मिन् के०) आ (एकेंद्रियें के०) एक चक्षुरिंद्रियना व्यापारमां आसक्त होवाथी (तत् के०) ते रूप (दृष्ट्वा के०) जोइने (अहितहितमतिः के०) अ हित अने हितनी मति वालो (कः के०) कोण उत्पन्न थाय ने ? त्यां कहे ठे के (चंपापूःस्वर्णकारे के०) चंपापुरीनो सोनी (कुमाराग्रनंदो के०) कुमाराग्रनंदी (पंचशैलेशदेव्योः के०) पंचशैलद्वीपनी हासा प्रहासा नामनी देवीयोनुं रूप जोइने (यथा के०) जेम (विवशदृशि के०)पर वश दृष्टि थये उते ते छिपें गयो.

आंहिं कुमारनंदीसुवर्णकारनी कथा पूर्वे कहेली ठे तो पण आंही कहे ठे. चंपापुरीने विषे कुमारनंदी नामा सुवर्णकार आठ कोटी सुवर्णनो धणी अने पांचशे स्त्रीनो स्वामी हतो,एक दिवस ते हासा अने प्रहासा नामनी देवीयोनुं रूप जोइने मोह पामीने तेमने विषय सेववानी प्रार्थना करी त्यारे व्यंतरियोये कह्युं के तारें इछा होय तो पंचशैल द्वीपमां आवजे. ते सुवर्णकारे उद्घोषणा करावी के जे कोइ मने पंचशैलद्वीपमां पोहोंचाडे, तेने हुं त्रण लाख सुवर्ण आपुं. ते वात सांभलीने कोइ वृद्ध नाविक हतो, तेणे तेने पंचशैल द्वीपें पोहोंचाड्यो. त्यां देवीयोयें नाकारो करवाथी अग्नि नीमरण करीने ते देवीयोनो स्वामी विद्युन्माली देव थयो ॥ ए५ ॥

आस्तां सत्यं रूपमालेख्यबिंब, स्यालोकेऽपि
क्लेशएवातिरागात् ॥ सुज्येष्ठाश्रीश्रेणिकद्मापव
त्स्यात्, नैणभ्रांतिर्भ्रांतवारीक्षणात्किम् ॥ ए६ ॥

अर्थः–(सत्यं के०) प्रकट एवुं (रूपं के०) रूप (आस्तां के०) रहो अर्थात् प्रकटरूप तो दूर रहो, परंतु (आलेख्यबिंबस्य के०) चित्रित एवा रूपना (आलोकेऽपि के०) जोवानेविषे पण (अतिरागात् के०) अत्यंत राग थकी (क्लेशएव के०) क्लेशज थाय ठे. (सुज्येष्ठा के०) सुज्येष्ठा स्त्री नी, तथा (श्रीश्रेणिकद्मापवत् के०) श्रीश्रेणिक राजानी पेरें (स्यात् के०) होय, एटले जेम सुज्येष्ठानुं स्वरूप पट्टमां आलेखेलुं जोइने श्रेणि क राजाने मोह थयो, तेथी क्लेशने प्राप्त थयो, अभयकुमारें खोदेली सुरंग ने रस्ते जइने श्रेणिक सुज्येष्ठाने बदले चिल्लणानेज ग्रहण करीने पोताने

नगरें गयो. तथा (एणभ्रांतिः के०) हरणने थाक (भ्रांतवारीक्षणात् के०) जलभांभवाना जोवाथी (किंन के०) शुं न होय. ना होयज ॥

आहिं सुज्येष्टानी कथा कहे छे. विशाला नगरीयें चेडा महाराजानी सुज्येष्टा नामे दीकरी हती तेनी पासें एकदा कोइक तापसणी मिथ्यात्व नुं प्रतिपादन करवा लागी तेने सुज्येष्टायें निर्भंछी तेथी ते तापसणी तेनुं यथास्थित रूप पट्टमां आलेखीने राजगृहमां जइ श्रेणिकराजाने देखाडयुं, ते जोइने राजा मोह पाम्यो. पछी अभयकुमार श्रेणिकराजानुं रूप पट्टमां आलेखीने विशाला नगरीमां गयो, त्यां वणिक थइ सुगंधि वस्तुनी दुका न मांमी श्रेणिकराजानो चित्रपट्ट लइने बेठो. सुज्येष्टाने श्रेणिकराजानुं चित्र देखाडयुं ते जोइने सुज्येष्टा पण श्रेणिकराजामां तल्लीन थइ गइ. प छी अभयकुमारें धरतीमां सुरंग खोदी, ते सुरंगेथी श्रेणिक राजा आवीने सुज्येष्टाने स्थानकें चिल्लणाने लइने पोताने पुर आव्यो. एम पट्टमां आ लेखेलुं रूप जोवाथी परस्पर मोह प्राप्त थयो ॥ ए६ ॥

स्याद्गंधोपि यतस्ततोऽप्यधिगतः क्लेशाय नाशाय च, त
च्चाणाक्यधियाऽतुरः श्रुतिमगान्मंत्री सुबंधुर्न किं ॥ प
श्य क्लिश्यति पुष्पसौरभधृतः सर्पः सदर्पोपि सन्, सा
यं चांबुजकोशबंधनमलिः प्राप्नोति गंधातितट् ॥ ए७॥

अर्थः—(यतस्ततोपि के०) ज्यांथी त्यांथी पण (अधिगतः के०) आव्यो एवो (गंधोपि के०) गंध पण (क्लेशाय के०) क्लेशने माटे (च के०) वली (नाशाय के०) नाशने माटे (स्यात् के०) होय, केनी पेठें ? तो के (चाणाक्यधिया के०) चाणाक्यनी बुद्धियें करी एटले चाणाक्ये प्रे पण करेला पुष्पपुटना सुगंधना सुंघवाथकी (आतुरः के०) आतुर थको क्लेशने प्राप्त थयेलो एवो (सुबंधुःमंत्री के०) सुबंधुनामा मंत्री ते हे भव्यो ? (किं के०) शुं तमारा (श्रुतिं के०) कर्ण पुट प्रत्यें (न अगात् के०) न आवतो हवो ? एटले पुष्पपुटना सुंघवाथी कष्टने प्राप्त थयेला एवा सुबंधु मंत्रीने हे भव्यजनो ! तमोये शुं नथी सांभल्यो ? वली (पश्य के०) जुवो (सदर्पोपिसन के०) अहंकारयुक्त एवो छतो पण (सर्पः के०) सर्प,

(पुष्पसौरभभृतः के०) पुष्पसौरभने धारण करतो छतो (क्लिश्यति के०) क्लेश पामे छे. एटले सुगंधनी लालचमां नाखीने ते सर्पने गारुडी लोको बंधनमां नाखी डुःख आपे छे. (च के०) वली (गंधातितृट् के०) गंधने विषे अत्यंत छे तृष्णा जेने एवो (अलिः के०) भ्रमर, ते (सायं के०) सायंकालने विषे (अंबुजकोशबंधनं के०) कमल कोशना बंधनने (प्राप्नोति के०) पामे छे. एटले भ्रमर जे छे ते सुगंधना लोभे कमल गंधने लेवा माटे कमलमां जइ बेसे, तेवामां सायंकाल पडवाथी कमल कोशबंध थइ जाय. तेथी तेमांज मरण पामे, माटे अतिसुगंधासक्त प्राणी सुबंधु मंत्री अने सर्प तथा भ्रमरनी पेठें क्लेश पामे छे. (तत् के०) ते माटे गंधनी अत्यासक्तिनो त्याग करवो ॥ ए७ ॥

आहीं सुबंधु मंत्रीनी कथा कहे छे. पाडलीपुरने विषे मौर्यवंशनो चंद्रगुप्त नामा राजा राज्य करे छे तेनो बुद्धिचतुर चाणाक्य नामा मंत्री छे, ते चाणाक्यें अवसर पामीने भातमां थोडुं थोडुं विष नाखीने राजाने खवराव्युं एक दिवस कोइएक राजानी राणी पोताना स्वामीनी साथें जमवा बेठी परंतु ते तो जमतांज विष प्रयोगें करी मरण पामी. चाणाक्यें राणीनुं उदर विदारीने पेटमां गर्भ हतो तेने जीवतो काढ्यो ते छोकरानुं नाम बिंडुसार एवुं आप्युं. चंद्रगुप्त स्वर्गमां गयो त्यारें तेनो पुत्र बिंडुसार राजगादीयें बेठो. एवा वखतमां चाणाक्यनो वैरी सुबुद्धि नामनो मंत्री हतो तेणे एकांते बिंडुसार राजाने कह्युं के तमारी मातानुं पेट, चाणाक्यें फोडी नाख्युं, ते सांभली राजाने रीश चडी पछी प्रभातमां ज्यारें चाणाक्य आव्यो त्यारे तेनाथी पराङ्मुख थइ बेठो. ते राजायें सुबंधुने घर आप्युं, ते घरमां एक मंजुषा हती तेमांथी एक सुगंधवासनो दाबडो सुबंधुने मल्यो,सुगंधथकी वासनुं आघ्राण कर्युं तेमां लखेलो एक पत्र मली आव्यो, तेमां लख्युं हतुं जे आ सुगंधोने सुंघीने जे पोतें भोग वशें, रूडा वस्त्रोनें धारण करशें, रूडां भोजन करशे तें मरण पामशे अने आ दाबडाने सुंघीने ऋषिनी पेठें जे रहेशे, ते जीवशे. इत्यादि वांचीने विपरीत चालवाथी सुबंधु मंत्री आ लोकमां महाकष्टोने पाम्यो अने परलोकें नरकनां डुःख पाम्यो.

विस्रैर्धातुभिरंगमेतदघटि प्रागेव तत्राप्यहो, दुर्गंधः प्रतिकर्मणापि हि बहिः प्राक्कर्मतःकश्चन ॥ दुर्गंधेव मृगातनूजवदतः सौरभ्ययत्नोत्रको, गंधद्रव्यचयैर्निबोध शुचिता का नीलिकाभाजने ॥ ए७ ॥

अर्थः–(विस्रैः के०) बीभत्स एवा (धातुभिः के०) सात धातुयें करीनें (एतत् के०) आ (अंगं के०) अंग, (प्रागेव के०) पूर्वेज (अघटि के०) बनेलुं छे. (तत्रापि के०) वली ते अंगने विषे पण (अहो के०) आश्चर्ये (कश्चन के०) कोइक (प्राक्कर्मतः के०) पूर्वकर्मना योगथी (दुर्गंधेव के०) दुर्गंधानामा नारीनीपेठें तथा (मृगातनूजवत् के०) मृगापुत्र लोढकनी पेठें (दुर्गंधः के०) दुर्गंध थाय छे, तो तेना (प्रतिकर्मणापि के०) दुर्गंध मटाडवाने माटे (बहिः के०) बाह्यकृत्रिम स्नानादि शुश्रूषायें करीने शुद्ध करे छे, तो पण (हि के०) निश्चें ते दुर्गंधज निकले छे, (अतः के०) ए कारण माटे (अत्र के०) ए पूर्वोक्त अंगनें विषे (गंधद्रव्यचयैः के०) गंधद्रव्यना समूहोयें करी (सौरभ्ययत्नः के०) सुगंधनो यत्न (कः के०) शो करवो ? एम हे भव्य ! तमे (निबोध के०) जाणो जे (नीलिकाभाजने के०) गलिना पात्रने विषे (शुचिता के०) पवित्रता (का के०) शी करवी ? तेम आ शरीरनुं पण जाणी लेवुं ॥ ए७ ॥

आंहिं लोढकनी कथा कहे छे. चंपानगरीने विषे जितशत्रु राजानी मृगावती राणीना उदरथी कोइक पापी जीव प्रसूत थयो. तेनें पग, हाथ, कान, आंख्यो, तथा मस्तक ए कांइ हतां नही मात्र जेवो पाषाणनो लोढक होय, तेवो ते हतो, तेथी पुत्रनुं लोढक नाम आप्युं. एक कलशी अनाजनो महोटो ढगलो करी तेनी उपर ते लोढकने वेसाडीनें तेनी उपरथी लोटावे त्यारें तेना मुख रूप द्वारमां अनाज पेसवाथी पोषण थाय. ए प्रकारें आहार करे छे. एकदा त्यां श्रीवीरभगवान् आवता हवा, तेनी साथें श्री गौतम गणधर हता, तेणें ते लोढकनुं स्वरूप जोइ विस्मय पामीने श्रीवीरभगवानने पूछ्युं के हे भगवन् ! आणे पूर्वजन्में शुं पाप कर्युं हशे ? जे कर्मे करी आवो थयो ? त्यारे श्रीवीरभगवाने कह्युं के पूर्वजन्मने विषे लोढकनो जीव, मकाती नामा क्षत्रिय हतो, ते प्रकृतियें करी निर्दय हतो, अने गोधनने चा

रतो हतो, एकदिवस गोधन चारीने गोधन ज्यारें चरतुं त्यारें ते केटलाएक ढोरोनां पुंछडां अने केटलां एक ढोरोना पगने कातरतो हवो, केटला एक नी उपर घोडानी पेठे आरोहण करतो हवो, ए प्रकारें जीवहत्या करी मरण पामीने आहिं लोढकनामें उत्पन्न थयेलो छे. आ वात सांजलीने घणाये बोध पाम्या ॥ तथा दुर्गंधास्त्रीनी वात ज्ञानपंचमीमां प्रसिद्ध छे ॥९८॥

स्पर्शेंतिगृध्नुरतिबल्यपि याति दुःखं, प्रद्योतजूपइव
मंत्र्यजयेन बद्धः॥ कोवाऽग्रहीष्यदिजमेप न चेत्करे
णु, स्पर्शांधधीः स्थगितगर्त्तगतोऽजविष्यत् ॥९९॥

अर्थः–(अतिबलीअपि के०) अत्यंत बलवान एवो पण प्राणी (स्पर्शेंऽतिगृध्नुः के०) स्पर्शने विषे अति इछावालो छतो (दुःखं के०) अत्यंत दुःखने (याति के०) प्राप्त थाय छे, केनी पेठे? तो के (मंत्र्यजयेन के०) अजयकुमारनामा मंत्रीयें (बद्धः के०) बांधेलो एवो (प्रद्योतजूपइव के०) प्रद्योत नामा राजानी पेठें, जुवो (यदि के०) जो (एपः के०) आ प्रत्यक्ष जगतमां प्रसिद्ध एवो हस्ती ते (करेणुस्पर्शांधधीः के०) हाथणीना स्पर्शने विषे छे अंध बुद्धि जेनी अर्थात् विचार शून्य एवो छतो (स्थगितगर्त्तगतः के०) तृणथी ढांकेला खाडानेविषे प्राप्त (नअजविष्यत्चेत् के०) जो नहि थशे तो (कोवा के०) कयो पुरुष (इजं के०) हस्तीने (अग्रहीष्यत् के०) ग्रहण करी शकशे? अर्थात् कोइज नहिं करी शके ॥९९॥

आंहिं चंड्प्रद्योत राजानी कथा कहे छे. उज्जयिनी नगरीने विषे चंड्प्रद्योत नामा राजा हतो, तेणे एक दिवस उद्घोषणा करावी, जे कोइ अजयकुमार मंत्रीने बांधी लावे, तेने मनोजीष्ट हुं आपीश? ए उद्घोषणा एक वेश्यायें कबूल करी,पछी ते कपटथी श्राविका बनीने केटला एक परिवारें युक्त थइ राजगृहने विषे आवी. तिहां आ मोहोटी श्राविका छे एम मानीने अजयकुमारें ते वेश्याने जोजन कराव्युं, पछी कपट श्राविकायें अजयकुमारने पोताना उतारामां जमवा तेड्यो त्यां अजयकुमारने चंड्हास नामनी मदिराथी घूर्णायमान करीने रथें बेसाडी उज्जयिनीमां चंड्प्रद्योत राजानी पासें लावी उजो राख्यो तेने राजायें बंदिखाने नाख्यो, त्यां बंदीखानामां रहेला अजयकुमारें चतुर्वर्णें करी राजाथी पोताने मूकाव्यो अने

राजाचंद्रप्रद्योतने कहेवा लाग्यो के अरे राजा! मने तें धर्मछलें करी बंदी खाने नखाव्यो,पण हुं तने सर्व लोकसमक्ष बांधीने उज्जयणीना रस्तामांथी राजगृहि नगरीमां लइ जइश, त्यारें हुं अनयकुमार खरो, एम जाणजे. ए वी प्रतिज्ञा करीने केटलाएक दिवस पछी नानाप्रकारनी वस्तुउयें करी गाडां प्रमुख नरी पोतें सार्थवाहनो वेश धारण करीने उज्जयिनी नगरीने विषे ते अनयकुमार आव्यो,त्यां राजाना घरनी पासेंज एक घर नाडे लीधुं एकदा पोतानामाणसोने गाडामां वेसार्यां पछी जेम राजानी नजर पडे,ते ठेकाणे गाडुं चलाव्युं, ते माणसोमांथी एक माणसने चंद्रप्रद्योत एवुं ना म आप्युं, तेने मार मारतो छतो बाहेर लइ चाल्यो ते माणस उंचें स्वरें करी कहेवा लाग्यो के हे लोको दोडो! दोडो! हुं चंद्रप्रद्योत नामा छुं ते मार खाउं छुं माटे मने छोडावो, ए प्रकारें बोलता एवा तेने राजाना सेवकोयें अने गामना माणसोयें छोडाव्यो, एम पाछुं बे बे चार चार द हाडे करवा मांम्युं. तेने जोइने गामना माणस कहेवा लाग्यां के अरे आ मूर्ख शेठ केवो छे के ए बिचाराने वारंवार पकडे छे? तो वारें वारें एने कोण छोडावशे? वली ते अनयकुमारें घणीज स्वरूपवान् बे वेश्याउने राखी, ते वेश्याने नित्य सायंकालें पोतानी पासें नृत्य करावबा लाग्यो, एक दिवस चंद्रप्रद्योत राजा गवाक्षमां उनो हतो तेणे ते मनोहर एवी बेहु वेश्याने नजरें जोइने तरत बेहु वेश्या पर तेना मननी आसक्ति थइ. पछी ते वेश्याने विषे लुब्ध एवा चंद्रप्रद्योत राजायें पोतानी एक दासी सार्थें केवराव्युं जे तमने बेहुने राजा बोलावे छे, ते प्रमाणे ते दासीयें आ वी वेश्याउने कह्युं अने वली दासीयें कह्युं के तमोने राजा पट्टराणी करशे ते सांनली वेश्याउ बोली के राजाने जो प्रयोजन होय, तो आंहिं आवे, ते वात दासीयें राजाने कही. राजा लुब्ध थइने अनयकुमारने उतारे आ व्यो के तरत अनयकुमारें चंद्रप्रद्योत राजाने बांधी लीधो, ढोलीआ उपर नाखीने मारवा मांम्यो अने गाडामां नाखी लोकोनी समक्ष सहु जोवे ते वी रीतें बजारनी वचमां मारतो मारतो चाल्यो. राजायें पोकार कर्यो परं तु लोकें जाण्युं जे एतो चंद्रप्रद्योत एवुं पोतानुं माणस छे तेने ए निरंतर गाडीमां वेसाडी मार मार छें तेम आज पण मारे छे एम जाणी कोइयें

तेने ठोडाव्यो नही. अजय कुमारे तेने राजगृही नगरीनेविषे लावीने श्रेणि कने अर्पण कस्यो. पठी श्रेणिकें तेने दया करीने ठोडाव्यो ॥ ९९ ॥

यः स्पर्शसौख्यलवमिछतिमूढबुद्धिः, सिद्धिप्रदेन तपसा सुकुमारिकेव ॥ चिंतामणेः सकलभूतलराज्यदातु, र्बालः सभृष्टचणकान् वृणुते क्षुधार्त्तः ॥१००॥

अर्थः–(यः के०) जे (मूढबुद्धिः के०) मूढ ते बुद्धि जेनी एवो पुरुष, (सिद्धिप्रदेन के०) सिद्धिने देनारा एवा (तपसा के०) तपें करीनें (सुकुमारिकाइव के०) सुकुमारीकानी पेठें, (स्पर्शसौख्यलवं के०) स्पर्श इंद्रिय रूप सुखना लेशने (इछति के०) इछा करे ठे, (सः के०) ते (बालः के०) मूर्खजन, (सकलभूतलराज्यदातुः के०) समग्र पृथ्वीना राज्यने देनारा एवा (चिंतामणेः के०) चिंतामणिथी (क्षुधार्त्तः के०) जूख्यो ठतो (भृष्टचणकान् के०) भुंजेला चणाने (वृणुते के०) मागे ठे. एम जाणवुं. अर्थात् जे तपश्चर्या करी फरी विषय सुखनी इछा करे ठे, ते चिंतामणि ठोडीने शेकेला चणानी इछा करे ठे एम जाणवुं ॥ १०० ॥

आंहि सुकुमालिकानी कथा कहे ठे. मथुरापुरीमां सागरदत्तश्रेष्ठीनी दीकरी सुकुमालिका करीने हती ते यौवनावस्था पामी तेवारें समुद्रदत्तव्यवहारीना पुत्रनी उपर मोहित थइ तेने घरजमाइ करीने ते कन्या परणावी दीधी परंतु तेनुं अंग अंगारानी पेठें तपतुं हतुं तेथी तेनो स्वामी तेनें स्पर्श करवा जाय तेवामां दाजवा लाग्यो तेवारें ते स्त्रीने एमज शय्यामां सूतेली मूकीने पोताने घेर जतो रह्यो पाठलथी ते रुदन करवा लागी त्यारें माता पितायें रुदन करती अटकावी. तदनंतर कोइक निक्षाचरनें तेने आपी, ते पण तेवी रीतें तेने ठोडीने चाल्यो गयो, पठी पिताने घरे रही दान देवा लागी, तेवामां कोइ साध्वी त्यां आवी तेणे प्रतिबोध कस्यो तेथी वैराग्य पामीने दीक्षा ग्रहण करी, महोटुं तप करवा लागी, एक दिवस वनमां आतापना करती हती एवामां तेणें एक गणिकाने पांच पुरुषें सेवेली नजरें जोइ, तेवारें विचारवा लागी के अरे मारे आ नवमां एक पण स्वामी थयो नहीं आ नाग्यशाली स्त्रीने पांच स्वामी नोगवे ठे, ते माटे मारे पण पांच नर्त्तारो थाय तो ठीक? एवुं नियाणु करी

मरीने देवपणुं पामीने पछी पांच पांमवोनी डौपदी नामें स्त्री थइ ॥ १०१

निःसत्वं निर्दयत्वं विविधविनटनाशौचनाशात्महानि,
रस्वास्थ्यं वैरवृद्धिर्व्यसनफलमिहामुत्र डुर्गत्यवाप्तिः॥ चौ
लुक्यक्ष्मापवत्तद्व्यसनविरमणे किं न दक्षा यतध्वं, जा
नंतोमांधकूपे पतत चलत मा दृग्विषाहेःपथा हे ॥१०१॥

अर्थः–(निःसत्वं के०) निःसत्वपणुं तथा (निर्दयत्वं के०) निर्दय पणुं अने (अस्वास्थ्यं के०) अस्वस्थपणुं (वैरवृद्धिः के०) वैरनी वृद्धि, (शौचनाशात्महानिः के०) पवित्रतानो नाश, तथा आत्मानी हानि, (विविधविनटना के०) विविध प्रकारनी जे जीवोनें विडंबना ते सर्व (व्यसनफलं के०) कुव्यसननां फल ते (इह के०) आ लोकमां प्राप्त थाय छे अने (अमुत्र के०) परलोकमां तो ए कुव्यसन थकी (डुर्गत्यवाप्तिः के०) डुर्गतिनी प्राप्ति थाय छे. केनी पेठें ? तो के (चौलुक्यक्ष्मापवत् के०) चौलुक्य राजानी पेठें, (तत् के०) तें कारण माटे (व्यसन विरमणे के०) व्यसननाविरमणने विषे (दक्षाः के०) हे माह्या पुरुषो ! (किं के०) शुं (नयतध्वंके०) यत्न नथी करता ? अर्थात् ते व्यसन त्यागनो हे माह्या जनो ! तमो यत्न करो. (जानंतः के०) जाणता छता (अंधकूपे के०) आंधला कूवाने विषे (मापतत के०) म पडो, अने (दृग् विषाहेः के०) दृष्टिमांज जेनें विष रह्युं छे एवा सर्पना (पथा के०) मार्गे (हे के०) हे दक्षो ! तमें (माचलत के०) म चालो अर्थात् दृष्टिविषयुक्त सर्प ज्यां रहे छे ते मार्गमां तमो चालो नहिं ॥ १०१ ॥

आंहिं कुमारपाल राजानी कथा कहे छे. अणहिल्लपुर पाटणने विषे चौलुक्यवंशनो कुमारपाल राजा राज्य करतो हतो, ते राजा, कलिकालमां सर्वज्ञ विरुदधारक, त्रण करोड ग्रंथना कर्ता एवा प्रभुश्री हेमाचार्यना वचनोयें करी बोध पामी परम जैनधर्मी थयो, तेणे पोताना अढार देशमांथी सात डुर्व्यसन निवृत्त कर्यां अने पोताना देशोमां रहेली कंटकेश्वरी देवीनी आगल पाडाउनो नाश थतो हतो, ते सर्व निवृत्त कराव्यो. तथा तेना राज्यमां कोइ जू पण मारे नही एवो हिंसानो निषेध कर्यो. जो कोइ जूने मारे तेनो दंम करीने ते डव्यथी जु विगेरे जंतुना नाना महोटां रक्षण

स्थान कराव्यां हतां द्यूत तथा मारी शब्दना कथनें करी पोतानी वेहेनना वर शाकंजरी राजाने शिक्षा करी मांस जक्षण करनार पासेंथी दंम लइने बत्रीश जैनप्रासाद कराव्यां,ए प्रकारें साते दुर्व्यसननो नाश कर्यो ॥१०१॥

रुक् पथ्यं च रसैर्यथा बहुतया संसेवितैर्लोलुपै, र्धीरै र्यद्विधिना जवेदपि ॥ पाठांतरे ॥ (बहुतया द्यूनेन संतोषि णा योग्यायोग्यतयाशितैरिह) तथा संसारमोक्षावपि ॥ यन्नानारसलालसःस मथुरामंगुर्जवं भ्रांतवान्, यत्ती र्णश्च सुढंढणः सममघैः सन्मोदकक्षोदकः ॥ १०७ ॥

अर्थः-(लोलुपैः के०) रसलोलुप एवा पुरुषोयें (बहुतया के०) घणी रीतें (संसेवितैः के०) सेवन करेला एवा (रसैः के०) रसोयें करी (रुक् के०) रोग (यथा के०) जेम थाय ते (च के०) वली (तथा के०) तेम (धीरैः के०) धीर पुरुषोयें (यत् के०) जे (विधिना के०) विधियें करीने सेवन करेला रसें करी (पथ्यंअपि के०) पथ्य पण (जवेत् के०) थाय (पाठांतरथी) (बहुतयाद्यूनेन के०) अत्यंत जोजनना प्रीतिवानें तथा (संतोषिणा के०) जोजनमां संतोषी एवा पुरुषें (योग्यायोग्यतयाऽशितैः के०) योग्यायोग्य जोजनथी (इह के०) आहिं (तथा के०) तेम (अपि के०) वली (संसारमोक्षावपि के०) संसार अने मोक्ष पण प्राप्त कराय ठे. अर्थात् रसलोलुपने संसार वृद्धि अने त्यागीने मोक्ष थाय ठे. जुवो (यत् के०) जे कारण माटे (नानारसलालसः के०) नाना प्रकारना रसमां लोलुप एवो (सः के०) ते प्रसिद्ध (मथुरामंगुः के०) मथुरामंगु नामा आचार्य (जवं के०) संसार प्रत्यें (भ्रांतवान् के०) जमतो हवो (यत् के०) जे कारण माटे (च के०) वली जुवो ते केवो? (सन्मोदकक्षोद कः के०) सारा लाडुने चूर्ण करी परठवनार एवो (सुढंढणः के०) सुढंढ ण मुनि, ते (अघैःसमं के०) पाप सहित (तीर्णः के०) संसारथी तरी ग यो. अर्थात् मोक्षने प्राप्त थयो, एटले रसलोलुपतायें मथुरामंगु दीर्घ संसा री थयो, अने ढंढणमुनि रसलोलुप न होवाथी संसारथी तरी गयो, पाठां तरथी अत्यंत जोजनप्रिय पुरुषें तथा जोजनमां संतोष राखनारा एवा पु

रुपोयें योग्यायोग्यना विचारथकी वर्त्तवुं, रसलोलुपत्व गेडवुं ॥ १०२ ॥

आंहिं मथुरामंगु तथा ढंढणमुनिनी कथामां प्रथम मथुरामंगुनी कथा कहे बे. मथुरानगरीने विषे मथुरामंगु नामा आचार्य पांचशे साधुयें युक्त रह्या हता, तेने पुरमां रहेतां रसलांपत्य वृद्धिंगत थयुं. ते आचार्य मरण पामीने ते पुरनी खाल पासें देवकुलमां यक्ष थयो, ते पबी जे अनुगमना दिकने माटे साधु आवे, तेने पोताना मुखें करी खेंचीने मोहोटी जीन्न काढी देखाडे बे. ते यक्षें प्रतिदिन एम करवा मांमयुं, एक दिवस साहसि क कोइ साधु हतो, तेणे पूबयुं, के तुं कोण बो? अने शामाटे जीन्न नित्य देखाडे बे, तेनुं कारण अने तारुं स्वरूप कहे? त्यारें यक्ष कहेवा लाग्यो के, हुं तमो सर्व साधुउनो गुरु मथुरामंगु नामा आचार्य बुं. रसलांपटयें करी मरण पामीने पुरनिर्धमणने विषे यक्ष थयो बुं, तमोयें पण रसलांप ट्यनो त्याग करवो, जिव्हादि इंड्रियोनो जय करवो. एम उपदेश कस्यो.

हवे ढंढणमुनिनी कथा कहे बे. द्वारकाने विषे श्रीकृस्ननी ढंढणा ना मा राणी हती, तेनी कुक्षिरूप सरोवरमांथी हंसनी पेठें ढंढण नामा पुत्र उत्पन्न थयो, तेणे एक दिवस श्रीनेमिनाथ पासेंथी देशना सांन्नलीने स्त्री त्यागीनें स्वामीनी पासें दीक्षा लीधी. ए अवसरनेविषे पोताना क्षेत्रने वि षे पूर्वजन्में साधुने दान आपतां अंतराय करेलो हतो, ते कर्मनो उदय आववाथी ज्यां वोरवा जाय, त्यां साधुने कल्पे, एवी निक्षा मले नहिं, एम ब मास पर्यंत तेणे उपवास कस्या, एकदिवस श्रीनेमीश्वर न्नगवानने श्रीकृस्नें पूबयुं के महाराज! तमारा अढार हजार साधुउ बे तेमां उत्कृ ष्ट तपस्वी कोण बे? ते कहो. न्नगवाने कह्युं के ढंढणकुमार जेवो कोइ पण मुनि नथी, ते सांन्नली श्रीकृस्न प्रसन्न थया अने हाथी उपर चडीने गा ममां आवे बे त्यां सामा आवता ढंढणकुमारने जोइने हाथीथी उतरीने ढंढ णसाधुने वंदन कस्युं, ते कोइ गवाक्षमां बेठेला व्यवहारीयें जोयुं, तेणे श्री कृस्नें वंदन करवाथी ढंढणमुनिनुं माहात्म्य जाणीने त्यां आवी ढंढणमुनि ने घेर बोलावीने मोदक वोराव्या, ते मोदक न्नगवानने देखाडवाथी न्नग वाने कह्युं ए तुजने श्रीकृस्नथी मल्या बे एवुं सांन्नली ते मोदकनुं चूर्ण क री परठवी आव्या, पोतें शुक्लध्यानमां रही केवलज्ञान पाम्या ॥ १०२ ॥

किं जेयो रसनेंद्रियेण स महान् यः सत्त्वरक्षारुचि,
र्यद्वद्धर्मरुचिः कुतुंबकमसौ पक्काम्रवद्भक्षयेत् ॥ किं
वा विश्वहिताय नोदरगतं सिंधुर्दधौ वाडवं, सारग्रा
हि सुरास्तमाशु न विषं किं नीलकंठः पपौ ॥ १०३ ॥

अर्थः— (यः के०) जे (महान् के०) महोटो पुरुष इंद्रिय लोलुपता रहित एवो ले, (सः के०) ते पुरुष, (किं के०) शुं (रसनेंद्रियेण के०) रसना इंद्रियें करीने (जेयः के०) जितवायोग्य ले ? ना नथीज. केनी पेठें ? तो के (सत्त्वरक्षारुचिः के०) जीव रक्षणमां ले रुचि जेने एवो (असौ के०) आ प्रसिद्ध (धर्मरुचिः के०) धर्मरुचिनामा साधु तेण (कुतुंबकं के०) कडवा तुंबडाने (यद्वत् के०) जेवी रीतें (पक्काम्रवत् के०) पाकेला आम्रफलनी पेठें (भक्षयेत् के०) भक्षण कर्युं त्यां दृष्टांत कहे ले (विश्वहिताय के०) विश्वना हितने माटे (सिंधुः के०) समुद्र (उदरगतं के०) उदरमां रहेला (तं वाडवं के०) ते वडवानलने (किंवा के०) शुं वली (नदधौ के०) न धारण करतो हवो अर्थात् वडवानलने धारण करतो हवो, तथा (सारग्राहिसुराः के०) समुद्रमंथन करती वखतें सारना ग्रहण करनारा देवताउ तो थया, परंतु प्रसिद्ध एवुं (विषं के०) विषने (आशु के०) जलदी (नीलकंठः के०) महादेव (किं के०) शुं (न पपौ के०) न पान करता हवा ? अर्थात् महादेव विषनुं पान करता हवा ॥ माटे जीवरक्षणने माटे इंद्रियलोलुपत्वनो त्याग करी महोटा पुरुषो उग्र दुःख सहन करे ले अने विष जेवा पदार्थनुं भक्षण करे ले. जो रसनेंद्रिय लोलुप होय तो ते विषादि भक्षण करे नहिं ॥ १०३ ॥

आ श्लोकमां धर्मरुचि तथा वडवानल अने नीलकंठ ए त्रणना दृष्टांत ले, तेमां प्रथम धर्मरुचि साधुनी कथा कहे ले. उज्जयिनी नगरीने विषे सोमदेव, सोमभूति, अने सोमशर्म्मा नामें त्रण ब्राह्मण भाइयो हता, ते त्रणेने अनुक्रमें नागश्री भूतश्री अने यक्षश्री नामनी त्रण स्त्रीयो हती, ते त्रणे स्त्रीयो पोत पोताने वारे वारे रसोइ करे. एक दिवस नागश्रीनो रसोइनो वारो आव्यो त्यारें कडवुं तुंबडुं तैयार करी

नें धर्मरुचि नामा कोइ साधु वहोरवा जता हता, तेने ते पापणीयें वो होराव्युं, साधुयें ते तुंबडुं लइने पोताना गुरुने देखाड्युं ते जोइने गुरु बोल्या, के एने स्थंमिलमां परठवो, त्यारें साधु परठवा गयो, त्यां मक्षि का अने कीटकादिक जीवोनो घात थशे एम जाणी, ते तुंबडाने पोतें ज क्षण करी गयो,ते विष प्रयोगें मरण पामी सर्वार्थ सिद्ध विमानप्रत्यें गयो.

हवे बीजी वडवानलनी कथा कहे छे. पूर्वें ब्राह्मणनी जाति वडवा नलनामा एक नवीन असुर उत्पन्न थयो, ते प्रचंम एवा सर्व देवताउनो उपरोध करवाने तत्पर थयो ते समयें सर्व सुरपति प्रमुख देवताउयें एक ठा थइने ब्रह्मपुत्री सरस्वतीनी प्रार्थना करीने, ते वडवानलने समुद्रमां ना खी दीधो. पछी तेने कोइ बाहेर काढवा शक्तिमान् थयुं नहिं, पछी शारदा देवी घटनीवच्चें तेने प्रक्षेपण करीने ते वडवानलने देखतां हतां. कहेलुं छे के ॥ श्री नारतीसुरपतिप्रमुखैः सुरोघै, रभ्यर्थिता जलनिधिं ज्वलयांचका र ॥ तन्नंदनेषु सतत वैरमनुस्मरंती तन्नंदनेषु विबुधेषु पक्षुराखी सा ॥ १०३॥

हवे नीलकंठनी कथा कहे छे, एकदिवस सर्व देवताउ सुरपति प्रमुख ब्रह्मा, विष्णु, शंकर, सुरपति, ग्रहपति, निशापतिं, देताउयें एकठा थइने मेरुनो मंथानक करीनें शेषनागनुं नेत्रुं बनावी, समुद्रनुं मंथन करवा मां मयुं, ते समय चउद रत्न उत्पन्न थयां, तेमां लक्ष्मीनामनुं रत्न निकल्युं तेने विष्णुयें ग्रहण कर्युं. एम चतुर्दश रत्नो सर्व देवोयें वेंची लीधां. तेमां देवताउयें रंना अप्सरा मेलवी, तथा शंकरना नागमां कांहिं पण आव्युं नहिं, त्यारें शंकरें कह्युं हवे हुं समुद्र मंथन करीश ते प्रमाणें मंथन कर वा मांम्युं त्यारें विष्णु प्रमुखें कह्युं बहु मंथन करवाथी कालकूट विष उ त्पन्न थशे, पण ते न मानतां मंथन कर्युं, तेवारें कालकूट विष समुद्रमां थी उत्पन्न थयुं, ते विषने सर्व जगत्ना कल्याण माटे शंकर, पोतें पान करी गया अने कंठमां राख्युं, तेथी नीलकंठ एवुं शंकरनुं नाम पड्युं.

सप्तापि व्यसनानि पापसदनान्येतानि वर्ज्यानि यत्,
सत्कर्मापि न शस्यते व्यसनमत्यासेवयास्या घया ॥

स्नेहोऽर्हत्यपि गौतमस्य गणनाऽकाले च कोशागुरोः,
ग्लानिःपारदभाविते हि कनकेऽरिष्टं फलेऽनार्त्तवे॥१०४॥

अर्थः-(एतानि के०) ए (सप्तापि के०) सात एवां पण (व्यसनानि के०) व्यसनो जे ने, ते (पापसद्मानि के०) पापनां घर ने. माटे (वर्ज्यानि के०) वर्जवा योग्य ने, (यत् के०) जे कारण माटे ते व्यसन सेवनारो प्राणी (सत्कर्मापि के०) सारा कर्मने करनारो होय तो पण (नशस्यते के०) वखणातो नथी. ते व्यसनोनी (अत्यासेवया के०) अति सेवनायें (व्यसनं के०) दुःख (स्यात् के०) होय. केनी पेठें ? तो के (यथा के०) जेम (गौतमस्य के०) गौतमने (अर्हति के०) अरिहंत नगवानने विषे (स्नेहोपि के०) स्नेह पण जे ने, तेने लोको व्यसनज कहे छे. (च के०) तथा (कोशागुरोः के०) स्थूलिनइने (अकाले के०) अकालने विषे (गणना के०) पूर्वनी गणना ते पण (ग्लानिः के०) व्यसन रूप थाय छे. तथा (पारदभाविते के०) पारासाथें अत्यंत नावना करेला एवा (कनके के०) सुवर्णने विषे श्यामता थाय ने. तथा (अनार्त्तवे के०) ऋतु विनाना समयमां उत्पन्न थयेला (फले के०) फलने विषे (हि के०) निश्चें (अरिष्टं के०) अरिष्ट थाय ने. एम लोकोक्ति छे, तेमाटे अति सर्वत्र वर्जयेत्, एम जाणवुं ॥ १०४ ॥

आ श्लोकमां गौतम तथा स्थूलिनइनो दृष्टांत होवाथी प्रथम गौतम गणधरनी कथा कहे छे. श्रीवर्द्धमानस्वामीना शिष्य प्रथम गणधर श्रीगौतमस्वामी हता,हवे जेने वीरनगवानें पोताने हाथें दीक्षा आपे तेने तरत केवलज्ञान उत्पन्न थाय, परंतु गौतमगणधरने श्रीवीरनगवाननी उपर अत्यंत स्नेह होवाथी स्नेहांतरायथी केवलज्ञान उत्पन्न थयुं नहिं,पछी वीरनगवाने पोताना निर्वाण समयने विषे देवशर्माने प्रतिबोध करवा माटे गौतमने आसन्नथामें मोकल्या, श्रीवीरनगवान् अपापा नगरीने विषे हस्तीपाल राजानी जीर्ण रज्जुक सनाने विषे रह्या, शोल प्रहर पर्यंत देशना देवा, पछी कार्त्तिक वदि अमावास्याने दिवसें परमपदने प्राप्त थया, हवे देवशर्माने प्रतिबोधीने पाछा आवता देवताउना मुखथकी वीरनगवान् निर्वाणपदने प्राप्त थया, एवुं सांनलीने गौतमस्वामी अत्यंतशोक करीने पछी प्रनु वैराग्य आणी स्नेहपाशनो बंध त्रोडीने केवलज्ञान पाम्या.

हवे स्थूलिभद्रनी कथा पूर्वे कहेली पूर्वे छे, तथापि प्रकारांतरथी वली कहे छे. एक दिवस श्रीभद्रबाहुस्वामीनी पासें स्थूलिभद्रनी बेहेनो यक्षादि आ र्यीउयें कह्युं के हे भगवन्! स्थूलिभद्र हाल क्यां छे? त्यारें गुरुयें कह्युं के, अशोकवनने विषे पूर्वोनी गणना करतो छतो रह्यो छे, त्यारें सर्वे साध्वीयो तेने वांदवा माटे अशोकवनमां गइ, त्यां पोतानी बेनोने आवती जोइने स्थूलिभद्र पोतानी विद्यानी परीक्षा करवा माटे सिंहनुं रूप विकुर्वीने स न्मुख आव्यो तेने जोइने सर्वे साध्वीउ त्यांथी नाशीने गुरुनी पासें आवी कहेवा लागी के हे भगवन्! स्थूलिभद्रने तो सिंह भक्षण करी गयो. ते सां भली गुरुयें कह्युं के हजी त्यांज स्थूलिभद्रजी छे. बीजी वार तेनी बेनोयें जइने वंदन कर्युं पछी गुरुयें जाण्युं एनाथी विद्या जीरवाती नथी माटे हवे पूर्व भणाववां नही तो पण श्री संघना उपरोधथकी चार पूर्व मूलपा ठें गुरुयें भणाव्यां, परंतु अर्थथकी भणाव्यां नहिं ए. स्थूलिभद्रनी कथा कही.

द्यूतेनार्थयशः कुलक्रमकलासौंदर्यतेजःसुहृत्, सा
धूपासनधर्मचिंतनगुणा नश्यंति संतोपि हि ॥ यद्व
त्पांडुसुतेषु तच्च्युतसुधीष्वादित्यभावर्जिते, विश्वे किं
तमसा स्फुटं घटपटस्तंभादि वा लक्ष्यते ॥ १०५॥

अर्थः—(संतःअपि के०) विद्यमान एवा पण (अर्थ के०) धन अथवा शास्त्रना अर्थ (यशः के०) यश (कुलक्रमः के०) कुलाचार, (कला के०) लिखित, पठित, गीत, वाद्यादिक बहोंतेर कला, (सौंदर्य के०) सुंदरपणुं (तेजः के०) तेज, (सुहृत् के०) सुमित्र, (साधूपासन के०) गुरुपर्यु पास्ति, (धर्मचिंतन के०) दानशीलादि धर्मचिंता, एवा (गुणाः के०) गुणो (द्यूतेन के०) द्यूतें करी (हि के०) निश्चें (नश्यंति के०) नाश पामे छे. केनी पेठें? तो के (यद्वत् के०) जेम (पांडुसुतेषु के०) पांच पांडवोने विषे. ते केवा पांडवो छे? तो के (तच्च्युतसुधीषु के०) ते द्यूतथकी भ्रष्ट थइ छे बुद्धि जेनी एवा छे. कवि कहे छे के (आदित्यभावर्जिते के०) आ दित्यनी कांतिथी रहित एवा (विश्वे के०) विश्वने विषे (तमसा के०) अंधकारें करी (स्फुटं के०) प्रगट पणे (किंवा के०) शुं वारु. (घटपट स्तंभादि के०) घट, पट, स्तंभादिक (लक्ष्यते के०) लक्ष्य थाय छे. ना य

ता नथी. तेम द्यूतमां पण पूर्वोक्त गुणो दृश्यमान थता नथी, ए नावार्थ बे.

आंहिं पांच पांमवोनी कथा कहे ने. कुरुदेशमां हस्तिनापुर नगरने विषे युधिष्ठिर राजा, नीम, अर्जुन, सहदेव अने नकुल ते चार नाइर्ये सह वर्त्तमान पोतें साम्राज्यश्रीने नोगवता हता. एक दिवस पोताना नवीन करावेला श्रीशांतिनाथजीना देरासरनी प्रतिष्ठा करवाना महोत्सवने अर्थे पत्रद्वारायें हस्तिनापुरथकी डुर्योधनादिकने तेडाव्या, त्यां प्रतिष्ठाना नवन वा महोत्सव थइ रह्या नंतर मणिचूड विद्याधरें सहस्र स्तंनयुक्त निर्माण करेली सनाने विषे कौरवो तथा पांमवो मलीने द्यूत रमवा लाग्या, तेने तेमना काका विडुरजीयें घणी रीतें रमवानो निषेध कस्यो, तो पण पांमवो तथा कौरवो द्यूत रमवाथी विराम पाम्या नहिं, पढी शकुनियें नाखेला देवाधिष्ठित पाशायें करी डुर्योधन पांमवना राज्यने हरण करतो हवो. अनुक्रमें डौपदीने पण हारी गया. तेवारें नीष्मादिकें ठेराव्युं के पांमवो वार वरस वनमां रहे तथा, एक वरस बाना कोइ जाणे नहिं एवी रीतें रहे, ते प्रमाणे पांमवो बार वर्ष वनवासमां रह्या अने एक वरस रूपांतर करीने वैराट नगरमां ढाना रह्या. पढी कौरवो सायें युद्ध करी कौरवोनो पराजय करी राज्यने प्राप्त थया. ए प्रमाणे द्यूतमां डुःख ढे एम जाणवुं ॥१०५॥

द्यूतं न किं त्यजत किं दहत स्वदेहं, ढागं च मूत्रयसि
किं वदने स्वकीये ॥ तत्तादृशी प्रियतमासहितोनलोपि,
जानीत रोरइव राज्यसुखान्निरस्तः॥१०६॥ द्यूतप्रकरणम् ॥

अर्थः– हे मूढजनो! (द्यूतं के०) द्यूतने (किं के०) केम (नत्यजत के०) त्याग करता नथी तथा (किं के०) शामाटे (स्वदेहं के०) पोताना देहने (दहत के०) द्यूताग्नियें करीने बालो बो. (च के०) वली (ढागं के०) बकराने (स्वकीये वदने के०) पोताना मुखने विषे (किं के०) शा माटे (मूत्रयसि के०) मूत्रावो बो जुवो (तत् के०) ते माटे (तादृशी के०) तेवी (प्रियतमा के०) वल्लन्न एवी पोतानी स्त्री दमयंतीये (सहितः के०) सहित एवो (नलः अपि के०) नलराजा पण (राज्यसुखात् के०) राज्यसुखथकी द्यूतें करी (निरस्तः के०) ब्रष्ट थयो बतो (रोरइव के०) जेम दरिडी होय तेनी पेठे थयो. एम (जानीत के०) हे जनो तमो जाणो ॥१०६॥

आहिं नलराजानी कथा कहे छे. नलराजा त्रणखंडनो अधिपति हतो एकदिवस राजने विषे लोभ पामेला कुंवर नामा पोताना भाइ सार्थे नलरा द्यूत रमतां दैववशें राज्य हारी गयो. पछी दमयंती सहित वनमां गयो, मार्गमां विचार्युं जे हुं शुं आवा हालें सासराने घेर जाउं, एम विचारीने दमयंतीने वनमां सूतेली मूकीने जातो रह्यो, पाछलथी जेवारें दमयंती जागी तेवारें बहुविलाप कर्यो, मार्गमां सार्थवाहनुं धाडीथी रक्षण कर्युं, पछी पर्वतनी गुफामां रहिने पांचशे तापसने बोध कर्यो, सात वरस त्यां रहि. पछी पोतानी मासीनी दीकरीने घेर गइ, नलराजा पण देवप्रयोगें करी विरूपांग कुब्ज थयो, सुसमार पुरमां दधीपर्ण राजानी पासें रसोयो थइने दस वरस पर्यंत रह्यो. अने दमयंती पण पोतानी फइने त्यां छठ अठम तप करती रही पछी पोताना बापने घेर गइ. नलराजा पण त्यां ते दमयंती सार्थे मल्या, वली पण द्यूत रमाडीने पाछुं पोतानुं राज्य कुवर पासेंथी लइ लीधुं, माटे सर्वथा द्यूत रमवुं नहिं ॥ १०६ ॥

मांसाशनान्नरकएव ततः सदेव, स्तल्लोलुपं हरि
नृपं कृतवान्सरोषः ॥ किंपाकपेशलतराशनदत्तत्
ष्णो, किंपाकभोजिनि मृतेरपि संशयोस्ति ॥ १०७॥

अर्थः-(मांसाशनात् के०) मांसाशन थकी (नरकएव के०) नरकज होय, (ततः के०) तेमाटे (सरोषः के०) रोषयुक्त एवो (सः के०) ते (देवः के०) देव (हरिन्नृपं के०) हरिनामना राजाने (तल्लोलुपं के०) ते मांसनाअशनमां लोलुप एवो (कृतवान् के०) करतो हवो, (पाकपे शलतराशनदत्ततृष्णो के०) पाकें करीने अत्यंत मनोहर एवुं छे अशन जेनुं एवा पदार्थने विषे दीधी छे तृष्णा जेणे एवा ते (किंपाकभोजिनि के०) विष वृक्षना फलनुं भोजन करनारने विषे (मृतेरपि के०) मरणनो पण (संशयः के०) संदेह (किं के०) शुं (अस्ति के०) छे. ना नथीज. एटले फेर खा नारने विषे मरण संदेह होयज नहिं एम जाणवुं ॥ १०७ ॥

आंहिं हरिन्नृपनी कथा कहे छे. मधुपिंगलनो जीव अने बीजो हरिन्नृ पनो जीव ए बेहु पूर्वभवना वैरें करी मरण पामी, एक हरिवर्ष क्षेत्रमां युगलीक थयो, अने एक देवता थयो, परंतु ते तेनो वैरी जीव युगलीक

होवाथी तेनें मरणादिक कष्ट करवामां कोइ रीतथी देवता समर्थ थयो नहिं तेवारें ते युगलियाने ते पूर्वजन्मनो वैरी देव उपाडीने भरतखंममां लावी राज्य दइने ते युगलीयाने मांस लोलुप करतो हवो थोडे थोडे मद्य पान पण करावतो हवो, तेथी ते युगलीयो मरीने मांसाशनना पापथी नरकमां गयो. एवीरीतें ते देवें खरेखरुं पोतानुं वैर लीधुं ॥ १०७ ॥

स्नेहोदयापि हृदि कामिषलोलुपानां, किंचिल्लणापि पति
मांसदलानि नैछत्॥ नाश्नाति किं निजकुटुंबमपि द्विजि
ह्ही,स्थानं स्वमन्यदपि किं दहतीह नाग्निः ॥ १०८ ॥

अर्थः-(आमिषलोलुपानां के०) आमिषने विषे लोलुप एवा प्राणी योना (हृदि के०) हृदयने विषे (स्नेहः के०) स्नेह श्यो ? तथा (दया पि के०) दया पण (का के०) शी ? अर्थात् आमिषलोलुपने हृदयमां दया तथा स्नेह होतो नथी. जुवो (चिल्लणापि के०) चिल्लणा नामनी स्त्री पण पोताने पुत्रनो गर्भ रहेवाथी (पतिमांसदलानि के०) पति श्रेणि कराजाना मांसना कटकाने (किं के०) शुं (नैछत् के०) न इछती हवी ? अर्थात् मांसलोलुपा चिल्लणा थइ,त्यारें तेणे पोताना पतिनुं पण मांस खा वानो विचार कस्यो, वली (द्विजिह्ही के०) सर्पिणी (निजकुटुंबमपि के०) पोताना कुटुंबने (नाश्नातिकिं के०) शुं नथी खाती ? ना खायछेज, अ ने (अग्निः के०) अग्नि जे छे, ते (इह के०) आहिं (स्वं के०) पोतानुं तथा (अन्यत्अपि के०) बीजा स्थानने पण (किं के०) शुं (न दहति के०) बालतो नथी ? ना बालेछेज ॥ १०८ ॥

आंहिं चिल्लणा राणीनी कथा कहेछे. राजगृही नगरीने विषे कोइ तापस मास क्षपण करतो हतो, तेने सर्व लोक निमंत्रण करीने पारणुं करावतां हतां, एक दिवस ते तापसनुं लगभग मासोपवास व्रत पूर्णथवा आव्युं ते वखत तेने श्रेणिकराजायें आवीने विनंति करी पोताने घेर पारणुं कराव वा माटे आमंत्रण कर्युं पछी मध्याह्न समये पारणुं करवा तापस आव्यो त्यारे राजाने विस्मरण थइ गयुं तेथी ऋषि आवे तो तेने पारणुं करावजो एवुं कोइने कह्युं नही. ऋषि पण बोल्या विनाज पोताना स्थानक प्रत्यें जइने बीजा मासक्षपण तप करवानो प्रारंभ कस्यो, वली राजायें जाण्युं जे में

आमंत्रण करीने रुषिने पारणुं कराव्युं नही एम विचारी श्रेणिक राजायें पाछुं रुषिने पारणामाटे आमंत्रण कर्युं वली पण पारणाने दिवसें ते वात राजाने वीसरी गइ अने घरमां कोइने कह्युं नहिं. तेथी फरी पण रुषि पाछा गया, अने त्रीजा मासक्षपणनो आरंभ कर्यो, एम त्रीजी वार पण श्रेणिक राजायें कर्युं ते पछी तपस्वी क्रोधायमान थइने कहेवा लाग्या के आवता जवमां अवतार लइने आ राजानो हुं अनर्थकारक थाउं एम नियाणुं करी ते तापसनो जीव मरीने चिल्लणाना उदरमां आवी उपन्यो ते पेटमां रहेवाथी गर्जप्रजावथी तथा पूर्वजन्मना वैरथी चिल्लणा राणीने दोहलो थयो, जे हुं मारा पतिना मांसनुं जक्षण करुं? ए विचार थाय पण कहेवाय नहिं, अने तेनी चिंतामां राणी डुबली थइ गइ, त्यारें श्रेणिकें एक दिवस राणीने पूछ्युं के हे राणी! तुं दिवसे दिवसें डुर्बल केम थती जाय छे? राणीयें जे पोतानो विचार हतो, ते यथास्थित राजापासें निवेदन कर्यो, पछी अजयकुमारें श्रेणिक राजानें अंधकारमां राख्यो, तेना पेट उपर मृगनुं मांस बांध्युं, अने तेमांथी प्रतिदिन कातरीने चिल्लणाने जेम जेम आपे, तेम तेम राजा खोटी रीतें रुदन करे, जेम कोईनुं पेट कापे, ने रुवे तेम ते रोवे, तेंवारें चिल्लणा हर्ष पामे, एम ते चिल्लणा राणीनो दोहलो संपूर्ण कर्यो, पछी पोताथी उत्पन्न थयेला बालकने चिल्लणा राणीयें उकरडे नाखी दीधो, तेनी मालम पडवाथी श्रेणिक राजायें त्यांथी ग्रहण करी लीधो, त्यां उकरडामां कुकडे ते बालकनी अंगुलि वगेरेनुं जक्षण कर्युं तेथी तेनुं नाम कोणिक पाड्युं, अने बीजुं नाम अशोकचंद एवुं पाड्युं, अनुक्रमें करी ते त्रण खंमनो अधिपति थयो ॥ १०८ ॥

नाकृत्यकृत्यविदलं मधुपानमत्तो, जूताजिजूतइव
शून्यमनोवचोंगः ॥ किं देवकीपरिणये मदपारवश्या
न्नाश्लेषि जीवयशसाऽप्यतिमुक्तकर्षिः ॥ १०९ ॥

अर्थः-(मधुपानमत्तः के०) मधुपान थकी मदोन्मत्त थयेलो तथा शून्यमनोवचोंगः के०) शून्य छे मन, वचन अने काया जेनी एवो छतो (जूताजिजूतइव के०) जूतप्रेतादिकें पराजव पमाडेलो होय नहि शुं? एवो, ते प्राणी (अलं के०) पूरी रीतें (अकृत्यकृत्यवित् के०) अ

कृत्य अने कृत्यने जाणनारो (न के०) थातो नथी. (देवकीपरिणये के०) देवकीना परिणयने विषे (मदपारवश्यात् के०) मदना परवश पणाथी (जीवयशसा के०) कंसनी स्त्री जीवयशायें (अतिमुक्तकर्षिः अपि के०) अतिमुक्त नामा ऋषिने पण (किं के०) शुं (न आश्लेषि के०) न आलिंगन कस्या. अर्थात् मदिराना परवशपणाथकी कंसनी स्त्री जीवयशा यें अतिमुक्त ऋषिने आलिंगन कस्याज ॥ १०ए ॥

आहिं जीवयशानी कथा कहे छे. मथुरापुरीनेविषे कंस राजा राज्य करतो हतो, तेनी जीवयशा राणी हती ते कंसराजायें देवकराजानी दी करी देवकीजीने पोतें अग्रेसर थइने तेना स्वामी वसुदेवजीने आपी, देवकीने परणवाने ते वसुदेव आव्या, अने मंफपमां नवनवा उत्सवो थवा मांफ्या, तेवा समयमां कंसनो नाइ अतिमुक्त ऋषि भिक्षाने माटे त्यां आव्यो, तेवामां मद्यपानेकरी परवश थयेली एवी जीवयशा पोताना देवरने कंठने विषे वलगीपडी, अने कहेवा लागी कें तमो गीत गान करो, हुं नृत्य करीश ? तेवारें साधुये तेना हाथमांथी बुटवानो घणो उपाय कस्यो तो पण तेणीये ते साधुने बोड्यो नही. त्यारें मुनियें कह्युं के एटलो बधो हर्ष तुंने केम उत्पन्न थयो छे ? एज देवकीनो सातमो गर्न थाशे ते तारा बापनें, तथा तारा पतिने मारशे आ वात सांजलतांज जीवयशाने मद्यनो निशो उतरी गयो अने कांइक ऋषिने बोड्या अवसरजोइने ऋषि निकली गया,कालेंकरीने श्रीकृष्णना हाथथी कंस तथा जरासंध मरण पाम्या ॥१०ए॥

मधु मधुरवचोभिः प्रेयसीप्रेरितोयः, पिबति निजकुलोच्चा
चारचिंतां विमुच्य ॥ वररुचिवदिहापि प्रेक्षते दुर्गतिं
सः, क्व च तनुदृढता स्याद्भोगिभुक्ताज्यनोगैः ॥ ११० ॥

अर्थः—(मधुरवचोभिः के०) मधुर एवा वचनोयें करी (प्रेयसीप्रेरितः के०) प्रियायें प्रेस्यो एवो (यः के०) जे पुरुष (निजकुलोच्चाचारचिंतां के०) पोताना कुलना उंचा आचारनी चिंताने (विमुच्य के०) मूकीने (मधु के०) मद्यने (पिबति के०) पान करे (सः के०) ते पुरुष (इहापि के०) आ लोकनेविषे पण (दुर्गतिं के०) दुर्गतिने (प्रेक्षते के०) जोवे छे. कोनी पेठें ? तो के (वररुचिवत् के०) वररुचिनी पेठें ? जेम वर

रुचि पंमितना कानमां मद्यपान करवाथी उकालेलुं शीशुं रेडयुं ते वात घटे ठे केम के (च के०) अने (जोगिज्जुक्ताज्यजोगैः के०) सर्पे वोटेला घृतथी (तनुदृढता के०) शरीरनी दृढता (कस्यात् के०) क्यांथी होय ॥११०॥

आहिं वररुचिनी कथा कहे ठे. पाडलीपुरने विषे वररुचिनामा पंमित रहेतो हतो, ते पंमित नित्य पांचशे नवीन काव्योयें करी नंदराजानी प्रातः कालमां स्तुति करतो हतो, ते काव्यो सांजलीने तरत राजा, पोताना शकमाल मंत्रीनी सामुं जूवे,जे आ मंत्री काव्योना अर्थ सारी रीतें करे, तो हुं कांहिंक पंमितने दान आपुं? शकमाल मंत्री तेनुं पांमित्य यथास्थित घणुंज सारुं ठे एम जाणे खरो, परंतु सम्यक्त्व मलीनतायें करी तेना काव्यनी काहिं प्रशंसा करे नहिं. पठी शकमाल मंत्रीनी स्त्रीयें कह्युं जे तमो तें वररुचि पंमितना काव्यनी प्रशंसा करता नथी ते कांही ठीक नहिं एवां स्त्रीना वचन सांजली एकदिवस एकश्लोकनुं व्याख्यान शकमाल मंत्रीयें कर्युं. तेवारें तरत राजायें तेने दान आप्युं,एकदिवस ते वररुचि पंमितनुं अजिमान उतारवा माटे शकमाल मंत्रीयें राजाने कह्युं के जे वररुचियें काव्यो कर्यां, ते सर्व मारी दीकरियोने आवडे ठे त्यारे राजायें कह्युं के तमारी दीकरीने केवरावो, तेवारें पडदो आडो नाखीने कन्याउयें वररुचिनां कहेलां सर्व काव्य कह्यां. पठी वररुचि, प्रागमां गंगानी पांचशें काव्योयें करी स्तुति करे तिहां यंत्रप्रयोगें करी पांचसो दिनार धारण करनारी, कोशस्थली उडीने हाथमां पडवा लागी, तेवारें वररुचि कहेवा लाग्यो. के गंगाजी स्तुतिथी मने प्रसन्न थइने ड्व्य आपे ठे. पठी शकमालें तेवात जाणीने संध्याकाले कोशस्थली हती तेमां यंत्रप्रयोगें करी पाषाणो मूक्या, अनें नंदराजा पासें वररुचिनी लक्षा खोवरावी. हलको पाड्यो, तेवारें वररुचियें पोतानी पासें जणनारा ठोकराउने आ प्रमाणे गाथा शीखवी, जे ॥ नंदराय जाणे नहि, जे शकमाल करेसि ॥ नंदराय मारी करी, सिरिठ रज्जठवेसि ॥ १ ॥ ए गाथा सांजली राजाने शकमाल उपर क्रोध चड्यो तेवारें शकमालें विषजक्षण करी पोताना ठोकराने शीखव्युं तेनी शीखवणीथी राजानी समक्ष सरिये पोताना बापने तरवारथी मारी नाख्यो राजायें सिरीयाने प्रधान व्यापारमुड़ा आपी, श्रीयकें वररुचिथी वैरलेवा माटे कोशाध्यक्षने कह्युं के जेवी तेवी रीतें वररुचिने

पाडवो, एकदिवस तेणे रात्रिनेविषे चंद्रहास मद्यपान कराव्युं प्रातः काळमां राजानी सन्नाने विषे कमल सुंघवाथी मद्यनी वांति करी, त्यां नरी सन्नामां तेनी लज्जा गइ खष्ट थयो,ते मद्यपानना प्रायश्चित्तमां ते वररुचिने शीशुं उकाळीने तेनुं पान कराव्युं तेथी मरण शरण थयो॥११०॥ सुराप्रकरणं.

वेश्याविश्वकलत्रमत्र तदहो पानीयशालाजले,यद्वत्कां
दविकाशने च शुचिता का प्रायशस्तादृशी ॥ तस्मात्
साकृतपुण्यवत् कृतकमुच्छोकोदया किं प्रिया, पूर्णे लं
विशदा स्वन्नावकलुषा, दोषापि नेंदौ कृशे ॥ १११ ॥

अर्थः-(वेश्या के०) वेश्या जे ठे, ते (अत्र के०) आ संसारने विषे (विश्वकलत्रं के०) आखा विश्वनी स्त्री ठे (तत् के०) ते कारण माटे (सा के०) ते (किं के०)शुं (प्रिया के०) मनो, नीष्ट थाय, ना नज थाय. (अहो के०) आश्चर्ये (यद्वत् के०) जेम (पानीयशालाजले के०) पाणीना परबना जलने विषे (च के०) वळी (कांदविकाशने के०) कंदोइना नोजनगृहने विषे (शुचिता के०) पवित्रता (का के०) शी ? तेम (प्रायशः के०) प्रायें बहुप्रकारे करी वेश्या पण (तादृशी के०) तेवीज जाणवी अर्थात् जेम पाणीना परबमां तथा कंदोइना नोजनघरमां पवित्रता होती नथी तेम वेश्यामां पण पवित्रता होयज नहिं. (तस्मात् के०) ते कारण माटे (सा के०) ते (कृतपुण्यवत् के०) कृतपुण्य नामा शेठनी पेठे (कृतकमुच्छोकोदया के०) पहेलां कर्यो ठे मोद एटले हर्ष आनंद जेणे अने पठी कर्यो ठे शोकनो उदय जेणे एवी वेश्या जाणवी. जुवो (दोषापि के०) रात्रि पण (अलं के०) अत्यंत (पूर्णे के०) पूर्ण (इंदौ के०) चंद्र ठते (विशदा के०) निर्मल (न के०) शुं नथी थातीना थायज ठे अने चंद्रमा (कृशे के०) क्षीण थये ठते, (स्वन्नावकलुषा के०) रात्रि स्वन्नावथीज मेली थाति नथी शुं? अर्थात् स्वन्नावे करीने कलुष एवी रात्रि ठे ते चंद्रमा रूप पोतानो स्वामी कलाथी पूर्ण होय त्यारें निर्मल देखाय ठे, अने ज्यारें चंद्रमानी कला नष्ट थाय, त्यारे रात्रि काळी नासे ठे तेम वेश्या पण स्वन्नावकलुष ठे ते परपुरुषोनुं धन मळे तेथी निर्मळ लागे ठे अने पुरुष निर्धन थाय त्यारे पोतें पोताना स्वन्नावने पामे॥१११॥

आ श्लोकमां कृतपुण्यनो दृष्टांत होवाथी तेनी कथा कहे छे. राजगृहिने विषे कोइक धनदत्तनामा श्रेष्ठी रहे छे, तेने कृतपुण्यकनामा पुत्र हतो, तेना पिता धनदत्ते चातुर्यने माटे कृतपुण्यकने यौवनमां वेश्याने घेर शिक्षा माटे मोकल्यो, ते वेश्यानुं नाम वंसतमंजरी करी हतुं; त्यां रहिने ते कृतपुण्यकें पोताना बापनुं बार कोटिधन हतुं ते सर्व उडाडी दीधुं, कालें करी तेनां माता पिता नष्ट थइ गयां, हलवे हलवे इव्यनो नाश थइ गयो, पछी ते ज्यारे निर्धन थयो त्यारे वेश्यायें तेने अपमान करीने काढी मूक्यो, कृतपुण्यकनी नार्यायें ककलाट करवा मांड्यो तेवारे घरमां निर्धन पणुं जोइने परदेश जवानो विचार धार्यो, ते विदेशीनी सार्थे गाम बाहेर निकल्यो, त्यां सूतो हतो, तेवामां रात्रिनेविषे चार स्त्रियोयें आवीने सुतोने सूतो त्यांथी उपाडीने तेने पोताना नवनमां राख्यो, त्यां ते चारे स्त्रियोनी सार्थे नोग नोगवतो छतो रह्यो, ते स्त्रियोथकी चार पुत्रो उत्पन्न थया, केटलोक काल गया पछी एकदा ते कृतपुण्यक सूतो हतो तेने तेमज पाछो ज्यांथी उपाड्यो हतो, त्यां लावी सार्थमां मूक्यो, तेनी सार्थे एक नातानो लाडु आप्यो हतो, तेने कयवन्नायें पोताने घेर नांगीनें जोयुं, तो अंदरथी चार रत्न निकल्यां, अनुक्रमें ते श्रेणिकराजानी दीकरीने परण्यो, ते अनयकुमार मंत्रीनी बुद्धियेंकरी पाछी चारे स्त्रियो तथा पोताना चारे पुत्र तेने मल्या ॥ १११ ॥

क्वलघुनि गणिकानां हृद्यनेके गवाक्षा, दधति यदनुवेलं ता रसं नव्यनव्यं ॥ तदजनि हृतवृत्तः कूलवालोऽपि ताभिर्, गलति हिमगिरिर्वा नानुनाभिर्दृढाभिः ॥ ११२ ॥ वेश्याद्वारं ॥

अर्थः–(गणिकानां के०) वेश्याउना (लघुनि के०) हलका एवा (हृदि के०) हृदयने विषे (अनेके के०) अनेक (गवाक्षाः के०) गोखना जेवां छिद्रो (क्व के०)शा माटे थतां हवां, (यत् के०) जे कारण माटे (ताः के०) ते वेश्याउ (नव्यनव्यं के०) नवीन नवीन एवा (रसं के०) रसने (अनुवेलं के०) प्रति समय (दधति के०) धारण करे छे, (तत् के०) तेमाटे (कूलवालोऽपि के०) कूलवाल नामा तपस्वी पण (ताभिः के०) ते वेश्याउयें (हृतवृत्तःअजनि के०)हरण करी छे वृत्ति जेनी ए

वो चारित्रथी ज्रष्ट थयो ते वात घटे बे, केम के (हिमगिरिः के०) हेमाच लगिरि हिमभय बे ते (वा के०) जेम (दृढाग्निः के०) दृढ एवी (ज्ञानुज्ञाग्निः के०) सूर्यना किरणोयें करी (गलति के०) गले बे.

आंहिं कूलवाल ऋषिनी कथा कहे बे. कोणिकराजायें पोतानी पट्टराणी पद्मावतीना वचनथकी पोताना पुत्र हल्ल विहल्लनी पासें सेचानक हस्ती, हार, अने कुंमलनी याचना करी ते बेहु जणायें ते वस्तु आपी नहिं. पढी ज्यारें घणीज मागणी करी त्यारें चेडा महाराजानी पासें गया, दूत मोकलीने चेटकराजाने जणाव्युं के कोणिक राजा आ प्रमाणे वस्तुउ मागे बे. पढी ते वस्तु न मलवाथी कोणिक राजा युद्ध करवा माटे समस्त सैन्य लइने विशालानगरीने विषे गयो, त्यां युद्धमां प्रथम चेटकें एक बाणेंकरी काल कुमरने हण्यो, तदनंतर दश युद्धोयें करी कोणिकना दश बांधवो मास्या, ते वारें कोणिकें चमरेंद्रनुं अने सौधर्मेंद्रनुं आराधन कस्युं, तेणें चेटकराजाना बाणनुं स्खलन कराव्युं, तेवारें चेटक राजा अनशन लइ देवगतिने प्राप्त थयो, पढी सेचनक हाथी उपर बेशीने हल्लविहल्लें रात्रिनेविषे घणा माणसोने मारी नाख्यां, पढी कोणिकना कूडकपटथी ज्यारे सेचनक हस्ती संग्राममां मरण पाम्यो, त्यारें हल्ल तथा विहल्लें श्रीवीरज्ञगवाननी पासें दीक्षा ग्रहण करी, अने कोणिकें विशालानगरीने ग्रहण करवानो उपाय कस्यो, तो पण ते नगरी लेवाने समर्थ थयो नही. त्यारें कोइ राक्षसें कह्युं के कूलवालक ऋषि जो आवे, तो विशाला नगरी ग्रहण थइ शके! ते काम मागधिका वेश्याथी थाय तेम बे. पढी कोणिकें मागधिकाने कहेवाथी तरत ते कपटश्राविका थइने जे वनमां कूलवालकऋषि हता, त्यां पोतानी साथें बीजी पांच ब वारांगना लइने गइ ते स्त्रियोयें लाडुमां नेपालानुं चूर्ण नाखीने ऋषिने वहोराव्या तेथी ऋषिने जाडा थवा मांड्या त्यारें ते स्त्रियोयें ते मुनिनुं वैयावृत्य करवा मांड्युं, अने अंगस्पर्शनादिकें लोन्नित करी चारित्रथकी पतित करीने राजानी पासें आण्यो, राजायें पूब्युं के हे मुनि! ए विशालागनरी केवीरीतें लेवाय? त्यारें ऋषियें कह्युं के पुरनी वच्चें श्रीमुनिसुव्रतस्वामीनो प्रासाद बे तेमां एक इंरु बे; ते जो पाड्य, तो विशाला नगरी तने मले, पढी ऋषि पोतें ते पुरमां गया, अने के

हेवा लाग्या के जे तमें सर्वे मलीने प्रासादना दंम कलशादिकने पाडो, तेवारें कटक तथा लोकोयें तेम कर्युं तेथी पृथ्वी ग्रहण करी. पढी त्यां ह लनी साथें गर्दजने जोडीने क्षेत्रो खेडवा मांम्यां, तेथी राजानी प्रतिज्ञा पूर्ण थइ ॥ ए कूलवालकरुषिनी कथा ॥ ११२ ॥

व्याधोनान्यहिताय सत्यमसकृद्विश्वस्तजंतूंस्तुदन्, न स्व
स्मिन्नपि तुष्टये च्युतशरक्रोडादितोऽतं व्रजन् ॥ मृत्यौ
दुर्गतिमाप्तवांश्च मृगयालोकद्वयात्यै ततो, गांगेये
न सशांतनुक्षितिपतिस्तस्यानिषिद्धस्ततः ॥ ११३ ॥

अर्थः-(सत्यं के०) ते वात तो सत्य ढे, के (अन्यहिताय के०) अ न्यना हितने माटे (व्याधः के०) जे पाराधि जे हिंसक ते (न के०) नथी वली ते पाराधि केहेवो ढे ? तो के (विश्वस्तजंतून् के०) गायनेकरी वि श्वास पमाडेला जे मृगादि जंतुउ तेने (असकृत् के०) वारंवार (तुदन् के०) दुःख देतो एवो तथा (च्युतशरक्रोडादितः के०) पोताना हाथथी ढोडेलां एवां जे बाणो, ते शूकरादिकने लाग्यां, ते माटेज ते व्याधने मा रवा दोड्या, एवा जे शूकरादिक तेथकी (अंतं के०) अंतने (व्रजन् के०) प्राप्त थयो एवो ते व्याध ढे, ते (स्वस्मिन्नपि के०) पोताने विषे पण (तुष्टये के०) तुष्टिने माटे (न के०) थातो नथी. अने ते क्रो डादिक शूकरादिकोनुं (मृत्यौ के०) मरण थये ढते, मारनार जे व्याध ढे, ते (दुर्गतिं के०) दुर्गतिने (आप्तवान् के०) पामतो हवो, (च के०) वली (मृगया के०) ते मृगादिक मारवानी जे हिंसा ते (लोकद्वयात्यै के०) बेहु लोकनेविषे दुःख दायी ढे अर्थात् हिंसा करवाथी आ लोकमां मरणादि नय अने परलोकमां दुर्गति ए बेहु प्राप्त थाय ढे. (ततः के०) ते माटे (ततः के०) ते हिंसाथकी (गांगेयेन के०) नीष्मपितामहें (सः के०) (शांतनुक्षितिपतिः के०) शांतनुराजाने (तस्याः के०) ते मृगयाथ (निषिद्धः के०) निषेध कर्या अर्थात् मृगया करवाथकी विराम पमाड्यो.

हवे ते गांगेय शांतनुनी कथा कहे ढे, हस्तिनापुरमां कुरुवंशनेविषे शां तनु राजा अत्यंत मृगयाना व्यसनी हता, ते शांतनुराजायें वनमांहि सात नूमिनी श्वेत हवेलीमां रहेली जह्नु विद्याधरनी पुत्री गंगादेवी जेम कहे ते

वी रीते राजायें वर्त्तवुं एवी प्रतिज्ञा करीने ते गंगासाथे लग्न कर्युं,परणीने घेर आव्या पछी गंगायें शांतनु राजाने उपदेश करी मृगया रमवानुं व्यसन मूकाव्युं एकदा गंगाने गर्भ रह्यो त्यारें तेने धनुष्टंकारव करवाना तथा खड्ग धाराना मुखदर्शन करवा वगेरेना दोहद उत्पन्न थया,तदनंतर गांगेय नामा पुत्रनो जन्म थयो, पछी फरी पण शांतनु राजा मृगया व्यसनमां आसक्त थयो, त्यारें गंगायें तेने घणुंए समजाव्यो तो पण तेणें मान्युं नही अने मृगया रमवा गयो, तेथी परणती वखतें करेली प्रतिज्ञानो भंग थयो जाणीने गंगा पोताना पुत्र गांगेयने लइने पोताना पिताने घेर जती रही त्यां गांगेयना मामायें शस्त्रास्त्र विद्या सारीरीतें गांगेयने शीखवी, तेथी गांगेय सर्व कलामां उत्कृष्ट थयो, पछी जगत्मां लोकोयें केहेवा मांड्युं जे गंगा पोताना स्वामीने त्यागीने पीयरमां रहे छे तेवी निंदाना दुःखथी पोताना पुत्र गांगेयने लइने गंगा पाछी वनमां ते प्रासादनेंविषे जइने रही. पाछलथी शांतनु राजायें गंगा पोताने पियर तरफ जवाथी चोवीश वरस पर्यंत पोतें शोक कर्यो, केटला एक दिवसें जे वनमां गंगा पोताना गांगेय पुत्रनी साथें रहे छे तेज वननेविषे शांतनु राजा मृगया रमवा माटे आव्या, त्यां गांगेयें मृगया करता अटकाव्याथी गांगेयने अने शांतनु राजाने परस्पर महायुद्ध थयुं, ते युद्धमां गांगेयें शांतनुने जीत्या, पछी गंगाने युद्धनी खबर पडवाथी त्यां आवीने पोताना पति शांतनु राजाने कह्युं के आ तमारो पुत्र महाप्रतापी गांगेय छे. तेनी साथें तमें युद्धमां पराजय पाम्या, आ वात सांजली शांतनु राजा अत्यंत प्रसन्न थया, पछी गांगेयें शांतनु राजाने मृगया रमवाना निषेधनी प्रतिज्ञा करावी जे हवेथी तमारे कोइ वखत मृगया रमवा जवुं नहिं ॥ ११३ ॥

पापर्द्धौ तनुमद्वधोज्झितघृणः पुत्रेपि दुष्टाशय, श्वभ्रः
स्वांभ्रवपावकादपि मुधा कं कं न हन्याज्जडः ॥ किं
बाणेन जरासुतो वनगतो विव्याध नो बांधवं, प्रापो
श्चैर्मुनिघातपातकभरं किं नाजराजांगजः ॥ ११४ ॥

अर्थः–(पापर्द्धौ के०) हिंसाकर्म रूप ऋद्धिने विषे (तनुमद्धोज्झितघृणः के०) शरीरधारी प्राणीना वधनेविषे त्याग करी छे दया जेणे एवो

अने (चंमः के०) तीक्ष्ण छे मन जेनुं एवो प्राणी (पुत्रेपि के०) पुत्रने विषे पण (दुष्टाशयः के०) दुष्ट छे अंतः करण जेनुं एवो थाय छे, अर्थात् तेने पुत्रनी पण दया आवती नथी. जुवो (जडः के०) जड एवो इंद्र तें (खांमवपावकादपि के०) खांमववनने बाळवा मुकेला अग्नि थकी पण (कंकं के०) कया कया प्राणीने (मुधा के०) विनापराध (न हन्यात् के०) नहण तो हवो अर्थात् घणा प्राणीने इंद्रे हण्या, वळी (वनगतः के०) वनने विषे गयेलो एवो (जरासुतः के०) जरा पुत्र ते (बाणेन के०) बाणें करी (किं के०) शुं (बांधवं के०) पोताना श्रीकृष्ण बांधवने (नो विव्याध के०) न मारतो हवो ना मारतोज हवो, अने (अजराजांगजः के०) अजराजानो पुत्र दशरथराजा (उच्चैः के०) अत्यंत पणे (मुनिघातपातकभरं के०) मुनिघातना पातकभारने (किं के०) न पामतो हवो ना मुनिघातना पापभारने प्राप्त थयोज माटे हिंसा सर्वथा करवी नहिं॥ ११४॥

आश्लोकमां त्रण दृष्टांत छे तेमां प्रथम खांमव वननी कथा कहे छे. जनमेजय राजायें यज्ञविषे अत्यंत घृत होमवा थकी अग्निने एटली तृप्ते थइ के जेणे करी अग्निने अजीर्ण थयुं, पछी कोइना यज्ञमां घृतदाह थाय नहिं त्यारें सर्वेने विचार थयो जे हवे आपणे शुं करवुं ? पछी इंद्रे वायुने सहाय करीने अग्निने खांमव वन हतुं तेमां मोकल्यो तेथी ते अग्नियें खांमव वन सजीव हतुं ते भस्मीभूत करी नाख्युं, अने अग्निने अजीर्ण रोग हतो, तेनो नाश कर्यो, आ कथा लौकिक शास्त्रगत होवाथी असंबद्ध जेवी छे. तो पण इहां दृष्टांतमां लीधी छे एम जाणवुं.

वळी बीजा जराकुमारनी कथा कहे छे. एकदिवस श्रीकृष्णे नेमीश्वर भगवानने पूछ्युं के मारुं मृत्यु केवी रीतें थाशे ? त्यारें भगवाने कह्युं के जराकुमारना हाथथी तमारुं मरण थशे ? ए वचन सांभळीने जराकुमारें जाण्युं जे हुं आंहिं रहीश तो महारे हाथें कदाच महारा भाइनो नाश थाशे एम पोताना भाइ श्रीकृष्णनी भक्तियें करी वनमां जतो रह्यो पछी द्वैपायन नामा असुरें ज्यारे द्वारिका भस्म करी नाखी तेवारें बळदेव अने श्रीकृष्ण भमता भमता ते वनमां गया, त्यां श्रीकृष्णने तरष लागवाथी पाणी भरवा बळदेव कोइ जळाशय प्रत्यें गया पाछळ श्रीकृष्ण पीतांबर उंढी एक झाडतळे सुइ गया, त्यां फरतो फरतो ते जराकुमार आव्यो, तेणे छे

टेथी पीतांबर उढेलुं तथा पादतलमां पद्मनुं चिन्ह जोवाथी जराकुमारने आ मृगलो ठे एवी भ्रांति थइ, तेथी तेनो शिकार करवा तेणें जोरथी बाण मूक्यो, जेथी श्रीकृष्ण मरण पाम्या ॥ २ ॥

हवे दशरथराजानी कथा कहे ठे. अयोध्या नगरीमां दशरथ राजा राज्य करे ठे. एकदिवस ते राजा वनमां क्रीडा करवा गयो, त्यां वारिली लायें करी विलास करतो एवो हस्तीनो शब्द सांजल्यो, त्यारे दशरथ राजायें तदनुसारें बाण मास्यो, ते बाणथी पाणीनो घटन्नरतो एक मुनिपुत्र मरण पाम्यो. तेवारें हातात एवो शब्द करी ते मुनि धरतीयें पड्यो, तेवामां ते दशरथराजा त्यां जुवे, तो बाणविद्ध थयेला मुनिपुत्रने जोयो, एटलामां ते मुनिपुत्रनां माता पिता पण त्यां आव्यां, तेणे शरविद्ध थइ मरण पामेला पोताना पुत्रने जोइने घणोज शोक कस्यो, राजा विलखो थइ ते वृद्ध माता पिताना पगमां पड्यो, त्यारे ते बेहु वृद्धें कह्युं जे अमो जेम पुत्रवियोगें मरण पामीयें ठैयें तेम तुं पण पुत्रवियोगें मरण पामीश ? एवो राजाने शाप दइ ते बेहु वृद्धमरण पाम्यां,अने तेमज दशरथराजानुंपण पुत्रवियोगें मरण थयुं माटे हिंसा थकी डुःख प्राप्त थया विना रहेतुं नथी ॥ ११४ ॥

चौरोडुःखमुपैतिनारकसमंसत्योपितत्सऽन्निधेः,शुष्के प्रज्ज्वलिते हि सार्द्रमपि किं नो वह्निना दह्यते ॥ संघोल्लुंटनसद्यदग्धचरटग्रामेऽग्नितप्तप्रजा,मध्योत्पत्तिन्नवे समं सगरजैः किं किं न लेन्ने तथा ॥११५॥

अर्थः—(चौरः के०) चोर (हि के०) निश्चें (नारकसमं के०) नारकीसमान, (डुःखं के०) डुःखने (उपैति के०) पामें ठे, ते चोर तो पामे परंतु (सत्योऽपि के०) चौर्यकर्म रहित एवो साचो पुरुष पण (तत्सन्निधेः के०) ते चोरना सहवास थकी डुःखने पामे ठे केनी पेरें ? तो के (शुष्के के०) सुकुं एवुं काष्ट (प्रज्ज्वलिते के०) सलगे ठते तेनी साथें रहेलुं एवुं (सार्द्रमपि के०) लीलुं काष्ट पण (किं के०) शुं (वह्निना के०) अग्नि जे ठे, तेणे करी (नोदह्यते के०) नथी बलतुं ना बलेज ठे. तेम चोरनी साथे रहेवाथी सारो मनुष्य पण डुःख पामे ठे. वली जुवो (संघोल्लुंटन के०) संघना लुंटवामां (सद्य के०) सज्जीन्नूत थया एटलामाटेज (दग्धचरट

ग्रामे के०) बालेला बे चोर जेमां एवा ग्राममां (अग्नितप्तप्रजामध्योत्प त्तिजवे के०) ते चोरोनी मध्ये अग्नीथी तपीने प्रजा लोक पण बली गया ते शाठहजार चोरानी उत्पत्ति केटलाएक जवें (सगरजैः समं के०) सग रराजाना पुत्रे पणे सर्वेनी साथेंज थइ. माटे (तथा के०) ते प्रकारें (किं किं के०) शुं शुं (नलेन्ने के०) जीव न पामे ॥ ११५ ॥

आंहिं सगरराजाना पुत्रोनी कथा कहे बे. महाडुर्गस्थपल्लीने विषे शा ठ हजार चोर रहेता अने जलालोकपण रहेता हता एकदा त्यांथी श्रीज रतचक्रवर्त्तिनुं संघ चाल्यो जतो हतो तेने लूंटवाने चोर तैयार थया तेवा त जरतराजायें जाणी तेवारें त्यां आवीने पल्लीनुं द्वार बंध कर्युं तेवारें स र्वेचोरो अग्नीथी जली गया तेनी साथें त्यां रहेनारा साधुलोकोपण बली गया. शाठहजार चोर घणा जव ज्रमण करीने सगरचक्रवर्त्तिना पुत्र थया. एक दिवस ते रत्नदंमकें करी अष्टापदपर्वतने परिखा करवा तत्पर थया,तेने देवताउयें वार्या तो पण ते अष्टापद उपर गंगानदीना जलने लावता एवा ते साठे हजार पुत्रोने अग्निकुमार देवतायें बाली जस्मीजूत करी दीधा.

चौर्यं स्वेन च वर्णकेन च कृतं मूढाडुरंतं जवे, राज्ञा मं
न्फिकशालकोऽपि न हतः किं मूलदेवेन सः ॥ किं
चैत त्रिजगत्प्रियोऽपि मदनस्तच्चित्तचौर्योद्यतः, शापं
प्राप न किं प्रजापतिगिरा दाहं च रौद्राग्निना ॥ ११६ ॥

अर्थः–(स्वेन के०) पोताना (वर्णकेन के०) पोतानी जाति वाला संबंधीए पण (चौर्यं के०) चौर्य, (कृतं के०) कर्युं (मूढाः के०) हे मूढ जनो ! (जवे के०) जवने विषे (मूलदेवेन के०) मूलदेव नामा (राज्ञा के०) राजायें (सः के०) ते प्रसिद्ध एवो (मंन्फिकशालकोपिके०) चोरी करनारो मंन्फिक नामा पोतानो शालक (किं के०) शुं (न हतः के०) न मार्यो. ना मार्योज (च के०) वली (एतत्त्रिजगत्प्रियोऽपि के०) आ त्रण जग तने वहालो एवो पण (च के०) अने (तच्चित्तचौर्योद्यतः के०) तेना चित्तने चो रवामां उद्युक्त एवो (मदनः के०) कामदेव, (प्रजापतिगिरा के०) ब्रह्मा नी वाणीथी (डुरंतं के०) डुरंत एवा (शापं के०) शापने (किं के०) शुं (न प्राप के०) न पामतो हवो ? वली कामदेवें ब्रह्मानुं मन हरण क

छुं तेथी ब्रह्माने पोतानी दीकरी सरस्वतीनी उपर कुदृष्टि थइ पछी कोइकें कह्युं कें आ शुं ? अकार्य करवा इछो छो ! त्यारें ब्रह्मायें जाण्युं जे आ सर्व अनंग एटले कामदेवनोज रंग छे. पछी कामने शाप आप्यो (च के०) वली (रौद्राग्निना के०) शंकरना त्रीजा लोचनमांथी निकलेला एवा अग्नियें करी (दाहं के०) दाहने शुं कामदेव न पाम्यो ? ना दाहने पण पाम्योज॥११६॥

आंहिं मूलदेव तथा कंदर्पनी कथामां प्रथम मूलदेवनी कथा कहे छे. रत्नपुर नगरने विषे मूलदेव राजा राज्य करे छे, तेनो मंफिक नामा शालो हतो,ते पोताना बनेवीना घरमांथी सर्व पदार्थो लइने सुख भोगवतो हतो, एम करतां पूर्वकृतकर्मोदयथी तेने जुगारना व्यसनमां मन थयुं, ते जुगार रमतां रमतां अनुक्रमें घर वगेरे सर्वस्व हारी गयो, पछी द्रव्यहीनताने लीधे अत्यंत दुःखी थवाथी नगरमां चोरी करवा लाग्यो, नगरनां लोकों यें मूलदेव राजानी पासे आवी फरीयादि करी, के आ तमारो सालो गाम मां चोरी बहुज करे छे, ते सांभली राजायें तेने वार्यो के हवेथी तारे आ काम करवुं नहिं. आ वखत आ तारो अन्याय हुं सहन करुं छुं अने तुं म्हारो संबंधी होवाथी कांही पण शिक्षा तेने देतो नथी. वली केटलाए क दिवसें ते शालायें पोतानी बेनना घरमांज खातर पाड्युं, त्यारे गृहर क्षक शिपाइउयें तेने नाशी जतो जोइ पकडीने राजानी पासें आण्यो, न्या यवंत राजायें तेने शूलीयें चडाव्यो ते मरण पामीने दुर्गतियें गयो ॥११६॥

हवे कंदर्पनी कथा कहे छे एक दिवस ब्रह्मा ध्यान करता हता, त्यां कामदेव तेना ध्यानने भंग करवानो विचार करी ब्रह्माना मनमां पेठो, के तरत पोतानी पासें रमती एवी पोतानी दीकरी सरस्वतीने जोइने तेनी उपरज ब्रह्मानी सरागता थइ, त्यारें सहुयें जोइने कह्युं के आ तो धर्मलोप थाय छे अने घणोज अनर्थ थाय छे ते वातनुं ब्रह्माने ज्ञान थवाथी मनमां विचार करवा लाग्या के आ ते शो गजब बन्यो ! जूउ आ कामदेवज आवा अधर्ममां मुने उतारवा तत्पर थाय छे एम जाणी पछवाडे जुवे छे तो त्यां कामदेवने नजरें जोयो त्यारें रोषयुक्त थइने ब्रह्मा बोल्या के हे पापी ! म हादेवना त्रीजा नेत्रना अग्निथकी तुं बलीने भस्मीभूत थइ जाइश ? एम ब्रह्मायें शाप आप्यो, के तरतज शंकरने काम उपर क्रोध आववाथी

छे. ए निद्रा करवानुं एकांत स्थल घणुंज सारुं छे ते सांजली ब्रह्मदत्त ते मां रह्यो रात्रिये मातायें ते घरने अग्नियें सलगाव्युं तेमांथी ब्रह्मदत्त, मंत्रीनी शिक्षाथी सुरंगने मार्गे निकली गयो. ते पृथ्वीमां फरतां फरतां अनुक्रमे त्रणखंमनुं राज्य प्राप्त करी पाछो पोताने गाम आवतो सांजल्यो के तुरत तेनी माता चुलणी आर्या थइ गइ. अने दीर्घराजाने चक्रवर्त्ति ब्रह्मदत्तें अनेक कदर्थनाथी मारी नाख्यो ॥

हवे चंद्रनी कथा कहे छे. एकदिवस बृहस्पतिनी जार्या तारानामे घणीज स्वरूपवती हती तेने जोइ चंद्रमा तेना जोग माटे आव्यो, कह्युं छे के ॥ विकलयति कलाकुशलं, हसति शुचिं पंमितं विडंबयति ॥ अधीरयति धीरनरं, क्षणेन मकरध्वजोदेवः ॥ १ ॥ जावार्थः—कामदेव छे ते, एक क्षणमां कलाकुशल पुरुषने विकल करे छे, क्षणमां पवित्रने हसे छे, क्षणमां पंमितने विडंबन करे छे. क्षणमां धीर पुरुषने अधीर करे छे. एवो ए कामदेव छे. हवे पोतानीस्त्री तारा तेनी साथें असमंजस कर्म करता चंद्रने जोइने बृहस्पतिये शाप आप्यो, के हे पापी ! तुं लांछन सहित था. तथा वली ताहरे कोइदिवस आहिं आववुं नहिं. एम तिरस्कार कर्यो ॥ ११७ ॥

सुजूमजमदग्निजप्रतिमपुंद्रुमाघर्षजे, कषायदवपावकेवि
षयवात्यया दीपिते ॥ महद्गुणवनं दहत्यहह पुण्य कल्प
द्रुम,स्ततोस्तियदिदैवतःशमघनाघनोवर्षति ॥ ११ए ॥

अर्थः—(सुजूमजमदग्निजप्रतिमपुंद्रुमाघर्षजे के०) सुजूम राजा अने जमदग्नि पुत्र परशुराम तेना सरखा पुरुषरूप ऊाडना घसावाथकी उत्पन्न थये लो एवो अने (विषयवात्यया दीपिते के०) विषयरूप विंटोलीया वायुयेंकरी प्रदीप्त एवो (कषायदवपावके के०) कषायरूप दावाग्निनेविषे (महद्गुणवनं के०) मोहोटा गुणरूप वन (अहहदहति के०) अरेरे बली जाय छे. (ततः के०) त्यार पछी पुण्यकल्पद्रुमउपर दवाग्नि लागे छे त्यारें (पुण्यकल्पद्रुमः के०) पुण्यरूप कल्पद्रुम जे छे, ते (यदि के०) जो (दैवतः के०) जाग्यथकी (शमघनाघनः के०) शमरूप मेघ (वर्षति के०) वरसे छे, तो ते कल्पद्रुम (अस्ति के०) त्यां रहे छे, अर्थात् दाह थतो नथी एम जाणवुं ॥

आंहिं सुजूमचक्रवर्त्ति तथा परशुरामनी कथा कहे छे. एक वननें विषे

कोटने नांगीने पछी नलकुबरनी पट्टराणीने रावण कहेवा लाग्यो के तुं मा री विद्या गुरु थइ माटे हे स्त्रि! हुं तुने इछतो नथी. एम कही पछी नलकूबर राजाने रावणे कह्युं के आ मारी विद्यागुरुस्थाने छे माटे महारी नगिनी थइ एने तुं पट्टराणी करी राख्य,वली कालेंकरी दशरथ राजाना पुत्र श्रीराम चंद्र वनवास गया त्यां दंमकाऽरण्यमां रह्या हता,तेवामां श्रीरामचंद्रनी सी ताने माटे सिंहनादादि उपायो विकूर्वीने रावणें सीतानुं हरण कर्युं ॥११७॥

मूढः परस्त्रियमुपेत्य कुवाक्यबंध,घातापकीर्त्तिमृतिडुर्गति
डुःखपात्रम् ॥ स्याद्ब्रह्मराजचुलणीरतदीर्घवत्किं, लक्ष्म
क्षयादिव विधोर्गुरुतल्पगस्य ॥ परस्त्रीद्वारं ॥ ११७ ॥

अर्थ—:(मूढः के०) मूढ पुरुष, (परस्त्रियं के०) परस्त्रीने (उपेत्य के०) प्राप्त थइने (कुवाक्य के०) डुर्यश, (बंध के०) रोधनादि, (घात के०) लकुटादिनुं ताडन, (अपकीर्त्ति के०) अपकीर्त्ति, (मृति के०) मरण (डुर्गति के०) डुर्गति, इत्यादि (डुःखपात्रं के०) डुखनुं पात्र, (स्यात् के०) होय, केनी पेठें (ब्रह्मराजचुलणीरतदीर्घवत् के०) ब्रह्मराजानी चूलणी नामा स्त्रीनेविषे आसक्त एवा दीर्घराजानी पेठे थाय छे, (गुरुतल्पगस्य के०) बृहस्पतिनी स्त्रीसाथे व्यनिचारने करता एवा (विधोः के०) चंद्र माने (लक्ष्मक्षयादिव के०) कलानाक्षयथकी जेम डुःख (किं के०) शुं नहिं? थयुं ना थयुंज ॥ ११७ ॥

आ श्लोकमां दीर्घ नृपनो तथा चंद्रमानो दृष्टांत होवाथी प्रथम दीर्घ नृपनी कथा कहे छे. कांपिल्यपुरने विषे ब्रह्मराजा राज्य करे छे, तेनी चु लणी नामें स्त्री हती, ते ब्रह्मराजा मरण पाम्यो तेवारें तेनो पुत्र ब्रह्मद त्त चक्रीहतो ते घणोज नानो हतो,चुलणी दीर्घराजानी साथे विषय नोग ववा लागी एकदिवस पुत्र अने माता बेहु बेगं छे तेवामां एक हंसी ह ती ते कागडानी साथें रति सुख करती नजरें पडी ते जोइने तेज वखतें ते ब्रह्मदत्तें पोतानी माताने देखतां ते हंसीने मारी नाखी, ते जोइ चिह्न णीयें जाण्युं जे आ पुत्रे मने शिक्षा आपवा माटे आ काम कर्युं जणाय छे अने मारुं चरित्र पण आ पुत्रे जाण्युं छे, तेथी लाखनुं घर करी उपर धोलाव्युं अने पुत्रनें कह्युं के हे पुत्र! आ घरमां ताहरी स्त्री सहित तुं र

हे. ए निद्रा करवानुं एकांत स्थल घणुंज सारुं छे ते सांजली ब्रह्मदत्त तें मां रह्यो रात्रिये मातायें ते घरने अग्नियें सलगाव्युं तेमांथी ब्रह्मदत्त, मंत्रीनी शिक्षाथी सुरंगने मार्गे निकली गयो. ते पृथ्वीमां फरतां फरतां अनुक्रमे त्रणखंमनुं राज्य प्राप्त करी पाछो पोताने गाम आवतो सांजल्यो के तुरत तेनी माता चुलणी आर्या थइ गइ. अने दीर्घराजाने चक्रवर्त्ति ब्रह्मदत्तें अनेक कदर्थनाथी मारी नाख्यो ॥

हवे चंद्रनी कथा कहे छे. एकदिवस बृहस्पतिनी नार्या तारानामे घणीज स्वरूपवती हती तेने जोइ चंद्रमा तेना जोग माटे आव्यो, कह्युं छे के ॥ विकलयति कलाकुशलं, हसति शुचिं पंमितं विडंबयति ॥ अधीरयति धीरनरं, क्षणेन मकरध्वजोदेवः ॥ १ ॥ जावार्थः—कामदेव छे ते, एक क्षणमां कलाकुशल पुरुषने विकल करे छे, क्षणमां पवित्रने हसे छे, क्षणमां पंमितने विडंबन करे छे. क्षणमां धीर पुरुषने अधीर करे छे. एवो ए कामदेव छे. हवे पोतानीस्त्री तारा तेनी साथें असमंजस कर्म करता चंद्रने जोइने बृहस्पतिये शाप आप्यो, के हे पापी ! तुं लांछन सहित था. तथा वली ताहरे कोइदिवस आहिं आववुं नहिं. एम तिरस्कार कर्यो ॥ ११८ ॥

सुनूमजमदग्निजप्रतिमपुंद्रुमाघर्षजे, कषायदवपावकेवि
षयवात्यया दीपिते ॥ मदक्षुणवनं दहत्यदह पुण्य कल्प
द्रुम, स्ततोस्तियदिदैवतःशमघनाघनोवर्षति ॥ ११ए ॥

अर्थः—(सुनूमजमदग्निजप्रतिमपुंद्रुमाघर्षजे के०) सुनूम राजा अने जमदग्नि पुत्र परशुराम तेना सरखा पुरुषरूप जाडना घसावाथकी उत्पन्न थयेलो एवो अने (विषयवात्यया दीपिते के०) विषयरूप विंटोलीया वायुयेंकरी प्रदीप्त एवो (कषायदवपावके के०) कषायरूप दावाग्निनेविषे (मदक्षुणवनं के०) मोहोटा गुणरूप वन (अदहदहति के०) अरेरे वली जाय छे. (ततः के०) त्यार पछी पुण्यकल्पद्रुमउपर दवाग्नि लागे छे त्यारें (पुण्यकल्पद्रुमः के०) पुण्यरूप कल्पद्रुम जे छे, ते (यदि के०) जो (दैवतः के०) जाग्य थकी (शमघनाघनः के०) शमरूप मेघ (वर्षति के०) वरसे छे, तो ते कल्पद्रुम (अस्ति के०) त्यां रहे छे, अर्थात् दाह थतो नथी एम जाणवुं ॥

आहिं सुनूमचक्रवर्त्ति तथा परशुरामनी कथा कहे छे. एक वनने विषे

जमदग्नि ऋषि तप करता हता, त्यां तेणें एवुं सांभल्युं जे " अपुत्रस्य गतिर्नास्ति " आ वैदिक वाक्य सांभलीने ते जितशत्रु राजानी दीकरी रेणुकाने परण्या, तेने परशुराम नामा पुत्र थयो, रेणुका एकदिवस पोतानी बेनने मलवा गइ त्यां ते रेणुकाने तेना बनेवी कृतवीर्य राजायें भोगवी ते वातनी जमदग्नि ऋषिने खबर पडवाथी तेणे पोताना पुत्रने कह्युं के हे पुत्र ! आ ताहारी डुष्टाचरणी माताने तुं मारी नाख्य, ते वात सांभलतांज परशुरामे तरत पोताना कुहारेंकरी पोतानी मातानुं शिर कापी नाख्युं आ वात जाणीने जमदग्निने कृतवीर्य राजायें मारी नाख्यो, वली परशुरामें पोताना बापने मारनार कृतवीर्यने माखो तेवारें कृतवीर्य राजानी स्त्री सगर्भा हती ते नाशिने तापसना आश्रममां गइ. त्यां तेने पुत्र थयो, तेनुं सुभूम एवुं नाम पाडयुं. ज्यारे ते यौवन वयने प्राप्त थयो त्यारे सर्व पोतानुं वृत्तांत माताना मुखथी सांभली सुभूमचक्री कांपिल्यपुरमां आव्यो, तेनी दृष्टिमां क्षत्रियोनी दाढाउ ते स्थलने विषे रहेली हती ते परम अन्नरूप थती हवी त्यां सुभूमने मारवाने माटें परशुराम आव्या,पछी सुभूमना भाग्ययोगें करी ते स्थलचक्ररूप थइ गयुं, ते चक्रें करी सुभूमें परशुरामनुं शिरछेदन करी नाख्युं, पूर्वें परशुरामें सात वार निःक्षत्री पृथ्वी करी हती तेवार पछी सुभूम राजा एकवीश वार निर्ब्राह्मणी पृथ्वी करी नरकें गयो माटे कषायनो त्याग करवो ए सर्व सुज्ञ संमत छे ॥ ११ए ॥

जीवाः कषायविवशान विचारयंति, चाणाक्यवत्कि
मपि कृत्यमकृत्यमत्र ॥ कल्पांतवात विततिक्षुभित
स्य पूर्ण,रोदोंऽतरस्य जलधेर्ननु कोविवेकः ॥१२०॥

अर्थः–(कषायविवशाः के०) कषायथी विवश एवा (जीवाः के०) जीवो, (चाणाक्यवत् के०) चाणाक्यनी पेठें (किमपि के०) कांही पण (अत्र के०) आहिं (कृत्यं के०) कृत्यने अने (अकृत्यं के०) अकृत्यने (न विचारयंति के०) विचार करता नथी. (कल्पांतवातविततिक्षुभितस्य के०) कल्पांत कालनो जे पवन तेनो जे विस्तार तेणें करी क्षुभित एवो अने (पूर्णरोदोंऽतरस्य के०) पूर्ण छे पृथ्वी आकाशनो अंतर जेनेविषे एवा (जलधेः के०) समुद्रने (किं के०) शुं (विवेकः के०) विवेक होय?

अर्थात् न होय तेम कषायविवश जीवने पण विवेक न होय ॥ १२० ॥

आंहिं चाणाक्यनी कथा कहे छे. चणकग्रामने विषे चणीनामा विप्र तेनी चणेश्वरीनामें नार्या हती, तेने चतुरबुद्धि चाणाक्यनामा पुत्र थयो, एकदिवस कांइक प्रार्थना करवा माटे नंदराजाना दरबारमां ते चाणाक्य आव्यो, त्यां सनामां सोनानो सिंहासन जोइने तेनी उपर बेंगो, एट लामां नंदराजा जमीने सनामां आव्यो, तेणे चाणाक्यनें कह्युं जे हे चाणाक्य! तुं राज्यासन उपर केम बेगो? हवे तुं नीचें उतर एम सामवृत्तियें करी कह्युं, तो पण ते आसनथी उव्यो नहिं, तेजोइ राजानी पासें रहेनारा जनोयें तेनें सिंहासनथी गलोयो दइ नीचे पाडी नाख्यो, तेवारें क्रोधावेशित थयेंला चाणाक्यें राजानी समक्ष प्रतिज्ञा करी के जो हुं तारुं उन्मूलन न करुं तो हुं ब्राह्मणज नहिं. एम कही माथा उपरनी शिखा बांधी त्यांथी मयूरग्राममां गयो, त्यां क्षत्रीनी पुत्रीनो चंद्रपानदोहद पूर्यो, तेने चंद्रगुप्त नामा पुत्र थयो, तेने राज्यानिषेक करावी कटक लइने चाणाक्य पाडलीपुरमां गयो, त्यां परस्पर युद्ध थयुं, तेमां चंद्रगुप्त तथा चाणाक्य पराजय पामी नाशि गया, पछी वृद्धबुद्धिवाला पर्वत राजाने सखा करीने देशने छोडीने पाडलीपुरनेविषे जइने पछी नंदराजानो धर्मद्वारेंकरी नाश करीने चंद्रगुप्तने अने पर्वतराजाने नंदराजानी गादीपर बेसाख्या, अने मंत्रीनुं काम पोतें चाणाक्यें करवा मांड्युं पछी ॥ तुल्यार्थं तुल्यसामर्थ्यं, मर्मज्ञं व्यवसायिनं ॥ अर्द्धराज्यहरं मित्रं योन हन्यात्सहन्यते ॥ आ प्रकारनुं नीतिनुं वाक्य संनारी ते चाणाक्यें पर्वतने विषकन्यानुं पाणिग्रहण करावीने मारी नाख्यो. कह्युं छे केः—लुद्धा सकयतुरिया सुहिणो, विविसंवयंति कयकज्जा ॥ जह चंदगुत्तगुरुणा, पव्वइउ घाइउ राया ॥ १ ॥१२०॥

मिष्टान्नं भुंद्व हद्यं पिब जलमपि तान् षड्रसान् मा च रुं
ध्दि, कायक्लेशं त्यजांगं विमलयसुकरः क्रूरकुन्नर्षिणोक्तः ॥
मोक्षोपायोऽस्ति कोपं जय नज शिवजं शर्म साधो निबोध,
द्राक्षेक्षुक्षीरखंमप्रमृतिरसवलात्सन्निपातेऽप्यदुष्टम्॥१२१॥

अर्थः—(साधो के०) हे साधु! (निबोध के०) जाण ते शुं? जाण के (मिष्टान्नं के०) मिष्टान्न नोजनने (भुंद्व के०) जम, तथा (ह

र्यं के०) आनंद करनार एवा (जलमपि के०) जलने पण (पिब के०) पान कर, (च के०) वली (तान् के०) ते (षड्रसान् के०) ठ रसोने (मा रुंधि के०) म रोक्य अर्थात् षट्रसनुं आस्वादन कर अने (काय क्लेशं के०) कायक्लेशने (त्यज के०) त्याग कर तथा (अंगं के०) अंगने (विमलय के०) निर्मल कर. कदाच तुं कहीश के एवा उपदेश करवाथी मोक्ष तो सर्वथा थाय नहिं परंतु नारकीनां डुःख उत्पन्न थाय ठे. त्यां कहे ठे के ना एम नहिं (कूरकुंनर्षिणा के०) कूरगडुक्षिर्ये (मोक्षोपायः के०) मोक्षनो उपाय (सुकरः के०) रुडी रीते थाय एवो (उक्तः अस्ति के०) कहेलो ठे. ते कयो उपाय? तो के (कोपं के०) क्रोधने (जय के०) जीं त. जेथी (शिवजं के०) मोक्षथी थयेलां एवां (शर्म के०) सुखने (न ज के०) नज. अर्थात् सर्व विषयसुख नोगव अथवा चाहे तो न नोगव, पण कोप करीश नही तेवारेंज मोक्षसुखनी प्राप्ति थशे परंतु जो कोप क रीश अने बीजा विषयोनो नोग न करीश तो सुखी थाइश नहीं एम जा णजे. (डाक्षेक्षुक्षीरखंमप्रनृतिरसबलात् के०) डाक्षा, इक्षुरस डुध, खांम प्र मुख रसनां बल जे ठे ते (सन्निपातेऽपि के०) सन्निपात थयो होय,तेने विषे पण (अडुष्टं के०) अडुष्ट थाय ठे परंतु कोप जय ते महारसबल ठे वा स्ते सुबुद्धियें क्रोधनो त्याग करवो ॥ १२१ ॥

आंहिं कूरगडुनी कथा कहे ठे. सुरमणिपुरीने विषे श्रीकुंनराजा राज्य करे ठे. तेनो पुत्र ललितांग नामा हतो, एक दिवस गुरुनां वचन सांनली ने ललितांगें वैराग्य पामी दीक्षा ग्रहण करी. परंतु वेदनी कर्मना प्राबल्य थकी तेने क्षणेक्षणे नूख घणीज लागती हती,बहु कूर नोजन जमतो हतो तेथी तेनुं कूरगडु मुनि एवुं नाम सहुयें पाड्युं, एकदा पजोसणना दिवसें तेने नूख लागी, त्यारे जमवाने बेठो, तेने साथें रहेनारा साधुउयें क ह्युं के हे पापी ! आज पर्वने दिवसें पण तुं जमे ठे ? तो पण क्षमामंदिर मां रह्यो ठतो कांहीं पण बोल्या विना पोताना आत्मानी निंदा करवा ला ग्यो के अरे पापी आत्मा तुं आजनो दिवस पण नूख सहन करी शक्यो नहिं. एम आत्माने धिक्कारता तेने नोजन करतांज केवलज्ञान उत्पन्न थयुं. त्यां देवताउयें आवीने केवलज्ञाननो महोत्सव कस्यो, ते जोइ चार जण

साधु जे कूरगडूने जमती वखतें धिक्कार देता हता तेणें आवो कूरगडूनो महिमा जाणीने नमस्कार करी मिथ्या दुःष्कृत देता एवा ते चार क्षपकोने पण केवलज्ञान उत्पन्न थयुं ॥ एम कोपजय करनारने पण मोक्षसुख मले छे.

यदि शिवगतिरिष्टा सार्यमेतार्यवत्त,ज्जयरुषमुपसर्गे
ऽपीप्सिता दुर्गतिश्चेत् ॥ करडकुरडवत्तत्क्रोधमुच्चैर्वि
धेयः, सुरतरुकनकद्रोर्योमतस्तं भजस्व ॥ १७७ ॥

अर्थः—(यदि के०) जो (सा के०) ते प्रसिद्ध एवी (शिवगतिः के०) मोक्षगति (इष्टा के०) इच्छित होय (तत् के०) तो (आर्यमेतार्यवत् के०) मेतार्य मुनिनी पेठे (उपसर्गेऽपि के०) उपसर्गमां पण (रुषं के०) रोषने (जय के०) जींत्य,अर्थात् मोक्षनी इच्छा करतो होय तो मेतार्यनी पेठें रोष जय कर अने जो (दुर्गतिः के०) दुर्गति (इप्सिता चेत् के०) इच्छित होय,तो (करडकुरडवत् के०) करडकुरडनी पेठें (तत्क्रोधं के०) ते क्रोधने (उच्चैः र्विधेयः के०) उंची रीते अर्थात् अतिशयपणें करवो, ए वेमांथी हे भव्य जीव ! तुने गमे तेंने सेव. एटले (सुरतरुकनकद्रोः के०) कल्पवृक्ष अने धतुरो ए वेहुना वृक्ष छे, तेमध्यें (यः के०) जे (मतः के०) मनमां मानेलो होय, (तं के०) तेने (भजस्व के०) सेव. अर्थात् सुरतरु अने धत्तुरवृक्ष ए वेहु छे तेमां तुने गमे तेने सेव्य. कल्पवृक्ष समान रोषविजय जाणवो अने धत्तुरवृक्ष समान रोपनो अविजय जाणवो ॥ १२२ ॥

आंहिं मेतार्यनी तथा करडकुरडनी कथामां प्रथम मेतार्यमुनीश्वरनी कथा कहे छे. मेतार्यक्षपिनी उपर सुवर्णकारें उपसर्ग कस्यो, तो पण तेने क्रोध चड्यो नही अने कुरड महाकुरड नामना वेमुनीश्वरो हता, तेमणे क्रोध कस्यो तेथी ते वेहुजण दुर्गतिने प्राप्त थया ते कहे छे. श्रीवत्सा नगरीनेविषे बंधुदत्त नामा श्रेष्ठी रहे छे, तेनो मित्र यज्ञदत्त ब्राह्मण हतो, ते पण बंधुदत्तना संसर्गथी जैनधर्मी थइ गयो, ते वेहुजणायें गुरुनी वाणी सांभलीने दीक्षा ग्रहण करी. तेमां ब्राह्मणक्षपियें तो पोताना ब्राह्मणकुलनो मद करवा मांम्यो, साधुउने कहे के शूद्रना घरनुं जे अन्न तमे ल्योछो? ते ठीक नथी करता तेमज पारकी निंदा पण करवा लाग्यो पछी ते वेहु मित्र मरीने स्वर्गमां देवता थया, तेमां यज्ञदत्तनो जीव देवगतिथी चवीने रा

जगृहने विषे चांमालकुलमां उत्पन्न थयो, तिहां धनश्रेष्ठीनी स्त्रीने पुत्र न होवाथी ते ज्यारें गर्भवती थइ त्यारे प्रसवती वखतें ते चांमालणी पासेंथी पुत्रलइने पोताने आवेली दीकरी तेने आपी दीधी पछी आ मारो पुत्र छे एम खोटी वात चलावीने तेनुं पोषण करवा मांम्युं. नगरमां ते वातने को इयें जाणी नही. ते पुत्रनुं नाम मेतार्य एवुं पाड्युं. ज्यारें ते पुत्र युवान थयो त्यारें पितायें तेने आठ कन्याउं सारा घरनी परणावी. देवता प्रयोगें करी श्रेणिकराजानी दीकरी तिलकसुंदरीने पण परण्यो तेनी साथें घणां वर्षपर्यंत सुख जोगवीने पछी देवतायें प्रतिबोध करवाथी श्रीवीर पासें दीक्षा ग्रहण करी. एकदा निक्षाने माटे कोइ सुवर्णकारना घर प्रत्यें गया. ते सोनीना घरनेविषे सोनाना यव हता ते क्रौंचपक्षीयें नक्षण कर्या, पछी स्वर्णकार घरथी बाहेर आवी जुवे तो यव दीठा नहिं, त्यारें तेणे जाण्युं, माहरा यवो निश्चें आ साधुयें ग्रहण कर्या ने. एमां संदेह नहिं. पछी कोपाय मान थइ मुनिनें मस्तकें बाधरी वींटी गलापाश दइ मारी नाख्या, मेतार्य रुषि केवल पामी मोक्षे गया क्रोधजयनुं फल सोनीनें मल्युं ॥

हवे कुरड महा कुरडनी कथा कहे छे. कुणाला नगरीनेविषे खाला नी समीप कुरड अने महाकुरड नामना बेहु रुषियो कायोत्सर्गमां उ ना हता, तेना महिमाथी ते साधुने जलोपसर्ग म थाउ एवा अभिप्राय थी त्यां मेघ वरसतो नथी. ते जोइ गाममा रहेनारा मिथ्यादृष्टि लोको आवी रुषिने कहेवा लाग्या के तमारा बे जणना तपथी गाममां वृष्टि थाती नथी आ अरिष्ट तमारा बे जणथी सर्व लोकोने थाय छे एम कही कहीने उपसर्ग करवा लाग्या, तेथी ते बेहु मुनिनो कायोत्सर्ग जंग थयो, त्यारे बेहु मुनिने क्रोध उत्पन्न थयो, अने कष्टेंकरी तेणे आ श्लोक कह्यो, ते जेम के, वर्ष मेघ कुणालायां, दिनानि दश पंच च ॥ मुशलप्रमाणधारानि, यथा रात्रौ तथा दिवा ॥१॥ एम कह्युं के तुरत मुशल धारायें मेघ वरसवा लाग्यो, जलें करी नगर सर्व पलाली नाख्युं आखा नगरने उपाडीने वरसादें समुद्रमां नाखी दीधुं, अने बेहु रुषि वृष्टिये करी निंजाइ गया, पछी ते बेहुजण मरीने नरकने प्राप्त थया, ए क्रोध करवाथी तेने कायोत्सर्गनुं फ ल न मलतां नरक गमन थयुं माटे क्रोध सर्वथा करवो नहिं ॥ १२१ ॥

मानी तपःश्रुतशमव्रतधर्महीनः, स्यान्नंदिषेण इ
व पण्यवधूपहासे ॥ किं तारकः कमलनूवरदुर्धरो
ऽपि, नाकारि शंभुशिशुना हतसर्वगर्वः ॥१२३ ॥

अर्थः– (मानी के०) जे अभिमानी मनुष्य होय, ते (तपःश्रुतशम व्रतधर्महीनः के०) तप, शास्त्राध्ययन, समता, व्रत, अने धर्म, ते थकी हीन (स्यात् के०) थाय छे. केनी पेठें ? तो के (पण्यवधूपहासे के०) वेश्यायें करेला उपहासने विषे (नंदिषेण इव के०) नंदिषेणमुनि जेम थयो तेम, एटले वेश्याये नंदिषेणमुनिनो उपहास कस्यो जे तमे धर्मलाभ कहो छो पण अमारे तो धनलाभ जोइयें आ सांभली रुषिने अभिमान आव्युं जे मारामां शुं धन आपी शकुं एवी शक्ति नथी ? एम विचारी तृणखलाना भंजनेकरी बारकोटि सोनामोरनी वृष्टि करी. तेथी तप अने शास्त्राध्ययन, समता तथा व्रत अने धर्म ते थकी भ्रष्ट थयो. आ नंदिषेण मुनि श्रेणिक राजानो पुत्र हतो, वली (कमलभूवरदुर्धरोऽपि के०) ब्रह्माना वरदानथकी दुर्धर एवो पण (तारकः के०) तारकासुर दैत्य (हतसर्वगर्वः के०) हस्यो छे सर्वगर्व जेनो एवो (शंभुशिशुना के०) शिवपुत्र जे कार्त्तिक स्वामी तेणे (न अकारि किं के०) शुं अभिमानथी हीन न कस्यो॥१२३॥

आ श्लोकमां नंदिषेण तथा कार्त्तिक स्वामिनो दृष्टांत होवाथी तेमां प्रथम नंदिषेणनी कथा कहे छे. राजगृही नगरीमां श्रीश्रेणिकराजानो पुत्र नंदिषेण हतो, ते श्रीवीरभगवाननी वाणी सांभली वैराग्य पामीने दीक्षा लेवा उजमाल थयो तेने भगवानें कह्युं जे हजी तारें भोगावली कर्मनो उदय छे माटे तुं हाल दीक्षा लेवी रहेवा दे, तो पण रह्यो नही शूरपणायें करी तप तपतां तेने अनेक प्रकारनी लब्धिउ प्राप्त थइ, एम करतां बारवरसने अंते भोग्य कर्मनो उदय आव्यो, तेवारें ते मुनि विहार करतां अजाण्यां कोइ वेश्याने घेर गया, त्यां साधुनी रीत प्रमाणे धर्मलाभ दीधो, त्यारे वेश्यायें कह्युं के, आहिं अमारे तो धनलाभ जोइयें छियें, एम मशकरी करी. तेवारें मुनियें मनमां विचास्युं जे शुं मारे धननी खोट छे. एम अभिमान लावी, घांसनी सली लइ तेना झीणा झीणा कटका करीने उपर उछाल्या, अने कहेवा लाग्यो जे आथी धनवृष्टि थाउ, एवुं बो

लतांज तपना प्रभावथी जेने सर्व लब्धि प्राप्त थइ ने एवा कृपिनां वाक्य थी आकाशमांथी बारकोटी सुवर्णनी वृष्टि थइ,वेश्याना घरना आंगण मां सोनामोरोनो मोह्होटो ढगलो थइ गयो. पछी मुनि ज्यारें चाल्या, त्यारें ते वेश्यायें तेनो नेडो पकडी लीधो, अने पोतानुं द्रव्य जे वृष्टिथी आव्युं हतुं ते, मोह उत्पन्न थवाथी वेश्याने घेर रहीनें त्यां नोगव्युं. प्रतिदिन दश पुरुषने प्रतिबोध करीनें पछी नोजन करे एम बारवरस त्यां रहीनें उदय आवेलां नोग्य कर्म नोगवीने बारवर्षने अंते नवजणनें प्रतिबोध्या अने दशमो पुरुष कोइ न आव्यो तेवारें अंते वेश्यायें हास्यथी कह्युं के आजे दशमा तमेंज थाउ एवां वेश्यानां वचनथी प्रतिबोध पामीनें फ रीने पाछी प्रव्रज्या ग्रहण करी, मोक्षें गया.

हवे कार्त्तिक स्वामीनी कथा कहे छे. पूर्वे पृथ्वीनेंविषे प्रचंम एवा पो ताना हाथेकरी अखंम वैरिमंमल जेणे जीत्युं ने एवो अने सर्व कलाथी पूर्ण तथा ब्रह्मानी करेली सृष्टिमांहेला कोइथी जीताय नहि एवो तारक नामनो दैत्य हतो, ते पापियें अनेक तीर्थोनो तथा देवनी प्रतिमानो विध्वंस करी नाख्यो, तथा घणा लोको अने घणा गामनो नाश कर्यो ए प्रकारे ज्यारें म होटो उपद्रव थयो, त्यारें सर्व देवताउ एकठा थइने ध्यानमां बेठेला शंकर देव पासें गया,त्यां तारकासुरनो सर्व जुलम शिवजीनी पासे निवेदन कर्यो, शिवजीयें कह्युं बधुं सारुं थशे,तमो चिंता करशो नहिं थोडा वखतमां त मारा डुःखनो पार आवशे आम कही, देवोने विसर्जन कर्या पछी हेमा चल पर्वतनेविषे शिवजीयें पार्वती साथें महामैथुन कर्युं, तेथी कार्त्तिकस्व मी नामा पुत्र उत्पन्न थयो, ते जन्मथी ब्रह्मचारी रह्यो तेणे तारक दैत्यनें मार्यो अने सर्व देवताउनुं डुःख निवृत्त कर्युं, माटे माननो त्याग करवो

स्वस्यापरस्य च बलान्यविचिंत्यमानः, शक्राभ्यमित्रचम रेंद्धवदापदे स्यात् ॥ शुक्रः कदाचिदिह चेत्तनुते प्रकाश,ले शं ततः स्थगयतींडुमहो महत्किं ॥ १५४॥ मानप्रक्रमः॥

अर्थः-(स्वस्य के०) पोताना (च के०) वली (अपरस्य के०) पर नां (बलानि के०) शक्त्यादिकने (अविचिंत्यमानः के०) न चिंतन करतो एवो छतो अनिमान करी महाबलवाननी साथे वैर करे, तो ते डुःखने

माटे थाय छे, केनी पेरें तो के (शक्राऽन्यमित्रचमरेंद्रवत् के०) सौधर्म सुरेंद्रनी पासें गयेला एवा चमरेंद्रनी पेठे (आपदे के०) आपदने माटे (स्यात् के०) होय. जुवो (शुक्रः के०) शुक्रनुं,तारो, (इह के०) आहिं (कदाचित् के०) क्यारेंक (प्रकाशलेशं के०) लेशमात्र प्रकाशने (तनुतेचेत् के०) विस्तारे छे खरो परंतु (ततः के०) तेथी (किं के०) शुं (महत् के०) मोहोटा एवा (इंदुमहः के०) चंद्रमाना तेजने (स्थगयति के०) ढांकी शके छे? ना ढांकी शकतो नथी. अर्थात् महोटा साथे अभिमान करवुं नहिं.

आंहिं चमरेंद्रनी कथा कहे छे. गजपुरमां पूरण नामें तपस्वी बहु वर्ष पर्यंत डुस्तर तप करतो हतो, तेना महिमायें करीने मरण पामी पाताल मां चमरचंचा राज्यधानीनेविषे नवीन चमरेंद्रपणे उपन्यो, तेणे एक दिवस अवधिज्ञानेंकरी पोताना मस्तक उपर सौधर्मेंद्रनुं सिंहासन जोयुं, तेथी तेंने प्रबल कोप उपन्यो तेवारे शक्रेंद्र साथे लडवा चाल्यो, तेने परिकर देवें वार्यो, तो पण मिथ्याभिमानना वशथकी स्वर्गमां गयो, त्यांजइ देवो मांहे महाकोलाहल कर्यो,इंद्रें अवधिज्ञान प्रयुंजी चमरेंद्रने आव्यो जाणी तेनी उपर पोतानुं वज्र मूक्युं ते वज्रने जोइने भय पामतो थको ते चमरेंद्र भ्रमरनुं रूप विकूर्वीने श्रीवीरभगवान काउसग्गे रह्या हता तेना पगनी नीचें पेसी गयो, वज्र पण भगवानने प्रदक्षिणा करीने पाछुं देवेंद्रना हाथमां आवी रह्युं, पछी परस्पर शक्रेंद्रें तथा चमरेंद्रें मिथ्या डुःकृत दीधुं अने क्लेश मट्यो, आमां पातालवासी देवो उपरला स्वर्गमां जाय नहिं अने चमरेंद्र गयो माटे ए अछेरुं थयुं ॥ इति मानप्रक्रमः ॥ १२४ ॥

माया डुर्गतये परत्र विपदे चास्मिन् भवे संभवेत्, श्री
वीरेण सुरोऽपि कैतवसखा कुब्जीकृतोमुष्टिना ॥ किं कर्ण
स्य न निष्फला युधि कला विप्रछलात्ताऽभवत्, किं श्री
शोनजगाम वामनतनुर्दैन्यं बलेर्बंधनम् ॥ १२५ ॥

अर्थः–(माया के०) माया छे ते (अस्मिन् के०) आ (भवे के०) भवने विषे (डुर्गतये के०) डुर्गतिने माटे (संभवेत् के०) संभवे, (च के०) तथा (परत्र के०) परलोकने विषे (विपदे के०) विपत्तिने माटे थाय छे. जुवो (श्रीवीरेण के०) श्रीवीरभगवाने (कैतवसखा के०) कपटथी थये

लो सखा एवो (सुरःअपि के०) देव पण (मुष्टिना के०) मुठियें करी (कुब्जीकृतः के०) कुब्ज करी नाख्यो. वली (कर्णस्य के०) कर्णराजानी (विप्रछलात्ता के०) ब्राह्मणनो वेश लइने छल करवाथी लीधेली (युधि कला के०) परशुरामनी पासेथी शीखेली युद्ध कला (किं के०) शुं (निष्फला के०) निष्फल (नअभवत् के०) न थइ ना थइज. अने (वामनतनुः के०) वामनरूप धारण करनारा एवा (श्रीशः के०) लक्ष्मीपति जे विष्णु ते, (बलेः के०) बलिराजाना (बंधनं के०) बंधनने अने (दैन्यं के०) दीनपणाने एटले भिक्षावृत्तिने (किं के०) शुं (न जगाम के०) न पामता हवा ॥ १२५ ॥

आ श्लोकमां वीर भगवाननो तथा कर्णराजानो तथा विष्णुनो दृष्टांत होवाथी प्रथम वीरभगवाननी कथा कहे छे. एक दिवस सौधर्मना अधिपतियें श्रीवीरकुमारना पराक्रमनुं आधिक्य वर्णव्युं,ते सांभलीने कोइक देव हतो ते इंद्रना वचनने न सहन करतो छतो मायायें करी बालकनुं रूप विकुर्वीने छोकरानी साथे क्रीडा करवा माटे आव्यो, तेमां एवी सरत करी के जे कोइ हारे, तो ते हारेलो जीतेलाने पोतानी पीठपर उचकीने अमुक स्थान पर्यंत लइ जाय. एम करवाथी श्रीवीरथी देवता हार्यो तेवारें ते वांको थइने बे हाथ तथा बेहु पग भोंय उपर राखीने रह्यो श्रीवीरभगवान् तेनी पीठपर चडती वेलाज ते देव सात ताड जेटलुं उंचुं रूप विकूर्वीने उंचो थयो तेने श्रीवीरभगवाने एक मुष्टि मारीने कुबडो करी दीधो, ते वखत श्रीवीरभगवाननुं नाम महावीर पाडयुं.

हवे कर्णनी कथा कहे छे. एक दिवस कर्णराजा कपटथी ब्राह्मणनुं रूप लइने परशुराम पासें युद्धविद्या शिखवा गयो कारण के परशुराम एक मात्र ब्राह्मण शिवाय बीजा कोइने शिखवता नहिं हता. पछी एक दिवस परशुराम कर्णराजाना उत्संगमां मस्तक मूकी सुइ गया, तेटलामां एक सर्प आव्यो ते कर्णनी जंघामां करड्यो तो पण जंघा उंची करी नहिं अने लोहनी नीक चाली .त्यारें परशुराम जाग्या अने पूछ्युं के ए आंहिं रुधिर क्यांथी चाल्युं. त्यारे कर्णराजायें सर्व वृत्तांत परशुरामने कह्युं ते सांभली परशुरामें जाण्युं जे आ कांही ब्राह्मण नथी परंतु क्षत्रियज छे कारण के क्षत्रिय विना एटलुं सहनशीलपणुं ब्राह्मणनुं होय नहिं के जेने सर्पदंश थवाथी लोइ चाल्युं परंतु जरा पण मनमां भय आव्युं नहिं माटे जरूर आ क्षत्रि

यज छे. एम जाणीने क्रोधायमान थइ शाप आप्यो के तुं क्षत्रिय छतां कपटथी ब्राह्मणनो वेश लइने विद्या शीख्यो तो जा तारी शिखेली विद्या सर्व व्यर्थ थाशे? पछी ते कर्णराजाने तेमज थयुं ॥

हवे श्रीपति विष्णुनी कथा कहे छे. बलीराजा करीने दैत्यपति महा दानशूर राजा हतो ते जे याचना करवा आवे तेने जे मागे ते आपे, एवो हतो, एक दिवस कपटथी विष्णुयें वामनरूप धारण करी बलि पासें जइ त्रण पगलां पृथ्वीनी याचना करी, त्यारें सत्यवादी दानशूर एवा बलिराजायें ते आपवुं कबूल कर्युं पछी तुरत विष्णुयें बे पगलायेंकरी आखी पृथ्वी उल्लंघन करीने फरीथी श्रीहरियें कह्युं के त्रीजा पगलामां शुं लहुं? त्यारें बलिराजा बोल्यो के माहरी पीठपर त्रीजो पग मूको, तेवारें त्रीजा पगलायें करी हरियें बलिराजाने पातालमां चांप्यो, पछी विष्णुयें प्रसन्न थइने कह्युं जे हे बलि! तुं घणोज सत्यवादी छो माटे कांही मारी पासें माग्य, त्यारे बलिराजा बोल्यो के मारा दरवाजामां द्वारपाल थइने तमो रहो, ते वात हरियें कबूल करी एम कपटरहित काम करवाथी बलिराजा सुखी थयो.

सर्वेऽप्येते कषायाः सदृशबलभृतः किंतु तीव्रैव माया,
जित्वा याऽऽषाढभूतिं नटमिव नटयामास गौरीव रुद्रम् ॥
स्त्रीत्वं स्त्रीलिंगभावादिव नृषु न ददौ मल्लिमुख्येषु या किं,
सत्यं दुर्दांतदैत्यं कपटसुरमणीरूपविष्णुर्जघान ॥ ७६ ॥

अर्थः—(एते के०) ए (सर्वे कषायाः अपि के०) चारे कषाय पण (सदृशबलभृतः के०) समान बलवाला छे, (किंतु के०) तो पण तेमां (तीव्रैव के०) तीव्र एवी (माया के०) माया छे. (या के०) जे माया (आषाढभूतिं के०) आषाढभूति मुनिने (जित्वा के०) जिंतीने (गौरी के०) पार्वतीपोतानी आगल (रुद्रंइव के०) रुद्रने जेम नचावती हती, तेम (नटमेव के०) नटनी पेरें (नटयामास के०) नचावती हवी. त्यां कवि उत्प्रेक्षा करे छे, के (स्त्रीलिंगभावात् के०) स्त्रीलिंगना भावथकी (नृषु के०) पुरुषोने विषे (स्त्रीत्वं के०) स्त्रीपणुं करवाने (इव के०) जाणे इछती होय नहिं? जुवो ते उत्प्रेक्षा सत्य छे ते जेम के (मल्लिमुख्येषु के०) मल्लिनाथ तीर्थंकर प्रमुखने विषे (या के०) जे माया स्त्रीपणाने (किं के०)

(न ददौ के०) न देतीहवी ना देतीहवी वली (सत्यं के०) सत्यवात छे जुवो (कपटसुरमणीरूपविष्णुः के०) कपटें करी रमणीय स्त्रीनुं रूप ले नारा विष्णु, (दुर्दांतदैत्यं के०) दुर्दांतनाम दैत्यने (जघान के०) मारता हवा, अर्थात् ज्यारें विष्णुयें कपटथी रमणिय स्त्रीनुं रूप ग्रहण कर्युं, त्यारे दुर्दांत दैत्यनो नाश थयो ॥ १२६ ॥

हवे आ श्लोकमां आषाढनूतिनो, मल्लिनाथनो, महेशनो तथा विष्णु नो, ए चार दृष्टांत होवाथी प्रथम आषाढनूति मुनिनि कथा कहे छे. एक गछमां आषाढनूतिनामा साधु नानाप्रकारनी लब्धिनुं पात्र हता, ते पुरु षमां शिरोमणि एवा कोइनटने घेर निक्षामाटे गया, ते नटनी एवी रीत छे के जे कोइ नवो निक्षुक आवे छे, तेने एक लाडु आपे छे, तेथी तेणे आषाढनूतिने एकलाडु आप्यो, पछी मुनि पाछो वली चिंतवे छे, के आ लाडु तो मारा गुरुनेंज पूर्ण थाशे, एम समजीने लब्धियें करी बीजुं रूप करीने वली याचना करवा गया, त्यारे बीजो मोदक मल्यो, आ प्रमाणे वली कपट करी ते त्रीजुं वृद्ध साधुनुं रूप कर्युं ते उपर बारीमां उनेला नटें जोयुं त्यारे नटें जाण्युं जे आ नानाप्रकारनां रूप करवां आ मुनिने आवडे छे,माटे जो आपणीपासें ए होयतो आपणो नटनो धंधो सारो चाले, अने द्रव्य घणुंज मले,पछी घरमां आवीने पोताना घरना माणसोने कह्युं के आ साधुने तमे लाडु आपशो नहिं अने पोतानी दीकरीने कह्युं के ए साधु आहिं आवे के तुरत तेने हाव,नाव, कटाक्षें करी संयमथी भ्रष्ट करवो. ते वात कन्यायें कबूल करी, पछी ते साधु ज्यारें वोहोरवा आव्यो, त्यारें तेनें हावनाव कटाक्षें करी कन्यायें फसावी दीधो तेथी ते मुनियें चारित्र छो डीने गृहस्थाश्रम अंगीकार कर्यो. अने नटनी साथें रह्यो, ते नटने आ षाढनूतियें कह्युं के जो तारे घेर मांस, मदिरा जोवामां आवशे, तो हुं र हीश नहिं. ते नटे कबूल करी पछी तेना सहायथी अनेक प्रकारना नाट क करी थोडा दाहाडामां ते नटें घणुंज द्रव्य उपार्जन कर्युं,एकदिवस पो तानी स्त्रीने मद्यें करी मदोन्मत्त जोइनें उत्पन्न थयो छे वैराग्य जेनें एवो छतो नरत राजानुं नाटक करतां करतां तेने केवलज्ञान उत्पन्न थयुं.

हवे बीजी मल्लीनाथनी कथा कहे छे. ज्यारें मल्लीनाथें पूर्वेनवमां दी क्षाग्रहण करी, त्यारे पोताना छ मित्रोने कहेवा लाग्या के माहरी साथें

सर्वेयें समान तप करवुं पण कोयें वधारे ठेवुं करवुं नहिं ते सहुयें कबू
ल कर्युं परंतु मल्लिनाथनो जीव कपट करी ज्यारें मासक्षपण व्रतनुं पा
रणुं आवे त्यारे बीजा मित्रोने कहे, माहरा पेटमां डुःखे ठे माटे हुं सर्व
था पारणुं करीश नहीं. एम कही वली बीजा मासक्षपण व्रतनो आरंभ
करे, एम पारणे पारणे कपटथी बीजा ठ साधु थकी अधिक तप करतां
तेणें तीर्थंकर नामकर्म उपार्जन कर्युं,परंतु कपटे तप करवाथी मल्लीनाथना
भवमां तेमने स्त्रीपणुं प्राप्त थयुं, त्यां तीर्थंकर थया तो पण स्त्रीपणुं तेमने
हतुं, पाणिग्रहणने अर्थें आवेला पोताना पूर्वभवना ठ मित्र जे राजाउ थ
या हता तेमने अशुचियें भरेली शालिभंजिका एटले मूर्त्तिमां भरेला अन्नना
दर्शनथी प्रतिबोध पमाड्या एम श्रीमल्लीनाथने कपटे करी स्त्रीपणुं प्राप्त थयुं॥

हवे महेशनी कथा कहे ठे. एकदिवस महादेवजी पोतानी स्त्री गंगा
अने पार्वतीनी पासें कहेवा लाग्या के हुं संसारमार्गथी उद्विग्न थइ गये
लो बुं. माटे हवेथी माहारे तमारी बेहुनी साथे कांइ काम नथी. हुं तो
हवे तपज करीश. एम कहीने शंकर कैलास प्रत्यें गया, त्यां ते पर्वत
नी गुफामां पद्मासन वालीने ध्यानमां बेठा, पार्वतीयें जाण्युं जे शिवजी
तपस्यामां बेठा ठे पण ते संसार उद्विग्न हुं बुं एम कही गया ठे, माटे
तेना तपनो हुं भंग करुं. एम धारीने पोतें भिलडीनो वेश धरीने त्यां जइ
शंकर पासें रहीने नाना प्रकारना हावभाव कटाक्ष करवा मांड्या, तेवारे
ध्यान मूकीने शिवजी ते भिलडीनी प्रार्थना करवा लाग्या के हे भद्रे! तुं
माहरी स्त्री था. त्यारे भिलडी बोली के माहरो स्वामी तो भिल ठे ते प
ठवाडे चाल्यो आवे ठे. माटे जो तेम हुं करुं तो ते भिल, मने अने तम
ने बेहुने शिक्षा आपे, त्यारें शिवजी कहेवा लाग्या के हे सुंदरि! में त्रिपु
रासुर जेवा लक्ष दैत्योने मारी नाख्या तो ताहरो स्वामी बीचारो शी
गणतीमां ठे? त्यारें भिलडी कहे ठे, जो एम होय तो तमो माहरी पा
सें नृत्य करो तो हुं तमारी स्त्री थाउं त्यारें ते भिलडीने वश पडेला महा
देवें नृत्य करवा मांड्युं ते जोइ पार्वतीने हास्य आव्युं त्यारें शिवजी स
मजी गया के आ तो पार्वती ठे एम जाणीने लज्जित थइ मनमां खेद पा
म्या जे अरे! आ शुं थयुं! हुं कहेतो हतो के हुं संसारथी विरक्त हुं अ
ने मने कपटें करी एणे ठल्यो तेथी हुं परवश थइ गयो एम समजी ल

ञ्जा पाम्या. एम मायाथी शंकर पण ठगाया माटे मायानो त्याग करवो.

हवे डुर्दांतदैत्यने विष्णुयें स्त्रीपणायें करी मोह कर्यो तेनी कथा कहे छे. डुर्दांत दैत्य हतो तेणे ब्रह्मानुं आराधन कर्युं, तेनी घणी भक्तियें ब्रह्मा संतुष्ट थया, अने ब्रह्मायें कह्युं के तुं वरदान माग्य. त्यारे दैत्यें कह्युं के मने अजेय करो. तेने ब्रह्मायें कह्युं के जेने माथे तुं हाथ मूकीश ते भस्मीभूत थइ जाशे तेवा वरदानथी प्रसन्न थयेलो एवो ते दैत्य जगतमां अन्याय करवाने तत्पर थयो, एक दिवस तेणे पार्वतीना ग्रहण माटे शिवजीनी प्रार्थना करी के मने तमारी स्त्री पार्वती आपो तेने शंकरें ना पाडी त्यारे ते शिवजीना मस्तक उपर हाथ मूकवा तैयार थयो तेजोइ शिवजी त्यांथी नाशिने विष्णुनी पासें आव्या, अने कहेवा लाग्या के हे प्रभु ! माहरी रक्षा करो तेने विष्णुयें कह्युं के तमे स्वस्थ थाउ भय राखोमां हुं तेने शिक्षा आपुं छुं. पछी विष्णु पोते पार्वतीनुं स्वरूप लइने दैत्यनी सन्मुख गया, दैत्य बोल्यो के तुं मारी भार्या थो मने तुं सुखी कर. त्यारे उमानुं रूप धारण करनारा विष्णु कहेवा लाग्या के माहरी पासें तहारा माथा उपर हाथ मूकी तुं नृत्य कर. तो हुं ताहरी स्त्री थाउं त्यारे ते माथा उपर हाथ मूकीने नृत्य करवा लाग्यो तेने श्रीकृष्णे कह्युं के तुं भस्म था तेथी तरत ते दैत्य भस्मीभूत थइ मरण पाम्यो ॥ १२६ ॥

लोभी तृप्यति नो धनैरपि धनैरिछन्नवं स्वं नवा, दृष्या
द्यः पितृकल्पितानुजपदं किंवार्षभिर्नाछिदत् ॥ अश्रां
तं सरितां शतैरपिभृतः किं वांबुधिः पूर्यते, किंवा शाम्य
ति काष्ठकोटिभिरपि ज्वालाकरालोऽनलः ॥ १७७ ॥

अर्थः—(लोभो के०) लोभी प्राणी (धनैरपि के०) घणा एवा पण (धनैः के०) धनें करी (नो तृप्यति के०) तृप्ति पामतो न ते केवो लोभी छे ? तो के (नवादपि के०) नवा एवा द्रव्य आववाथी पण वली (नवं स्वं के०) नवा धननी (इछन् के०) इछा करतो एवो छे. जुवो (आद्यः के०) आद्य (आर्षभिः के०) रूषभदेवजीनो पुत्र भरतचक्रवर्त्ती, (पितृकल्पितानुजपदं के०) पोताना पितायें आपेला एवा पोताना न्हाना भाईनां पदने (किंवा के०) शुं (नाछिदत् के०) नहिं छिनवी लेतो हवो ?

ते वात घटे छे जुवो (अश्रांतं के०) निरंतर (सरितां शतैः के०) नदिउ ना सेंकडाउयें करी (नृतःअपि के०) पूरायो छतो पण (अंबुधिः के०) समुद्र (किं के०) शुं (पूर्यते के०) पूराय छे? ना पूरातो नथी. वली (काष्ठकोटिभिरपि के०) करोडो काष्ठोयें करीनें पण (ज्वालाकरालः के०) ज्वालाए विकराल एवो (अनलः के०) अग्नि जे छे, ते (किंवा के०) शुं (शाम्यति के०) शांत थाय छे. ना शांत थातो नथीज ॥ १२७ ॥

आंहिं भरतचक्रवर्त्तिनी कथा कहे छे. विनितापुरीने विषे भरतचक्रवर्त्ति राजा राज्य करता हता, अनुक्रमें छये खंम तेणे स्वहस्तगत कर्या, पछी पोताना अठाणुं नाना भाइउने बोलाववा माटे दूतोने मोकल्या, दूतोयें जइने कुरुप्रमुख भाइयोने कह्युं के हे राजकुमारो ! षट्खंमने साधनारा एवा तमारा भाइ भरतजी चक्रवर्त्तीने तमे प्रणाम करो के जेथी तमारा सर्वनो विनय थयो गणाय? कारण के वृद्ध भाइ ते पिता समान तथा गुरु समान मानवा योग्य छे. माटें तमो भरतचक्रवर्त्तीनो विनयादि करशो तो तमोने देश, ग्राम, नगरना राज्यनो लाभ थशें? अने जो तेम नहिं करो तो तमारुं राज मूलथकी लइ लेशे ते सांभलीने पछी अठाणुं भाइउ एकठा थइने अन्योन्य कहेवा लाग्या के आपणुं भरतराजापासें शुं चालशे? एतो आपणी साथे युद्ध करी पराजय पमाडीने आपणुं सर्वेनुं राज्य ग्रहण करशे? माटे आपणे श्रीरूषभदेवजीनी पासें जइने आ वात निवेदन करीयें अने जेम ते कहे, तेम करीयें? आ प्रमाणें सर्वे भाइउ विचार करीने श्रीरूषभदेवजी पासें गया, तेमनी प्रदक्षिणा करी नमन करीने बेठा अने भरतजीनुं वृत्तांत जे दूतद्वारायें वन्युं ते सर्व कह्युं ते वखत रूषभदेवजी देशना देता हता,तेमां आ गाथा कहेता हता जे "सुलहा सुरलोअ सिरि, एगछत्ताबि मेइणी सुलहा ॥ दुलहा पुणसंसारे, जिणंदवर देसिउ धम्मो ॥१॥ आवी उपदेश गाथा सांभलीने तेमने बोध थयो, तेथी सर्वे भाइउयें राज्य छोडीने प्रभुनी पासें दीक्षा ग्रहण करी. पछी ते अठाणुं भाइउनुं राज्य भरतचक्रवर्त्ती ग्रहण करता हवा ॥ १२७ ॥

चित्तावन्यां जनानां कपिलसमधियां वित्तलेशाप्तमूलः,
प्रत्याशावारिसिक्तोधनिविविधधनप्रार्थनाभोगवल्गुः ॥

नूपेंडत्वादिसंपन्मतिकुसुमततिर्नोगचिंताफललर्द्धि, लोनो
वृत्त्या श्रवंत्या व्रजतु कलितरुर्वप्तुरप्यार्तिहेतुः ॥ १७७ ॥
इति लोनप्रक्रमः ॥ इति कर्पूरप्रकरग्रंथः समाप्तोयम् ॥

अर्थः—(लोनः के०) लोनरूप (कलितरुः के०) नयंकर वृक्ष, ते (वृत्त्या के०) संतोषरूप (श्रवंत्या के०) नदीयें करी (व्रजतु के०) तणाइ जाउ एटले जेम नदीना जोरथी वृक्ष तणाइ जाय तेम आ लोनरूप वृक्ष पण संतोष नदीथी तणाइ जाउ. हवे ते लोनरूप वृक्ष केवो ठे ! तो के (कपिलसधियां के०) कपिल ब्राह्मण समान बुद्धिवाला (जनानां के०) जनोनी (चित्तावन्यां के०) चित्तरूप अवनीने विषे (वित्तलेशाप्तमूलः के०) प्राप्त ठे वित्तना लेशरूप मूल जेनां एवो ठे तथा (प्रत्याशावारिसिक्तः के०) आशा अने प्रत्याशा ते रूप जे जल तेणें करी सिंचायेलो एवो ठे. तथा (धनिविविधधनप्रार्थनानोगवल्गुः के०) अनेक धनवाननी विविध प्रकारनी प्रार्थनानो जे विस्तार, तेणें करी मनोहर अने वली (नूपेंडत्वादिसंपन्मतिकुसुमततिः के०) मोहोटा मोहोटा राजादिकनी जे संपत्ति तेने विषे मतिरूप ठे कुसुमनो विस्तार जेमां एवो ठे. वली (नोगचिंताफललर्द्धिः के०) नोगनी जे चिंता ते रूप जे फल तेनी ठे संपत्ति जेने विषे एवो ठे. माटे कवि कहे ठे संतोष नदीयें करी लोनवृक्ष तणाइ जाउ. एवी इच्छा सर्वे जन राखो ॥

आंहिं कपिलब्राह्मणनी कथा कहे ठे. चंपापुरीने विषे कपिलदेव नामा ब्राह्मण रहेतो हतो,ते नाग्ययोगथी दासीमां आसक्त थयो,तेथी थोडे थोडे ते निर्द्रव्य थइ गयो. एक दिवस ते दासीयें तेने अर्द्धरात्रियें राजा पासें वे मासा सुवर्ण लेवा माटे मोकल्यो, त्यां तेने राजाना माणसोयें पकडी बांधीने राजानी पासें आण्यो. राजायें तेना आकारथी जाण्युं जे आ चोर नथी, राजायें पूछ्युं के अरे तुं कोण ठो ? त्यारें ते ब्राह्मण बोल्यो के एक दासी मारी राखेली स्त्री ठे तेणे मने मोकल्यो ठे आ खरी वात सांनलवाथी राजा संतुष्ट थइ कहेवा लाग्यो के जे तारे इच्छा होय ते माग्य. त्यारे ब्राह्मणे कह्युं के हुं तमारा अशोक वनमां जइ एकांतमां थोडी वार विचार करीने पठी मागीश ? राजायें तेमकबूल कर्युं पठी ते त्यां वनमां जइ विचारवा लाग्य के हुं ते शुं मागुं सो मागुं ? के सहस्र मागुं ? के लक्ष मागुं ? के करोड

मागुं? के दश करोड मागुं? एम आशानो तो कांइ अंत आवतोज नथी. माटे आ लोजने धिक्कार हजो जेनो हजी सुधी अंतज आवतो नथी. हुं तो मात्र बे मासा सोनुं लेवा आव्यो हतो पण राजायें कह्युं जे माग्य ते आपुं पण मने कोट्यावधि धनथी पण तृप्ति थती नथी कह्युं छे के "जहा लाहो तहा लोहो, लाहा लोहो पवड्ढइ ॥ दो मास कणय कज्जं, कोडिएविन निट्ठियं ॥" एम चिंतवन करतां ते ब्राह्मणने वैराग्य उत्पन्न थयो, त्यारें तेणें आलोचनाने स्थानकें केश लोचन करी नाख्युं. पछी प्रव्रज्याग्रहण करीने मार्गमां पांचशें चोरने तेणे प्रतिबोध पमाड्या, माटे लोज्ञ विस्तार करवो नहिं लोज्ञ छे ते पापनुं मूल छे ॥ १२७ ॥

इति कर्पूरप्रकरांतर्गताः सर्वाः कथाः समाप्ताः ॥ समाप्तोयं ग्रंथः ॥

॥ सप्तपंचाशदधिक शतसंख्यासमन्वितः ॥ कथामहोदधिर्ग्रंथो हृद्यपद्यैर्विनिर्ममे ॥ १ ॥ अर्थः—एकसो सतावन कथाउना महासागर रूप आ ग्रंथ मनोहर पद्योयेंकरी युक्त रचायेलो छे ॥ अस्मिन् ग्रंथे सहस्रे द्वे,द्वे शते षष्ठिसंयुते ॥ अनुष्टुपां सर्वसंख्या, प्रत्यक्षरनिरीक्षणात् ॥ २ ॥ प्रत्येक अक्षरनी गणना करतां सर्व मलीने आ ग्रंथनी अंदर बे हजार बसोने साठ अनुष्टुप् श्लोकनी संख्याछे ए संख्या अवचुरीकारें लखी छे ॥ २ ॥

॥ वर्षे वार्द्ध्यंबरशरसुधारश्मिसंख्ये बन्नूव,श्रीमान् ग्रंथः सकलसुमनश्चित्तहर्षप्रदायी ॥ यावत्क्रीडां गगनकमले राजहंसौ विशाले, तन्वानौ स्तस्तिमिरन्निदुरौ तावदेषोऽपि जीयात् ॥१५०४ नी शालमां सघला विद्वानोना चित्तने विषे हर्षनुं अर्पण करनार आ श्रेष्ट ग्रंथ निर्माण थयेलोछे माटे ज्यांसुधी विशाल एवा आकाशरूप कमलनेविषे विहार करता अंधाराने नेदनार राजहंस सरखा एवा सूर्य चंद्र छे त्यांसुधी आग्रंथ जगतनेविषे जय पामतो रहो १

त्रैविद्योपनिषद्विलासवसतेश्चातुर्यलक्ष्मीपतेः, श्रीसूरीश्वररत्नशेखरगुरोः प्रामाणिकस्य प्रन्नोः ॥ शिष्यः पंडितसोमचंद्रउरुधीर्माधुर्यधुर्योव्यधात्, कर्पूरप्रकरादिकाव्यकथिता एताः कथाः सत्प्रथाः ॥ २ ॥ अर्थः—त्रैविद्य अने उपनिषद्ना विलास करवाना मंदिर रूप तथा चातुरीरूप लक्ष्मीना स्वामी अर्थात् चातुरीरूप संपत्तिना पति तथा प्रमाणिक अने समर्थ श्रीसूरीश्वर रत्नशेखरनामना जे गुरु तेमना शिष्य पंमित सोमचंद्र के जे अतिउदारबुद्धिवाला माधुर्यवाली सुंदर कविताना रचनारनेविषे मुख्य छे तेमणे आ सुं

दर रचनावाली, अतिप्रसिद्ध कर्पूर प्रकरनामे महाकाव्यनी कथाउ कही
॥ इति श्रीबालावबोधसहितः कर्पूरप्रकरग्रंथः संपूर्णः ॥

॥ अथ कर्पूरप्रकर अवचूरिकृत तपउपक्रमः ॥

॥ प्रतिदिनमपि दानं पुण्यसंपन्निदानं, पुनरधिकफलं स्यात्पारणाद्योत्तराद्वे
॥ दिशति जलभृदन्नं कृत्तिकादौ सुवृष्टः, पुनरमलमनर्घ्यं मौक्तिकं स्वातियो
गे ॥ १ ॥ अर्थः—प्रतिदिन जे दान आपवुं ते पण पुण्यरूप संपत्तिनुं
आदिकारण छे वली तेज दान, जो पारणाने दिवसें तथा उत्तर पारणाने
दिवसें देवाय तो अधिक फलने आपनार थाय छे. कृत्तिकाना आरंभमां
सारी रीतें वर्षेलो वरसाद धान्यनी उत्पत्ति सारी करे छे. वली ते वरसाद
जो स्वातिनेविषे वरस्यो होय तो निर्मल एवा अमूल्य मोतिने उत्पन्न
करे छे. ॥ १ ॥ जितभवदकषायः पाक्षिकादेर्दिनोऽग्र्यो, वितरणकरणैः प्र
कृपश्चिमावप्युदारौ ॥ विहितभुवनमुत्किं पार्वणश्चंद्रएक, स्तदितरशशिनौ कि
नो मुहूर्त्ताऽप्रकाशौ ॥ २ ॥ अर्थः—संसारने वधारनारा चार कषाय तेने
जीतनारो एवो पाक्षिकनो (पांखीनो) आगलो दिवस छे तेमज दान वि
गेरेना आपवाथी पांखीनो पहेलो छेलो बंने दिवस उदार उत्कृष्ट फलदा
यक गणाय छे. ते जेम के सघला भुवनने जेणे हर्ष आपेलो छे एवो एक
पुनमनो चंद्रमा नथी शुं ? ना छेज. ते शिवायना बीजा दिवसना चंद्र ते
मात्र बे चार घडी प्रकाश अने अप्रकाश करनारा नथी शुं ? ना तेवाज छे. अ
र्थात् सर्व दिवसो करतां पांखीनो दिवस ते दान विगेरे कर्मनो अति फलदाय
क छे बीजा सर्व दिवस सामान्य फलदायक छे. वली पारणानेविषे कहे छे.
॥ शुद्धं तपः केवलमप्युदारं, सोद्यापनस्यास्य पुनः स्तुमः किं ॥ हृद्यं पयोधे
नुगुणेन तत्तु, द्राक्षासिताक्षोदयुतं सुधैव ॥ ३ ॥ अर्थः— केवल शुद्ध
तप छे ते पण अति श्रेष्ठज छे तेमां वली ज्यारे ते तप उद्यापन सहित होय
तो तेमां शुंज कहेवुं. अर्थात् तेनां वली शुं वखाण करवां ? जेम के जे
गायनुं दुध गायना गुणथीज मधुर छे, परंतु तेमां वली द्राख अने साक
रनो भुको नाख्यो होय त्यारे मधुर अमृत जेवुं थाय तेमां शुंज कहेवुं ॥ ३ ॥
वृक्षोयथा दोहदपूरणेन, कायोयथा सद्रसभोजनेन ॥ विशेषशोभां लभते
यथोक्त, सोद्यापनेनैव तथा तपोऽपि ॥ ४ ॥ इति उद्यापनप्रक्रमः ॥
अर्थः— जेम खातर विगेरेनी पूरणी करवाथी वृक्ष, विशेष शोभाने पामे

छे. जेम शरीर, सारा रसवाला सुंदर पदार्थोना भोजनेंकरीने विशेष शो भाने धारण करे छे; तेम यथाविधि अर्थात् शास्त्रमां कहेला विधिप्रमाणें उद्यापन करवाथी तप पण अधिक उत्तमोत्तम शोभाने आपेछे ॥ ४ ॥ इति उद्यापनप्रक्रमः समाप्तः श्रीरस्तु शुभमस्तु.

स्वर्भूमेर्मातृगर्भेऽगमदुदयमहो यः सुरैर्मेरुशैलोत्सिक्तस्ताताल्येऽगाडुपचय मनिशं छायया‌ऽक्रांतविश्वः ॥ पादोपांताऽवनम्रत्रिभुवनजनतास्वीकृतोच्चैःफ लर्द्धिः श्रीवीरोवोऽस्तु चिंताऽधिकतरवरदः कल्पशाखी नवीनः ॥ १ ॥

अर्थः—जे स्वर्गभूमिथी पोतानी माताना गर्भरूप क्याराने विषे उत्पन्नथ येला अने जे देवताउयें मेरुपर्वतउपर नवरावेला अर्थात्‌सिंचन करेला,तथा पोताना पिताना घरनेविषे निरंतर वृद्धिपामेला अने जेणे पोतानी छायायें करी आखाविश्वने विश्रांति आपेली छे, तथा जेणें पोताना चरणमां नमेली त्रण भुवननी जनतारूप फलसमृद्धि स्वीकार करी छे अर्थात् सर्वजगतने नमन करवारूपजछे फल जेने एवा अपूर्व कल्पवृक्ष जे श्रीवीरभगवान् ते, तमारा अधिकमनोवांछित वरने देनार थाउ. आहिं वीरभगवाननेविषे क ल्पवृक्षनी उत्प्रेक्षा कवियें करेली छे, जेवा फाडमां उत्पन्नथवाथी फलप्रा प्ति पर्यंत गुणो छे, तेम आहिं श्रीवीरभगवानरूप कल्पवृक्षमां सर्वे घटाव्याछे.

स्युर्द्वात्रिंशत्सहस्रा भरतजनपदाः सार्द्धपंचाग्रविंश,त्यार्येष्वर्हत्प्रबोधः सु गुरुभिरधुना पंचषेष्वस्ति धर्मः ॥ सत्क्षेत्रं तत्र चाल्पं भवनभुवि यथा पल्वले ग्रीष्मतुच्छे, पद्मं हंसस्य तुष्ट्यै तदिव समभवत्सच्चतुर्मासिकन्नः ॥ २ ॥

अर्थः—सर्व मली बत्रीश हजार भरतखंडमां देशो छे तेमां पण साडी पच्चीश आर्यदेश छे तेनेविषेज श्रीअर्हत्प्रभुनो प्रबोध प्रचार पामेलो छे तेनी अंदर हाल पांच के छ देशनेविषे सारा गुरु धर्मनुं श्रवण करावे छे वली ते भरतखंडनी भवनभूमिनेविषे सारां क्षेत्र अति थोडां छे, उनालामां सुकाइ गयेला अल्प जलाशयनेविषे रहेलुं कमल जेम हंसने संतोषने माटे थाय छे तेम आ अल्पक्षेत्रनी अंदर अमारे चातुर्मास्य संतोषदायक थाउ ॥ १३० ॥ आ बे श्लोक बीजी प्रतिमांथी मल्या छे. तेम बीजा पण ४० श्लोक ते प्रतमां छे परंतु तेनी अवचूरी पण न होवाथी तथा ते प्रक्षेप काव्य जेवा जाणवामां आव्याथी इहां मूलपाठें नीचें दाखल करीयें छैयें.

वर्षाक्षमा श्रमणे ॥ ६३ ॥

विश्वप्रकाशो नवे, देवं मंगलदीपकोच्चशिखयाऽष्टाह्निका शंसति ॥ १२ ॥ रागद्वेषजितोऽर्हतोंऽघ्रियुगलं पाणिद्वयेनार्चयन्, साधुश्रावकधर्मनाक् परन्न वेस्वर्गापवर्गौ व्रजेत् ॥ दृक्कर्णद्वितयेन रूपगुणनृच्चैहापि तोषं परं, घंटाचाम रचेष्टितेन विवृणोत्यष्टाह्निकैकोत्तरा ॥ १३ ॥ त्रैलोक्यं त्रिपदीतनुस्त्रिपथ गा तोषाय यस्यान्वहं, कालेषु त्रिषु तं त्रिकालविडुरं देवं त्रिशुध्ध्या महः ॥ स्वच्छत्रत्रयसंपदं दिशति वोयेनैष रत्नत्रयं, त्रिःपुष्पांजलिसंज्ञया ज्ञपयतीत्य ष्टाह्निकाद्युत्तरः ॥ १४ ॥ व्याख्या सप्तचतुर्विधामरकृतं प्राप्यावदद्यं चतु, र्मूर्त्तस्तीर्थपतिश्चतुर्गतिहितं धर्मं चतुर्द्धा बुधाः ॥ तं कुर्वंतु चतुःकषायरहिता स्तुर्ये पुमर्थेरता, ब्रूते संघकृतस्तुतिप्रतिरवै स्तुर्येयमष्टाह्निका ॥ १५ ॥ किं पंचेंद्रियशर्म पंचविषयै र्मूढामितं वांछतो, दंचत्पंचसु नावनानि दधतां पंचव्रतान्युच्चकैः ॥ पंचज्ञानवतां यथा बहुसुखावः स्याद्गतिः पंचमी, स्प ष्टं जल्पति पंचशब्दनिनदैरष्टाह्निका पंचमी ॥ १६ ॥ जित्वा षड्विकृति स्पृहां षडपि तान् मुक्त्वा रसान् शक्तितः, षड्जीवावनतस्तपः कुरुत षड् नेदं बहिश्चाबहिः ॥ द्विट्षड्वर्गजयोमतः षड्टतुजा पूजा च चेन्मानसे, नष्टो न्नादितषट्पदध्वनिरुवाचाष्टाह्निका षष्ठिका ॥ १७ ॥ सप्तापि व्यसना नि सप्त नरकद्वाराण्यहो सप्तनी, हेतूनित्यजताशु पुण्यनृपतेः क्षेत्राणि रा ज्यांगवत् ॥ सप्ताप्याशुत सप्तनूमिकगृहे तत्वे वसंतु स्वयं, सत्सप्तस्वरगीत कैतवमुवाचाष्टाह्निका सप्तमी ॥ १८ ॥ मुक्त्वाऽष्टौ मदकारणान्यविरतं स त्प्रातिहार्याष्टकं, देवं पूजय पूजयाष्टविधया येनैषतुष्टः पदं ॥ तद्दोयच्छतु यत्र नास्ति पतनं डुष्टाष्टकर्मापदां, चष्टे मांगलिकाष्टदीपकमिषादष्टाह्निका चाष्टमी ॥ १९ ॥ नैतेप्येतद्वोपमानविगमादष्टाह्निकावासरा, एकैकोच्चकलाऽर्तीं डुसहशाः किंचित्त्वन्नूवन्निमे ॥ श्राद्धस्वांतपयोधिनेत्रकुमुद श्रेणीचकोरेक्षणो ल्लासाय स्मर तापमोहतिमिरोच्छित्यै यतोहर्निशं ॥ २० ॥ अष्टाह्निकासु ॥ कल्याणिकं नगवतां धुरि यत्र चानूत्, श्रेष्टः सएव दिवसः पुनरागतोद्यः ॥ श्रीवीर मोक्षदिवसोद्भवदीपपर्वे, यद्वत्ततः सुकृतिनोत्र महोऽनुवर्षं ॥ २१ ॥ सध्ध्यानोज्वलदीपकप्रविलसत्स्वाध्यायमेरात्रिकः, शुद्धाचार सुनोजनः सुगु णवाक् तांबूलशोनाशुनः ॥ श्रीनिर्गमलहम्युपागमजयज्येष्टावनामोत्तरः, शीलालंकृतिनाग् मुदे नवतु वोऽर्हद्धर्मदीपोत्सवः ॥ २२ ॥ दीपोत्सवे ॥ ॥ ७२ ॥ व्याख्यानं श्रुतडुग्धसारमधुरं स्निग्धं निपीयादरा, न्मात्याकू र

सिका सुधा शमदधि श्रेयो घृतोद्भायकृत् ॥ अस्मात्तस्य समर्थनाद्यतदि
कालेन नव्यैः पुनः, सम्यक्त्वांगविवृद्धिकृद् बहु तृषा पेयं तमस्तापनि
॥ २३ ॥ सिद्धांतांबुधिसंनवेऽद्य विरते व्याख्याघने सद्रसै, दृष्टांतैः र
कषायतापजनहृद्भूमिं शमिताऽनितः ॥ सप्तक्षेत्रधरासु वित्तवपनं कुर्वंतु व
पुण्यतो, निःसप्तव्यसनेतिनीतिविविधं शस्यं यथा सज्जनाः ॥ २४ ॥ व्य
ख्यासमर्थने ॥ व्याख्यानांबुधरोपदेशसलिलैः सुश्राद्धचेतः सरः, पूर्त्तिः की
र्त्तिनदीतनिर्मलरजश्शिवत्तिश्च यत्रान्नवत् ॥ बालश्रावकनेककेकिपठनस्वाध्या
यकोलाहलं, सत्कृत्यान्नफलाय वो नवतु तद्वर्षाचतुर्मासिकं ॥ २५ ॥
व्याख्यासमर्थने ॥ वृष्टे धर्मकथोपदेशसलिलैर्नव्योर्वरायां गुरा, वव्दे संयम
धन्यसप्तदशकं रूढक्रिया मारुतैः ॥ हृष्टैः स्पष्टगुणं विशोधितमनः स्वल्यार्थ
शस्योजमं, स्यादेवोद्यमरक्षपालदलितापायं फलस्फातिमत् ॥ २६ ॥
कार्त्तिक्यां चतुर्मास्यां ॥ घस्त्रे शीतोष्णकाले प्रथमवयसि तत्कर्म कुर्वीत विद्वा
न, येनांते स्यात्सुखीतोवयमपि तदहोवेत्य कुर्मोविहारं ॥ नानार्हत्तीर्थयात्रा-
श्रुतधरनमनं संशयांतः श्रुतायः, शुद्धान्नोपध्यवाप्तिः प्रवचनमहिमा मूढबो
धोद्यता यत् ॥ २७ ॥ विहारे ॥ ७६ ॥ चातुर्मासिकमेकपारणदिनं नूनं
फलं प्राप्नुया, न्नेतुर्वार्षिकमप्यवाप न कथं श्रेयांसएकाह्न्यपि ॥ स्थान
स्थाननिखातकोटिविनवः कोटीश्वरः किं नवे, त्कोटीमूल्यमहामणिं करतले
किं खेलयन्नापरः ॥ २८ ॥ कार्त्तिक्यां ॥ ७४ ॥ तीर्थेशैर्व्रतधर्मनाष
णपुरस्कारात्परामुन्नतिं, नीतं यच्च ददाति नूतिमतुलां श्रीशालिनद्रादिवत् ॥
तन्नः सत्वतिरस्क्रिया लघुकलौ दानं त्वयोल्लासितं, कैः कैर्नेद्र पुनः फलिष्य
ति फलैस्तत्ते जिनोवेत्ति तत् ॥ २९ ॥ मान्यस्तीर्थपतेः परिग्रह इवक्ष्माप
स्य संघोध्रुवं, धन्योयस्य गृहांगणं सचरणांनोजैः पुनीतेतराम् ॥ किं ब्रूमः फ
लमस्य तन्नरतवद्योवेत्त्यमुं संमदात्, श्रीरप्यस्य गृहे स्थिराः प्रतिन्नुवः श्री
जैनपादाइमे ॥ ३० ॥ नीत्वा स्थानेऽनिरामे घनसमयममी संयताः श्वे
तपक्षा, स्तत्तत्स्थाने विजह्रुः सुकृतिनिरनिशं जाड्यशीतं च निन्नं ॥ शीतक्षौ
मैस्तपोऽग्निव्रतनियमगृहैर्नावमागंधतैलै, र्यत्राऽचार्यार्कगोनिर्हिमसमयचतुर्मा
सकं तन्मुदे स्तात् ॥ ३१ ॥ चातुर्मासिकपर्वसंनवतपोवह्निस्तदावश्यक,न्न
श्यत्कर्मदलोत्थितस्यगणकस्तोमेऽत्र नस्मीकृते ॥ प्रातर्वंदनके मुखांशुकविधि
व्याजाद्विकीर्णेऽनितः, धन्योऽर्हद्गुणफाल्गुनोऽमलरजाः स्यादागमांनःप्लवैः

॥ ३१ ॥ रजःपर्वणि ॥ ७४ ॥ स्पर्द्धा महत्सु नरवाक् शुकवत् क्रमाय, सत्यं पुनः पदमुपैति जनः कृतार्थः ॥ मर्त्या हि पंचमगुणस्थितिमुक्तियोग्याः, श्राद्धेषु तज्जिनमहेऽनुचितेंऽङताऽपि ॥ ३२ ॥ देवैर्जिनस्य यदि जन्ममहादि चक्रे, न श्रावकैरनुकृतिः क्रियतां तदेषा ॥ स्वःशक्रदंतिमदतुंबरुगानरंभा, नृत्यादि चेद्भुवि नकोऽपि ततः करोतु ॥ ३४ ॥ कल्याणके ॥ ७३ ॥ जैनार्चयाऽपि नवभिः कुसुमैरशोक, उच्चोच्चसंपदभवन्नवशोवधीशः ॥ लक्षार्चनेन तु फलं जिनएव वेत्ति, सद्भूस्थकालघनसिक्तसुबीजवत्तत् ॥ ३५ ॥ आश्चर्यकारि फलमप्यतुलं प्रदास्य, त्याश्चर्यभंगिभिरियं विहिता जिनार्चा ॥ कार्यं हि कारणगुणेन भवेत्तु चित्रं, पुष्पैरिमैस्त्रिदशवृक्षफलप्रसूतिः ॥ ३६ ॥ महापूजायां ॥ ७४ ॥ अप्येकजैनभवनस्नपनादिनाद्य, भावाडुपार्जि सुकृतं शिवकृद्भवद्भिः, स्थानं क्वचेत्युपरिपाटिकयार्जि तस्य; ज्ञातं महत्स्तुतिकृतां हृदयानि संति ॥ ३७ ॥ अद्योदियाय सुदिनोभवतां कला वा, जज्ञे य दल्पवसुनाऽपि हि भूरिलाभः ॥ चैत्यावलीषु यदुपार्जि शिवाय पुण्यं,भक्त्या सुलंभदलपुष्पफलोपहारैः ॥ ३८ ॥ चैत्यपरिपाट्यां ॥ ७१ ॥ शुद्धं तपः केवलमप्युदारं, सोद्यापनस्यास्य पुनः स्तुमः किं ॥ हृद्यं पयोधेनुगुणेन तत्तु, डाक्षासिताक्षोदयुतं सुधैव ॥ ३९ ॥ वृक्षोयथा दोहदपूरणेन, कायोयथा सद्रसभोजनेन ॥ विशेषशोभां लभते यथोक्ते, नोद्यापनेनैव तथा तपोऽपि ॥ ४० ॥ उद्यापने ॥ भूपाश्छत्रगुरूदरावृतिरथाद्येषूपयोगान्मया, वंशत्वे कट सुंभकादिषु जनाश्चाराधिताभूरिशः ॥ नैतत्काऽपि महत्त्वमापि सुलभे केत्व ग्रहस्तोरणे, घंटावाग्भिरिति ध्वजस्त्वरयतेवोदेवताऽराधने ॥ ४१ ॥ सिंहस्त पःप्रक्रमएव तावत्, डुष्कर्मदंतावलमंमलीनां ॥ तदद्य तस्मिन् प्रखरानिवेशो, यद्वद्यडुद्यापनविस्तरोऽयं ॥ ४२ ॥ नैवेद्यैः सफलैः शिवाध्वसुखदं स्पष्टं समं शंबलं, धूपेनोर्ध्वगतिः सुगंधि तदिदं वासेन शुभ्रं यशः ॥ न स्वर्गादिफलं फलैश्च कलमैर्जैनाटकाचात्मनः ॥ पुष्पैर्लोकशिरः स्थितिः शिवतनुर्दीपैर्जिनार्चाफलं ॥ ४३ ॥ अष्टविधपूजायां ॥ ७७ ॥ आदर्शोदितकेवलर्द्धिरस मैश्वर्यैश्च भद्रासनाद्, ब्रह्मांडस्य शरावसंपुटतनोर्यः कामकुंभंपुरः ॥ श्रीवत्सांगमिति स्फुटश्च तनुते नित्योत्सवः स्वस्तिका,न्नंदावर्त्तवदद्भुताकृतिकृतानंदः सवोऽव्याज्जिनः ॥ ४४ ॥ अष्टमंगले ॥ ७९ ॥ मुक्तेः सौख्यप्रमाणं भवति सुरगिरिः सोऽस्ति वा योजनानां, लक्षं वार्द्धिः स्वयंभूरमणइति पुनः सो

ऽस्ति रज्जुप्रमाणः ॥ लोकातीतं तदेतज्जिनपतिरपि वा नोपमातुं प्रगल्नो, नू नृञ्जोगानुनूतिं स्वजनमनुवदन् यद्वदज्ञः पुलिंदः ॥ ४५ ॥ यत्पादांबुजन्नृं गतामविरतं नेजुस्त्रिलोकीजना, यश्चिंतामणिवत्तदीयहृदयान्नीष्टार्थसंपादकः॥ सोप्यर्हन्महितोयदर्थमनिशं तत्तत्तपस्तप्तवान्, नान्नीष्टं हृदि कस्य कस्य तद हो नेःश्रेयसं मंगलं ॥ ४६ ॥ मुक्तिद्वारं समाप्तं ॥ ८२ ॥ व्रीहिर्यवोमसूरो, गोधूमोमाषमुजतिलकाः ॥ अणवः प्रियंगुकोड्व, मयुष्टकाशालिराढक्यः ॥ किं च पलायकुलबौ शणसप्तदशेति धान्यानि ॥ ४७ ॥ श्रीवज्रसेनस्य गुरो स्त्रिषष्टि, सारप्रबंधस्फुटसज्गुणस्य ॥ शिष्येण चक्रे हरिणेयमिष्टा, सूक्तावली नेमिचरित्रकर्त्री ॥४८॥ इति श्रीकर्पूरप्रकरान्निधः सुन्नाषितकोषः समाप्तः ॥ ग्रंथांते वैराग्यदर्शीकोऽयं श्लोकः क्षिप्तोस्ति सयथा ॥

॥ येषां वित्तैः प्रतिपदमियं पूरिता नूतधात्री, यैरप्येतद्भुवनवलयं निर्जितं लीलयैव ॥ तेऽप्येतस्मिन् न्नवपुरुहृदे बुद्बुदस्तंबलीनां धृत्वा धृत्वा सपदि विलयं नूनुजः संप्रयाताः ॥ श्रीरस्तु. इति श्रीकर्पूरप्रकर ग्रंथ मूल तथा बा लावबोध अने कथाउसहित समाप्त ॥

॥ मतलबविषे प्रस्ताविक दोहा ॥

॥ मतलबके सब आदमी, मतलब विना न कोइ ॥ जब जाकी मतलव हुवे, तबहि दूर व्हे सोइ ॥ १ ॥ मतलबसम या जगतमें, कोउ न और पदार्थ ॥ यातें सब व्यवहार है, याबिन है सब व्यर्थ ॥ २ ॥ मतलब नां ही सुजनकों, जाको अंग स्वन्नाव ॥ ताकोंही सज्जन कहत, जिहिं सब स रखो न्नाव ॥ ३ ॥ मतलब बिना सुनारिहू, रहै न पतिके गेह ॥ पतिहू नारी ना रखै, जो सुत चाहन रेह ॥ ४ ॥ मतलबके सबही सगे, मतलब जौ लगि जांहि ॥ जो मतलबि जगमें नहीं, उत्तम मनुष कहांहि ॥ ५ ॥ मतलब ताको राखिये- जातें कारज होत ॥ सूके तरुवरपें गये, फल छा या न मिलोत ॥ ६ ॥ मतलब तबलग होतहै, जबलग कर में दाम ॥ पीछे कोइ न आवहीं, ज्यूं सूके सर गाम ॥ ७ ॥ मतलब धनसम और नहि; मित्रहु वैरी होय ॥ मतलब पाये होत पुनि, शत्रु मित्रहू सोय ॥ ८ ॥

अथ

॥ श्रीउदयरत्नजी महाराजकृत भुवनभानु केवलीनो रास प्रारंभः ॥

॥ दोहा ॥

॥ सकल सिद्धिदायक सदा, अकल अरूप अनंत ॥ सिद्ध नमुं हुं ते सदा, आपे जे भव अंत ॥ १ ॥ वलि वंदूं वारू विधें, ऋषभादिक जिन राय ॥ भेटुं डुर्मति भंजणा, भावी भारति पाय ॥ २ ॥ गुरु गणधर गुण आगला, जे जे नर जगमांहि ॥ शासन देवादिक सहु, प्रणमुं परम उत्सा हि ॥ ३ ॥ जनक शाह यशवीर जस, जननि खिमादे जास ॥ श्रीहीर रत्नसूरी नमुं, असारु पूरे आस ॥ ४ ॥ जे जग रमणिक जाणियें, ते ते वस्तु अनित्य ॥ वलि राजा परें बूझिने, धर्म करो दृढ चित्त ॥ ५ ॥ भुव नभानु जे भूतलें, केवलि करुणा धाम ॥ प्रगट थया छे पूरवें, गाउं तस गुण ग्राम ॥ ६ ॥ बलि राजा पहेलो हुतो, नाम जेनुं अभिराम ॥ भु वनभानु वलतो थयो, गुणनिष्पन्न सुनाम ॥ ७ ॥ त्रिविधेंसूं हूं तेहनो, रास रचूं रसरूप ॥ श्रोता जन सुणजो तमे, आणी भाव अनूप ॥ ८ ॥ चरित्र ए चोखे चित्तें, सुणसे जेह सुजाण ॥ मारी मोह नरेंद्रने, लेशे परम कल्याण ॥ ९ ॥

॥ ढाल पहेली ॥

॥ पहिलोने पासो ॥ ए देशी ॥ ए जंबुद्वीपें होजी मेरूथी पश्चिम दिशें, गंधिलावती विजय वखाणियें जी ॥ विजयपुर नामें होजी नगर वसे ति हां, सर्व संपदनुं सदन ते जाणीयें जी ॥ १ ॥ धर्मनुं धाम होजी वेस्म विलासनुं, शुद्ध व्यवहारनुं सोध सोहे घणुं जी ॥ अघनो अनाश्रम हो जी आश्रम न्यायनो, अमरपुरीथी अधिक सोहामणुं जी ॥ २ ॥ वेष्टित वप्रें होजी खाइयें डुर्गम, अनेक कौतुकनो आस्पद उपतो जी ॥ तिलक सरिखुं होजी भूरमणी भालें, अलकालंकानी शोभा लोपतो जी ॥ ३ ॥ राजे तिहां राजा होजी चंद्रमौलि नामें, नमे छे जेहने अनेक नरेसरू जी ॥ वल दल बुद्धिनो होजी जे जलधि अछे, अतिहि सूरामां छे अग्रे सरू जी ॥ ४ ॥ वासवैभवनो होजी विस्मयकारी वली, महामंत्रीनी म तिने वलें मुदा जी ॥ कामीना मननी होजी पूरवा कामना, काम सरि

खो जेह जाणो सदा जी ॥ ५ ॥ करि कुंजस्थल होजी दलन कठिन क रें, रिपु रमणीना केशनें खींचतो जी ॥ ते तरुणीने होजी नेत्रजलेंकरी, कुल कीरतिना कंदने सींचतो जी ॥ ६ ॥ वज्रथी विरुउ होजी पर दल पाटने, लागे ठे ते धरनो लोनिउ जी ॥ कीरति जेहनी होजी व्यापी दि गंतरे, जेह न जाए केणें खोनिउ जी ॥ ७ ॥ अंतेउरने होजी पूरें पर वस्यो, विचरे ठे ते अनंगने गंजतो जी ॥ सुरपति सरिखो होजी अखं म आणें करी, नूमि पतिना माननें नंजतो जी ॥ ८ ॥ पहिली ढालें हो जी उदयरतन कहे, नवियण नावें सहुको सांनलो जी ॥ कौतुककारी हो जी रास ए ठे रूडो, नणतां नाजे नवनो आमलो जी ॥ ए ॥ सर्वगाथा ॥ १८॥

॥ दोहा ॥

॥ रतन जडित सिंहासनें, ठत्र धरावतो श्वेत ॥ बेठो ठे नृप एकदा, सुनटनी कोडी समेत ॥ १ ॥ पूरव दिशि प्रगट्यो तुरत, तेज अतुल तिणि वार ॥ रवि मंमलथी रम्य ते, पसस्यो सना मकार ॥ २ ॥ अकस्मात तव ऊठ्यो, सुरनि पवन समकाल ॥ पसस्यो ते सघले पुरें, परिमल जास रसाल ॥ ३ ॥ सहसा तव सहु सांनली, गगनें किन्नर गान ॥ सुरवधुने समुहें करी, नन उपे तिणि थान ॥ ४ ॥ गगनमंमल गाजी रह्यो, नूपुर हंदे नाद ॥ नानु मंमलसुं नूषणें, जाणे के लीधो वाद ॥ ५ ॥ सुर गाय न कोलाहलें, डुंडुनि नाद अपार ॥ अंबर तव बहिरो थयो, तुमुल स्वरें ते वार ॥६॥ तब नृप ते सहसा तिहां, ससंभ्रम सस्नेह ॥ परषद जनसुं प्रेम सुं, अचरज लही अठेह ॥७॥ आसनथी ऊंचो थइ, माबो कर धरि नाल ॥ बीजो कर ठवि बेठकें, जूवे नयण निहाल ॥८॥ अहो अहो ए अचरज कि श्युं, इम अवलोके सोय ॥ तेमज पेखे तिहां वली, सना लोक सहु कोय ॥ए॥

॥ ढाल बीजी ॥

॥ सोरठी रागना चालनी देशी ॥ तव श्रीखंमतिलक निलाडें, करे जे केसर आडे ॥ करें कनक ठडी जे धारे, सोहे पीन पयोधर नारें ॥ १ ॥ हिये मुक्ताफल हार, धारणी प्रतिहारी उदार ॥ प्रणमी नूपतिना पाय, वेसी ते वोली तिणे गय ॥ २ ॥ पूरव दिशिनो वनपाल, इहां आव्यो ठे उजमाल ॥ जो आपो प्रजु आदेश, तो परषदें करें प्रवेश ॥ ३ ॥ आवे ते नृप आणायें, वनपाल सनामां त्यांयें ॥ प्रणमी पृथिवीपति पाय, मुखें

बोले छे महा राय ॥ ४ ॥ किन्नर नर सुरनी कोडि, जेहनें नमे कर जोडी ॥ भुवनभानु जस नाम, केवली करुणा रसधाम ॥ ५ ॥ अवनिपति सुणिने एम, पूरण ते पाम्यो प्रेम ॥ ऐन अमृतने रसें अरच्युं, जाणे चंदन सुं तन चरच्युं ॥ ६ ॥ जाणे त्रिभुवन लीला लाधी, सुख सागरनी लहेर वाधी ॥ दीधुं तेहने प्रीतिदान, जेहनुं नवि थाय मान ॥ ७ ॥ एक आंख पलालामांहि, सामग्री सजी उछांहि ॥ श्वेत भद्र गजेंद्र समारी, ऊपर करे असवारी ॥ ८ ॥ श्वेत छत्र शिर ऊपर छाजे, जे भानु प्रतापने भाजे ॥ शशिकिरण समूह समाने, ढले चामर उज्जल वाने ॥ ए ॥ हय गय रथ पायक पूरें, वींट्यो चोफेर सनूरे ॥ परिकर श्रेणें परवरिउ, अवनिपति उलट भरिउ ॥ १० ॥ पुरव दिशिनें उद्यानें, पहोतो पावन थावाने ॥ डुरथी देखिउ मुनि राय, तजी असवारी तिणे ठाय ॥ ११ ॥ शस्त्र चामर मुकुट ने छत्र, तजी तंबोलादिक तत्र ॥ कर चरण वदन जल शुद्धि, प्रखाली परम शुद्ध बुद्धि ॥ १२ ॥ तजी पाडुका विनयसुं त्रिविधें, करकमल जोडीनें सुविधें ॥ परषदमां पेसी प्रीतें, मुनिनें वंदे मन हीतें ॥१३॥ देइ प्रदक्षिणा त्रण तेह, शिर भुमीसुं फरसी स्नेह ॥ भावें वंदी भगवान, सपरिवारें राजान ॥ १४ ॥ उदयरत्न कहे ए ढाल, बीजी में बोली रसाल ॥ नेहें जे मुनिने नमशे, ते भवनी भावठ गमशे ॥१५॥सर्वगाथा ४२॥

॥ दोहा ॥

॥ कर जोडी स्तवना करे, निरवद्य भूमि निहालि ॥ बेठो बे कर जोडीने, वारू सभा विचालि ॥ १ ॥ दीधी मुनिवर देशना, सांभलि ने नृप सोय ॥ अरज करी वलती इसी, उत्तम अवसर जोय ॥ २ ॥ रांक रीजे जिम रत्ननी, वृष्टि देखिने वेग ॥ तुम आगमने तेम हूं, निज मन पाम्यो नेग ॥ ३ ॥ भव सागर भूंभो घणो, ऊंभो जेह अथाग ॥ दरश आज तुम देखतां, तेहनो पाम्यो ताग ॥ ४ ॥ सर्वगाथा ॥ ४६ ॥

॥ ढाल त्रीजी ॥

॥ थां पर वारि मारा साहेबा ॥ ए देशी ॥ भगवन मुझ वाल भावमां, मुनिवर एक मलिउ ॥ बोध आपीने बहु परें, डुकृत नीर दलिउ ॥ १ ॥ पण समकित नवि सद्दह्यो, बाल बुद्धिपणाथी ॥ उपदेश ते अणगारनो, जेह मुक्तिनो साथी ॥ २ ॥ संस्कारमात्र ते साधुनी, देशना दिल धारी ॥

यौवनने जोरें करी, ते पण में वीसारो ॥ ३ ॥ राज्य धुरा भारें वली, मद तिमिरे भंज्यो ॥ उपदेशरूप उद्योत ते, मोहें मन रंज्यो ॥ ४ ॥ वलतो विषय विलासमां, काल गयो केतो ॥ जातो पण जाण्यो नही, तृष्णावश तेतो ॥ ५ तेवार पछि में आजनी, रजनी विरमंती ॥ जागीने जोयूं मनें, आलोची एकांती ॥ ६ ॥ अहो महारंभ तिणे भरें, डुरित दल मेल्यो, विपाक समे अहो केम ते, जासे अवहेल्यो ॥ ७ ॥ डुःख देशे मुने डुष्ट ते, परभवमहापाप ॥ आडो तव कोण आवशे, एम चिंतु आप ॥ ८ ॥ गुरु ज्ञानी कोइ जो मिले, तो पुछुं तेहने, कोण रक्षा करशे कहो, आविउदयें एहने ॥ ए ॥ नाव समो निग्रंथनो, संग जे थयो पहेलो ॥ भ्रष्ट थयो हूं तेहथी, मंद बुद्धि महेलो ॥ १० ॥ जन्म समुड्मांहें पड्यो, प्रेर्यो अघ पवनें ॥ आरो अहो कोण आपशे, उल्हवी भव दवने ॥ ११ ॥ खेदें इम करतां खरखरो, डुर्घट ए वातें ॥ प्रगट प्रभात समय थयो, यामनि शेष जातें ॥ १२ ॥ कृत्य करी प्रभातनां, सभायें जेहवे ॥ मजलस मेली आसने, बेगेछुं तेहवे ॥ १३ ॥ वनपालें वधामणी, दीधी मन खांते ॥ ताजी तुम आव्या तणी, सुणी हरख्यो ए भांते ॥ १४ ॥ जिम हरखे मरु देशमां, पंथी सर पेखी ॥ जिम चातक ग्रीषम ऋतें, रीजे घन देखी ॥ ॥ १५ ॥ जिम वनवासी घाममां, अंबनी घन छाया ॥ पामी रति पामे मने, उल्हसी अति काया ॥ १६ ॥ सुधारसनी लहि कूपिका, रोगी जिम रीजे ॥ तिमहूं रीज्यो ते समे, घणुं शुं कहीजे ॥ १७ ॥ तरशे त्रीजी ढालमां, जेह मुनिने नमवा ॥ तरशे भव जल ते वदे, उदय अघ गमवा ॥ १८ ॥

॥ दोहा ॥

॥ जिम कायर युद्धे जुड्यो, पडियो अरीगणमांहें ॥ शरण चाहे जिम शूरनुं, पीड्यो शस्त्र प्रवाहें ॥ १ ॥ तिम भीड्यो पातक भरें, भव वेरीथी भाग ॥ तुम शरणे हूं आविउ, लही अपूरव लाग ॥ २ ॥ महेर करी मुझ ऊपरें, ते माटे कहो स्वाम ॥ शरण होशे मुने केहनुं, पर भव पीडागाम ॥ ३ ॥

॥ ढाल चोथी ॥

॥ वृषभानु भुवन गई दूति ॥ ए देशी ॥ तव दसनयोति तम भरने, दलतोमुनि कहे नरवरने ॥ त्यारे शरण होशे तुझ तेह, महापुरुषें अंगीकर्यो जेह ॥ १ ॥ तुम सरिखे वीजे पण भजियुं, विशेपे अमे पडिवजियुं ॥ ते

होशे तुजने त्राता, परभव जाता सुण ज्ञाता ॥ २ ॥ इम सांभलि ते न रनाथ, महा कौतुक लही मन साथ ॥ मरकलडुं दइ मुखें बोले, रूडां वयण अमीरस तोलें ॥ ३ ॥ त्रिभुवन त्राता प्रभु तुमने, कुण शरण बीजुं कहो अमने ॥ ए अचरज कारी उदंत ॥ भाषो विवरी भगवंत ॥ ४ ॥ त व मुनि कहे कथा ए मोटी ॥ भवनी ज्यां कोटा कोटी ॥ राज काज वशें वडिवार ॥ मन न रहे तुमारूं ठार ॥५॥ अधिकार असंख्य छे एतो ॥ ते माटे कहिये केतो ॥ मनने घेरवा लहो मर्म ॥ धर्मथी जोरावर कर्म ॥६॥ भाषो मां एहवुं भगवान ॥ सुधापान तजी असमान ॥ जड पण करवा विषपा न ॥ किम चाहे कहे राजान ॥ ७ ॥ मेघने जिम इछे मोर, चंदने जिम चाहे चकोर ॥ तिम वाट जोतां मुनिराज, पुण्यें पाउधार्या आज ॥ ८ ॥ अवर तज्या आक्षेप, हवे लागे नहीं अन्य लेप ॥ ते माटे कथा तुमारी, विगतें तमें कहो विस्तारी ॥९॥ तुम वचन सुधारस पान, करवा चाहे मुझ कान ॥ सफली करीने ए प्रछा, पूरो प्रभु तेहनी इछा ॥ १० ॥ चोथी ढालें चित चाहें, उदय रत्न वदे उमाहें ॥ जग जन तारक जिन वाणी, भावें सुणजो भवि प्राणी ॥ ११ ॥ सर्वगाथा ॥ ७८ ॥

॥ दोहा ॥

॥ तव ज्ञानी गुरु बोलिया, सांभल थइ सावधान ॥ एक ध्यानें एक आसनें, रंगें तूं राजान ॥ १ ॥ कांइक कहुं तुज आगलें, मुझ वीतक म हाभाग ॥ सांभलतां सूधे मनें, वधशे मन वैराग ॥ २ ॥ सर्वगाथा ॥८०॥

॥ ढाल पांचमी ॥

॥ भटिआणीनी देशी ॥ आ लोकोदर इण नामें, नगर विराजे हो वसे लोक अनंत जिहां ॥ नहिं जस आदि न अंत, अपर पर वस्ती हो पुखुं नहिं खाली किहां ॥ १ ॥ सर्व संपदनुं गेह, पुरुपोत्तमने समुहें हो सेवित जे जाणो सदा ॥ अचरजनो आश्रम, कोडा कोडी कल्पांतें हो जेहनो भंग नहिं कदा ॥२॥ नहिं ते योनि ने जाति, गोत्र ने कुल वर्ण हो नहिं सा विद्याने कला ॥ नहिं ते हिरण्यने हाट, नाटकने नहिं नीति हो, नहिं ते आगम आमला ॥ ३ ॥ धर्म कर्म नहिं तेह, वैभव ने विलास हो नहिं ते दर्शनने क्रिया ॥ नहिं वलि ते व्यवहार, रत्नने रंभादिक हो नहिं ते सुर

पतिनी श्रिया ॥ ४ ॥ केतां कहियें नाम, बीजो पण पदार्थ हो जोतां को न जडे तिश्यो ॥ जे नवि दीशे त्यांहि, सर्व वस्तुमां हो रम्य ते पुर राजे इश्यो ॥ ५ ॥ कटक सदा इहां दोय, मांहोमांहें जूंके हो अंत न आवे तेहनो ॥ एक धर्म ने बीजुं पाप, अन्योअन्य डुःख दाई हो दल ए बलवहु बेहनो ॥६॥ पाप सेनानो नाथ, मोह राजा महा बलिष्ठ हो त्रिज्जुवन वश कीधुं तिणे ॥ अहितकारी अत्यंत, संसारी सहु जीवने हो जाय नहीं जीत्यो किणे ॥७॥ इंडनी पण ए आण, मनावि पोतानी हो महीला रूप पाला धरी ॥ चक्रीनें पण तेम, बाणुं लाख पायकनें हो पेखि वशवर्त्ति करी ॥ ॥ ७ ॥ राजाने करे रंक, सेवने सेनापति हो सारथवाह सचीवने ॥ दासना जे करे दास, कुवासनायें वासे हो जे सहु पामर जीवने ॥ ए ॥ कुगुरु कुदेव कुधर्म, थिर करीने थापे हो तजावी तत्वनी वासना ॥ अतत्वनो करी अनुकूल, अवस्तुनो आसंगो हो करावी राखे आसना ॥ १० ॥ तजावि पुण्यनो पक्ष, पातकसुं पोसीने हो करावे जे निज चाकरी ॥ हिंसा अदत्त अलीक, मैथुन ने परिग्रहनी हो लगन लगावी आकरी ॥११॥ निशि ज्ञोजनसुं नेह, जोडावी जोरेसुं हो क्रोधानलें नाखी वली ॥ ज्ञारी मान शिलाएं, मायारूप ज्जुजंगी हो मुखे मसावे रली ॥ १२ ॥ पाडे लोज्ज समुड, पुत्रादिक संबंधें हो प्रेम तणे ज्ञरें ॥ यंत्री युवति रागे, घणनेहें घेरीने हो पीडे पग पग बहु परें ॥ १३ ॥ दोलतथी करे दूर, महत्व घटाडी हो देखाडी महादीनता ॥ आरति अरति अपार, उपाइने आपे हो डुर्गति नरकनी हीनता ॥ १४ ॥ अवतारे तिरयंच, कुत्सित नर योनिमां हो घालीने पीडे घणुं ॥ डुःख दारिड डुर्जाग्य, विडंबिने देखाडे हो वली कुगतिनुं बारणुं ॥ ॥ १५ ॥ एम अनंती वार, ज्ञमाडे ज्ञवमांहे हो प्राणीने पीडे डुःखें ॥ अहित तिणें कहेवाय, आचरणा वलि एहनी हो केती कहेवाये मुखें ॥१६॥ उदय रतन कहे एम, पांचमी ढालें हो परमारथ तुमें प्रीछजो ॥ मेली मोहनो पास, आगम निसुणीने हो उत्तम गतिने ईछजो ॥ १७ ॥

॥ दोहा ॥

॥ अहंकार कोप आदि दे, अद्भुत कटक अनंत ॥ आणकारि तेहने अछे, अति उद्धत बलवंत ॥ १ ॥ पीडे ते सहु प्राणिने, अहितकारी अपार ॥ जेवो नृप तेवी प्रजा, अंतर नहीं लगार ॥ २ ॥ सर्वगाथा ॥एए॥

॥ ढाल ७मी ॥

॥ ईडर आंबा आंबली रे ॥ ए देशी ॥ चारित्र धर्म नामें लह्यो रे, धर्म सेनानो नाथ ॥ शम दम आदें शोभतो रे, सबलो जेहनो साथ ॥ राजेसर, सुण मन राखी गाथ ॥ १ ॥ समकेत सत्य सुवासना रे, सदागम ने सद बोध ॥ आर्जव मार्दव तपता रे, जालम जेहने योध ॥ राजे० ॥ २ ॥ गंभीर धीर शौचादिकें रे, सुभट अनंतें सोय ॥ सोति ए सहु जीवने रे, हितवंछक ते होय ॥ राजे० ॥ ३ ॥ देव धर्म गुरुनेविषे रे, जे उपजावे राग ॥ अत त्वने अवस्तुनो रे, जेह करावे त्याग ॥ राजे० ॥ ४ ॥ सत्क्रिया जे शीखवे रे, दया धरी दिल मध्य ॥ अलिक अदत्त छडापिने रे, शील पलावे शुद्ध ॥ राजे० ॥ ५ ॥ परिग्रहना महा पासथी रे, तुरत छोडावे तेह ॥ निशि भोजन मूकावीने रे, शमें शोभावे देह ॥ राजे० ॥ ६ ॥ सरल मृदु गुण सोंपिने रे, स्नेहनि सांकल त्रोडि ॥ भांजी बेडी रागनी रे, अरथनी आपे कोडि ॥ राजे० ॥ ७ ॥ गुरुता गुणने उपिने रे, लेणी लघुता अतीव ॥ सुजस व धारे जे सदा रे, सुमति आपे सदीव ॥ राजे० ॥ ८ ॥ नरक तिर्यंच गति रोकीनें रे, आपे सुर अवतार ॥ नरभव दइ वलि निर्मलो रे, धर्में धरावे प्यार ॥ राजे० ॥ ए ॥ परमैश्वर्य पमाडिने रे, शुद्ध सधावे योग ॥ देवप णुं वलि देइने रे, भला विलसावे भोग ॥ राजे० ॥ १० ॥ एम सहु संसा रिने रे, सुख आपे संसार ॥ अंतें आपे शिवपुरी रे, तिणे जाणो हितका र ॥ राजे० ॥ ११ ॥ ७मी ढालें चाहीने रे, कहे कवि उदयरतन्न ॥ धर्म भणी जे ध्यायसे रे,जय लहेसे ते जन्न ॥राजे०॥१२॥ सर्वगाथा ॥१११॥

॥ दोहा ॥

॥ एम ए दल जूंझे बने, सुख दुःख देवा काज ॥ सदा काल सहु जी वने, वधतां भावे वाज ॥ १ ॥ काल अनंतो अतिक्रम्यो, दल ते जूंझे दो य ॥ हार क्यारे केनी हुवे, क्यारे जीते कोय ॥ २ ॥ बलिउ ए बेहुथकी, त्रीजो त्रिभुवन राण ॥ कर्म परिणाम नामें प्रभु, मोटुं जस मंमाण ॥३॥ शुभ अशुभ रूपेंकरी, चरित्र विचित्र छे तास ॥ स्थूल मती नवि उलखे, योगी लहे गति जास ॥ ४ ॥ वडो भाइ ए मोहनो, काल परिणती कंत ॥ नाटक वहभ्भ जेहने, त्रिभुवन व्यापक तंत ॥५॥ लोकस्थिति भगिनी वडी, जेहने जाणे सहु कोय ॥ वाकी वल नहि केहनुं, तेह करे ते होय ॥ ६ ॥

॥ ढाल सातमी ॥

॥ दोणा दें रे मोड्या दोणा ॥ ए देशी ॥ कुदरत जो जो कर्मनी, विध विधना बनावे वेष रे ॥ नाच नचावे नवनवा, दिलमां रीके नृप देख रे ॥ बे एहवो रे ते तो बे एहवो ॥ १ ॥ रासभरूपें करे देवने, रासभने करे देवरूप रे ॥ तिर्यंचनें करे नारकी, नारकीने तिरिय सरूप रे ॥ बे एहवो० ॥ २ ॥ कुंथुरूपें करिने करे, कुंथुने करे गजराज रे ॥ रंक करे जे रायने, रंकने करे महाराज रे ॥ बे एहवो० ॥ ३ ॥ धनवंतने निर्धन करे, निर्धनने करे धनवान रे ॥ रोगरहित करे रोगिने, निरोगीने करे ग्लान रे ॥ बे एहवो० ॥ ४ ॥ शोकरहित शोकवानने, शोकरहितने करे शोकवंत रे ॥ सुखियानें डुखिया करे, डुखियाने करि सुखिया अनंत रे ॥ बे एहवो० ॥ ५ ॥ एहवी शक्ती एहनी, भाखी बे भगवान रे ॥ विचित्ररूपी कह्यो ते वती, नहिं कोइ एह समान रे ॥ बे एहवो० ॥ ६ ॥ देव मानव तिरिय नारकी, अनंत पात्रें मोह एम रे ॥ नृत्य देखाडे नित नवां, ए देखी रीके जेम रे ॥ बे एहवो० ॥७॥ चारित्र धर्म तणे पखें, थाय शुभरूपें ए सखाय रे ॥ अन्यदा मोहना पक्षने, पोषंतो रहे सदाय रे ॥ बे एहवो० ॥ ८ ॥ ज्यारें पासुं करे जेहनुं, त्यारे तेहनी थाय जीत रे ॥ साधारण समजो तिणे, एहवी कही एहनी रीत रे ॥ बे एहवो० ॥९॥ उदयरतन कहे आतमा, बीजो मेली बनाव रे ॥ सूधो सातमी ढालमां, समज जे कर्म सभावरे ॥ बे एहवो० ॥ १० ॥

॥ दोहा ॥

॥ बे गोलीनो चरडुउ, ज्येष्ठ बंधुने जाण ॥ रूठो मोह राजा मने, वदे ते एवी वाण ॥ १ ॥ बंधव तुझ आगल बहू, नेह धरी अमे नित्य ॥ नृत्य कला दाखूं नवी, जिम रीझे तुज चित्त ॥ २ ॥ सदागम योगें ते सदा, नाटकनो करे भंग ॥ पात्र पहोचाडे शिवपुरी, वेरी करे विरंग ॥ ३ ॥

॥ ढाल आठमी ॥

॥ रसीयानी देशी ॥ तो पण तुं तेहनुं पासुं करी, अमने मनावे रे हार ॥ सहोदर ॥ ए लक्षण ताहरुं हुं लहेतो नथी, एहश्यो ताहरो रे आचार ॥ सहोदर ॥१॥ इम नवि कीजें हो सुगुण सहोदरु, मूक तुं मननी रे गाढ ॥ सहोदर ॥ जाते दाडे हो पर नहि आपणा, हसतां न जइयें रे हाम ॥ सहोदर ॥ २ ॥ खांतें कहो किम ते खेल खेलियें, जेणे थाए घरमां

रे हाण ॥ सहोदर ॥ पुत्र पीयारे हो निज घर नवि वसे, ए शीख तूं मनमां रे आण ॥ सहोदर ॥३॥ आचरण तारां कहो कोण उलखे, नानाविध तारा रे ढंग ॥ सहोदर ॥ कुलनो बोळु वेरु तुं सही, जे शत्रुसुं करे रे संग ॥ सहोदर ॥ ४ ॥ तव हसी शिर चुंबो देइने, भुजसुं भरावी रे बाथ ॥ सहोदर ॥ इम बोले ते आंसूं वरसतो, करम संचय नर नाथ ॥ सहोदर ॥ ५ ॥ वत्स हूं जाणुं छुं चेष्टा एहनी, जिम तुं भाखेछे रे तेम ॥ बंधवजी ॥ मूल कापे छे ए सही आपणां, तो पण करिये रे केम ॥ बं० ॥ ६ ॥ स्वभाव माहरो छे ए रीतनो, तज्यो न जाय रे तेह ॥ बं० ॥ अनंत कालनो एह सुं माहरे, चाल्यो आव्यो रे सनेह ॥ बं० ॥ ७ ॥ महोबत मेली न जाय तेहनी, जीव जो जाय तो जाउ ॥ बं० ॥ कांइक क्यारे समारुं तेहनो, दिल धरी तेणें रे दाउ ॥ बं० ॥ ८ ॥ काज तुमारां साधुं छुं सर्वदा, तुमे छो मारी रे पांख ॥ बं० ॥ त्रिभुवनमां हूं गाजूं तुम वडें, जे कहो ते सधारुं रे धांख ॥ बं० ॥ ए ॥ तव त्यां मोह महिपति बोलिउ, निज अव्यय पुरथी रे वेर ॥ बं० ॥ सहाय संसारी जीव आपो मुने, जिम करुं शत्रुने रे जेर ॥ बं० ॥ १० ॥ असंव्यवहार नामें निजपुरथकी, कर्मभूपालें रे ताम ॥ बं० ॥ दुर्भव्य ने अभव्य बहु आपिआ, अनुज ने सखाइ उद्दाम ॥ बं० ॥ ११ ॥ मोहनृपनुं महत्व उपिउं तिणे, खलकमां वधारी रे ख्यात ॥ श्रोता जी ॥ उदयरतन कहे आठमी ढालमां, मोहनी मोटी रे वात ॥श्रो०॥१२॥

॥ दोहा ॥

॥ चारित्र धर्मना सैन्यमां, वेगें गइ ते वात ॥ निरानंद सघळुं थयुं, सैन्य सुणी सहसात ॥ १ ॥ सर्वगाथा ॥ १४३ ॥

॥ ढाल नवमी ॥

॥ सहियां माहरां नयण समारो ॥ ए देशी ॥ तेहवुं ते देखी ने मंत्री, सदबोध कहे नृपने रली जी ॥ स्वामी एम शुं गलि जाउ छो, कायरनी परे कलकली जी ॥ १ ॥ आपद पडे उपाय तेहनो, उत्तम आलोचे मुदा जी ॥ पग पसारी बेसवुं शोचने, क्लीवके कामनीने सदा जी ॥ २ ॥ उद्यम पांखे आवास लागे, बुद्धि विना जे बेशी रहे जी ॥ जलण तेहनुं सर्वस्व जाले, लाभ किश्यो कहो ते लहे जी ॥ ३ ॥ दिन स्वामी जातीमद वेस्यो, निज पराक्रम मूके नहीं जी॥तो ते फरी उदयने पामे,आपदने अंते सही

जी ॥४॥ धीरपणुं धरिने ते माटे, उपाय एहवो कीजियें जी ॥ जिम एहथी समाधान थाये, अरियणनो अंत लीजियें जी ॥ ५ ॥ तव मंत्रीने कहे महाराजा, युक्ति ए तूं जाणे सवेजी ॥ ते माटे जे तुजने गमे ते, हुकमत ते कीजें हवे जी ॥ ६ ॥ निज स्वामीना पाय नमिने, सदबोध वलतो एम वदे जी ॥ मनमांहिंथी आरति मेली, वात एक धरजो हदे जी ॥ ७ ॥ अवश्य आपणने जावुं घटे छे, कर्म परिणाम कने वही जी ॥ जिम पावकें दाधा प्राणीनी, पावक पाडे समे सही जी ॥ ८ ॥ शत्रुनी पण समय लईने, मरजी माफक चालियें जी ॥ जिम सघलुं बाल्युं जे अग्नें, घरमां तेहने फिरि घालियें जी ॥ ए ॥ पोखिएं छैएं आपण एहना, शुभ पक्षने सर्वदा जी ॥ आपण वली आदेश एहनो, फेरवता नथी कदा जी ॥ १० ॥ चाकरी ए चित धरीने, दिलासो देशे किश्यो जी ॥ आखर एहवो दुष्ट नथी ए, जोतां मोहराजा जिश्यो जी ॥ ११ ॥ नवमी ढालें नेह धरी ने, उदयरत इम उचरे जी ॥ जाण अछे जे जिन वाणीना, फेरव्या ते नवि फरे जी ॥१२॥

॥ दोहा ॥

॥ सदबोधनुं कह्युं सांजलि, इत्यादिक अवदात ॥ चारित्रधर्म ते चित्तमां, राजा थयो रलियात ॥ १ ॥ आगल करि मंत्रीशने, थोडे से परिवार ॥ धर्मराजा तव धाइने, पोहोतो तसु दरबार ॥ २ ॥ सर्व गाथा ॥ १५७ ॥

॥ ढाल दशमी ॥

॥ निज गुरु चरण पसाय ॥ ए देशी ॥ सदबोध मंत्री ताम, अवसर जोईरे, कर्म राजाप्रति बोलिउरे ॥ पडि वेलामां आज, प्रभु अम साथेरे, तुमें पण अंतर कियोरे ॥ १ ॥ न घटे ए तुमने नीति, काल प्रमाणें रे, अधिके उछे जे त्रेवडो रे ॥ स्वभावे तुमें स्वामी, अमशूं तेणे रे, आंटो न राखो ए वडो रे ॥ २ ॥ जुनी स्थितिने जोय, केहनुं कह्युं रे, लेखे तुमें मत लेखवो रे ॥ पालो पूरव प्रीत, न करो एक पखो रे, इम न घटे उवेखवो रे ॥ ३ ॥ मौन रही वडी वार, तव ते नृप रे, मनमांहि विचारिने रे ॥ अव्ययपुरथी एक, एहुने काजें रे, सहायक आण्यो धारिने रे ॥ ४ ॥ सदबोधने ते देखाडे, प्रछन्नपणे रे, कानमांहि कह्युं तदा रे ॥ तमने पण एक एह, सहाय थाशे रे, अनुक्रमें सजो मुदा रे ॥ ५ ॥ हवणां तो एहनां तेह, वेरी थासे रे, अनुमति महारी छे इशी रे ॥ नहिंतो कुटंब विरोध, थाय अमारी रे, करशोमां

चिंता किशी रे ॥ ६ ॥ आखरें तुमने एह, जिम तिम करी रे, आणी मेल
शुं अमे रे ॥ ए वातनो संदेह, रखे हृदयमां रे, रेख मात्र राखो तुमे रे
॥ ७ ॥ इम सुणी धर्म नरिंद, परिकर लेई रे, पहोतो पोताने घरें रे ॥ मंत्री
ने कहे एम, ए शूं कीधूं रे, कर्म नृपें कपटनरें रे ॥ ८ ॥ मोह राजाने स
हाय, बंधव जाणी रे, बहु आप्यो मननी हरे रे ॥ आपणने दिठ एक, तो
पण जुठ रे, देखाडशे कालांतरे रे ॥ ए ॥ तव मंत्री सद्बोध, हसीने कहे
रे, स्वामी शुं सूण्यो नथी रे ॥ धेनु अन्न गविठाण, लहियें ते वारू रे, मन
मायें जुठ मथी रे ॥ १० ॥ मोह बंधु हितवंत, आदेश कारी रे, सुनट सहु
छे तेहना रे ॥ अंत तणा करनार, जग जाणीता रे, आपण वेरी एहना रे
॥ ११ ॥ बहिन वडी बलवंत, लोकस्थिति नामें रे, कर्म राजानी जे कही
रे ॥ ते मोहनी वांछे जीत, अनंतमे नागें रे, आपणो जय वांछे सही रे
॥ १२ ॥ शत्रु अनेक हुं एक, ए पण इहां रे, खेद रखे राखो हृदे रे ॥ ए
कलो जिम आदित्य, तमन्नर दले रे, फेरि जिम पामें उदे रे ॥ १३ ॥ ब
हु कालें ते सहाय, मिलसे तेहनो रे, खरखरो न करो विच्नु रे ॥ पंखी नू
ख्या माट, काची फुलें रे, उंबर किम पाके प्रत्नु रे ॥ १४ ॥ शीघ्र न थइयें
स्वामि, धीरां धीरां रे, कारज सघलां नीपजे रे ॥ दशमी ढालें एम, उदय
पयंपे रे, धर्मं धन सुख संपजे रे ॥ १५ ॥ सर्वगाथा ॥ १७२ ॥

॥ दोहा ॥

॥ एक चितें सब ए सुणो, चंड मौलि नूकंत ॥ अचरज लहि इम चिंत
वे, अहो मंत्रि बुद्धिवंत ॥ १ ॥ यथार्थ नामें ए सही, धन्य मंत्रि सदबोध
॥ बीजानें इम बोलतां, किम आवे अविरोध ॥ २ ॥ केवल इम अनुग्रह
कस्यो, इहां आवि मुनिराज ॥ आख्यानक कहि आपणुं, साखां आतम का
ज ॥ ३ ॥ क्षणेक इम आलोचिने, मिलित लोचन महिपाल ॥ बोल्यो वे
कर जोडिने, मन लहि मोद रसाल ॥ ४ ॥ नगवत चारित्र धर्मने, सोंप्यो
जेह सहाय ॥ शुं शूं तेहने शंनल्युं, आगल कहो उपाय ॥ ५ ॥ अति उ
त्सुक मन माहरुं, सुणवा एह संबंध ॥ कहो नगवन सुपसायकर, प्रेमें
एह प्रबंध ॥ ६ ॥ सर्वगाथा ॥ १७८ ॥

॥ ढाल अग्यारमी ॥

॥ चरणाली चामुंमा रण चढे ॥ ए देशी ॥ मुनिवर कहे महाराजने,

तव कर्म परिणामें मोर्डे रे ॥ असंव्यवहारथी उद्धरी, धस्यो तेह व्यवहार निगोदें रें ॥ मुनि० ॥ १ ॥ तेह समीपें रह्यो तिहां, पोतें प्रछन्नरूपें सोई रे ॥ मोहादिक तव चिंतवे, जुगति तेहनी सर्व जोई रे ॥मुनि०॥२॥ अहो ए नायक आपणो, नारदरूप निहालो रे ॥ गारना खीलानी परें, अस्थिर माया घालो रे ॥ मुनि० ॥३॥ वणकरनी जेहवी नली, जेहवी घंटनी लाली रे ॥ मृदंग जेहवुं मातंगनुं, एहवी एहनी गति नाली रे ॥ मुनि०॥४॥ मध्य मणी जिम हारनो, तिम ए उन्नय पक्षगामी रे ॥ शीखामण पण देतां सही, हठ नवि मेले हरामी रे ॥ मुनि० ॥५॥ अंगी जे एणें कयुं,ते हृदयमांहि नवि रह्युं रे ॥ नृत घट ऊपर जल यथा, चिहुंपासे जाए वयुं रे ॥ मुनि०॥ ६ ॥ जल जिम जलणे तापव्युं, वलि शीतल थाय विशेषो रे ॥ शीखामण शी सहेजने, जिहां अफल थाय उपदेशो रे ॥मुनि०॥७॥ जोए थयो बे बेरडो,तो जाशे एहनी लाजो रे ॥ समय जोइ निज भुजबलें, आपण साधशुं काजो रे ॥ मुनि० ॥ ८ ॥ इम चिंतीने आवियो, ते संसारी जीव पासें रे ॥ मोहादिक मलि एकठा,दुःख देवा उल्लासें रे ॥मुनि०॥९॥ नावी धर्म नृपालनो,नीरु जाणी टोक्यो रे ॥ अनंत उत्सर्पणी लगें,व्यवहार निगोदमां रोक्यो रे ॥ मुनि० ॥ १० ॥ दुख दीधां कोडो गमें, जे संसारिने तेणें रे ॥ अग्यारमी ढालें उदय वदे,ते कह्युं न जाए केणें रे ॥मुनि०॥११॥

॥ दोहा ॥

॥ कालांतरे कोइक समे, लाग लहिनें तेह ॥ कर्मे पृथिवी कायमां, वास्यो तिहांथी लेह ॥ १ ॥ मोहादिक दुष्टे मली, त्यां पण तेने निशंक ॥ घेरी राख्यो घण दुःखमां, उत्सर्पणी अशंख्य ॥२॥ इम अप तेउ वाउमां, तेमज रोकी तास ॥ दुःख दीधां लाखो गमे, कर्मनुं उपर जास ॥ ३ ॥ प्रत्येक तरुमांहे पडी, शितेर कोडाकोडि ॥ सागरोपम राख्यो सही, दुःख दइ लख कोडि ॥ ४ ॥ सर्वगाथा ॥ १९३ ॥

॥ ढाल बारमी ॥

॥ गौतम समुद्र कुमार ॥ ए देशी ॥ इम ते संसारी जीव, वलि मोहादिकें, वलि वलि पाछो वालिने ए ॥ वाश्यो व्यवहार निगोदें, पृथिव्यादिकमां, फरि राख्यो तिहां घालिने ए ॥ १ ॥ इम एकेंद्रिमांहि, अनंत उत्सरपणी, फेरव्यो ते फरि फरी ए ॥ पुजल तिहां असंख्य, परावर्त्त्यां तिणे,

भव बहुला करि करी ए ॥ २ ॥ वलि पामी विचालु,कर्में ते तिहांथी, विगलेंद्रिमां वासिउ ए ॥ ते जाणीने दुष्टें, पूठें आवीने, पराभव पासें पासिउ ए ॥ ३ ॥ वरष संख्याता सहस्रें रे, तिहां वलि रोंकीने, निगोदादिक मांहे धस्यो ए ॥ असंख्याता पुग्गल, परावर्त्तावीने, विगलेंद्री रूपें कस्यो ए ॥ ४ ॥ संख्यातो तिहां काल रे, वासी ने वलि, एकेंद्रिमां आणिउ ए ॥ वलि विगलेंद्रिमांहे, वलि एकेंद्रीमां, तेहने इम बहु ताणिउ ए ॥ ५ ॥ इम अवतरी वार अनेक, पुग्गल अनंता, परावर्त्त तिहां दुःख घणे ए ॥ वलि कर्मं लहिय विचालुं रे, अवतास्यो तेहने, समुर्छिम पंचेंद्रियपणे ए ॥ ६ ॥ तिहां पण धायां पूंठे रे, मोहादिक मली, अष्ट भव तिहां रोकीने ए ॥ पूर्व कोडि प्रत्येक, दुःख दीधां बहु,दया न आवी दोषीने ए ॥ ७ ॥ अरिने लहि आसन्न रे, वलि वाली पाछो,एकेंद्री अवतारीउ ए ॥ वलि विगलेंद्रिमांहि रे, समुर्छिम पंचेंद्री,अवतारी दुःख भारीउ ए ॥८॥ इम पुग्गल अनंतरे, परावर्त्तावियां, ते संसारी जीवने ए ॥ मोह राजानी साथें रे, दुःखमां रोकीने, राख्यो करतो रीवने ए ॥ ९ ॥ बोल्यो बारमी ढालें रे, महाराजा मोहनो, जोशो जो जो भविजना ए ॥ सांभलि एह संबंध रे, चितमां चेतजो, उदय वदें थइ एकमना ए ॥ १० ॥

॥ दोहा ॥

॥ अवसर लहि तव अन्यदा, तिरिय पंचेंद्रि मांहि ॥ कर्मं ते अवतारिउ, अंगीकृत उछांहि ॥ १ ॥ त्यां पण अरि आवी तिणें, पूर्व कोडि प्रत्येक ॥ अष्ट भवां तस रोकिने, दीधां दुःख अनेक ॥ २ ॥ वली क्रोधें वाली त्यां थकी, अवतास्यो ते जंत ॥ एकेंद्रीथी आदिदें, गर्भज तिरय पर्यंत ॥३॥ पुग्गल परावर्त्या तिहां, आपदमांहि अनंत ॥ वलि मठ पंचेंद्री कस्यो, तक लहि कर्मं तंत ॥ ४ ॥ सर्वगाथा ॥ २०९ ॥

॥ ढाल तेरमी ॥

॥ किरती अरजे जेम वारी ॥ ए देशी ॥ मोह राजादिक लहि ते मर्म, चिंते जोजो बंधुनां कर्म ॥ आघो आघो चलवे छे एहने, जाणिये छे मेल वशें तेहने ॥ १ ॥ इम आलोची ते संसारी, मोहें दीधो मांस अहारी ॥ घणुं करावीने जीवघात, नरकमांहे ते नाख्यो अनाथ ॥ २ ॥ असंख्य काल त्यां दुःखमां धरीउ, वली कर्में तिहांथी उधरीउ ॥ विहंगम जातिमें

वाळ्यो लेइ, वळी मोहादिक क्रोध धरेइ ॥ ३ ॥ एकेंद्रिआदि नरक पर्यंत, तेमांहे रूंध्यो जंत ॥ पुद्गल परावर्त अनंत, डुःख तेहनुं जाणे भगवंत ॥४॥ संमुर्छिम मनुष्यमाहें वलि सोई ॥ कर्मे सरजाव्यो तक जोई ॥ तिहां पण मोहादिकें भव अष्ट ॥ रोकीने दीधुं महाकष्ट ॥ ५ ॥ अष्ट अंतर मुहूर्त तिहां राखी ॥ वळी तिमज डुर्गति ते दाखी ॥ संमुर्छिम अंते एकेंडी आदें ॥ भव बहुला कीधा प्रमादें ॥६॥ अनंत पुद्गल परावर्त्तन कीधां ॥ मोहादिकें रोकी डुख दीधां ॥ गतागतें लही बाधा जेह ॥ ज्ञानी विना कुण जाणे तेह ॥ ७ ॥ वळी कर्मे कांइक तक साधी ॥ गर्भज मनुज तणी गति वाधी ॥ अनारजदेशें लहि अवताख्यो ॥ तब मोहादिकें एम विचाख्यो ॥ ८ ॥ हा हा इणे अहो सहि हणिया ॥ आपणने लेखे नवि गणिआ ॥ अहो अहो कर्म परिणामें उदेरी ॥ घणी भूमि आण्यो ए वेरी ॥ ए ॥ तव रसगृद्धि प्रवृत्ति ए नामें ॥ मुख मरडी बोली ते ठामें ॥ अम अबलानुं जुउ बल सामी, सबलाने पण नाखुं दामी ॥ १० ॥ तो प्रभु आगल कहो ए शे ले खे ॥ आण तुमारी कुण उवेखे ॥ आदेश जो अमने आपे देव ॥ तो गले झाली एहने ततखेव ॥ ११ ॥ तुमचरणे लावुं तहकीक ॥ वचन अमारां ए मानजो ठीक ॥ उदय रत्न कहे तेरमी ढालें ॥ धन्य जे न पडे मोहनी जालें ॥ १२ ॥

॥ दोहा ॥

॥ तव मोह नृप मुखें बोलिउ, कलट आणी उर ॥ अहो अमारा सैन्यमां, स्त्री पण एहवी शूर ॥ १ ॥ इम कहि आपी आगना, वेगें घेरो जइ तेह ॥ हुं पण तुम पूंठें लगो, आवुं छुं दल लेह ॥ २ ॥ प्रभु आणायें त्यां जई, रस गृद्धियें दीन ॥ रसनो ते रागी कख्यो ॥ मदिरामांस तल्लीन ॥ ३ ॥ प्रवृत्तियें जई प्रेरिउ ॥ जननी भगिनी साथ ॥ अगम्यगमन उलट भरे, कराव्युं दिन रात ॥ ४ ॥ नरक गतें वली नाखीउ, तरत लेइने तेह ॥ मब एकेंडीमां फरी, रोक्यो काल अछेह ॥ ५ ॥ पुद्गल परावर्त्यां तिहां, आपद भरे अनंत ॥ विपदा वेठी जे वली, ते लहे तेहज जंत ॥६॥

॥ ढाल चौदमी ॥

॥ नदी यमुनाके तीर उडे दो पंखियां ॥ ए देशी ॥ अनारज देश मझार ते, कर्मे आणिउ ॥ मातंगना कुलमांहि, ते मोहें जाणिउ ॥ १ ॥ घाल्यो नरक मझार, वलि नरभव दीउ ॥ तव महाजड जात्यंध, ते मोह नृपें

कीयो ॥ २ ॥ किहां एक पाषाणरूप, विरूप वली कस्यो ॥ एकेंद्रियादिकमांहे के, धवधव ले धस्यो ॥ ३ ॥ रोक्यो केतो काल, वलि कर्मे रली ॥ आप्यो नर अवतार के, अवसर अटकली ॥ ४ ॥ दरसनावर्ण ताम के, जाति बधिर पणुं ॥ आपी कस्यो पत्थररूप के, दुःख देवा घणुं ॥ ५ ॥ तिमज फेरव्यो तेह के, पहेलो जिम कह्यो ॥ क्यां एक पंगु मूक के, कुबजपणो लह्यो ॥ ६ ॥ क्लीब कांणो कुरूप के, दासपणो धरी ॥ वसकरि वार अनंत के, फेरव्यो फरि फरी ॥ ७ ॥ अनंता पुग्गल एम, परावर्त्तन कस्या ॥ गण्या ते न गणायके, फेरा जे फस्या ॥ ८ ॥ कर्म परिणामें ते वली, मनुजगतें ठव्यो ॥ निजचर मोकली मोहें, तिहां पण परभव्यो ॥ ९ ॥ दुष्ट चरें ते किहां एक, कुष्टी महोदरी ॥ वायुरोगी पित्तवानके, गुल्मी भगंदरी ॥ १० ॥ कंठ ने कर्ण कपाल, तालु आदे घणा ॥ उपाया महा रोग, जिहां दुःखनी नहिं मणा ॥ ११ ॥ ताव पीहो अतिसार, दसन रसना गदें ॥ अधर ग्रीवा आंख रोगें ते, पीड्यो पदें पदें ॥ १२ ॥ कपोल रोगी वंध कुष्टीके, शिर रोगी कस्यो ॥ हृदय उदर पूठें सूलके, आम रोगें भस्यो ॥ १३ ॥ अरुचि प्रमेह खीन रोग, आदि महा गद भरे ॥ पीड्यो पाडे सुख रीवके, विलवे बहु परें ॥ १४ ॥ चौदमी ढालें तेह, लह्यो मोहने जणें ॥ उदय वदे महा दीन ते, घेस्यो गद घणें ॥ १५ ॥

॥ दोहा ॥

॥ जाण्यां अजाण्यां आचरे, औषध अनेक उपाय ॥ जिम तिम जे तेंना कह्या, चूकी काय वनाय ॥ १ ॥ अभक्ष अपेय वे आदस्यां, मंत्र तंत्र वलिदान ॥ शरीर काज शंका तजी, पाप कस्यां असमान ॥ २ ॥ पाप भरें पामी प्रगट, नर भवहारी जंत ॥ एकेंद्रियादिकमां कस्यो, भम्यो ते वार अनंत ॥ ३ ॥ मानव भव वलि एकदा, पाम्यो कर्म प्रभाव ॥ तव मन मांहे कोपित, मोहराय तिण ठाय ॥ ४ ॥ सर्व गाथा ॥ २८८ ॥

मंत्री हिंसकपणुं ॥ सो० ॥ २ ॥ किहां खात्रपाडो खरो दुष्ट, किहां एक साधु घाती किउ ॥ सो० ॥ किहांएक कान त्रोडो कुलहीण, किहांएक दासपणो दिउ ॥ सो० ॥ ३ ॥ किहांएक धूर्त ठग धर्महीण, धाडपाडो परधन हरो ॥ सो० ॥ कूडा घाटतणो घडनार, जनवंचक जोडागरो ॥ सो० ॥ ४ ॥ किहांएक बांद जलो कोटवाल, गुप्ति पालक मंत्रीसरू ॥ देश नगरना देइ अधिकार, खर कर्मनो कर्यो आगरू ॥ सो० ॥ ५ ॥ किहांएक नेल सने लमां नेलि, तेल इक्कु पीलाविने ॥ सो० ॥ मदिरा मांस वेचावी क्यांइ, किहांएक शस्त्र घडाविने ॥ सो० ॥ ६ ॥ लोह लाख अने रस केस, हलमूसल उखलतणा ॥ सो० ॥ सोंप्या बहु सावद्य व्यापार, घरटी आदि अति घणा ॥ सो० ॥ ७ ॥ वली सोंपी अधम अनेक, कुटुंब काजे आजीविका ॥ सो० ॥ इम हिंसा करावी अनंत, दुर्गतिनी जे दीपिका ॥ सो० ॥ ८ ॥ एकेंडियादिकमांहि, वास्यो तेहने वली वली ॥ सो० ॥ अनंतां पुजल एम, परावर्त्तन कीधां वली ॥ सो० ॥ ९ ॥ इम मानव गति पुरमांहि, प्राणी ते पाछो फरी फरी ॥ सो० ॥ आव्यो त्यां अनंती वार, अवतार बहुला करी करी ॥ सो० ॥ १० ॥ उदय रत्न कहे इणि नांति, पनरमी ढालें प्रेमसूं ॥ सो० ॥ कथा ए सुणवा कान, नितप्रतें आवजो नेमसूं ॥ सो० ॥ ११ ॥

॥ दोहा ॥

॥ मोह राजा हवे अन्यदा, मेली निज समुदाय ॥ मनसूं आलोची मुदा, इम बोल्यो तिणि ठाय ॥ १ ॥ असंव्यवहार पुर आदिथी, मांभी अद्य पर्यंत ॥ एसंसारी साथें नम्यो, मुऊ आदेशें तंत ॥ २ ॥ मिथ्या दर्शन महा सुनट, सेवक तेहना शूर ॥ ज्ञानावर्ण अज्ञान बे, नडवाव जेहनो नूर ॥ ३ ॥ ए त्रणेना प्रनावथी, देव धर्म गुरु नाम ॥ कानें पण क्यारे नवि सुण्युं, नमतां तिण कोइ ठाम ॥ ४ ॥ लोक नाषित पण नवि लह्यो, केवल गमायो काल ॥ आहार निद्रा मैथुन वसें, अवर जाण्युं सर्व आल ॥ ५ ॥ हवे सुणिएंबे एहवो, कनक पुरें कर्म राय ॥ अमरशेठ घरें अंगना, नंदा नाम कहेवाय ॥ ६ ॥ तेहनी कुखें उपजावशे, पुत्र पणें पुर तेह ॥ कांइक धर्म वासित अछे, तिण मुऊ चिंता एह ॥ ७ ॥ रखे पामे ते धर्मने धर्मी लोक प्रसंग ॥ अधर्मी पण लहे धर्मने, वसतां धर्मी संग ॥ ८ ॥

॥ ढाल सोलमी ॥

॥ जरमर वरशे मेह हो राजा परनाले पाणी पडे महारा लाल ॥ ए देशी ॥ मिथ्या दर्शन नामें हो राजा, मंत्रीसर इम सांजली, महारा लाल ॥ ताली ले अज्ञानने हाथ ॥ हो० ॥ मुखें तव बोल्यो मन रली ॥ मा० ॥ १ ॥ अहो जलुं थयुं एह ॥ हो० ॥ घी ढल्युं खीचडी ऊपरे ॥ मा० ॥ आण न लोपे कोई ॥ हो० ॥ सेठ ते अमरतणें घरें ॥ मा० ॥ २ ॥ माथे लई ते माटे ॥ हो० ॥ काम ए में करवूं सही ॥ मा० ॥ इम करतां जो कांइ ॥ हो० ॥ मुजथी निपजशे नहीं ॥ मा० ॥ ३ ॥ तो अनंत तमारे योध ॥ हो० ॥ एक एकथी बलिया घणुं ॥ मा० ॥ रसग्रध्द आदी रौद्र ॥ हो० ॥ अजुत दल अबलातणुं ॥ मा० ॥ ४ ॥ तेहवो हुं नहि बलवान ॥ हो० ॥ जेहवुं बल ठे एहनुं ॥ मा० ॥ पग पग पाडे वाट ॥ हो० ॥ मुह नवि राखे केहनुं ॥ मा० ॥ ५ ॥ स्वामी वडें संसार ॥ हो० ॥ अथवा बल दाखे सहु ॥ मा० ॥ तो माहारां वखाण ॥ हो० ॥ इये कारणे बोल्यो बहु ॥ मा० ॥ ६ ॥ तेहवें तिहां तरुणी एक ॥ हो० ॥ चिंतव्या मोह मंमपतलें ॥ मा० ॥ क्लीबशुं करती कल्लोल ॥ हो० ॥ बेठी ठे बाहेर जूतलें ॥ मा० ॥ ७ ॥ ते मंत्रीना सुणि बोल ॥ हो० ॥ अट्टहासे ते हसी ॥ मा० ॥ क्लीब करे ततकाल ॥ हो० ॥ ताली लेईने उल्लसी ॥ मा० ॥ ८ ॥ तव विस्मित मोह नरिंद ॥ हो० ॥ ऊठी आव्यो बाहिरें ॥ मा० ॥ तिहां विपर्यय समुद्र आसने ॥ हो० ॥ बेसी बोल्यो इणि परें ॥ मा० ॥ ए ॥ कहे वत्से तूं केम, हे जद्रे ॥ ए क्लीब आगें हसी इहां ॥ मा० ॥ तव प्रणमी तसु पाय ॥ हो० ॥ तरुणी ते बोली तिहां ॥ मा० ॥ १० ॥ देवा सहुने दुःख ॥ हो० ॥ जालम हुं बुं योगिणी ॥ मा० ॥ वाहलांना पाडुं वियोग ॥ हे० ॥ हुं आपदा इष्ट वियोजनी ॥ मा० ॥ ११ ॥ ए मरणना में महा योध ॥ हो० ॥ पंमक पराक्रमनो धणी ॥ मा० ॥ गणे त्रिजुवननें तृण मात्र ॥ हो० ॥ सूरो सुजट शिरोमणी ॥ मा० ॥ १२ ॥ इंद्रादिक माने आण ॥ हो० ॥ अलंघ्य शासन एहनुं ॥ मा० ॥ धिंगी ठे एहनी धाड ॥ हो० ॥ जगव्यापक बल जेहनुं ॥ मा० ॥ १३ ॥ जन बाल वृध्द युवान ॥ हो० ॥ उंलखे एहने सहु ॥ मा० ॥ प्रजु प्रसादें एह ॥ हो० ॥ बल धरावे ठे बहु ॥ मा० ॥ १४ ॥ उदय रतन कहे एम ॥ हो श्रोता ॥

सोलमी ढालमांहे सुणो ॥ मा० ॥ यमनें जीते जेह ॥ हो० ॥ जालिम जोर तेहनुं गणो ॥ मा० ॥ १५ ॥

॥ दोहा ॥

॥ प्रभु तुम बंधु कनक पुरें, अमरशेठने गेह ॥ लइ नंदा कूखें धस्यो, सत्व संसारी तेह ॥१॥ ठ महिना वोल्या जिश्ये, तव लहि तुम अभिप्राय ॥ मरण सहायनी हुं तिहां, ततखिण पहोती जाय ॥ २ ॥ तुरत तात तेह नो हस्यो, जननी जणतां खेव ॥ शेष कुटंब सर्व संहस्युं, तुम पसांयें देव ॥ ३ ॥ तव मरणें आवी तिहां, ते पण लीधो ताणि ॥ कुलमां कोइ न उगस्युं, नाम रह्युं निर्वाण ॥ ४ ॥ एकेंडियादिकमांहि वलि, कंमो धस्यो अथाग ॥ पुजल अनंत परावर्त्तशे, तव ते लहेशे ताग ॥५॥ मिथ्या दर्शन महत्तम, मंत्री मुखनी वाणि ॥ सांजलिने स्वामी अमे, हस्यां बने ते गणि ॥६॥

॥ ढाल सत्तरमी ॥

॥ सुंदर हे सुंदर बालुं दक्षणरी चाकरी ॥ ए देशी ॥ राजन हो राजन, मोह राजा मन वसि रह्यो ॥ खिजमतकारी ते खंत ॥ रा० ॥ पराक्रम तेहनां सांजली, उपनो हर्ष अत्यंत ॥ रा० ॥ मो० ॥१॥ रा०॥ तव प्रेमें अवलोकिने, करशुं फरसी देह ॥ रा०॥ आग्रह नामें खवासने, कहे मोह राजा तेह ॥ रा० ॥ मो० ॥ २ ॥ सेवक हो सेवक, जो जो महारा सैन्यमां, पंमकनुं पण जोर ॥ रा० ॥ त्रण भुवनमांहे एकलो, जेह पडावे शोर ॥ रा० ॥ मो० ॥ ३ ॥ रा०॥ मरणमुखें तव बोलिउं, एहवुं म कहो स्वामि ॥ रा० ॥ प्रतापते प्रभुनो सही, जे सेवक साधे काम ॥ रा० ॥ मो० ॥ ४ ॥ यतः ॥ सिध्यंति मंदमतयोऽपि यदत्रकार्ये, संजावनागुणमवेहि तमीश्वराणां ॥ भियात्सपंगुररुणोऽपिकथं तमांसि, सूर्योरथस्य धुरि तं यदिनाऽकरिष्यत् ॥ १ ॥ मोह राजा वलतो वदे, वत्स सांजल कहुं वात ॥ से० ॥ जो तो चोपें ते जीवने, रहिजे तुं दिन रात ॥ से० ॥ मो० ॥ ५ ॥ मानव गति पुरिमां किश्रां, जोते आवे जीव ॥ से० ॥ तो उव्वा पण तेहने, रखे देतो सुणि रीव ॥ से० ॥ मो०॥ ६ ॥ से०॥ धर्म अंकुर जिम नवि धारे, तिम उनमूली तास ॥ से० ॥ ततखिण पाछो वालि ने, आणजे आपणें वास ॥ से० ॥ मो० ॥ ७ ॥ आण प्रमाण करी सवें, उव्या न करी जेडि ॥ से० ॥ मरणादिकें मन मोदशुं, कीधी जेहनी केडि ॥ से० ॥ मो०॥८॥से०॥ कर्मप

रिणामें ते आणिउ, कुलटा नारिनी कूंख ॥ से० ॥ दुष्टौषध पानादिकें, गर्भ थी घाल्यो दुःख ॥ रा० ॥ मो० ॥ए॥रा०॥ वलि एकेंद्रियादिकमां फरी, तेम ज राख्यो नेट ॥ रा०॥ वलि कर्मे काढी धर्यो, प्रथम गर्भ त्रिय पेट ॥ रा० ॥मो०॥१०॥रा०॥ त्यां पण योनिना यंत्रमां, पीडाणो ते प्राणि ॥ रा०॥ ज णतां जननी सहित ते, मरणें लीधो ताणि ॥ रा०॥ मो०॥११॥रा०॥ वलि एकेंद्रियादिकमां धर्यो, अहो अनंतो काल ॥ रा० ॥ इम किहां इक वर्षनो, किहां बे वरषनो बाल ॥ रा०॥ मो० ॥१२॥ रा०॥ वलि किहांएक त्रण वर्ष नो, एम अनंतीवार ॥ रा० ॥ मरणें ते लीधो हरी, न लह्यो धर्म विचार ॥ रा० ॥ मो० ॥१३॥ रा०॥ एम एकेंद्रियादिकमां तेहने,वास्यो वार अनंत ॥ रा०॥ पुज्ञल परावर्त्यां घणां, जेहनो नावे अंत ॥रा०॥ मो० ॥१४॥ रा० ॥ सतरमी ढालें सांभलो, इम वदे उदयरतन्न ॥ रा० ॥ नरभव पामी निर्म लो, करजो जीव यतन्न ॥ रा० ॥ मो० ॥ १५ ॥ सर्वगाथा ॥ ३०१ ॥

॥ दोहा ॥

॥ श्री निलय नामे नगर, मानव क्षेत्र मझार ॥ तिहां धन तिलक श्रेष्ठि वसे, धनवति तस घर नार ॥ १ ॥ कर्म परिणामें अन्यदा, जीव संसारी तेह ॥ तसु उदरें आवतारीउ, लघु लाघव कले लेह ॥ २ ॥ मिथ्या दर्शन मंत्रिने, मोह लही ते तंत ॥ भाषे भय पामी मने, आतुर थइ अत्यंत ॥३॥

॥ ढाल अढारमी ॥

॥ आछे लालनी देशी ॥ नीचां नमावी नयण, वदनें न वदे वयण ॥ आछे लाल ॥ क्षण एक मनसुं आलोचिने ॥ शिर धूणी तेणि वार, मुख मेली हुंकार ॥ आ० ॥ सचिव कहे ते शोचिने ॥१॥ मन मान्या महाराज, करशुं सघलां काज ॥ आ० ॥ मुझ सबलुं कुल तेह अछे, आज लगें प्रभु कांइ, वीरीयें वासित नांहि ॥ आ० ॥ में पण मगन कर्युं न छे ॥ २ ॥ आ ज थकी ते माट ॥ विशेषे आणीसुं वाट ॥ आ० ॥ चिंता शी ए वातनी, त जावी तुम ताक, किहां ए जाशे वराक ॥ आ० ॥ नजर अमोघ छे नाथ नी ॥ ३ ॥ अल्प कालें ए बाल, गले झाली राजान ॥ आ०॥ आणीसुं आ पणें घरें॥ पण पांकीने आम, बीडुं छबी बलधाम ॥आ०॥ मंत्री जई निज मंदिरें ॥ ४ ॥ बेठो चिंतामगन, लागी जोर लगन ॥ आ० ॥ कपाल थापी भावे करें ॥ अवनी जिमणे हाथ, खणतो थको मन साथ ॥ आ० ॥ आ

जोचें अरति नरें ॥ ५ ॥ कुदृष्टि नामें तस नार, पेखी कहे तिणिवार ॥ आ० ॥ कुण जगमां युवती इशी ॥ जेहने काजें धरि राग, अरति करो गे अथाग ॥ आ० ॥ कुण तुम कालजमां वशी ॥ ६ ॥ रूप पुरंदर स्वामि, युवती जन विश्राम ॥ आ० ॥ मोहन मुनें कहोने खरुं ॥ कुण एहवी गुणवान, नारी रूप निधान ॥ आ० ॥ जेणें मन प्रभुनुं हर्युं ॥७॥ तव ते कहे गुण खाण, हसतां पण ए वाण ॥ सुण वाम ॥ कहेवी सही न घटे तुने ॥ जे तुज विण बीजी नार ॥ सूतां सुपन मजार ॥ आ० ॥ दीठी पण न गमे मुने ॥ ८ ॥ कोइक कार्य विशेष, चिंता वर्त्ते गे एष ॥ आ० ॥ तवसा भमरी उल्लालीने ॥ कहेवुं स्वामी शुं काम, एहवुं गे उद्दाम ॥ आ० ॥ जिणे राख्युं गे चित घालीने ॥ ए ॥ लीलामां त्रिभुवन देव, वश करो ततखेव ॥ आ० ॥ समरथनें चिंता किशी ॥ कहेवा योग्य जो होय, तो कहो मुज आगले सोय ॥ आ० ॥ चिंता जे चित्तमां वसी ॥ १० ॥ सुण सुनगे में कांइ, आजलगें मनमांहि ॥ सुणो वाम ॥ कपट किश्यो नवि राखिउ ॥ मुज घरनो कारनार, तुजहाथें निरधार ॥ आ० ॥ एशुं आज तें नाखिउ ॥११॥ उदयरतन कहे एम,सुणो श्रोता धरि प्रेम ॥ सुख कामें,आगमने जे अन्यसे ॥ अढारमी ढाले तेह, नवनो उद्देशो गेह ॥ सु० ॥ मन मान्युं तेहनुं थशे ॥१२॥

॥ दोहा ॥

॥ चिंतानुं कारण हवे, सुण मन राखी गय ॥ कर्म परिणामें धर्मने, काजें एक सखाय ॥ १ ॥ अव्ययपुरथी ऊधरी, ऊंचो आण्यो तेह ॥ सांप्रत श्री निलय पुरे, धन तिलक श्रेष्ठी गेह ॥ २ ॥ धनवंती कुखें धर्यो, जीव संसारी सोय ॥ जिम जिम ते वाधे तिहां, तिम इहां चिंता होय ॥ ३ ॥ प्रतिज्ञा प्रभु आगले, पण पांकी ते काज ॥ में कीधी गे मजलसे, अहो अवले सुण आज ॥ ४ ॥ तें पण तेह सुणी हशे, करिण अगे ए काज ॥ इतर लोकतणी परें, अफल न होय अवाज ॥ ५ ॥ सर्वगाथा ॥ ३११ ॥

॥ ढाल उंगणीशमी ॥

॥ गढ बुंदि हो वाला ॥ एहनी देशी ॥ चारित्र धर्म नृप गे चावो, संग्रामे महा सूरो हो ॥ प्रिये पंकजनयणी, सुनगे सुण शशिवदना ॥ कर्म परिणाम राजाने काने, ते लागो गे पुरो हो ॥ प्रि० ॥ १ ॥ मोह राजानी माजा मुकीने, कर्म करे गे पासुं हो ॥ प्रि० ॥ आग उवे गे तिणे निजघर

मां, लोक करे छे हांसुं हो ॥प्रि०॥२॥ आजलगें तो कुशलपणे ते,मे पूरण नथि पास्युं हो ॥ प्रि० ॥ फेरव्युं पण न फरे अमारूं, वेरीएं जे वाश्यूं हो ॥ प्रि० ॥३॥ निपुण अछे शत्रु ए सघला, मुज मतनिमां जेवा हो ॥ प्रि० ॥ ए अम वासित जनना मनने, समरथ छे जांजेवा हो ॥ प्रि० ॥४॥ सम्यक् दर्शन नामें सहि माहरो, विशेष अछे ते वेरी हो ॥ प्रि० ॥ धर्मबुद्धि नामें छे धूया, तेहने गुणनी लहेरी हो ॥ प्रि० ॥ ५ ॥ सुरपति सरिखा सेवे जेहने, चक्री जेहने चाहे हो ॥ प्रि० ॥ मगन थईने रहे मुनि मनमां, अवनीपति आराहे हो ॥ प्रि० ॥ ६ ॥ सुधी जन जेहनी संगति इछे, ध्यानी जेहने ध्याये हो ॥ प्रि० ॥ उत्तम जन अंगीकरे जेहने, जे अमरने मोह उपाये हो ॥ प्रि० ॥ ७ ॥ सकल सौजाग्य रूप सुधीनी, तरंगिणी ते राजे हो ॥ प्रि० ॥ तापस पण तेडे सहु तेहने, छबी अनोपम छाजे हो ॥ प्रि० ॥ ८ ॥ वश्य करवा चाहे तेह पासें, प्रथम एहने प्रेखे हो ॥ प्रि०॥ अम वासित देखी जन एहने, अमने न गणे लेखे हो ॥ प्रि० ॥ ए ॥ अम स्वामीना जक्त जे पूरा, जे रहे चरणें विलगा हो ॥ प्रि० ॥ ततखिण तेहना मन एह जांजी, अमथी करे ते अलगा हो ॥ प्रि० ॥१०॥ उत्तम कुलनी उपनी अबला, जे अदजूत रूपाली हो ॥प्रि०॥ आशक थया जेह नर एहना, ते मेले तेहने टाली हो ॥ प्रि० ॥ ११ ॥ उपदेशें जे एहने लागे, तेहने संग बीजो न सुहाय हो ॥ प्रि० ॥ एहनी पूठें जमतो हींमे, निविड स्नेही थाय हो ॥ प्रि० ॥ १२ ॥ सार करीने माने तेहने, तेहनुं पासुं ताणी हो ॥ प्रि० ॥ संसार सघलो तेहमें देखी, अमने वेरी जाणी हो॥ प्रि० ॥ १३ ॥ पक्ष अमारो एह समूलो, उनमूले इम जाणो हो ॥ प्रि० ॥ चिंतातुर हुं बुं ते माटे, अवर न सांसो आणो हो ॥ प्रि० ॥ १४ ॥ उंगणीशमी ढालें एम बोले, उदय रतन एकतानें हो ॥ प्रि० ॥ जविजन जावें तत्पर थाजो, जिन वाणी सुणवाने हो ॥ प्रि०॥ १५ ॥ सर्व गाथा ॥३३६॥

॥ दोहा ॥

॥ तव सा कांइक मन हसी, कुदृष्टि कहे सुणो कंत ॥ वणिकपरें ए तुमने, जयनी लागे ब्रंत ॥ १ ॥ अर्कपत्र जिम दूरथी, शशि ज्योति साक्षात ॥ व्याघ्र कर्ण जासे प्रत्नु, शरद पुनमनी रात ॥ २ ॥ तिम लागे छे तुमने, अछतो जय अनंत ॥ मन कल्पित कायर परें, शूरा नवि शंकंत

॥३॥ जीवन जेह तुमें कह्यो, कर्म करे छे पक्ष ॥ स्वामी तें साचूं सही, व लिउ एह अलक्ष ॥ ४ ॥ अंगीकृतने ऊधरे, ते जाणो तहकीक ॥ पण केव ल केहनी नथी, वात कहूं हूं ठीक ॥ ५ ॥ अखंम अछे ए आपणो, रिपु पखे छे रेख ॥ दाक्षिण्य लगे तेहने मिले, आपणा कुलनो एख ॥ ६ ॥ वे रि अछे ते एहना, आपण एहनी बांह ॥ जे जेहना ते तेहना, आखर हुए उछांह ॥ ७ ॥ ते संसारी जीवने, आज लगें एकंत ॥ रोकी डुःख दी धां घणां, जेहनो नावे अंत ॥ ० ॥ मध्यम वर्त्ति त्यां जाणजो, राजा क र्म परिणाम ॥ एह विना तुमे तेहने, डुःख किम देइ शको स्वाम ॥ए॥ नि ज घर वाहालूं सहूने, पाणी पाणीनी वाट ॥ आखर जातां ऊतरे, नवो न शोजे घाट ॥ १० ॥ सर्व गाथा ॥ ३४६ ॥

॥ ढाल वीशमी ॥

॥ वात म काढो व्रततणी, ए देशी ॥ वाहाला सुणो वलि वीनती, एहवुं कह्युं तुमे जेहरे ॥ वेरी निपुण छे वासवा, हुं नवि मानुं तेहरे ॥ वा०॥१॥ जो ते निपुण अति छे एहवा, तो काल अनादिना फरतारे ॥ एक निगो दना जीवने, वश्य कह्यो कां नथि करतारे ॥ वा० ॥ २ ॥ एक निगोदें जंतु जेता, तेहने अनंतमे नागें रे ॥ एणें कीधा आपणा, काल अनंते लागेंरे ॥ वा० ॥३॥ बाकी अनुचर तुमतणा, त्रिभुवन पूरियुं तेणेंरे ॥ अनंत जंतु गण जेहनी, संख्या न थाए केणेंरे ॥ वा० ॥ ४ ॥ चोराशी लक्ष चोवटे, नृत्य अनंतां थायरे ॥ जुउ तुमारा राज्यमां, नाटक चाल्यां जायरे ॥ वा० ॥ ५ ॥ तो निपुणपणुं पण तेहनुं, इये कामें आव्युं रोपेरे ॥ चांच बोले जो चरकली, तो सायर जल शुं शोषे रे ॥ वा० ॥ ६ ॥ जेह वली तुमें क ह्यो, धर्म बुद्धि तस बेटीरे ॥ इंद्रादिकने सेव्य छे, सौनाग्य गुणनी पेटीरे ॥ वा० ॥ ७ ॥ सापनी भ्रातें शींदरुं, देखी जिम कोइ बीहेरे ॥ तिम तुम ने प्रनु तेहनी, भ्रांति वशी छे हिएरे ॥ वा० ॥ ० ॥ घोडाचड जिम कोइ क घणुं, तस्कर देखी त्रासेरे ॥ बीहिकें निज बल नवि लहे, सांसे पड्यो नवि नासेरे ॥ वा० ॥ए॥ तिम प्रनु तुमे उते बले, शानें पड्याछो सांसेरे ॥ जालिम मोह राजातणो, हाथो छे तुम वांसेरे ॥ वा० ॥ १० ॥ आपणे पण पुत्री अछे, धर्म बुद्धि इणि नामेरे ॥ तेहने पगसुं उेसी परी, त्रिभुवन जेहने कामेंरे ॥ वा० ॥ ११ ॥ ते सम्यक् दर्शननी सुता, मुज पुत्रीनी वी

केंरे ॥ गमन करें आप गोपवि, नीर जिम चालें नीकेंरे ॥ वा० ॥ १२ ॥ जे आपणी तनयायें तज्या, वक्र अनें बहु वादीरे ॥ जे चर्चकने शक नख्या, तें नर एहना स्वादीरे ॥ वा० ॥ १३ ॥ ते रांकडीने मुज आगलें, शुं दाखवो बो दीदारुरे ॥ उदय रत्न कवियें कही, वीशमी ढाल ए वारुरे ॥ वा० ॥ १४ ॥

॥ दोहा ॥

॥ वलि स्वामी शुं कहुं घणुं, जो पामो प्रभुनीत ॥ तो मुजने तिहां मोकलो, जिम जइने करुं जींत ॥ १ ॥ गले झालिने गेरसूं, तुम डुहितानो करि दास ॥ ते संसारी जीवने, आणुं तुमारे पास ॥ २ ॥ प्रीतम हुं प्रीबुंअबुं, इम मूकीने लाज ॥ न घटे बोलवुं नारिने, विनयशुं जेहने काज ॥ ३ ॥ आरत अलगी टालवा, जे जे कह्या जबाप ॥ महेर करी ते माहरो, अविनय करजो माफ ॥ ४ ॥ सर्व गाथा ॥ ३६४ ॥

॥ ढाल एकवीशमी ॥

॥ सुग्यानी पास जिणंदावे, ए देशी ॥ सब सुख दायक सुंदरि, तूं मुज प्राणाधार ॥ आज में तुजने पारखी, मारा घरनो तुं शणगार ॥ सयानी सुण सुखकंदाबे, सुभगे में तुज बंदाबे ॥ १ ॥ मिथ्यादर्शन मंत्री हसी तव, बोले एहवा बोल ॥ प्रिये महिला प्रधान छे, सहि राखवा घरनो तोल ॥ स० ॥ २ ॥ मोह राजाना राज्यमां सघलें, राजे एहवी रीत ॥ मरद महिला पूठें चलें, परिघल दाखंतो प्रीत ॥ स० ॥ ३ ॥ ते माटे अति सुंदर दाख्यो, सुंदर तें ए भेद ॥ तिहां जाइने प्रिया तुमे, अरिने नाखजो उछेद ॥ स० ॥ ४ ॥ इम सुणि सा अबला बोली, नाथ ए घटतुं नांहि ॥ पग होय जिहां तुमतणो, मारुं बल चाले त्यांहि ॥ सुज्ञानी साहेब मेरावे ॥ स० ॥ ५ ॥ मोहन विण गजूं सुं माहरुं, ते माटे सुणो स्वामि ॥ तुमे पण तिहां आववुं, आपण शोभियें एकगमि ॥ स० ॥ ६ ॥ पासें रह्या अमें पेखशूं, तूं तिहां करजे फेलाव ॥ कलत्र सुताशुं संचस्यो, इम मंत्री ते करिय बनाव ॥ स० ॥ ७ ॥ मोह नृपें वली केडथी मेल्या, आपद व्यसनने लोभ ॥ लाभांतरायादिक लह्यो, जे जगने पमाडे क्षोभ ॥ सुज्ञानी सुणो श्रोतारूवे ॥ स० ॥ ८ ॥ उदय वदे एकवीशमीं ढालें, जगने करवा जेर ॥ मोह सम को मोटो नहीं, जेहनी आण फरे चोफेर ॥ स० ॥ ९ ॥

॥ दोहा ॥

॥ हवे ते श्रीनिलयपुरें, धन तिलक शेठ धाम ॥ जायायें सुत जनमि उ, वैश्रमण धर्युं तस नाम ॥ १ ॥ अनुक्रमें यौवन आविउ, करतां कला अन्यास ॥ तव निज अवसर उलखी, धन तृष्णायें तास ॥ २ ॥ आलिं ग्यो कलट नरें, गाढालिंगन देह ॥ अनिलाष तव तसु ऊठल्यो, लागो ते हसुं नेह ॥ ३ ॥ तव सा प्रेरे तेहने, जो मुजसुं बहु प्यार ॥ तो धन काजें धाइने, विविध करो व्यापार ॥ ४ ॥ सर्वगाथा ॥ ३७७ ॥

॥ ढाल बावीशमी ॥

॥ बिंदलीनी देशीमां ढाल ढे ॥ वसन सोवन मणि केरां, व्यापार करो नलेरा हो ॥ तृष्णा कहे तेहने ॥ कण कस्तुरी कपास, विणजो जिम पो चे आस हो ॥ तृष्णा कहे तेहने ॥१॥ लोह फोफलने गली लाख, वोरो जिम फले अनिलाष हो ॥ तृ० ॥ वाणोतर चलवो विदेशें, वाणना करो वणिज विशेषे हो ॥ तृ० ॥ २ ॥ नरी नांमसुं गाडी नूरे, देशावरे जाउ दूरे हो ॥ तृ० ॥ वलि वाहो ऊंटने पोठी, बंदरप्रतें घालो कोठी हो ॥तृ०॥३॥ मांमवी लिउ दाण वोलावी, लक्ष्मी जिम रहे घर आवी हो ॥ तृ० ॥ लिउ गाम नगर इजारे, थाउ कोटीध्वज सकरारे हो ॥ तृ० ॥ ४ ॥ करो खेतीने पशु पालो, जिम दरीद्र नरे उचालो हो ॥ तृ० ॥ खणो खाणने धातुवाद, अन्यसो धरीने आल्हाद हो ॥ तृ० ॥ ५ ॥ रस बिल प्रवेश अ न्यासो, करी घरने लाडुत वासो हो ॥ तृ० ॥ कारमां करीआणां कर वा, शीखो वली कपट आदरवा हो ॥ तृ० ॥ ६ ॥ एहवा सुणिने उपदे श, उल्लसिउ तेह विशेष हो ॥ तृष्णाए प्रेर्यो ॥ तव तेहने कहे ते वा रू, उपदेश दीधो सुख कारू हो ॥ तृ० ॥ ७ ॥ एह पाखें धननी राशि, किम आवे निज आवासि हो ॥ तृ० ॥ इम कहीने विणज ते सघला, मांम्या मेली मन अगेला हो ॥ तृ० ॥ ८ ॥ बावीशमी ढाल ए बोली, खांतें जो जो दिल खोली हो ॥ तृ० ॥ उदय कहे आगम पाखे, डुर्गति पडतां कुण राखे हो ॥ तृ० ॥ ए ॥ सर्वगाथा ॥ ३८६ ॥

॥ दोहा ॥

॥ अवसर जाणी आपणो, तव त्यां लानांतराय ॥ धनस्थाने वश्यो धा इने, वैश्रमणना घरमांय ॥१॥ तव तेहना परन्नावथी, कांणी कोडी मात्र ॥

लान न थाये हाटमां, तस्कर पाडे खात्र ॥ २ ॥ चिंतातुर मन चिंतवे, तेह तेणे प्रस्ताव ॥ नाडुं नरीयें जेटलुं, तेती न मिले आव ॥ ३ ॥ नाटक मात्र जो कपजे, तो वलि चिंते तेह ॥ वाणोत्तरी सूजे नहीं, वणज खोटो सहि एह ॥ ४ ॥ तसु लानें घर खरचनी, आरति करी अपार ॥ इम नो गोपनोगादिक बहु, विध विध धरे विचार ॥५॥ खोट आवे ठे अहो खरी, मूलगि पूंजीमांहि ॥ तो कोटिध्वज किम थाइशूं, एम चिंतवे त्यांहि ॥६॥

॥ ढाल त्रेवीशमी ॥

॥ जाटणीनी देशी ॥ धनने काजें हो ते धातो फिरे, न गणे रातने दीह ॥ तृष्णाएं वाह्यो आरति नरें, न गणे नूख तृष बीह ॥ ध० ॥ १ ॥ गरथनी करतां गवेषणा, जिहां तिहां नमतां हो जोर ॥ एक दिन पुरुष एक नेटिउ, चंचल जातें ते चोर ॥ ध० ॥ २ ॥ विलोकावे ते वैश्रमणनें, एकांतें तेडी आनर्ण ॥ शिर कंठने श्रवणादिकनां, जहवेर जडित पंचवर्ण ॥ ध० ॥ ३ ॥ इंगित आकारें उलख्यां, चोरीनां एह सूत्र ॥ धनतृष्णायें तव धाइने, प्रेख्यो सेठनो पुत्र ॥ ध० ॥ ४ ॥ होनारूं जे होयशे, निर्वेहि लेशूं तेह ॥ दूध पीतां मांग वागशे, तो वागो ससनेह ॥ ध० ॥ ५ ॥ इम चिंती अलंकार ते, अल्प आपीने मूल ॥ तें पासेंथी लीधा तिणे, जो जो लोननां शूल ॥ ध० ॥ ६ ॥ तस्कर ते गयो जेहवे, तेहवे राजचरें त्यांहि ॥ आवि वणिक ते बांधिउ, नूषणसहित उहांहि ॥ ध० ॥ ७ ॥ लइ गया लाठिएं हणी, विगोता जिहां वसुधेश ॥ नाखे ते जइ नूपनें, जन त्यां जुवे अशेष ॥ ध० ॥ ८ ॥ प्रनुजी नूषण तुमतणां, लोनें लीधां एण ॥ पठे वाइया बांधिने, इहां आण्यो ए तेण ॥ ध० ॥ ए ॥ नृप कहे निश्चें एहने हणो, तव जनकें महाजन्न ॥ मलीने मूकाविउ, आपीने बहु धन्न ॥ ध० ॥ १० ॥ धन पिपासा प्रेख्यो वली, पुरमां हाट प्रनूत ॥ मंमावी मन मोद सुं, उद्यम करे अदनूत ॥ ध० ॥ ११ ॥ लानांतरायतणे उदे, लान न थाय लवलेश ॥ महा आपद पद पामिउ, पग पग पामे क्लेश ॥ ध० ॥ १२ ॥ प्रेख्यो प्रदेश चलाववा, धन तृष्णाएं ते धाय ॥ तव तातें ते मनें करी, अन्य सोंपी विवसाय ॥ ध० ॥ १३ ॥ करियांणां बहु नांतिनां, गाडीयें नरी गेल ॥ चाल्यो तेह देशावरें, खेलवा नवो खेल ॥ ध० ॥ १४ ॥ उदयरतन

कहे आतमा, तुं त्रेवीशमी ढाल ॥ लालच मेलने लोजनी, जिम न पडे ज वजाल ॥ ध० ॥ १५ ॥ सर्वगाथा ॥ ४०७ ॥

॥ दोहा ॥

॥ महा अटविमां मारगें, नूलो पड्यो ते साथ ॥ तरशें खोले तोयने जलनी न मले जात ॥ १ ॥ आशा तूटी आपनी, तव मिलित लोचन मु र्गय ॥ जन सर्वे जगतीतलें, पड्या अचेतन थाय ॥ २ ॥ तिणे समे त्यां आवी पडी, महातस्करनी धाड ॥ सर्वस्व ते लूंटी गया, अटवी तेडी उ जाड ॥ ३ ॥ सर्वगाथा ॥ ४१० ॥

॥ ढाल चोवीशमी ॥

॥ शालिनद्र मोह्यो शिवरमणी रसें रे ॥ ए देशी ॥ जुवननानु नांपे श्र म केवली रे, चंद्रमौलि महाराय ॥ सावधान थइने सुणजे तुं हवे रे, पा तक जेम पलाय ॥ जु० ॥ १ ॥ कोइक कृपालु पंथियें ते समे रे, किहां ए कथी जल आणि ॥ थोडुं थोडुं सघला साथने रे, पायुं परमारथ जाणि ॥जु०॥२॥ स्वस्थ थया तव तेणें पंथिएं रे, जलाशय जणाव्यो तास ॥ तिहां जइने सहु जल पिये गली रे, अंग पखाले उल्लास ॥ जु० ॥ ३ ॥ सज्ज थइने पंथसिरे सहु रे, आप तणी इच्छाएं ॥ संबल रहित तिहांथी संचर्या रे, जेहने पूरवे ज्यांएं ॥ जु० ॥ ४ ॥ वैश्रमण पण एक गामें जइ रे, तर स्यो जुख्यो तरुबांहि ॥ पड्यो पृथिवियें पग पसारीने रे, मूर्छित मारगमां हि ॥ जु० ॥ ५ ॥ दीन देखीने दया ऊपनी रे, कोइकने तिणि गाम ॥ अ न्नादिक ते आपे आणिने रे, चेतन आव्युं ताम ॥ जु० ॥ ६ ॥ वलि आ गल मारगें चालतां रे, श्रांत थयो अत्यंत ॥ पहोर पहोरे पण पग नवि ऊपडे रे, ऊर ऊर लोहि ऊरंत ॥ जु०॥ ७ ॥ रहि रहि पडीने मुर्छाये वली रे, वलि विशोचे विरंग ॥ वैजववाहलां विरहें जूरतो रे, दीन थयो गति नंग ॥ जु० ॥ ८ ॥ गामो गामे नीख काजे नमे रे, तो पण न मले तेह ॥ अंतराय पापी आवी आडो पडे रे, डुर्बल थइ तिणें देह ॥ जु० ॥ ए ॥ न मतो नमतो इम डुःख देखतो रे, पहोतो वेलाकुलें कोइ ॥ वांणोत्तर राख्यो वणिक लही किणें रे, कांइक सधन थयो सोइ ॥ जु० ॥ १० ॥ तृष्णाएं प्रेर्यो तव मांहे तिहां रे, विध विधना व्यवसाय ॥ लक्ष्मी लाखगमें लाधी तिणें रे, एक श्लोक सुण्यो कोइ गाय ॥ जु० ॥ ११ ॥ यतः ॥ इक्षुक्षेत्र

समुद्रश्च, योनिपोषणमेवच, प्रसादो नूभुजां चैव, सद्योघ्नंति दरिद्रतां ॥१॥ उदय वदे चोवीशमी ढालमां रे, पोत पूरी तव तेह ॥ पयोधिमांहि तृ ष्णा प्रेरियो रे, चाल्यो धरि चूंप अछेह ॥ जु० ॥ १२ ॥

॥ दोहा ॥

॥ जलधिमां जातां थकां, घटा करी घन घोर ॥ अंबर मंमल उन्नयो, चमकि वीज चिहुं उर ॥ १ ॥ कल्पांतकाल तणी परें, पवन वाया प्रति कूल ॥ उदधि तव तिहां ऊबल्यो, जलधर प्रगट्या स्थूल ॥ २ ॥ जल मो जाना जोरथी, नाव थयां शतखंम ॥ वैश्रमण तव पामिउ, फलक तणो एक खंम ॥ ३ ॥ चपल कलोलें जलचरें, आकुल थतो अपार ॥ तरंग त णा सुपसायथी, पाम्यो जलधी पार ॥ ४ ॥ सर्व गाथा ॥ ४२६ ॥

॥ ढाल पचीशमी ॥

॥ मालीकेरें बागमें दोय नारंग पकेरे लो अहो ॥दो०॥ ए देशी ॥ नाम प्रण निज देशनुं, न जणाए जे देशें लो, अहो न जणाए जे देशें लो ॥ रा जेसर सुण रसरागीरे लो, स्वजननी न जडे वारता ॥ पड्यो तेह प्रदेशें लो ॥ अ० ॥ १ ॥ दुःखजरें तिहां रेहेतां थकां, रोगें तक साधी लो ॥ अ० ॥ दग्ध उपर फोटकपरें, वेदना बहु वाधी लो ॥ अ० ॥ २ ॥ ज्वर शिर रोगशूलादिकें, महारोगें पीड्यो लो ॥ अ० ॥ सूने देवकुलें सुए, जा वठें बहु जीड्यो लो ॥ अ० ॥ रा० ॥ ३ ॥ बेठकें हिंमे बेसतो, पडे प्रपाय लो ॥ अ० ॥ मठ मढियें लोटतो फिरे, आक्रंदे सराय लो ॥ अ० ॥ रा० ॥ ४ ॥ जमतो रहे घर घरें, बोले दीन वाणी लो ॥ अ० ॥ पथ्य औषध याचें वली, पाये कोइ न पाणी लो ॥ अ० ॥ रा० ॥ ५ ॥ इम दुःखें दिन गालतां, केते एक कालें लो ॥अ०॥ रोग रहित तव ते थयो, तृष्णाएं ते ता लें लो ॥ अ० ॥ रा० ॥ ६ ॥ उदेख्यो तव उद्यमें, लोजें करी लागें लो ॥ अ० ॥ संपद काइं न संजवी, तोय पाठो न जागे लो ॥ अ० ॥ रा० ॥७॥ किहां एक नृप लूंटी लिये, धूते धूरत किहां रे लो ॥ अ० ॥ चोर क्यारे चोरे वली, दहे अगनि कोगरे लो ॥ अ० ॥ रा० ॥ ८ ॥ इम ते अटन करी बहु, नानाविधदेशें लो ॥ अ० ॥ विषमथलें विचरे वली, वेठे विपद विशेषें लो ॥ अ० ॥ रा० ॥ ए ॥ वृश्चिक व्याल व्यंतरतणा, पराजव सहे तो लो ॥ अ० ॥ धर खणतो धन लालचें, हींमे गह गहितो लो ॥ अ०

॥ रा० ॥ १० ॥ अरहट घटि जलोका परें, नरी ठलवातो लो ॥ अ० ॥ इ
मतें आपद अनुनवी, जिहां तिहां नजातो लो ॥ अ० ॥ रा० ॥ ११ ॥ दे
श दारा धन स्वजनने, वियोगें वरिर्ज लो ॥ अ० ॥ नूपीठें नमतो रहे
आरतियें आवरिर्ज लो ॥ अ० ॥ रा० ॥ १२ ॥ तृष्णाने जोरेंकरी, इम ह
दय ते बोले लो ॥ अ० ॥ पंचवीशमी ढालें जुर्ज, जिहां तिहां ते मोे
लो ॥ अ० ॥ रा० ॥ १३ ॥ सर्वगाथा ॥ ४३ए ॥

॥ दोहा ॥

॥ इणि परें नमतां एकदा, सुणो सहु श्रोता लोक ॥ मनमांहे कोइक
मुखें, सांनल्यो एक श्लोक ॥ १ ॥ ॥ यतः ॥ ॥ आर्यावृत्त ॥ स्वज
नधनजुवनयौवन, वनिता तत्वाद्यनित्य मिदमखिलं ॥ ज्ञात्वाऽपत्राणसदं
धर्मं शरणं नजत लोकाः ॥ १ ॥ सर्व गाथा ॥ ४४० ॥

॥ ढाल ढवीशमी ॥

॥ काठबानी देशी ॥ ए श्लोक सुणीने त्यांही, तव मनमांहें हो वणि
क ते चिंतवे ॥ डुःख जे आगें जाय, कहियें तिहांरे हो ते सहु इम चिंत
वे ॥ १ ॥ धर्म न कीधो धाय, यतन करीनें हो ते जन्मांतरें ॥ धर्म विना
जगमांहे, प्राणी पामें हो आपद बहु परें ॥ २ ॥ डुःखिआने ते माट, ए
क धर्म विना हो शरण बीजुं नथी ॥ अनेक धरो नचाट, पण पुण्य पाखें
हो सुख न लहियें रति ॥ ३ ॥ चिंते कुदृष्टि ताम, मिथ्यादर्शन हो केरी जे
गेहनी ॥ अहो अवसर अनिराम, आजहुं पामी हो चिंता हुती जेहनी॥
॥ ४ ॥ वैराग्य नामें विख्यात,अम वेरीनो हो सेवक ए सही ॥ ए पात्रमां
हें सहसात, प्रगटियो दीशे हो इहां संदेह नहीं ॥ ५ ॥ जो आवशे एह
नी केडि, वेरणी अमारी हो सम्यक्दर्शनसुता ॥ तो अमने नाखशे उथे
डि, उद्यम सघलो हो अफल करी सर्वथा ॥ ६ ॥ इम चिंती नजमाल,
धर्म बुद्धि हो नामें निज नंदिनी॥ ते पासें ततकाल, प्रेमें प्रेखी हो कुटुंब
आनंदिनी ॥ ७ ॥ तेहतणे सुपसाय, नत्सुकपणे हो इम चिंत्युं तिणें ॥
नेहें निजघर जाइ, धर्म करीशुं हो हवे आदर घणे ॥ ८ ॥ कारण पुंठें
कार्य, सहेजें थाये हो तें माटे जाउं घरें ॥ एम आलोची ताम, नमतो
नमतो हो गयो कोइ बंदरें ॥ ए ॥ प्रवहण चढिर्ज तेह, कोइक जननो हो
रही वतागरो ॥ निजपुरें पहोतो नेह, थलवट थइने हो अनुक्रमें पाधरो

॥ १० ॥ मात पिता पर लोक, पहोतां तेहनी हो दिशा ते देखिने ॥ तव तसु वाध्यो शोक,घर हाटादिक हो पड्यां तिहां पेखिने ॥११॥ विध विध करे विलाप,आरति पूरें हो आतम निंदतो ॥ पूरव नवनां पाप, उदय आव्यां हो इम कहि क्रंदतो ॥ १२॥ धर्म बुद्धें धरे मन्न, मावित्र केरां हो मृतकार ज करे ॥ कहे कवि उदय रतन, बवीशमी ढालें हो कर्म गतिनवि फरे ॥१३॥

॥ दोहा ॥

॥ एहवे समय मलि एकठा, चारित्र धर्मादिक ॥ प्रेखी सदबोधनें प्रीछवी, कर्म परिणाम नजीक ॥ १ ॥ तव ते जइ कहे तेहने, अमने एक सहाय ॥ आगें कह्यो ठे आपवो, मन मोजें महाराय ॥ २ ॥ कथन तेह कह्या पठी,अनंत अनंती वार ॥ पुजल परावर्त्या तिणें,तोहे न आव्यो पार ॥ ॥ ३ ॥ आज लगें जुउ अमने, वातें पण ससनेह ॥ महाराजा मेलव्यो नथी, जीव संसारी तेह ॥ अंगिकर्युं जे उत्तमें,युगांतें पण तेह ॥ अवश्य न थाये अन्यथा, कहो स्वामी शुं एह ॥ ५ ॥ सर्वगाथा ॥ ४५० ॥

॥ ढाल सत्तावीशमी ॥

॥ आठीनें वणाजो हो, मेडतिया ठाकुर ॥ ए देशी ॥ सदबोध मंत्रीने हो तव कहे कर्मनरेसरू, आंख उलाली एम ॥ वात सविगतें हो आज लगें पण एहनी, तुं नथि लहेतो केंम ॥ स० ॥ १ ॥ ताकी दीन तुम सामो हो आणुं बुं हुं तेहने, पण मुऊ वंधव प्राण ॥ फरिफरि ने पाठो हो वाले ठे ते रांकने, जाणि प्रजानी प्रजानी हांण ॥ स० ॥ २ ॥ घरने विरोधी हो आखर जो ताणुं घणुं, तो वालां वेरी होय ॥ मस्तकें लइने हो में पण निश्चय एकले, काज न थाए कोय ॥ स० ॥ ३ ॥ नव्य स्वनावने हो लोकस्थिति उद्यम वली, काल परिणति आदि ॥ एहुनी रजा विण हो कांइ काज न नीपजे, पग पग मांऊे ए वाद ॥ स० ॥ ४ ॥ ते माटे सहुसुं हो एकांतें आलोचिने, समय लही तुम काज ॥ निश्चयशुं करीने हो वोल जे वोल्या मुखें, तेहनी ठे अमने लाज ॥ स० ॥ ५ ॥ कथन में तुमने हो पहेलें जे कह्युं अठे, ते जिहां लगें पिंममां प्राण ॥ वीसरी न जाए हो तिहां लगि वीशे वसा, समजो चतुर सुजाण ॥ स० ॥ ६ ॥ सदबोध पयंपे हो संप्रति सुणिएं ठिएं इसुं, धर्म बुद्धि ते पास ॥ गई ठे ते माटे हो आजें पण अमने तुमे, शुं नहि मेलो तास ॥ स० ॥ ७ ॥ स्वनाव इणि ना

में हो निज मंत्रीश्वरने करें, ताली लेइने ताम ॥ ऊंचे स्वरें हसीनें हो एह वी वाणी ऊचरें, नरपति कर्मपरिणाम ॥ स० ॥ G ॥ धर्म बुद्धि सा साची हो अहो अहो जुर्ज पारखी, ए शुं बोल्यो सदबोध ॥ पूरण पाप बुद्धि हो जातें एहने जाणजो, सत्यशुं जेहने विरोध ॥ स० ॥ ए ॥ नाम धरावे हो धूतारी जगने धूतवा, एहनुं तो मुह अदीठ ॥ सम्यक् दर्शननी हो सु ता ते बीजी अछे, धर्म बुद्धि धरे पीठ ॥ स० ॥ १० ॥ अमारी ए पखी हो जाणो उदयकारिणी, तमारी पखें विषकंद ॥ समूलो उनमुले हो ए ह तमारा वंशने, चालतो डुःखनो कंद ॥ स० ॥ ११ ॥ सहुने सुखकारी हो अमृतनी धारा जिशी, अलौकिक छे ते एक ॥ अम बंधु मंत्रीनी हो पुत्री ए सहु जीवने, अरति उपाए अनेक ॥ स० ॥ १२ ॥ अनिधान सरीखें हो सहेज न होवें सारिखा, विष जिम जलनें जहेर ॥ कहेवाए पण जहेरें हो जीवने जोखम ऊपजे, जलनी जीवाडे लहेर ॥ १३ ॥ पा न कहेवाए हो कनकनें नागर वेलनां, जिम बहु नाणा जाति ॥ वृक्ष कही जें हो वलि अंबने लींबने, पण जूई जूई धात ॥ स०॥ १४ ॥ दधि दूध घृ तादिक हो कांजी बहु विध तेलने, रस कहेवाए जेम ॥ बहेन कहेवाए हो नगिनीनी जिम सोकने, इणि परें जाणो तेम ॥ स० ॥ १५ ॥ नाम सरीखें हो सरिखा गुण न होये कदा, जिम बहु विधनां धान॥ उदय पयंपे हो एह सत्तावीशमी, ढालें सुणो धरि कान ॥ स० ॥ १६ ॥

॥ दोहा ॥

॥ कांइ कहेवुं अमने नवि घटे, शत्रु मित्र समान ॥ अधिके उंछे नवि गणुं, ए अम सहज निदान ॥ १ ॥ अम बंधुना मंत्रिनी, पुत्री एह प्रत्य क्ष ॥ अवगुण एहना अमने, कहेवा न घटे मूख ॥ २ ॥ पण गुण अवगु ण जेहनो, जेहवुं देखुं नयण ॥ नाहित अमे दाखुं तिश्यो, कुण शत्रु कुण सयण ॥ ३ ॥ तव स्वनाव कहे प्रनुजी सुणो, कह्यानुं शुं काम ॥ आचरण सघलां ए लहे, तेहना जे छे स्वाम ॥ ४ ॥ शिर धूणी तव बोलिउ, राजा कर्म परिणाम ॥ अहो ए तें साचूं कह्युं, धूरत ए छलधाम ॥ ५ ॥ ए त रुणो अम गरढा नणी, हसि नांगे छे हाम ॥ युक्ति सर्व जाणे अछे, पण मुंदी रह्यो मुह फाम ॥ ६ ॥ कांन ढांकिकरि तव कहे, सदबोध मंत्री सो य ॥ एहनुं प्रनु म ऊचरो, तुम नजरें सब होय ॥ ७ ॥ हूं तो हवे जाउं

अछुं, जे कांइ अम योग्य होय ॥ कारज ते कहेजो प्रजु, अमने अवसर जोय ॥ ७ ॥ तव ते नूपति कहे फिरि, समयें थाशे सर्व ॥ आज जाउ घर आपणे, मूकी मननो गर्व ॥ ए ॥ वाणी जेह मुखें वदी, ते निफल न होशे नेट ॥ अर्थ अमे ए साधशुं, मननो सांसो मेट ॥ १० ॥ इम सुणि मंत्री आविउ, नेहें निज आवास ॥ वात सवें निज स्वामिने, आखे मन उल्लास ॥ ११ ॥ सर्वगाथा ॥ ४७५ ॥

॥ ढाल अठावीशमी ॥

॥ राम सीताने धीज करावे रे ॥ ए देशी ॥ हवे माता पिता उख नरिउ रे, वैश्रमण विपत्तें वरिउ ॥ कुदृष्टि सुता आवरिउ रे, तापस थावा मन करिउ ॥ १ ॥ तिहां एक त्रिदंमिउ वसे वासें रे, स्वयंज्ञु नामें तसु पासें ॥ ते वणिक आवे तिहां रोज रे, सुणवा तस आगम बोज ॥ २ ॥ सांजलतां तेहनी शिक्षा रे, अंते लीधी तसु दीक्षा ॥ पूरण निज पंथमां लीनो रे, शौचादिकमां रहि लीनो ॥ ३ ॥ अणगल जलमां उगांहि रे, नित्य नाहे न द्यादिकमांहे ॥ नाजन कोपीन उपगरण रे, रोज पखाले वार त्रण ॥४॥ गुरु पद पाम्यो काल केते रे, उपदेश कुपथना देते ॥ शुद्ध पंथने तेह उथापे रे, अन्यने निंदी आप थापे ॥ ५ ॥ आतम सर्व देवमें माने रे, उत्तम देवने अपमाने ॥ कुधर्म बुद्धें वश कीधो रे, मद मत्सरें घेरी लीधो ॥ ॥ ६ ॥ मरी एकेंड्रियादिकमाहें रे, ते अनंत पुजल अवगाहे ॥ पुत्रीना पराक्रम जाणी रे, कुदृष्टि थइ सपराणी ॥ ७ ॥ मिथ्या दर्शन मोह राजा रे, ते वात सुणी थया ताजा ॥ आपणि उन्नति थाए ज्यारें रे, कुण मुदित न थाए त्यारें ॥ ८ ॥ वलि कर्मे तिहांथी निकाश्यो रे, लेइ मनुज तणी गति वाश्यो ॥ ब्रह्मदत्त ब्राह्मण घर जायो रे, सोमदत्त नामें निपायो ॥ ए ॥ तिहां पण कुदृष्टियें केडो रे, कस्यो रिपुनो करवानो मेडो ॥ पति पुत्रीसुं जइ वलगी रे, अध क्षण न रही ते अलगी ॥ १० ॥ डुष्ट दल तेहने उपरालें रे, मोकल्युं वलि मोह नूपालें ॥ कुग्रह हिंसादिक वहुलुं रे, पर दलने करे जे डहलुं ॥ ११ ॥ तप तिहां पण तेह अपारा रे, करे यज्ञने वावे जवारा ॥ यागने काजें हणे ठाग रे, तसु मांस नक्षण धरी राग ॥ १२ ॥ हल लोह लवण तिल दान रे, गौ नूमि कन्या उपान ॥ दासी तुरग शय्याने कपास रे, इत्यादिक थापे उल्लास ॥ १३ ॥ इम बीजां पण डुः

खदाई रे, धर्मने वळें पातक धाई ॥ करावी ते पाड्यो नरकें रे, मळीने मो हने कटकें ॥ १४ ॥ ए अगावीशमी ढाळ रे, सांभळजो थइ उजमाळ ॥ उदय रत्न कहे उल्लासें रे, पडता रखे मोहने पासें ॥ १५ ॥

॥ दोहा ॥

॥ वळि तिहांथी लइ वासिउ, एकेंद्रियादिकमांहि ॥ परावर्त्त्यों परवश पणे, अनंत पुग्गल त्यांहि ॥ १ ॥ बौद्धादिक मतमां धरी, धर्म वळें अघ छेक ॥ करावि इणिपरें फेरव्यो, जीव ते वार अनेक ॥ २ ॥

॥ ढाळ उंगणत्रीशमी ॥

॥ रूडी रे रबारणी रमला पदमणी रे ॥ ए देशी ॥ सौभाग्यपुर नामें न गरें वळी रे, मानव खेत्र मझार ॥ गृहपति सुंदर घर उपजाविने रे, ते व रुण नामें कुमार ॥१॥ इणिपरें चिंते कर्म नरेसरू रे, में जीव संसारी एह ॥ चारित्र धर्म समीपें नवि धस्यो रे, आज लगे दुःख गेह ॥इ०॥२॥ नामें धर्मबुद्धि पण महा पापणी रे, जिहां लगि एहथी दूर ॥ न रहे तिहां लगि पहोचाडी नवि शकूं रे, चारित्र धर्म हजूर ॥इ०॥३॥ सम्यक् दर्शननी सुता विना रे, अलगी एह न थाय ॥ तेहने संगें ए लहेशे सही रे, शुद्ध दिशा सुखदाय ॥इ०॥४॥ शुद्ध दिशाएं श्रुति दूतीतणो रे, अरथी थाशे एह ॥ सु गुरु सदागमथी ते पामशे रे, योग मेलुं तिणे तेह ॥इ०॥५॥ अभिप्राय क र्मनो एहवो ओळखी रे, बीनो मोह नरेंद्र ॥ कलुषाणो मनसुं रागकेसरी रे, धूज्यो द्वेष गजेंद्र ॥इ०॥६॥ मनसुं बीहीनो मोह नरेसरू रे, पाठांतरें ॥ वज्र पड्यो जाणे सहुने शिरें रे, तव मंत्री सामंत ॥ मजलस मेळीने बेगा मळी रे, आलोचे एकंत ॥इ०॥७॥ तव कोइ निज नाथने ते कहे रे, त्रिभुवन गं जन स्वामि ॥ तुमने पण सचिंता साहिबा रे, सहिछे तुमारे नाम ॥इ०॥८॥ दीर्घ निसासो मेहली ते कहे रे, जे तुमें कह्यो ते तंत ॥ चाबख सम पण म्हारी चाकरी रे, सुर पतिसा धूजंत ॥ इ०॥ ए ॥ मुझ पायकने पण क्षो भ पमाडवा रे, समरथ नहिं छे कोय ॥ पण सुं कीजे मुझघर वेरडुं रे, वंध वें मेल्यो विगोय ॥ इ० ॥ १० ॥ तेह कहेशुं नवुं गयुं किशुं रे, कर्म परिणा मने संग ॥ मोह वदे तव एक नवो इणें रे, उपजाव्यो छे रंग ॥ इ० ॥ ॥११॥ सदगुरु संगें सदा मनो सहि रे, ते जीव संसारीने जोग ॥ मनसुं चाहे छे ए मेळवा रे, एहवुं कहे छे लोग ॥ इ० ॥ १२ ॥ अम कुळ कंद स

मूलो बालवा रे, जे दावानलनी झाल ॥ श्रुति दूतिका ते पासें प्रेखशे रे, ते सजुरु अम कुल काल ॥ इ० ॥ १३ ॥ उदय वदे उगणत्रीशमी रे, मारु रागें ढाल ॥ भावी भवियण भावें सांभलो रे,आगें थइ उजमाल ॥इ०॥१४॥

॥ दोहा ॥

॥ तव हुंकारो मुख मुकिने, बोल्या सघला तेह ॥ जो एवुं छे तो प्रभु, न करो चिंता एह ॥ १ ॥ अमे करीशुं एहवुं, जिम ए चिंता मूल ॥ ते गुरु आवी तिहां नवि शके, कारण लहि प्रतिकूल ॥ २ ॥ मोह राजा मन हरखिने, तव फिरि आखे तास ॥ वत्सो वेगें तेहवुं करो, जिम सफल फले मुझ आस ॥ ३ ॥ इम कही ते कतावला, पाषक पहोता त्यांही ॥ अप शुकन आलोचिने, प्रेख्या मारगमांहि ॥ ४ ॥ विविध विघन प्रेख्या वली, श्रम आलस शिररोग ॥ छत्र भंग नृप विग्रह, मरकी उपद्रव सोग ॥ ५ ॥ गुरु आगमननो गेलशुं, भीत्यादिकें मलि भंग ॥ कीधो हुकम ते केलवी, शत्रुनो लहि संग ॥ ६ ॥ कुदृष्टि सुता कथनेंकरी, धर्म छलें बहु पाप ॥ एकेंड्रियादिकमां कपनो, वरुण मरी ते आप ॥ ७ ॥

॥ ढाल त्रीशमी ॥

॥ शीरोहीनो शेलो हो दाडिम योधपुरी ॥ ए देशी ॥ वली मानव खेत्रें हो, विमलपुरें धरिद्र ॥ रमण श्रेष्ठि घरें हो, कर्म ते डुःख दरिद्र ॥ १ ॥ यौवन पहोतो हो, सुमित्र नामें सोई ॥ एक दिन कर्में हो, तव तिहां तक जोई ॥ २ ॥ आव्या आचारज हो, मोज धरी मनमां ॥ गुण जलधी पूरें हो, बहु शालक वनमां ॥ ३ ॥ संयमश्रीयें शोभित हो, पूरित प्रशमभरें ॥ तपे तप तेजें हो, जे सत्य शौच धरें ॥ ४ ॥ नय भ्रमरें भूषित हो, मुख पंकज जेहनुं ॥ शीलें विलेपित हो, तनु राजे तेहनुं ॥ ५ ॥ सद गुण शृंगारें हो, उपे अंग सदा ॥ चारित्र सीमायें हो, न चले जेह कदा ॥६॥ समकितने धरवा हो, थिर जे मेरु परें ॥ मति श्रुत ज्ञानी हो, मंमित मुनिप्रकरें ॥ ७ ॥ तव शुद्ध सिद्धांतें हो, श्रोता तिहां रसिआ ॥ पुरजन नृप आदें हो, सहु आवे धसिआ ॥ ८ ॥ मन कर्युं तिहां जावा हो, सुमित्रें पण जेहवे ॥ ते लही मोहराजा हो, इम बोल्यो तेहवे ॥ ए ॥ रे रे ग्रही राखो हो, धाकी गइ बाजी ॥ इम सुणिने ससंभ्रम हो, करग्या सहु गाजी ॥ १० ॥ रोके तसु राखवा हो, पायकने प्रेरी ॥ मोह महीपति हो,

इम बहु उदेरी ॥ ११ ॥ आलस अलसावा हो, प्रेखे मूढपणुं ॥ कुटंबना रागमें हो, चडावी शूर घणुं ॥ १२ ॥ अवज्ञा करि आगें हो, मद छलव्या मांही ॥ कस्या सज क्रोधादिक हो, प्रमाद कस्या राजी ॥१३॥ अदत्त गुण उप्यो हो, शोक कस्यो शूरो ॥ अज्ञानजयादिक हो, प्रेरी दल पूरो ॥१४॥ कृषि गृह हट्टनी हो, सबल सजी सेवा॥ विषय वकास्या हो, वली व्यसन देवा ॥ १५ ॥ नाटक पेषणादिक हो, कौतुक कोडि सज्यां ॥ निज स्वामीने कामें हो ॥ तिणे निज काम तज्यां ॥१६॥ किलली करि धायां हो, इत्यादिक सघला ॥ वेगें तिहां जइने हो, अनेक करी अगेला ॥ १७ ॥ केणें कोइक दिन हो, गुरु पासें जातां ॥ वलि ग्रहि ते राख्यो हो, विघन करी माता ॥ १७ ॥ ते गुरु पण एक दिन हो, विहार करे तिहांथी ॥ ते पण मरी पहुतो हो, आव्यो हुतो जिहांथी ॥ १ए ॥ एकेंडियादिक हो, मांहे तिम राख्यो ॥ काल अनंतो हो, पहिले जिम नाख्यो ॥ २० ॥ त्रीशमी ढालें हो,मोहना बल जेहवुं ॥ बल नथि केहनुं हो,उदय वदे एहवुं॥२१॥

॥ दोहा ॥

॥ ते संसारी जीवनें, एम अनंती वार ॥ फेरा तेमज फेरव्या, एकेंडियादि मजार ॥ १ ॥ अवति पुरि अवतारिउ, गंगदत्तनें गेह ॥ सिंधुदत्त नामें ते वली, कर्म परिणामें लेह ॥ २ ॥ यौवन जर जव आवीउ, सुगुरु सदागम संग ॥ तव कर्में जिम तिम करी, मेल्यो मन उबरंग ॥ ३ ॥

॥ ढाल ॥ एकत्रीशमी ॥

॥ रामचंदके वाग चंपो मोही रह्योरी ॥ ए देशी ॥ मोह लही ते वात, चिंता समुडें पड्योरी ॥ कहे मेली निज साथ, अहो ए ऊंचो चड्योरी ॥ ॥ १ ॥ तरकस खुटा तीर, अंत अरीनो न आव्यो ॥ धरिएं किम करि धीर, फंद ए एहनो फाव्यो ॥ २ ॥ ज्ञानावरण सामंत, तव तिहां एम वदेरी ॥ प्रज्ञु तुम सुजट अनंत, एक एकथी अ वधेरी ॥ ३ ॥ सागरथी सुणो स्वामि, अंजली एक नरी री ॥ नंदिनी शून्यता नामें, माहरी सज्ज करी ॥ ४ ॥ मोकलो तेहने पास, सुण्युंजे अफल करी री ॥ तव नृपें प्रेषी तास, चाली सा प्रेम जरी री ॥ ५ ॥ सिंधुदत्तना मनमांहि, जई तिणे वास कीयो री ॥ तव तेहने गुरें त्यांहि, इम उपदेश दीयो री ॥ ६ ॥ मिथ्यादर्शीन तसु नारि,तेहनी सुताने तजी री॥ श्रुत जे सुणे नर नारी, शिव सुख ते

ह भजी री ॥ ७ ॥ गुण वखाण्या गेलि, सम्यक् दर्शन तनयाना ॥ मोहने मेलो ठेलि, अर्थी थाउं दयाना ॥ ८ ॥ मोहनुं दल महा दुष्ट, पग पग स हुने पीडे ॥ कोडी पमाडे कष्ट, भव संकटमां भीडे ॥ ए ॥ चारित्र धर्म प साय, वली तस सैन्य बलें री ॥ लहियें लील सवाय, दुर्गति दूर टले री ॥ १० ॥ इम दीधो उपदेश, सिंधुदत्तने तेह सूरें ॥ पण थयो अफल अशे ष, प्रबल महा शून्यता पूरें ॥ ११ ॥ पूछे तसु परषद लोक, मारगमां घरे जातां ॥ तें कांइ सांभल्यो श्लोक, ते कहे हुं नहिं ज्ञाता ॥ १२ ॥ मित्रा दिकने उपरोध, गुरुकने तेह गयोरी ॥ बीजे दिन पण प्रतिबोध, शून्यता एं न लह्यो री ॥ १३ ॥ चालणी नीरने न्याय, तेहने गुरुनुं कह्युं री ॥ मन मां न रह्युं कांई, चित्त शून्यताएं ग्रह्युं री ॥ १४ ॥ तव गुरु गया अन्य देश, कुदृष्टि कुधर्मबुधें री ॥ सिंधुदत्त वाश्यो विशेष, कुमत कदाग्रह वधेरी ॥ ॥ १५ ॥ जव रही शून्यता क्रूर, तव ते रंग भरें री ॥ कह्युं कुमतिनुं भूर, समकी चित्त धरे री ॥ १६ ॥ एम करी पाप उपाय, एकेंद्रियादिकमांहि ॥ उपजी वेठे अपाय, काल अनंतो त्यांहि ॥ १७ ॥ ए एकत्रीशमी ढाल, उ दय रतन कही आखी ॥ बलिराजानुं रसाल,चरित्र इहां छे साखी ॥१८॥

॥ दोहा ॥

॥ हृदयांतर हवे अन्यदा, चिंते कर्म परिणाम ॥ अहो ए किमे बापडो, न लहे धर्म सुगाम ॥ १ ॥ सर्वगाथा ॥ ५६८ ॥

॥ ढाल बत्रीशमी ॥

॥ झरमर वरशे मेह जरूखे वीजली हो लाल ॥ज०॥ ए देशी ॥ बंधव मुझ बलवान, जोरावर जालमी हो लाल ॥ जोरावर जालमी ॥ उद्धत ए हनो साथ, प्रबल महापराक्रमी हो लाल ॥ प्रबल महा० ॥ १ ॥ चारि त्र धर्म नरेंद्रनुं, जई जूए बज्युं हो लाल ॥ ज० ॥ ए संसारी जीवनुं, एह वुं नहीं गजुं हो लाल ॥ ए० ॥ २ ॥ तुच्छ थाए बल तास, कला करुं तेह वी हो लाल ॥ क० ॥ पण पोतानी पांख, पडे छे छेडवी हो लाल ॥ प० ॥ ३ ॥ विषम ए दोइ न्याय, हुए शुं भूरतां हो लाल ॥ हु० ॥ जे थाए ते थाउं, प्रतिज्ञा पूरतां हो लाल ॥ प्र० ॥४॥ वडवानल वारिधि जेम, दुखें पण निर्वहे हो लाल ॥ दु० ॥ शशक काजे शशि जेम, कलंक पोतें सहे हो लाल ॥ क० ॥ ५ ॥ उपकार करतां आप, गुणी क्षय नवि गणे हो

लाल ॥ गु० ॥ जिम देह दजाडी दीप, दिशा तम ने हणे हो लाल ॥ दि० ॥ ६ ॥ धर्मादिक सघलां मुज, जो कृय वांछे सदा हो लाल ॥ जो० ॥ तो पण करुं उपकार, एहवुं जाणी मुदा हो लाल ॥ ए० ॥ ७ ॥ यतः ॥ उपकारिणि कृतमत्सरे वा, सदयत्वं यदि तत्र कोतिरेकः ॥ अहितसहसावलग्धे, सघृण यस्य मनः समासधुर्यः ॥ १ ॥ अपास्य लक्ष्मीहरणोब्रवैरतां, मा चिंतयित्वा च तदङ्गिमर्दनं ॥ ददौ निवासं हरये महार्णवो, विमत्सरा धीरधियां हि वृत्तयः ॥ २ ॥ अथवा मारो पक्ष शुक्ल, पोषे छे ए नितें हो लाल ॥ पो० ॥ सम्यक् माहरूं स्वरूप, जाणे छे जे श्रुतें हो लाल ॥ जा० ॥ ७ ॥ जगमां मुज अवदात, जणावे जोपशुं हो लाल ॥ ज० ॥ त्रिभुवनमां परसिद्ध, चलावुं चोपशुं हो लाल ॥ च० ॥ ए ॥ नहितो महारुं कुण नाम छतुं जगमां लहे हो लाल ॥ छ० ॥ प्रसिद्धिना अर्थी पुरुष, ते शुं शुं नवि सहे हो लाल ॥ ते० ॥ १० ॥ यतः ॥ तमसाऽनिशं शशांको, गगनं न त्यजति खंममानोपि ॥ कैतावती प्रसिद्धि, र्यस्मादन्यत्र परिवसतां ॥ १ ॥ विजय वर्धनपुरें लेई, सुलस श्रेष्टि घरें हो लाल ॥ सु० ॥ सुत अवतार्यो सोय, कर्मे को अवसरें हो लाल ॥ क० ॥ ११ ॥ नंदन धर्णु नाम यौवन आव्युं जिशे हो लाल ॥ यौ० प्रछन्नपणे जइ पास कर्मे आप्युं तिशे हो लाल ॥ क० ॥ १२ ॥ खडग यथाप्रवृत्त, करण नामें सही हो लाल ॥ क० ॥ वली एक छानी वात, कर्णमांहें कही हो लाल ॥ क० ॥ १३ ॥ ए खडगें अरिनो वृंद, कहुं तिम मारजे हो लाल ॥ क० ॥ शीखामण मनमांहि, भली परें धारजे हो लाल ॥ भ० ॥ १४ ॥ मोहनो सीतेरमो भाग कांईक ऊणो सही हो लाल ॥ कां० ॥ मेली उगन्योतेर भाग, अधिक केती लही हो लाल ॥ अ० ॥ १५ ॥ ज्ञानावरणादिक चार, अरीनो त्रीशमो हो लाल ॥ अ० ॥ नामने गोत्रनो भाग, तजीने वीशमो हो लाल ॥ त० ॥ १६ ॥ उगणत्रीशने उगणीश, कांइक अधिका वली हो लाल ॥ कां० ॥ हणजे तूं हुशियार, ए खडगें मन रली हो लाल ॥ ॥ ए० ॥ १७ ॥ ए सातें थाशे क्षीण, कटक तव एहनुं हो लाल ॥ क० मुहभंग थाशे विशेष, गजुं शुं तेहनुं हो ॥ लाल ॥ ग० ॥ १८ ॥ तव निभयपणे सहामात्य, सम्यग्दर्शन तणुं हो लाल ॥ स० ॥ देखीश तूं सहि द्वार, जे सुखदाइ घणुं हो लाल ॥ जे० ॥ १९ ॥ बत्रीशमी ए ढाल बां

ली, बहु भेदनी हो लाल ॥ वो० ॥ उदय रतन कहे एम, अरि उछेदनी हो लाल ॥ अ० ॥ २० ॥ सर्वगाथा ॥ ५७७ ॥

॥ दोहा ॥

॥ तिहां राग द्वेष रूपें अछे, द्वारें सजड कपाट ॥ ते ऊघाड्यानो पछे, देखाडीशुं घाट ॥ १ ॥ हमणा में ए जिम कह्यो, तिम तुं करजे तंत ॥ तव तेणें तिम आचर्युं, अरिनो लेवा अंत ॥ २ ॥ सम्यक् दर्शन मंत्रिनुं, जव इणें दीठुं द्वार ॥ तव कर्मे सद्गुरुतणो, योग मेळ्यो तिणिवार ॥ ३ ॥ सहायनी सोंपी दक्षता, शून्यसा जिणें पलाहि ॥ सुगुरु सदागम संगतें, कर्मे आण्यो साहि ॥ ४ ॥

॥ ढाल तेत्रीशमी ॥ चउसदहणा ति लिंगछे ॥ ए देशीमां ॥

॥ आख्याननी देशी, रामगिरि रागें चाल ॥ मोह राजा मूर्छा लीनजी, ज्ञानावरण सामंत दीन जी ॥ नाम गोत्र शोकाधीन जी,रूए राग केसरी इ बलहीन जी ॥ बलहीन सघलुं सैन्य देखी, मिथ्या दर्शन नाम ए ॥ मंत्रीश्वर तव थयो ऊभो,धरी हियामां हाम ए॥ अवस्था सहु निज साथ ी, अवलोकी अमरष भर्यो ॥ अश्रद्धान नामें महादुष्ट चूर्ण, ग्रही वेगें ारवर्यो ॥ १ ॥ पहोतो जइ शीघ्रें ते नंदने पासेंजी, सुगुरु सदागम तव तेहां नासे जी ॥ ते नंदन आगें आलस छांडी जी,मोह मिथ्या दर्शनना गांडी जी ॥ मांडी कह्या मोह साथना,तिणे अवगुण एकेक ए ॥ तव धर्म नृपना पक्षना पण,गुण कह्या अनेक ए ॥ धर्मे सुर शिव हुवे संपद, पापें नरकादिक लही ॥ तव दक्षता प्रभावथी, ते साचुं सघलुं सद्दही ॥ २ ॥ तव मिथ्या दर्शनें निज कामें जी ॥ दुष्ट चूरणते अश्रद्धा नामें जी ॥ हेला तसु दीधुं हिंमत योगें जी ॥ तव ते चेती तास प्रयोगें जी॥ तिणें प्रयोगें मति पालटी,चिंते ते नंदन ताम ए॥ कुण कर्म ने कुण धर्मने कुण,कुगति ने सुर धाम ए॥ किणे कांइ दीठुं नहीं ए,आल जिम तिम ऊचरे॥ फोगट मारें फंद मांडी, पेट भराइ इम करे ॥ ३ ॥ समीप वर्त्तिने शने शने एम जी, ताली लेइने कहे धरी प्रेम जी॥ अहो चरचा ए चितनी उपाई जी॥ धीरजें शुं कहे छे दृढ थाई जी ॥ दृढ थइ अहो धर्मनी ए, करे चर्चा फोक ए॥ प्रत्यक्ष ते प्रमाणियें, किणे दीठो छे परलोक ए॥ तिहारे कर्म राजा कोपिउ, मोहली वाधी मानता ॥ तेना सुभट सघला सज थया, परिपूर्ण

पहेला जिम हता ॥४॥ सम्यक् दर्शन महामंत्रीनें जी ॥ घरे जइने ते प्राणीने जी ॥ गले ग्रहीने कीधो आगें जी ॥ मोहने साथें क्रोध अतागेंजी ॥ क्रोध अतागें तेहने तव, करावी महापाप, एकेंद्रियादिक मांहि धरीउ, जोजो मोहनो व्याप ॥ वलि नर्क तिर्यंच मनुष्यमांहे, फेरव्यो ते फरि फरी ॥ वार अनंती विगत तेहनी, ज्ञानी विण कुण लहे खरी ॥ ५ ॥ पूरव रीतें खडग देखाडी जी ॥ मोहादिकनें पातला पाडी जी ॥ सम्यक् दर्शन मंत्री द्वारें जी ॥ वार अनंती एणे प्रकारें जी ॥ वार अनंती गयो पण तिहां,पाम्यो नही प्रवेश ॥ रोग विषय रस क्रोधयोगे, अफल कर्या उपदेश ॥ फरी मोहादिकें सज्ज थइ, एकेंद्रियादिकमां धर्यो ॥ उदय रत्न कहे वार अनंती, तेत्रीशमी ढालें फर्यो ॥ ६ ॥

॥ दोहा ॥

॥ मलयपुर नामें नगर, मानव क्षेत्र मझार ॥ इंद्र नामें अवनीपति, राज्य करे ते वार ॥ १ ॥ विजया राणी तेहने, तेहनी कूखें तास ॥ अंगज पणे अवतारीउ, कर्म परिणामें खास ॥ २ ॥ विश्वसेन वारू तिहां, निरुपम दीधुं नाम ॥ अनुक्रमें योवन आविउ, सकल कला गुण धाम ॥ ३ ॥ अशोक सुंदर उद्यानमां, एक दिन रमवा काम ॥ परिकर पूरें परवर्यो, राजकुमर ते जाम ॥ ४ ॥ सर्वगाथा ॥ ६०२ ॥

॥ ढाल चोत्रीशमी ॥

॥ झरमर झरमर हो सेला मारु वरशे लो ॥ ए देशी ॥ तव कर्में हो सुगुरु सदागम योग, तिहां विश्वसेनने वनमां मेलिउ ॥ तेहने दर्शने हो उल्लस्युं वीर्य विशिष्ट,तिणें सुविशेषें मोहने अवहेलिउ ॥१॥ त्यां ते खड्गे हो मोहादिक शत्रुनां तन्न,पूर्वेथी अधिक छेदी प्रेमने भरें॥ प्रणमीने हो सुगुरु सदागम पास,कर जोडीने बेठो ते सपरिकरें ॥२॥ सदागम हो भणिनें सुगुरें तास,श्रुतसंगम कीधो तव सा कहि॥ विश्वसेनने हो श्रवणें लागी विरतंत, सुणतां जेहथी ज्ञान दशा लही ॥ ३ ॥ भमाड्यो हो भवसागरमांहे भूरि, भइ भोला तुंने परें परें भोलवी ॥ प्रौढ पापीयें हो मोह राजाने प्रधानें, मिथ्यादर्शनें राख्यो उलवी ॥ ४ ॥ गेहिनी संगें हो प्रेरवी निजनंदिनी सोय, धर्मबुद्धि नाम तेहनुं जूठूं धरे ॥ महापापणी हो त्रिभुवनें भमती तेह, सहु प्राणीने वेरी वश करे ॥ ५ ॥ धर्मने छलें हो करावी पाप अ

घोर,पाडें नरक गतें सहु प्राणीने ॥ मिथ्यादर्शन हो तात कुदृष्टि मात, मन तेहनां रीझवे हित आणीने ॥ ६ ॥ मिथ्यादर्शन हो कुदृष्टि जे करे करतुक, श्यां श्यां मांमी ते कहूं तुज आगले ॥ रागादिक हो दोष रहित जे देव, अदेवपणुं थापे तेहमां बलें ॥ ७ ॥ निःस्पृहादिक हो गुणें जे राजे गुरुराज, अगुरु बुद्धी तेहनेविषे धरे ॥ दयादिक हो सहित जे धर्म सदाय, ते धर्मना द्वेषी सहु जीवने करे ॥ ८ ॥ कुदेव कुगुरु हो कुधर्मसुं करे तल्लीन, विपर्ययपणुं उपजावी बहु परें ॥ आचरावी हो प्राणीने पाप अनेक, दूरतें डुःख दाखे सहुने शिरें ॥ ए ॥ तुजने पण हो मोहादिकें मली जोर, काल अनंतो कष्ट दीधां घणां ॥ सकुटंब हो मिथ्यादर्शन सु विशेष, महा डुःख दीधां नवि राखी मणा ॥ १० ॥ तेहनी नारी हो पुत्रीएं पीड्यो जेह, सहस्र जीभें जो विवरीने कहे ॥ तो पण तेहनो हो पारन पामे कोय, उदय चोत्रीशमी ढालें इम कहे ॥ ११ ॥

॥ दोहा ॥

॥ श्रुति भाषित इम सांभली, भय पामी ते भूर ॥ गद गद स्वर गुरुने कहे, पद प्रणमी हित पूर ॥१॥ आज लगें प्रभु ए सवे, हूं नवि समज्यो कांइ ॥ आचरणें अज्ञानने, आतम मेल्यो ठांइ ॥२॥ एहवा मुज अशरण भणि, वेरियें आणतां वाज ॥ शरण होशे प्रभु केहनुं, उपदेशो ते आज ॥ ३ ॥

॥ ढाल पांत्रीशमी ॥

॥ अणसण ते रे विरह अनाहक दीधुं ॥ ए देशी ॥ गुरु कथनें फरी तेहने रे, श्रुति समजावे विशेष ॥ वार अनंती में तुने रे,ए दीधो छे उपदेश ॥ गु० ॥ १ ॥ किहां एक शून्यताने छलें रे, अश्रद्धानयोगें क्यांयें ॥ मद मोह द्वेषवर्गें किहां रे, शठगुणने महिमायें ॥ गु० ॥ २ ॥ कुदृष्टि सुताप्रसंगथी रे, जे में कह्यो ते छेक ॥ आतमहित अणवांछते रे, ते अफल कस्युं अनेक ॥ गु० ॥ ३ ॥ हित उपदेश जे कहुं हवे रे, ते तुं सुण सावधान ॥ उपयोगशुं तव ते सुणे रे, कर जोडी धरी कान ॥ गु० ॥ ४ ॥ सा कहे सुगुण सुधारसें रे, भरियुं सागररूप ॥ चारित्र धर्म छे नृपति रे, जस राजधानी अनूप ॥ गु० ॥ ५ ॥ सम्यक् दर्शन मंत्री भलो रे, सदागम सोदर सार ॥ सदबोध बंधु जेहने वडो रे, सर्व जीवनो हितकार ॥ गु० ॥ ६ ॥ पीपल पानतणी परें रे, मोह राजानुं सैन्य, ध्रुजे जेहना नामथी रे, पामे

अवस्था दैन्य ॥ गु० ॥ ७ ॥ परें परें पीस्यो घणुं रे, सवधू सुता समेत ॥ मिथ्या दर्शनने जेणे रे, रंगेशुं रणखेत ॥ गु० ॥ ८ ॥ पाईयो धर्म प्रसाद नो रे, मोक्ष तरुनुं मूल ॥ धरवा गुण सुपीठने रे, फणीश्वर जे महा स्थूल ॥ गु० ॥ ए ॥ सुख स्मृति विपदने ते नहीं रे, जे तूठो न आपे एह ॥ सम्यक् आश्रित सत्वनें रे, पहोचाडे नव छेह ॥ गु० ॥ १० ॥ तनुजा छे एक तेहने रे, सकल सौभाग्य सदन्न ॥ धर्म बुद्धि सहि तेहनुं रे, नाम छे गुण निष्पन्न ॥ गु०॥ ११ ॥ जंतु जे एहने भजे रे, निबिड धरीने नेह ॥ सम्यक् दर्शन मंत्रीनुं रे, दर्शन पामे तेह ॥ गु० ॥ १२ ॥ दीठो जे दुरगति हरे रे, शरणे राखे सदीव ॥ मोहादि त्रास पामे मनें रे, जेहने नामे अ तीव ॥ गु०॥१३॥ तस दुहिता न लही जिणें रे, ते दर्शन न लहे तास ॥ सत्व ते शरण विना सही रे, पग पग पामे त्रास ॥ गु० ॥ १४ ॥ जो गर जू होय तूं तेहनो रे, तो सा मेलुं तुज्ज ॥ जिम भागे भवयातना रे, मननी मटे अलुज्ज ॥ गु० ॥ १५ ॥ पांत्रीशमी ढाल ए कही रे, जें मोहनीमांजे जाति ॥ सांभल जो साचे मनें रे, उदय वदे इणि भाति ॥ गु० ॥ १६ ॥

॥ दोहा ॥

॥ दर्शन तेहनुं देखवा, उत्सुक हूं छुं आज ॥ दया करी देखाडियें, क हूं छुं मेली लाज ॥ १ ॥ तव गुरुराजें तेहनुं, योग्यपणुं ते जोय ॥ श्रुतिमु खें सुविस्तरपणें, जंपावे तक जोय ॥ २ ॥ मोह मिथ्या दर्शनतणा, कुद ष्टि सार्थे जोडि ॥ अवगुण फरी तिणें उचर्या, कुधर्मबुद्धिना कोडि ॥३ ॥ शुद्ध धर्म सूधी परें, त्यां लगें कह्यो अविरुद्ध ॥ आदरवानी एहने, ज्यां लगें उपनी बुद्ध ॥ ४ ॥ सर्वगाथा ॥

॥ ढाल छत्रीशमी ॥

॥ लेख आपीने कहावे ॥ ए देशी ॥ तव मगन थइने तेह, सद्गुरुने क हे सस्नेह ॥ भगवन तुम श्रुति सुपसाएं, धर्म बुद्धि हूं पाम्यो उछांहि ॥ ॥१॥ चित्तमां हवे चाहूं करेवा, तुम भाषित धर्मनी सेवा ॥ कुदृष्टि कुधर्म बुद्धिनो, संग न करुं अन्य लिंगीनो ॥ २ ॥ भांपो करी तेणे सुपसाय, शु द्ध धर्म विधान उपाय ॥ तव गुरु कहे तारी ए थिरता ॥ थइ अमने उ छाहनी करता ॥ ३ ॥ श्रोता श्रुत अर्थी लाधे, वक्तानुं महाबल वाधे ॥ शुद्ध धर्म विधान कहेवाने, अमे पण थया एकतानें ॥ ४ ॥ शुद्ध धर्मनो

थाय जे अर्थी, पहेलो परहो रहे ते परथी ॥ मन वचन कायानी शुद्धें, निर्नय नेही एक बुद्धें ॥ ५ ॥ सम्यक् दर्शन विण स्वामी, अन्यने न करे शिर नामी ॥ मनसुं हित राखे वहुलुं, दिल किहांरे न करे रुहुलुं ॥ ६ ॥ सम्यक् आराधो एह, चडतां सुख आपे अछेह ॥ तव चिंते राजकुमार, आणी हृदयमां हर्ष अपार ॥ ७ ॥ अहो ए सम्यक् दर्शन केरो, प्रभाव दीशेछे भलेरो ॥ नाम पण अति सुंदर जेहनुं, क्यारें दर्शनदेखीश तेह नुं ॥ ८ ॥ अंतरंग आलोची एम, मनमांहे धरी ते प्रेम ॥ तव अवसर उ लखी तास, राजा कर्म परिणामें खास ॥ ए ॥ शुद्धता परिणाम स्वरूप, अपूर्व करण नामें अनूप ॥ दृढ तीक्ष्ण कठिन कुठार, एक आप्यो तेहने उदार ॥ १० ॥ कानमां वलि कही एक वात, तव उल्लस्युं वीर्य विख्यात ॥ युगतेसुं यथोक्तप्रकारें, पोलें जइ तेह कुठारे ॥ ११ ॥ निबिड राग अने बीजो द्वेष, परिणति रूप लहो सविशेष ॥ ग्रंथी नाम कमाडनी जोडी, ततखिण ते नाखी त्रोडी ॥ १२ ॥ मोहादिक शत्रूने मथतो, उत्तम पंथ ने अनुसरतो ॥ अंतःकरण नामें सुविचार, महामात्य प्रसाद उदार ॥ १३ ॥ उदय रत्न वदे एम वाणि, बत्रीशमी ढालें जाणी ॥ जिनवाणी जे सद्दहिसे, लाभ ते अपूर्व लहिसे ॥ १४ ॥

॥ दोहा ॥

॥ प्रतिज्ञा पूरी थई, तव हरखी कर्म परिणाम ॥ अति विशुद्ध अध्यव सायमें, आपे एहने ते गाम ॥ १ ॥ अनिवृत्तिकरण नामें इसें, वज्रदंम प्र चंम ॥ ते पामी तस उल्लस्युं, अभिनव वीर्य अखंम ॥ २ ॥ द्वेष गजेंद्र मोह राजनो, सुत तेहना सुत दोय ॥ क्रोध मान नामें लहो, अनंतानुबंधी सोय ॥३॥ तथा बीजो सुत मोहनो, राग केसरी पुष्ट ॥ माया तेहनी नंदि नी, अनंतानुबंधिनी दुष्ट ॥ ४ ॥ सुत तेनो वलि जालमी, अनंतानुबंधी लोभ ॥ मिथ्या दर्शन मंत्रीश ते, जे मोहघरनो मोभ ॥ ५ ॥ ए पांचे अ ति आकरा, ते दंमे हण्या पूंठ ॥ मेहली नहि तेहनी किमे, कभा थाये कठ ॥ ६ ॥ तिम फेरी चूखा तिणें, जीवित लइ गत सान ॥ महाअटविमां ज ई पड्या, मूर्छागत तजि मान ॥ ७ ॥ सर्व गाथा ॥ ६५७ ॥

॥ ढाल साडत्रीशमी ॥

॥ वाले वेसे ने वावरी नाहनी ॥ ए देशी ॥ दुश्मन सघलां दूर करीने,

बहु दिननो अलजायो रे ॥ अंतःकरण नामें तव मोहोलें, राजकुमर त
आयो के, दर्शन देखीने ॥ सम्यक् दर्शननुं सार,मोह्यो मुख पेखिने ॥१
तिहां उपशम समकित रूपधारी, सम्यक् दर्शन मंत्रीने रे ॥ देखंतां वि
ल उलस्युं तेहनुं, मृग जिम सुणि तंत्रीके ॥ द० ॥ २ ॥ पुष्करावर्त नाम
घनयोगें, जिम तरु दवनो दाधोरे ॥ नवपल्लव थाए तिम तेणें, हर्ष अ
वे लाधो के ॥ द० ॥ ३ ॥ जिम पंथी सर देखी रीके, ग्रीष्म रुतु मरुदेश
रे ॥ डुर्जन वचनें दाधो जिम साधु, सुवचनें सीच्यों विशेषें के ॥ द० ।
॥ ४ ॥ जनम दरिद्री जिम धन धारा, देखीने दिल हीसे रे ॥ हीमें बाल्य
जिम अंबुज विकसे, वारु वसंत जगीसें के ॥ द० ॥ ५ ॥ जिम विरही व
ल्लनने योगें, मेघागमे जिम मोरा रे ॥ मालती लही जिम मधुकर माले
चंदने देखि चकोरा के ॥ द० ॥ ६ ॥ मोहादिक वेरिएं मलिने, काल अ
नादि अनंत रे ॥ डुःख दावानल दऊव्यो ते प्राणी, एहवो तप्त अत्यंत के
॥ द० ॥ ७ ॥ सुधारस पूर समो महा शीतल, देखी तास दिदार रे ॥ ति
म विश्वसेननुं मन उल्लसियुं, आनंद पाम्यो अपार के ॥ द० ॥ ८ ॥ त
व गुरुराज कहे फरि तेहने, विगतेंसुं विस्तारी रे ॥ वली वली शीखामण
वारू, हेजेसुं हितकारी के ॥ द० ॥ ए ॥ साडत्रीशमी ढालें सुणो श्रोता,
उदय रतन इम बोले रे ॥ मुक्ति तो तेहने ले मुह आगें, जे दर्शनथी नवि
मोले के ॥ द० ॥ १० ॥

॥ दोहा ॥ कह्यो ले जो पूरवे, तो पण दृढवा काम ॥ सूरी कहे नृपसु
त सुणो, एक चितें अनिराम ॥ १ ॥

॥ ढाल आडत्रीशमी ॥

॥ हमीरांनी देशी ॥ रखेरे राचो कोई अन्यने, जीव सलामती सीम
कुमरजी ॥ आण एहनी आराधजो, निश्चयसुं धरी नीम ॥ कु० ॥ १ ॥
सुर पण न शके चालवी, दृढ तिम धरजो धीर ॥ कु० ॥ प्राणांतें पण
प्रीलियें, व्रत नवि खंमियें वीर ॥ कु०॥ २ ॥ शंका कंखा विगंला वली, प
र पाखंमी प्रसंग ॥ कु० ॥ प्रशंसा पर धर्मनी, रखे करो मन रंग ॥ कु०॥
॥ ३ ॥ पिंम प्रदान प्रपादिक, एहवा अनेक प्रकार ॥ कु० ॥ समकितने
ते सर्वथा, दूपणना देनार ॥ कु० ॥ ४ ॥ आतमहितवंलक नरें, समकित
राखवुं शुद्ध ॥ कु० ॥ थोडुं पण जो मेलुं करे, तो मांमे मोहादिक युद्ध

॥ कु० ॥ ५ ॥ पापी ते सहु वलें पडें, तव समरी पूरव वीर ॥ कु० ॥ कोपें चड्या ऊाली गले, लई जाए निज घेर ॥ कु० ॥ ६ ॥ विडंबी विविध परें वली, निर्दय तेह निगोर ॥ कु० ॥ ते माटे तूं एहनुं, जतन करजे जोर ॥ कु० ॥ ७ ॥ क्यारे जो ते पामशे, थोडो पण अवकाश ॥ कु० ॥ तो बाधो गढ भेलसे, रखे करो विशवास ॥ कु० ॥ ८ ॥ सम्यक् दर्शनने सदा, आराधजे इकचित्त ॥ कु० ॥ पतिव्रता नारी परें, मेली मननी भ्रांति ॥ कु० ॥ ए ॥ चारित्र धर्म राजान ते, योग्य जाणि गुणगेह ॥ कु० ॥ देखाडशे दिन केटले, भक्तवत्सल प्रभु तेह ॥ कु० ॥ १० तनुजा बे छे तेहनी, अंगथी पण नहि अलगी ॥ कु० ॥ परम वल्लभ पूजित जगें, शीलशुं रही जे विलगी ॥ कु० ॥ ११ ॥ साम्राज्य संपद दायिनी, प्रवर लक्षणोपेत ॥ कु० ॥ सुख खाणी सुभगी घणुं, सकल सोहगनुं खेत ॥ कु० ॥ १२ ॥ सर्वस्व गुणनी उरडी, देश विरति एक दिव्य ॥ कु० ॥ सर्व विरति बीजी सही, नामें उत्तमतरें सेव्य ॥ कु० ॥ १३ ॥ एकमनें आराधतां, चक्री चारित्र धर्म ॥ कु० ॥ ते पुत्री तुने परणावशे, शाश्वत जे द्ये शर्म ॥ कु० ॥ ॥ १४ ॥ तरवारनी धारा जिसुं, छे आराधन तास ॥ कु० ॥ सुजाणने सुखनुं मूल छें, अजाणने छे डुःखरास ॥ कु० ॥ १५ ॥ त्रिविधें तेहने सेवतो, पामीश तूं सुख पूर ॥ कु० ॥ क्रमे क्रमे चडतो पगथिए, रहे तो तास हजूर ॥ कु० ॥ १६ ॥ परम प्रभूता पद पछे, मुक्ति पुरीनुं राज्य ॥ कु० ॥ पामीश परमेश्वरपणुं, जिहां वेरी न आणे वाज ॥ कु० ॥ १७ ॥ अडत्रीशमी ए ढालमां, उदय रतन कहे एम ॥ कु० ॥ सुखिया तो तेहज सही, जेहने संयमसुं प्रेम ॥ कु० ॥ १८ ॥

॥ दोहा ॥

॥ सम्यक् ए सर्व सांभली, ते विश्वसेन कुमार ॥ सम्यक् दर्शन मंत्रिनो, सेवक थई तिणिवार ॥ १ ॥ नेहेंशुं गुरुने नमी, पोतो पोताने गेह ॥ कुमर ते सपरिकरें, लाहो अपूरव लेह ॥ २ ॥ सुगुरु वचन संभारतो, सम्यक् दर्शन सेव ॥ सम्यक् ते सूधा करे, नवे नेहें नितमेव ॥ ३ ॥ कर्म राजा तव चिंतवे, अहो प्रतिज्ञा प्राहि ॥ पूरी में पाडी हवे, चिंता न रही कांहि ॥ ४ ॥ बांधव मुझ बहु कोपशे, जो आगें तो पण सत्य ॥ अर्ध पुदगल उपहरी, एहने नहिं भव स्थित्य ॥ ५ ॥ प्रौढ सहाय प्रभाव

थी, निवृत्ति पुरियें नेट ॥ आखर ए सहि पोचशे, खेली मोह आखे
॥ ६ ॥ सर्वगाथा ॥ ६७७ ॥

॥ ढाल उंगणचालीशमी ॥

॥ वैरागी थयो ॥ ए देशी ॥ अनुक्रमें ते राजा थयो रे, जनकें जातां प
लोक ॥ नूमिका तेहने नालवी रे, सोंप्यो सघलो लोको रे ॥ १ ॥ समि
त सांचवे, पाले राज्य पदूरो रे ॥ न्याय सुनीतिशुं, डुर्जनने करि दूरो
॥ स० ॥ २ ॥ निरानंद हवे एकदा रे, अमरषरहित अत्यंत ॥ पक्ष प
तानो पेखीने रे, कोप्यो राग केसरी चिंत्यो रे ॥ स० ॥३॥ दृष्टि राग रू
थई रे, वडो सुत मोहनो ते वीर ॥ पिताने प्रणमी संचस्यो रे, पहोतो
इवसेनने तीरो रे ॥ स० ॥ ४ ॥ छिद्र जुवे बल कारणें रे, निशदिन रहे
जीक,पण लाग न पामे ते किशो रे, थापवा निज मत ठीको रे ॥स०॥५
पूर्व परिचित एकदा रे, तव एक तापस त्यांयें ॥ आव्यो पुर उद्यानम
रे, सांजल्युं ते नररायें ॥ स० ॥ ६ ॥ विश्वनूति नामें ते सही रे, कप
कलानो कोट ॥ दरीउ डुष्ट विद्यातणो रे, चूके न मंत्रनी चोटो रे ॥ स
॥ ७ ॥ आकर्ष्या अज्ञानना रे, जन सहु जोवा जाय ॥ पण नरपति ना
कदा रे, समकित जिणे डुहवायो रे ॥ स० ॥ ८ ॥ कोईक साथें कहाव्युं
शुं रे, तव ते त्रिदंमीएं तास ॥ दर्शनने पण आवतां रे, श्यो थाए छे विण
शो रे ॥ स० ॥ ए ॥ पूर्व प्रसंगतणें वशें रे, दाक्षिण लगें नरदेव ॥ कां
क मुहूरतमें करी रे, तिहां पहोतो ततखेवो रे ॥ स० ॥ १० ॥ मंत्र वि
द्या कौतुक कला रे ॥ तपसी देखाडे तास ॥ दृष्टिरागें तव तक लही रे
नृपघटें पूख्यो वासो रे ॥ स० ११ ॥ त्रिदंमिएं तिम रीऊव्यो रे, राजा आ
वे तिहां रोज ॥ नित जोए कौतुक नवां रे, चित्तमांहे धरि चोजो रे ।
स० ॥ १२ ॥ चित्त चंचल थयुं कुमरतणुं रे, ते कुदृष्टिरागें कस्यो जेरो ।
समकेतथी तव ते चल्यो रे, इम नाखे ते वेरो रे ॥ स० ॥ १३ ॥ ए श्वेत
पटा निलु जडा रे, कला न बूऊे कांइ ॥ ए त्रिदंमि नगवानमां रे ॥ ज्ञान
तणिम किसी नांइ रे ॥ स० ॥ १४ ॥ तव सम्यक् दर्शन चिंतवे रे, कुदृ
ष्टि स्नेह काम राग ॥ रूपें इहां राग केसरी रे, प्रगट्यो पूर्ण लही लाग
रे ॥ स० ॥ १५ ॥ एक ज्वरतणे जोरें करी रे, व्यापे सघला रोग ॥ तिम
ए एकने आगमे रे ॥ आवशे इहां अरि उंघो रे ॥ स० ॥ १६ ॥ इहां रहे

वुं जुगतुं नहीं रे, मुजने हवे ते माट ॥ अलोप थयो इम चिंतिने रे, कु संग लही ते कुघाटो रे ॥ स० ॥ १७ ॥ मिथ्या दर्शन मंत्रवी रे, किहांय थी प्रगटी त्यांही ॥ गले झालीने तेहने रे, नाख्यो निज फंदामांही रे ॥ स० ॥ १८ ॥ कुलिंगी संग करावीने रे, धर्म छले बहु पाप ॥ एकेंद्रियादि कमां धस्यो रे, मोहादिकें मली सपापो रे ॥ स० ॥ १९ ॥ तिमज राख्यो तिहां रोकीने रे, तेहने अनंतो काल ॥ उंगणचालीशमी ए कही रे, उद यरतन ए ढालो रे ॥ स० ॥ २० ॥

॥ दोहा ॥

॥ वली हवे ते एकदा, कर्म नृपें धरि हेत ॥ धन श्रेष्ठीने धाम लेइ, उ पजाव्यो नर खेत ॥ १ ॥ सुभगनामा सुत ते सही, यौवन पाम्यो जाम ॥ सुगुरु सदागम संगथी, समकित पाम्यो ताम ॥ २ ॥ मिथ्या दर्शन आदि दे, डुश्मन कीधा दूर ॥ सम्यक् दर्शननी सेवना, तिमज करे भरपूर ॥३॥ सम्यक् दर्शन मंत्रि जे, क्षायोपशमिक रूप ॥ त्रिविध आराधे तेहने, आ णी भाव अनूप ॥ ४ ॥ वरष केतां एक वही गयां, सुपरें करतां सेव ॥ प रण्यांपूठें एकदा, सुत तसु जणतां खेव ॥ ५ ॥ अवसर जाणी आपणो, वलि तिहां आव्यो वेग ॥ रोषभरें राग केसरी, उपजाव्या उद्वेग ॥ ६ ॥ ते सुभगतणा घटमां सही, बीजे रूपें बलवंत ॥ स्नेह रागमिषें संक्रम्यो, तव उपनो स्नेह अनंत ॥ ७ ॥ मात पिता भगिनीविषे, भाइविषे अति भूर ॥ दास दासी परिजनविषे, प्रीतिनुं वाध्युं पूर ॥ ८ ॥ बाहिरथी आ वे घरे, जो नजरे नावे कोय ॥ तो तेहने जोतो फिरे, भूख्यो तरस्यो सोय ॥ ९ ॥ नजरें देखे तेहने, तव तसु थाय करार ॥ पुत्रतणा तो प्रेमनो, प रमेश्वर लहे पार ॥ १० ॥ सर्व गाथा ॥ ७१८ ॥

॥ ढाल चालीशमी ॥

॥ नणदल सालूडामां मोतीडो सणेर ॥ ए देशी ॥ वारी बेहुं मासानो बाल ते, वारी आलिंगे लई उत्संगे हो ॥ बलबल बेरुडामां मनडो बकि रहि उ ॥ वारी मुखपर माखी गण गणे, वारी तो पण चुंबे मनरंगें हो ॥ब०॥१॥ वारी खेलें खरडी नासिका, वारी लपनथी चुए लाल हो ॥ ब० ॥ वारी कोकाकरी लुहे करें, वारीसल सूत्र बहु जंबाल हो ॥ ब० ॥२॥ वारी केडें घाली कीकलो, वारी त्रिक चोक चाचरे तेह हो ॥ब०॥ वारी सुत ग्रस्तनीं

परें भमे, वारी गलियां गलियां पुर छेह हो ॥ छ०॥३॥ वारी अनेक विधें दु लरावतो, वारी लोकनी न गणे लाज हो ॥छ०॥ वारी दिन सारो लागी र हे, वारी भोजन न करे काज हो ॥ छ० ॥ ४ ॥ सुखें रातें सूए नहीं, वा री जिहां नवि उंघे ते बाल हो ॥ छ० ॥ वारी भर निंदामांथी भडकिउ, वा री ऊठे लेवा संभाल हो ॥ छ० ॥ ५ ॥ वारी जनकनां भाणमांहेथी, वारी मीठुं मधुरुं नेह हो ॥ छ० ॥ वारी आसडी जाए सवे, वारी खातो थयो जव तेह हो ॥ छ० ॥ ६ ॥ वारी तिहां तिहां साथे संचरे, वारी जिहां जिहां जाए ते बाल हो ॥ छ०॥ वारी जे जे कांई जोइयें तेहने, वारी चि त्तमां राखे चाल हो ॥ छ० ॥ ७ ॥ वारी निशालें जई नित्यें, वारी पगवे रही पास हो ॥छ०॥ वारी पांडसपाडां बहु करे, वारी पूरे पंमथानी आस हो ॥ छ० ॥ ८ ॥ वारी व्याधितणे उदयें वली, वारी अधिक करे उचाट हो ॥ छ० ॥ वारी ते ऊपर खडो रहे, वारी अहनिशि सूवे न खाट हो॥ छ० ॥ ए ॥ वारी वैद्य तेडावे वलि वलि, वारी औषध करे अनेक हो ॥ छ० ॥ वारी जाणा जोषीने जूवा, वारी विध विध मेले विशेष हो ॥ छ० ॥ १० ॥ वारी मंत्र यंत्र मणि औषधी, वारी अनेक परें उतार हो ॥ छ० ॥ वारी करी इम करतां कांइ, वारी जो न पडे करार हो ॥ ११ ॥ वारी हिंमत तो हारे हिए, वारी डुखी थईने दीन हो ॥ छ० ॥ वारी विविध परें विलवे घणुं, वारी लंघे आरती लीन हो ॥ छ० ॥ १२ ॥ वारी हाहा शुं थाशे हवे, वारी नावे कां अमने मोत हो ॥ छ० ॥ वारी अती नेहें इ म ऊचरे, वारी घर गयुं सर्वस्वसोत हो ॥ छ० ॥ १३ ॥ वारी चालीशमी ढालें कुइ, वारी स्नेहवशें गई सान हो ॥ छ० ॥ वारी उदय रतन कहे ते हने, वारी सुणजो सहु सावधान हो ॥ छ० ॥ १४ ॥

॥ दोहा ॥

॥ इम करतां मोटो थयो, जालिम तेह जुवान ॥ परणावी तस प्रेम सुं, कन्यारूप निधान ॥ १ ॥ हाट वेसाडी हेतसुं, शीखवे रही समीप ॥ वणिज कला तसु वेगसुं, कुमर लही कुल दीप ॥ २ ॥ धनद शेठनुं धन सवे, सुभगें सोंपी तास ॥ धव धव कीधो घर धणी, अंगें धरि उल्लास ॥ ३ ॥ लेवुं देवुं ते वस्तु, गरथ ने गृहव्यापार ॥ पोतें कांई पूछे नही, वेगो रहे घरबार ॥ ४ ॥ सर्वगाथा ॥ ७३६ ॥

॥ ढाल एकतालीशमी ॥

॥ लाल वेसरदे ॥ ए देशी ॥ इम अंगजनी चेष्टा लीनो, भावतें भरमां ही भीनो ॥ लाल सुत नेहें, मनसुं मुंझाणो ॥ सु० ॥ पापें पथराणो ॥ सु० ॥ ला० ॥ १ ॥ सुत स्नेहें ते जो जो सुभगो, दुर्गति लहेसे महा दु नगो ॥ ला० ॥ २ ॥ दिलमांहे न संभारे देवा, वली वीसारी गुरुसेवा । ला०॥ ३ ॥ सुत विसार्यां पड्यो सांसे, मुखथी न कहे सामी वरांसे ॥ भा० ॥ ४ ॥ अलगा रह्या गुरुना उपदेश, वेरणि थइ धर्मकथा विशेष ॥ भा० ॥ ५ ॥ सम्यग्दर्शन नामें पण तेह, आरति मने लही अछेह ॥ भा० ॥ ६ ॥ स्नेहरूपें राग केसरी वलिउ, लहि ने तिहांथी ऊचलिउ ॥ भा० ॥ ७ ॥ सम्यक्दर्शन नामें पण तेह, आरति मनें लही अछेह ॥ ला० ॥ ८ ॥ मिथ्यादर्शन मंत्रीसर धायो, लेइ परिकर ने तिहां आयो ॥ ला० ॥ ए ॥ सुभगतणा घटमां सकुटंबे, आवी वश्यो अवलंबे ॥ ला० ॥ १० ॥ भात वधूनो जव थयो जोरो, तव संचार्यो तिणे दोरो ॥ ला० ॥ ११ ॥ तिणे दोरे सुतनो दिल फरिउं, तव तातनो गुण विसरिउं ॥ ला० ॥ १२ ॥ आठे पहोर उद्वेग उपाय, ए दीठो अम न सुहाय ॥ ला० ॥ १३ ॥ स घला अनर्थनुं ए मूल, अमने सुखमांहे जगावे शूल ॥ ला० ॥ १४ ॥ सु खें वेसी रहेवा न दीयें, अवगुण केता मुख वदीयें ॥ ला० ॥ १५ ॥ इम चिंति घरमांथी नेटे, बापने काढयो ते बेटे ॥ ला० ॥ १६ ॥ सुधर्म बुद्धि तजी ते सुभगो, अंगज वधूथी घणुं उभगो ॥ ला० ॥ १७ ॥ घर घर भी ख मागीने खाय, किहां रे पेट पूरुं न भराय ॥ ला० ॥ १८ ॥ मन वचन नें काया केरां, करी पातक तेह घणेरां ॥ ला० ॥ १ए ॥ तिमज एकेंद्रि यादिकमां भमिउ, दुःखें मोहादिकें दमिउ ॥ ला० ॥ २० ॥ एकतालीश मी ढालें कहे उदय, श्रावक विण कूण हूए सदय ॥ ला० ॥ २१ ॥

॥ दोहा ॥

॥ नरभव वलि कर्में दियो, सिंह नाम नर सोय ॥ अनुक्रमि समकि त पामिउ, यौवने आव्यो जोय ॥ १ ॥ विषय राग त्रीजुं वली, रोषें ध रिने रूप ॥ वश्यो तेमां राग केसरी, मन हरख्यो मोह भूप ॥ २ ॥ शब्द रूप रस गंध फरस, तेहना त्रेवीश भेद ॥ तीव्र राग तेहनो धरे, अहनि शि तेह उमेद ॥ ३ ॥ रमणीरागें रंजिउ, मांजी सौनो मोह ॥ आपें ज

इ अलगो वश्यो, खिण नवि खमे विछोह ॥ ४ ॥ जे सा बोली ते खरुं, बीजो न गमे बोल ॥ हितकारि तेहनुं कह्युं, मनसुं मानि अमोल ॥ ५ ॥ वाहलां सहु विष सारिखां, वनिता अमृतवेलि ॥ शरण न को श्यामा स सुं, बाला समी न बेलि ॥ ६ ॥ मनसुं तो इम मानतो, अवरां करे अव हेलि ॥ सुखनुं मूल बे सुंदरी, बाकी थीनो मेल ॥७॥ सर्वगाथा ॥७६१॥

॥ ढाल बेतालीशमी ॥

॥ तट जमुनानो अति रलिआमणो रे ॥ ए देशी ॥ तव तसु नारी रे निज जोरो लही रे, जूनां दास दासी जेह ॥ दूर करीने रे दूजां दिल भा वतां रे, राख्यां घर रंग लेह ॥ १ ॥ नखरां जो जो रे निर्लज नारिनां रे, अडखिल मेहली उचालि ॥ सलिल सुगंधें रे स्नान करे नितें रे, वेणि वधा री वाल ॥ न० ॥ २ ॥ सुरभिद्रव्यें रे नित भीनी रहे रे, पहेरे मन गमता वेष ॥ भूषणभारें रे अंग भांगी पडेरे, दर्पणमां रहि देख ॥ न० ॥ ३ ॥ भ ली पेरें भूंजे रे भोजन भावतां रे, मन माने ध्ये मोज ॥ जे जे गमे रे ते ते जारशुं रे, रमणी रमतें रोज ॥ न०॥ ४ ॥ माया गाली रे तो पण ते मा नुनी रे, न्यायने वचनें नाथ ॥ जीभने जोरें रे भली परें भोलवे रे, जो जो युवतिनी जात ॥ न० ॥ ५ ॥ पवित्र ए नारी रे बे पतिव्रता रे, सति आमां शिरदार ॥ दयिता माहरी रे बे देवपूतली रे, भांखे इम भरतार ॥ ॥ न० ॥ ६ ॥ एक दिन तेणें रे पारखा कारणें रे, अबतो दोष उपाय॥ माथामांहे रें माख्यो पग पानिएं रे, तव तस मर्द्दे ते पाय ॥ न० ॥ ७ ॥ कहे कांइ भूतुं रे नही ए कामनी रे, चतुरा पडि मुने चूक ॥ आज पढी एहवुं रे, हुं नहि आचरुं रे, दिलमां न धरो दूख ॥ न० ॥ ८ ॥ जो वलि चुंकूं रे इम करतां कदा रे, तो चंदन रसथी जोर ॥ शीतल तुम पगें रे प्र हार करी मुने रे, सुख देयां वल फोर ॥ न०॥ ए ॥ तव सा चिंते रे दास ए रांकने रे, श्याने नमाडुं नूर ॥ जे गमे मुने रे तेहने लावूं घरें रे, शंका मेहेली दूर ॥न०॥१०॥ तव बीजे दाडे रे नर दोषा समे रे,अंगणे तेडी ए क ॥ नर कोई तरुणो रे नाथने ते कहे रे, सुणो स्वामी सुविवेक ॥ न०॥ ॥ ११ ॥ पितृनुं प्रेष्युं रे पितृलोकथी रे, मनुज आवी रह्युं बार ॥ ते मु ज साथें रे करवा कांई वारता रे, इबे एकांतें अपार ॥ न० ॥ १२ ॥ पण हूं न करुं रे तमने पूबया विना रे, पर घर भंजा लोक॥ मननुं कल्प्युं रे का

उँ कहे किश्युं रे, अछता उपाइ दोष ॥ पण हूं० ॥ १३ ॥ तुमे तो महा
टां रे लक्षण सवे लह्यो रे, लोक लवे जो लाख ॥ तो पण केहनुं रे कह्युं
मानो नहीं रे, स्नेह पूरे छे साख ॥ पण हूं० ॥ १४ ॥ ढाल ए बोली रे बे
तालीशमी रे, उदय वदे इम धार ॥ कामिनी परें रे कोई आप गोपवा रे,
समजूं नहिं संसार ॥ पण हूं० ॥ १५ ॥

॥ दोहा ॥

॥ तव ते कहे प्रिया तुने, न घटे कहेवुं एम ॥ विकल्प कोइ ताहरेविषे, कहो हुं चिंतवुं केम ॥ १ ॥ हुं नहिं बीजा सारिखो, लोकने कहेणे लाग ॥ मेलूं जे मूरखपणे, आपणा घरमां आग ॥ २ ॥ ते माटे जाई तुमे, तस सनमानो तेम ॥ पूर्वज प्रीतें आपणा, जयकारी होय जेम ॥ ३ ॥

॥ ढाल त्रेतालीशमी ॥

॥ रुकमणि राणि मोहोलमां ॥ ए देशी ॥ तव सा जइने तेहसुं, खेले विध विध खेल हो लाल ॥ स्वेछाएं तनु सोंपती, रसनी चलावे रेल हो लाल ॥ १ ॥ माया जो जो महिलातणी, जे किणें परखी न जाय हो लाल ॥ छयल पुरुषनें छेतरे, आखर केहनी न थाय हो लाल ॥ मा० ॥ २ ॥ न रतारने भाखे पछे, अवहेली मुने एण हो लाल ॥ भक्तें तुमे भजो नहीं, पूर्वज रूठा तेण हो लाल ॥ मा० ॥ ३ ॥ विनयतणे वचनें करी, भाव दे खाडी भूरि हो लाल ॥ तिम संतोष्यो तेहने, में उलट आणी ऊर हो लाल ॥ मा० ॥ ४ ॥ पूर्वजने ए प्रीछवी, प्रसन्न करशे विशेष हो लाल ॥ स घला पितृनो सही, अति मानीतो एष हो लाल ॥ मा० ॥ ५ ॥ बीजुं प ण बहु काम छे, पितृसंबंधी स्वामि हो लाल ॥ दिन केताएक ते वती, ए रहेशे आ गाम हो लाल ॥ मा० ॥ ६ ॥ ते माटे में नूंतश्यो, जिहां ल गें रहो आंहि हो लाल ॥ भोजन तिहां लगें अम घरें, करजो तुमे उछां हि हो लाल ॥ मा० ॥ ७ ॥ तव ते कहे तें रूडूं कर्युं, आमंत्र्यो जे एह हो लाल ॥ भलि परें भुंजावजो, अति आदरें सस्नेह हो लाल ॥ मा० ॥ ८ ॥ पितृ जन कोइ प्राहुणा, आवे आपणे भुवन्न हो लाल ॥ चाही कीजें चाकरी, पोते होवे जो पुन्य हो लाल ॥ मा० ॥ ए ॥ शालि दालि घृत शालणां, लापसि घृत पूर आदि हो लाल ॥ उपपतिने ते अंगना, सु विधें जमाडे स्वादि हो लाल ॥ मा० ॥ १० ॥ अनेक विधने आसनें, सु

रत तजि तसु संग हो लाल ॥ अकल गति अबलातणी, ढांकी राखे ढंग हो लाल ॥ मा० ॥ ११ ॥ फल फूल मेवादिक नवा, आपे धरी उमेद हो लाल ॥ भरतार भक्तिभरें करे, नित नवलां निवेद हो लाल ॥ मा० ॥ ॥ १२ ॥ तव ते जार वदे अहो, पूर्वज तुज भली पेर हो लाल ॥ संतोष्या ठे में सही, मनमांहे धरसे महेर हो लाल ॥ मा० ॥ १३ ॥ जे जे करे ठे सेवना, ते ते पहोचे ठे तास हो लाल ॥ एहवुं जाणी ने तेहने, अंगें थयो उल्लास हो लाल ॥ मा० ॥ १४ ॥ भक्ति अपूर्व उल्लसी, अष्टांग प्रणमी विशेष हो लाल ॥ कांई जे खातां ऊगरे, शिर चढावे ते शेष हो लाल ॥मा०॥ १५ ॥ तेतालीशमी ढालमां, जो जो महिलानां काम हो लाल॥ उदय वदे निज नाथने, गोरीयें कीधो गुलाम हो लाल ॥ मा० ॥ १६ ॥

॥ दोहा ॥

॥ जो कोई कहे तेहने, दुःशीला तुज नार ॥ तव ते कहे हुं जाणुं अछुं, ए सघलो आचार ॥ निर्मल मुऊ नारी अछे, गोप्य न राखे गूऊ ॥ संबंध पहिलो ए सवे, मांहि कह्यो ठे मुऊ ॥ २ ॥ इम उत्तर नापे किश्यो, कह्युं न माने कांहि ॥ मगन थयो महिला रसें, निर्गम समके नांहि ॥३॥ तव एक दिन कोई दुर्जनें, देखाड्यो ते जार ॥ तेहने घरमां पेसतो, सम्यक् परें सुविचार ॥ पोताने घरें पेसतो, पेखी तेह पुरूष ॥ घर आवी घरणी प्रतें, रंगें जणावे रूष ॥ ५ ॥ हे कांते कहो ए किसी, लव करे ठे लोक ॥ तव सा कहे थइ तरतरी, लोक तणा मुख बोक ॥६॥ सर्वगाथा ॥ ७०३॥

॥ ढाल चुमालीशमी ॥

॥ सीता हो पीउ सीतारा प्रभात ॥ ए देशी ॥ जाण्युं हो पिउ जाण्युं तुमारुं में आज, सघलुं हो पिउ सघलुं जाण पणुं सही ॥ परघर हो पिउ परघरभंजा लोक, तेहनी हो पिउ तेहनी वातें लागा वही ॥ १ ॥ घरनी हो पिउ घरनी त्रेवड लहे जेह, परनी हो पिउ परनी न माने वारता ॥ दोपी हो पिउ दोपी जन विण दोष, पापी हो पिउ पापी रहे पचारता ॥२॥ में तो हो पिउ में तो आगलथी एह, तुमने हो पिउ तुमने गुह्य कह्युं हतुं ॥ तुमें तो हो पिउ तुमें तो दिलनुं कूड, भलें हो पिउ भलें आज कह्युं ठतुं ॥ ३ ॥ फलशे हो पिउ फलशे मनोरथ माल, जो जो हो पिउ जो जो आज थकी सहु, धरशे हो पिउ धरशे पितृपण हेत ॥ भग

ति हो पिउ जगति तमारी देखी बहु ॥ ४ ॥ जावी हो पिउ जावी प्रमाणें बुद्धि, आखर हो पिउ आखर सहुने ऊपजे ॥ मतिने हो पिउ मतिने मा ने फलपत्ति, जगमां हो पिउ जगमां जोतां नीपजे ॥ ५ ॥ सुंदरी हो पिउ सुंदरी अवर समान, मुजने हो पिउ मुजने जाणीने सदा ॥ रहेजो हो पिउ रहेजो रखोपा काज, महारो हो पिउ महारो हाथ जाली मुदा ॥ ६ ॥ आपद हो पिउ आपद कोइ अत्यंत, लहेसो हो पिउ लहेसो तुम लक्षणें लहो ॥ दीशेहो पिउ दीशे वांको दींह, अमने हो पिउ अमने जे एहवुं कहो ॥ ७ ॥ निपट हो श्रोता निपट निर्भृछयो तास, पोतें हो श्रोता पोतें रोष धरी रही ॥ उदय हो श्रोता उदय रतन ए ढाल, चुंपें हो श्रोता चुंपें चुमालीशमी कही ॥ ८ ॥

॥ दोहा ॥

॥जोजन काजे निज जुवन, विट आवंतो तेह ॥ वनितायें वर्ज्यो तदा, निश्चल दाखी नेह ॥ १ ॥ तव एक दिवसें ताकीने, मनोहर महिषी एक ॥ गोप्य रखावी आपणी, विटपाहे सुविवेक ॥ २ ॥ तव सिंह जणे सुण सुंदरी, महिषी नावी बार ॥ के कोइ चोरें अपहरी, के रही रान मजार ॥ ॥ ३ ॥ ते कहे तो हुं शुं करुं, फुटूं ताहरुं कर्म ॥ आचरण अंधा ताहरां, मूढ न जाणे मर्म ॥ ४ ॥ तव शोधे सघली दिशा, आरतिवंत अपार ॥ जूख्यो तरस्यो वन जम्यो, न लही शुद्धि लगार ॥५॥ घर आवी तव ते घणुं, मुख मेली नीसास ॥ नारीने कहे नवि जडी, अहो हवे शी आस ॥६॥

॥ ढाल पीस्तालीशमी ॥

॥ वीजाजी हो रतन कुउ मुख सांकडो रे वीजा ॥ ए देशी ॥ तव सा कहे जेवो ताहरो रे पिउजी, पितृ ऊपर छे जाव ॥ स्वामी सुणजो शीख साची ॥ पियुजी हो सिद्धि छे घरमां तेहवी रे ॥पि०॥ कहुं बुं पामी प्रस्ताव ॥स्वा० ॥१॥पि०॥ वधतो वलि थाशे किशोरें ॥पि०॥ आगल तुम उतपात ॥स्वा०॥ पि०॥ मुहुरत ए मांमधुं सही रे ॥पि०॥ धूल तुमारी धात ॥स्वा०॥२॥ श्रोता जी हो, तव ते वेगें ऊठिने रे ॥पि०॥ वदे विलगी पाय, वात सुणजो सैण वा रू ॥ प्रियाजी हो सघलुं ए तमे साचुं कह्युं रे प्रियाजी, में पितृ मेल्या पलाय ॥ वा०॥३॥प्रि०॥ तेमाटे हवे तेहवुं रे ॥प्रि०॥ आराधन करो एम ॥वा०॥ प्रियाजी हो, जिम आवे आपण मंदिरें रे ॥प्रि०॥ पूर्वज धरीने प्रेम ॥वा०

॥ ४ ॥ श्रोताजी हो, तव सा कोपी कामिनी रे ॥ श्रोता ॥ मंदिरमां न स माय ॥ वा० ॥ सगाजी हो सत्य पुरुष तुं रहे ने परहो रे ॥ स०॥ इम बो ली जनराय ॥ वा०॥५॥स०॥ लक्षण ताहरां लहुं सवे रे ॥ स० ॥ इम क ही मारयो लात ॥वा०॥स०॥ फरी फरी वली नाखे परहुं रे ॥श्रोता॥ हडसेली पग साथ ॥वा०॥६॥स०॥ जोरपणे युवतीतणे रे ॥श्रोता॥ चरणें थापी र ह्यो सीस ॥ वा० ॥ साधीस हुं तव सा कहे रे ॥ पि० ॥ पूर्वजने सुजगी स ॥वा०॥७॥पि०॥ पण पर घर पंमित लोकनां रे ॥पि०॥ तमे धरसो वच नमांहि ॥ वा० ॥ तव ते कहे हवे आजथी रे ॥ श्रो० ॥ नहिं धरुं जी वित तांहिं ॥ वा० ॥ ८ ॥ त्रि० ॥ मह्वारुं कर्युं फल में लह्युं रे ॥ त्रि०॥ हजी शुं वली नथी शीख ॥वा०॥श्रो०॥ बेल परें इम बांधिने रे ॥ श्रोता॥ ते कामिनीएं कस्यो ठीक ॥ वा०॥ए॥ श्रो०॥ उदयरतन इम उच्चरे रे ॥ श्रो ता ॥ पिस्तालीशमी ढाल ॥ वा० ॥ श्रो० ॥ मर्द महिलाने वशें पड्यो रे ॥ श्रोता ॥ न जुए आप संनाल ॥ वा० ॥ १० ॥

॥ दोहा ॥

॥ बलि पूजा उपचार बहु, आणावी पिउ पास ॥ पितर पूजे सा प्रेम दा, अगर उखेवी खास ॥ १ ॥ इम करतां आराधतां, यामनी जव गई याम ॥ तव ते विटने तेडीने, निज पीउने कहे आम ॥ २ ॥ मनुष्य पित नुं मोकल्युं, आव्युं ले ग्रह बार ॥ तव ते कहे तुमे जई सुणो, जे जंपे तेह विचार ॥ ३ ॥ नक्ति करो बहु परें नली, जिम आपणें जयकार ॥ परिघल कमला पामियें, तिम करजो तुमें नार ॥ ४ ॥ सर्वगाथा ॥ ८३० ॥

॥ ढाल छेतालीशमी ॥

॥ श्रेणिक मन अचरज थयो ॥ ए देशी ॥ तव सा जईने ते कने, प्रेमें पूरव रीतें रे ॥ सुख विलसी निज स्वामिने, प्रीछवे मननी प्रीतें रे ॥ १ ॥ स्नेह वशें परवश थयो, ते नामनीयें नोलविउरे ॥ नवसंकटमां नारिउं, आचरणमां उलवीउ रे ॥ स्ने० ॥ २ ॥ विनय विवेक वचनरसें, में पिउ संतोष्या विशेषें रे ॥ महीपी किहां एकथी आवशे, वलति कुशल कल्याण करेशे रे ॥ स्ने०॥ ३ ॥ प्रदोष समे तम पसरते, महीषी रिकती मोदे रे॥ द्वारें पेठी दोडती, तव सिंह हरख्यो सविनोदे रे ॥ स्ने० ॥ ४ ॥ अदनूत प्रत्यय ऊपनो, अति रंज्यो रमणीरागें रे ॥ वलि कांइ आपो आगना, ६

म कहे स्त्री आगें रें ॥ स्ने० ॥ ५ ॥ शिर मुंमावो सा कहे, जिम विशेषें ते रीके रे ॥ मुंमन वाहलुं प्रेतने, ते तिम करे दिन बीजे रे ॥ स्ने० ॥ ६ ॥ इम विषय रागरूपें करी, राग केसरीयें विगोयो रे, प्रमदाने वश पाडीने, अवतार आलें खोयो रे ॥ स्ने० ॥ ७ ॥ देव गुरु आदिक दिलथकी, परिहरि प्रमदा राची रे ॥ धर्मादिक धंधोलिया, सुंदरी जाणी साची रे ॥ ॥ स्ने० ॥ ८ ॥ कोइ क्यारें कहे तेहने, तें समकित दर्शन सेवा रे ॥ किम मेली तव ते कहे, सुणो कहुं समजावी हेवा रे ॥ स्ने० ॥ए॥ श्लोक ॥ सम्यक् दर्शनमेतस्याः, प्रियाया एव निश्चितं ॥ सम्यग्दर्शनो ह्यन्यस्तु, कोपि धूर्तैः प्रकल्पितः ॥ १ ॥ पूर्वढाल ॥ रागकेसरीना राज्यमां, इम ते बोले उंधुं रे ॥ आचरण अवलुं ए सवे, सम्यक् जाणी सूधुं रे ॥ स्ने० ॥ १०॥ सम्यक् दर्शन मंत्रवी, दिल चोरी रह्यो दूरें रे ॥ मिथ्यादर्शन तव मोदशुं, पेगो निज दलपूरें रे ॥ स्ने०॥ ११ ॥ मरण लहीने मूढ ते, एकेंडियादिक आदें रे ॥ योनि ते फरसी फरी फरी, वाह्यो विषय सवादें रे ॥ स्ने०॥१२॥ छेतालीशमी ढाले छेतस्यो, विषयें तेह वराको रे ॥ उदयरतन कहे अहो नवी, विरुआ विषय विपाको रे ॥ स्ने० ॥ १३ ॥

॥ दोहा ॥

॥ अवतास्यो वलि अन्यदा, जिनदास श्रेष्ठि गेह ॥ पुत्रिपणे ते प्राणिने, कर्मे तिहांथी लेह ॥ १ ॥ जिनश्री नामें ते सही, सकुटंबें ते सेठ ॥ सम्यक् दर्शन मंत्रिने, सेवे सदा शुन्न हेठ ॥ २ ॥ जिनश्री पण पाले तिणे, समकित धरी स्नेह ॥ विमल सेठ शुद्ध श्राद्धने, परणावी छे तेह ॥ ३ ॥ देव धर्म गुरु रागिणी, श्री जिन धर्म उदार ॥ करतां कुलमंमन थया, तेहने पुत्र वे चार ॥ ४ ॥ घर धणिआणी ते थई, आण न लोपे कोय ॥ चारो नहि कोइ अवरनो, जे एह करे ते होय ॥ ५ ॥ धनश्री नामें धर्मिणी, वडा पुत्र घर नार ॥ सारथ वाहनी ते सुता, स्वरूपवंत उदार ॥ ६ ॥

॥ ढाल सडतालीशमी ॥

॥ छेडो नाजी ॥ ए देशी ॥ तेहवें तक सांधीने विनव्यो, द्वेष गजेंडें धाई ॥ मोह गजेंडनें मननी मोजें, जो जो मुज सकजाई ॥ १ ॥ दूतयोजी ॥ मानें मोहराजा महाराजा ॥ दू० ॥ मेहेलावी तेहनी माजा ॥ दू० ॥ वजडावी सुयशवाजां ॥ दू० ॥ योजी योजी योजी डुतयोजी ॥ ए आंक

णी ॥ ज्येष्ट बंधु माहरो जोरावर, राग केसरी रोसालो ॥ जीती करी आव्यो ते जालिम, पोते जई तिहां पालो ॥ डू० ॥ २ ॥ तातजी महेर करीने तेहने, तेहनो आप्यो नेजो ॥ अहिली वार अमारो वारो, नड जाणी तिहां नेजो ॥ डू० ॥ ३ ॥ इणि परें नल्लसिउं उजे, अमरषसुं आवरिउं ॥ जनकने प्रण मीने ते वेगें, जिनश्री घर संचरिउं ॥ डू० ॥ ४ ॥ तेह तणे संजोगें तेहने, धनश्री उपरें द्वेष ॥ परें परें ते पुत्र वधूसुं, उपनो रोष अशेष ॥ डू० ॥ ५ ॥ दीठे रीसें बले दिलमांहि, अवलुं अवलुं बोले ॥ प्रीसे नहीं ना णामां पूरुं, खोटा अवगुण खोले ॥ डू० ॥ ६ ॥ विण अपराधें वांक उग ई, चढोडे शिरमां चाटूं ॥ बहु विचारी पग चांपे तव, सासु मारे पाटूं ॥ डू० ॥ ७ ॥ काम कस्यां सघलां अवहेले, निकुकने पणे मेलो ॥ पाने आपीने पचारे, पुत्र न राखुं नेजो ॥ डू० ॥ ८ ॥ रोटी अन्नादिकने रीसें, आगलथी न थे अडवा ॥ कण मात्र जो कोरुं खाए, तो नडकी वे से नडवा ॥ डू० ॥ ए ॥ विनयवती ते न करे अविनय, पद पखाले बे सी ॥ निंब्रंठी तव नाखे तेहने, पगलुं पाठी ठेसी ॥ डू० ॥ १० ॥ वांने चोलें तो वलि तेहने, निपट नाखे निठेटी ॥ प्रीसती वेला जो रहे पासें, तो अलगी करे आठेटी ॥ डू० ॥ ११ ॥ रखे एहनो कोई थाए चारो, घडी एक घर नवि ठंभे, इम जाणी रहे ठल जोती, धूंमी कहीने नंभे ॥ डू० ॥ १२ ॥ देव धर्मने गुरुने दिलथी, वली मेहेल्या वीसारी ॥ हांकणादिक नांखे ज ही नांखे, जूनुं पण संभारी ॥ डू० ॥ १३ ॥ लोकें आगल हींसे लवलवती, अठता अवगुण कहेती ॥ बहु पाठो उत्तर नवि वाले, कुल लज्जाने वहेती ॥ डू० ॥ १४ ॥ ठेयन्तरें इम रहे धगधगती, सदाकाल ते सासू ॥ वेरणीनी प रें बहुने आंखें पडावे आंसू ॥ डू० ॥ १५ ॥ तडतालीशमी ढालें सासुने व हुनी साथें वेर ॥ उदयरतन कहे चाल्यां आवे, आगममां इणि पेर ॥ डू० ॥ १६ ॥

॥ दोहा ॥

॥ समज्युं सयल स्वरूप ते, विमल श्रेष्ठि सवि आदि ॥ स्वजन कुटुंब सहु पुर जनें, वाध्यो तव विषवाद ॥ १ ॥ जो शीखामण कोई कहे, तो कोप सुविशेष ॥ क्रोध दावानलें धम धमे, आकुल हूई अशेष ॥ २ ॥ मावी का मेली तदा, डुर्जननी परें दूर ॥ सहुएं मलिने जिनसिरी, धूंमी जाणी क

॥ ३ ॥ सम्यक् दर्शन पण सही, छटक गयो तव छोड ॥ परिकरसुं वासी तदा, मिथ्यादर्शन मन कोड ॥ ४ ॥

॥ ढाल अडतालीशमी ॥

॥ आज सखी सामलीउरे मुने मारगडा ॥ ए देशी ॥ एकदा ते रोषें भराणी रे, वदे छे जिम तिम वाणी रें ॥ विमल श्रेष्ठिकने विवहारी रे ॥ तव आव्यो कोई अधिकारी रे ॥ १ ॥ मुखें मौन धरी रही वहू रे ॥ सासु तव भांखे वहू रे ॥ तिहां बेठे ते नरें दीठो रे ॥ ऐन बलें जाणे अंगीठो रे ॥२॥ तव ते कहे सुण भडे रे ॥ सुं वहुसुं वढे छे बिडे रे ॥ फोकट ए फजेत थावुं रे ॥ एक श्लोक कही समजावुं रे ॥३॥ आर्या ॥ सत्वं कस्यगृहमिदं, यास्यति सह केन चेयमिति लक्ष्मीः ॥ कतिपयदिनपर्यंतं, नत्वं न गृहं न चेयं श्रीः ॥१॥ वहुनो स्वभावते सारो रे ॥ दीसे छे लाज अपारो रे ॥ नाहकसुं एहने निभ्रंछो रे ॥ वेढी लेवा शुं वंछो रे ॥ ४ ॥ कालें थाशे एहनो वारो रे, मनमां एहवुं न विचारो रे ॥ आखर ए घर थाशे एहनुं रे, दिल दुःख धरिएं शुं तेहनुं रे ॥ ५ ॥ इत्यादिक इणि परें वारी रे, घरे गयो ते व्यवहारी रे ॥ ते ऊपरे पण सा कोपी रे, अहो लाज माहरी इणें लोपी रें ॥ ६ ॥ केवल वहुसुं वढें नवि दापें रे, बीजाने पण संतापे रे ॥ हली ए कुण ताहरो सणीजो रे, तातो थई जण त्रीजो रे ॥ ७ ॥ शीखवणी ए सहु ताहरी रें, इणें जात विगोई माहरी रे ॥ इम कहेती करें ग्रहि पाली रे, थई वाघणी सी विकराली रे ॥ ८ ॥ धनश्री उपरे तव धाई रे, धरायें पडी ध्रसकाई रे ॥ हैया ऊपर वेसीने रें, हणी छरीयें दंत पीसीने रे ॥ ए ॥ तव हाहाकार करी धाया रे, सहु सज्जन मलिने आया रे ॥ तव तेहने पण सा खीजी रे, हणवा दोडी छरी बीजी रे ॥ १० ॥ पाटू यष्टिका पहाणे रे, तेहने तव सहु मली आहणे रे ॥ तिहां लगे ज्यां वहु तिणें मारी रे, तेहने पण स्वजनें संहारी रे ॥ ११ ॥ असमंजस एहवुं जोई रे, सकुटंब विमल सेठ सोई रे ॥ संयम पंथे परवरिउ रे, जिनश्री जीव नरकें संचरीउ रे ॥ १२ ॥ वली मछ एकेंद्रियादें रे, अवतार लिया विखवादें रें ॥ इम काढयो काल अनंतो रे, छेप गजेंद्र थयो बलवंतो रे ॥ १३॥ ए अडतालीशमी ढालें रे, उदयरत्न वदे अंतरालें रे ॥ जे जिनमतमां रहे भीना रे, ते नर नरमांहे नगीना रे ॥ १४॥

॥ दोहा ॥

॥ वली ते मानव ऊपनो, विप्र ज्वलनसिख नाम ॥ श्रावकनी तिहां संगतें, समकित पाम्यो ताम ॥ १ ॥ श्री जिन धर्मने साधतां, दिन केता एक छेह ॥ मोह राजायें मोकली, निर्द्धनता तसु गेह ॥ २ ॥ तव तेहनी सहचारिणी, दरिद्रता पण दोडि ॥ आवी तिहां उतावली, मंदिर तसु मन कोडि ॥ ३ ॥ तव वश्यो न्हाने गामडे, ज्वलनसीख ते जाय ॥ हल खेडे हाली परे, तिहां नहिं अवर उपाय ॥ ४ ॥

॥ ढाल उंगणपचाशमी ॥

॥ चित्रलंकीरो जमर सुजाण जेहडहारो ॥ ए देशी ॥ तव द्वेष गजेंइने धाय, वडो पुत्र वीनवे ॥ महाराज ॥ अनंतानुबंधी क्रोध नामें, ते हरषें सुं हवे ॥ महाराज ॥ १ ॥ वैश्वानर बीजुं नाम ते, तातप्रतें वदे ॥ म० ॥ एक अरज महारी महाराज के, आज धरो हदे ॥ म० ॥ २ ॥ पहेले ए विप्रनी पासें, हुं रहेतो कलटे ॥ म० ॥ विचें सम्यक् दर्शन आवी, वश्यो एहने घटें ॥ म० ॥ ३ ॥ तेणें हूं थयो दूर, हवे अवसर लही ॥ म० ॥ जो आपो तुमे आदेश, तो तिहां जाउं वही ॥ म० ॥ ४ ॥ तुमे वेगा रहो ते माटे, आपो आगना मुने ॥ म० ॥ जईने करुं अरि फेर, गले ग्रहुं विप्रने ॥ म० ॥ ५ ॥ पिताजी तुमारे प्रसादें, हूं जय कमला वरुं ॥ म० ॥ डुसमन शिर दई दोट, के देसुटे धरुं ॥ म० ॥ ६ ॥ इम तातनी अनुमति लेइ, अनंतानुबंधिउ ॥ म० ॥ क्रोध चाल्यो थइ महासूर के, अवसर सांधिउ ॥ ॥ म० ॥ ७ ॥ जई पहोतो विप्रने संग, ज्वलनसिख तव थयो ॥ म० ॥ ज्वलननी सिखा समान, नामार्थ संग्रह्यो ॥ म० ॥ ८ ॥ अपराध विना पण

ए सहु साथें, कोपे क्रोधें घणे ॥ म० ॥१४॥ उगणपचाशमी ढाले, उदय एम उच्चरे ॥म०॥ शत्रू कोई क्रोध समान, वीजो वल नवि करे ॥म०॥१५॥

॥ दोहा ॥

॥ अग्निरूप थई आकलो,भृकुटि चडावें भूर ॥ त्रांबावरणो तपतपे,क्रोधें दीशे क्रूर ॥ १ ॥ आंखो कंबाडा जिसी, रोषें राती थाय ॥ मार्तंम मंमलनी परें, सामुं किऐं न जोवाय ॥ २ ॥ शीताकुल परें थरथरी, स्वेद बिंदु ऊरंत ॥ मुहमांथी जिम तिम लवे, विकल परे विलखंत ॥ ३ ॥ अग्निकुंमस्यो उलखी, बोलावे नहिं कोय ॥ अवश्य अंगारापरें, सहेजें बोाव्यो सोय ॥ ४ ॥

॥ ढाल पचाशमी ॥

॥ वूठा दल वादल हो नदीयां नीर चल्यां ॥ ए देशी ॥ एकदा ते ब्राह्मणो, हल खेडे खेत्रें ॥ जावाकुल भूमें हो, नवि जुए नेत्रें ॥ १ ॥ उखेडे बहु ढेंफाहो, जिहां ऊऊां जडियां ॥ हल नवि चाले हो, अडके तरु थडियां ॥ २ ॥ कुशें पड्यो कुचो हो, वली गोधो गलीउ ॥ ते ताजो तरुणो हो, मांसालो वलियो ॥ ३ ॥ पण जाए ते वेसी हो, नवि चाले दमिउ ॥ त्यारें विप्र ते क्रोधें हो, सूधो धमधमिउ ॥ ४ ॥ पराणें ते मारे हो, तो पण नवि चाले ॥ तव नाथें ऊाली हो, बहु आरो घाले ॥ ५ ॥ वासे ने पासे हो, खंधे खरीएं खारें ॥ जंघ ग्रीवा उदरें हो,बहु माख्यो आरें ॥ ६ ॥ तव जीभ काढीने हो, ते भूमिसुं रह्यो लिपि ॥ वैश्वानरें प्रेख्यो हो, तव थयो विप्र खपी ॥ ७॥ तव पूछडुं मरडे हो,वली दंतें करडे ॥ शकट वधीने हो, दंत घणुं घरडे ॥८॥ तव खेत्रने ढलीए हो, मारे दूरे रही ॥ मोटे महास्थूले हो, पूरी तेणे मही ॥ ए ॥ त्यारे ते थाको हो, जव थयो थलियो ॥ ढेफां ते तले हो, ते बलद मुउ गलिउ ॥१०॥ तो पण ते जडनो हो, रोष न ऊतरीउ ॥ दाध्यो विशेषें हो, जिम लहेरें दरिउ ॥ ११ ॥ महाक्रोधने पूरें हो, हृदयांतर रेल्यो ॥ समकितने प्राणें हो, तव ततक्षिण मेल्यो ॥ १२ ॥ तव मिथ्यादर्शन हो, मोहादिकें मली ॥ गले ऊालीने हो,ते नाख्यो नरकें वली ॥ १३ ॥ तिमज भमाड्यो हो, भवनी कोडी गमे ॥ ते काल अनंते हो, आवे न उंचो किमे ॥ १४ ॥ पंचाशमी ढालें हो, उदय रतन्न कहे॥ समकित विना भवनो हो, कोइ न पार लहे ॥ १५ ॥

॥ दोहा ॥

॥ वली ते मानव रूपनो, विप्र ज्वलनसिख नाम ॥ श्रावकनी तिहां संगतें, समकित पाम्यो ताम ॥ १ ॥ श्री जिन धर्मने साधतां, दिन केता एक छेह ॥ मोह राजायें मोकली, निर्धनता तसु गेह ॥ २ ॥ तव तेहनी सहचारिणी, दरिद्रता पण दोडि ॥ आवी तिहां उतावली, मंदिर तसु मन कोडि ॥ ३ ॥ तव वश्यो न्हाने गामडे, ज्वलनसीख ते जाय ॥ हल खेडे हाली परे, तिहां नहिं अवर उपाय ॥ ४ ॥

॥ ढाल उंगणपचाशमी ॥

॥ चित्रलंकीरो नमर सुजाण जेहडहारो ॥ ए देशी ॥ तव द्वेष गजेंद्र ने धाय, वडो पुत्र वीनवे ॥ महाराज ॥ अनंतानुबंधी क्रोध नामें, ते हरषें सु हवे ॥ महाराज ॥ १ ॥ वैश्वानर बीजुं नाम ते, तातप्रतें वदे ॥ म० ॥ एक अरज महारी महाराज के, आज धरो हदे ॥ म० ॥ २ ॥ पहेले ए विप्रनी पासें, हुं रहेतो जलटे ॥ म० ॥ विचें सम्यक् दर्शन आवी, वश्यो एहने घटें ॥ म० ॥ ३ ॥ तेणें हूं थयो दूर, हवे अवसर लही ॥ म० ॥ जो आपो तुमे आदेश, तो तिहां जाउं वही ॥ म० ॥ ४ ॥ तुमे बेग रहो ते माटे, आपो आगना मुने ॥ म० ॥ जईने करुं अरि फेर, गले ग्रहुं विप्रने ॥ म० ॥ ५ ॥ पिताजी तुमारे प्रसादें, हूं जय कमला वरुं ॥ म० ॥ कुसमन शिर दई दोट, के देसुटे धरुं ॥ म० ॥ ६ ॥ इम तातनी अनुमति लेइ, अनंतानुवंधिउ ॥ म० ॥ क्रोध चाल्यो थइ महासूर के, अवसर सांधिउ ॥ ॥ म० ॥ ७ ॥ जई पहोतो विप्रने संग, ज्वलनसिख तव थयो ॥ म० ॥ ज्वलननी सिखा समान, नामार्थ संग्रह्यो ॥ म० ॥ ८ ॥ अपराध विना पण जोर, क्रोधें रही धमधमी ॥ म० ॥ हृदयांतरथी महारोष, न जाय उपशमी ॥ म० ॥ ए ॥ थोडे गुनहे पण दंत, पीसी निज नारने ॥ म० ॥ बांधी मारे बहु मार, न पामे विचारने ॥ म० ॥ १० ॥ उछलि करे उनमाद, अनलपरें परजले ॥ म० ॥ पाडोसी करे पोकार, तोहे पण नवि खले ॥ ॥ म० ॥ ११ ॥ बालने पण बांधी जोर, ताडे तेहवी परें ॥ म० ॥ बहु लोक मलि जेम गाली, दीए आवी घरें ॥ म० ॥ १२ ॥ पिताने ठेली पाय, मारे निज मातने ॥ म० ॥ बहिनने दिए बहु गाल, नंभे निज भ्रातने ॥ म० ॥ १३ ॥ पूज्यने पजाए अपार के, गुरुने अवगणे ॥ म० ॥ निष्कारण प

ए सहु साथें, कोपे क्रोधें घणे ॥ म० ॥१४॥ उंगणपचाशमी ढाले, उदय एम उचरे ॥म०॥ शत्रू कोई क्रोध समान, बीजो बल नवि करे ॥म०॥१५॥

॥ दोहा ॥

॥ अग्निरूप थई आकलो,भृकुटि चडावें भूर ॥ त्रांबावरणो तपतपे,क्रोधें दीशे क्रूर ॥ १ ॥ आंखो ऊंबाडा जिसी, रोषें राती थाय ॥ मार्तंम्ड मंम्डलनी परें, सामुं किणें न जोवाय ॥ २ ॥ शीताकुल परें थरथरी, स्वेद बिंदु झरंत ॥ मुहमांथी जिम तिम लवे, विकल परे विलखंत ॥ ३ ॥ अग्निकुंम्डस्यो उलखी, बोलावे नहिं कोय ॥ अवश्य अंगारापरें, सहेजें बोलाव्यो सोय ॥ ४ ॥

॥ ढाल पचाशमी ॥

॥ बूंठा दल वादल हो नदीयां नीर चल्यां ॥ ए देशी ॥ एकदा ते ब्राह्मण हो, हल खेडे खेत्रें ॥ जावाकुल भूमें हो, नवि जुए नेत्रें ॥ १ ॥ उखेडे बहु ढेंपाहो, जिहां झाझां जडियां ॥ हल नवि चाले हो, अडके तरु थडियां ॥ २ ॥ कुशें पड्यो कुचो हो, वली गोधो गलीउ ॥ ते ताजो तरुणो हो, मांसालो बलियो ॥ ३ ॥ पण जाए ते बेसी हो, नवि चाले दमिउ ॥ त्यारें विप्र ते क्रोधें हो, सूधो धमधमिउ ॥ ४ ॥ पराणें ते मारे हो, तो पण नवि चाले ॥ तव नाथें झाली हो, बहु आरो घाले ॥ ५ ॥ वासे ने पासे हो, खंधे खरीएं खारें ॥ जंघ ग्रीवा उदरें हो,बहु मार्यो आरें ॥ ६ ॥ तव जीभ काढीने हो, ते भूमिसुं रह्यो लिपि ॥ वैश्वानरें प्रेर्यो हो, तव थयो विप्र खपी ॥ ७॥ तव पूंछडुं मरडे हो,वली दंतें करडे ॥ शकट बधीने हो, दंत घणुं घरडे ॥८॥ तव खेत्रने ढलीए हो, मारे दूरे रही ॥ मोटे महास्थूले हो, पूरी तेणे मही ॥ ए ॥ त्यारे ते थाको हो, जब थयो थलियो ॥ ढेपां ते तले हो, ते बलद मुउ गलिउ ॥१०॥ तो पण ते जडनो हो, रोष न ऊतरीउ ॥ दाध्यो विशेषें हो, जिम लहेरें दरिउ ॥ ११ ॥ महाक्रोधने पूरें हो, हृदयांतर रेल्यो ॥ समकितने प्राणें हो, तव ततक्षिण मेल्यो ॥ १२ ॥ तव मिथ्यादर्शन हो, मोहादिकें मली ॥ गले झालीने हो,ते नारव्यो नरकें वली ॥ १३ ॥ तिमज भमाड्यो हो, भवनी कोडी गमे ॥ ते काल अनंते हो, आवे न उंचो किमे ॥ १४ ॥ पंचाशमी ढालें हो, उदय रतन्न कहे॥ समकित विना भवनो हो, कोइ न पार लहे ॥ १५ ॥

॥ दोहा ॥

॥ सम्यक् दृष्टि कुलें अन्यदा, धनंजय नृपने गेह ॥ रुकमिणि नामें रागिणी, तेहनी कूखें धस्यो तेह ॥ १ ॥ पूरे मासें प्रसविउ, कुबेर नामें कुमार ॥ श्रावक कुल जन्म्या जणी, समकित लाधुं सार ॥ २ ॥ शीघ्र कला साधी सवे, पाम्यो यौवनवेष ॥ तेज प्रतापें ते तपे, डुसरो जाणे दिनेश ॥ ॥ ३ ॥ व्याघ्रनामा एक वाघस्यो, पल्लिपति अति प्रौढ ॥ गंजे न को तस गढपति, नपुंसक जेम नवोढ ॥ ४ ॥ धनंजय धरपति तणो, डुर्गें वासित डुष्ट ॥ मुलक उजाडे महाबलि, परिकर लेइ पुष्ट ॥ ५ ॥ गरढेरे पण ए हुने, आगे अबे अजीत ॥ वली पञ्यो ते तिणे समे, नूरि पमाडे नीत ॥६॥ कोईक देश दपव्यो तिणे, बूंब सुणी तिणिवार ॥ ते ऊपरें वाहार चढ्यो, कुबेर ते राजकुमार ॥ ७ ॥ दैवयोगें महा डुष्ट ते, आव्यो एहने हाथ ॥ कोइक नावी योगथी, सकुटंबें सहु साथ ॥८॥ डुर्गें निजदल थापिने, वरतावि निज आण ॥ आव्यो घरें उलट नरें, सहु जन करें वखाण ॥ए॥

॥ ढाल एकावनमी ॥

॥ चित्रोडा राणा रे ॥ ए देशी ॥ गुण गीत गवाते रे, महा महोत्सव थाते रे ॥ बहु बिरुद बोलाते, कुमर ते आविउ रे ॥ सहु बोले श्लाघा रे, आवीने आघा रे ॥ डुश्मन दूर नागा, जन मन नाविउ रे ॥ १ ॥ तव अवसर जाणी रे, पितु आण प्रमाणी रे ॥ अमरष अति आणी, आव्यो ते कने रे ॥ द्वेष गजेंडनो जात रे, विश्वानर भ्रात रे ॥ न्हानेरो विख्यात, जग लहे तेहने रे ॥ २ ॥ अनंतानुबंधी मान रे, शैलराज राजान रे ॥ एवे अनिधान, तेहनां जाणो तमे रे ॥ तेहने अनुसरवे रे, नराणो तें गरवें रे ॥ मुखें इम वरवे, शूरा शिरबुं अमे रे ॥३॥ नयण गगनने गाहे रे, रोम ऊन्ना थाए रे ॥ सूर गुण न समाए, तेहना शरीरमां रे ॥ अहंकार अबेह रे, त्रिजुवनमां तेह रे ॥ न माए तिणे देह, थंनी रह्यो धीरमां रे ॥४॥ सहु कोने साखें रे, मुखथी इम नाखें रे ॥ महारा पिम्म पाखें, ए डुष्टने कुण हणे रे ॥ रांमनी परें टरडे रे, अमारे घरडे रे ॥ राज्य कीधुं जरडे, न जीत्यो ए किणें रे ॥ ५ ॥ धनंजय पण एह रे, वणिक वृत्ति गेह रे ॥ वेगो रहे नेह, धरी अन्न प्राठीउ रे ॥ जो हुं न हुउ आडो रे, तो नीलें नीलवाडो रे ॥ इहां करी जाडो, क्यारे हुए त्राठीउ रे ॥६॥ गायुं जे गाए रे, इंटनें ते वाहे रे ॥

ते नर तिणे, गर्यें थई वाउला रे ॥ निज गाल फूलावी रे, बहु वात ब नावी रे ॥ सहुने समजावी कहे चर राउला रे ॥ ७ ॥ कुमरें कह्यो शिष्ट रे, पोढो ए पापिष्ठ रे॥ देवें पण डुष्ट, न जाए गंजीउ रे॥ दैवने ए कुमा र रे, वे विण निरधार रे॥ एहनो अहो गार, किणें क्यारें नंजीउ रे ॥ ८॥ एहवी सुणी दूलो रे, फूली थई चोलो रे ॥ निज बल लही बहुलो, कुकव तणी परें रे ॥ सहुने अण नमतो रे, दान देई मन गमतो रे॥ मृड गुण ने वमतो, पहोतो निज मंदिरें रे ॥ ए ॥ मात तात ने गुरुने रे, देवने श्रु तधरने रे॥ न नमे कवीश्वरने, मुखें बोले नहीं रे॥ नूषण धरी नारी रे, निज तनु शणगारी रे॥ बेठक समारी, बेसे ते सही रे ॥ १० ॥ तंबोलें ताजे रे, गजस्थल शुन साजे रे॥ पूरी समाजें, बोले बेतमां रे॥ अधुरां वयणां रे, फेरवतो नयणां रे॥ देखीने सयणां, नही जुए हेतमां रे॥ ११ ॥ त्रिजुवन तृण तोलें रे, गणतो इम बोले रे ॥ मुजथी सहि मोले, सुरप ति सारिखो रे॥ इम निज परिकरमां रे, वेगे वरवे घरमां रे॥ नाणे केह ने हरमां, न जूवे पारखो रे॥ १२ ॥ एह एकावनमी रे, ढालें ते अनम। रे॥ उदय वदे न नमी, आपे केहने रे॥ विद्यावंत ने शूरो रे, दानेश्वरी पूरो रे॥ विण गर्वें सनूरो, कहे सहु तेहने रे॥ १३ ॥

॥ दोहा ॥

॥ अवनिपति हवे एकदा, प्रीछवीने परधान ॥ पुत्रनी पासें मोकले, ते जई कहे तसु थान ॥ १ ॥ तेडे छे तुम तातजी, कुमरजी मिलवा काज ॥ आवो तिणें आसनतजी, वाट जुए महाराज ॥ २ ॥ वासर बहु वही गया, दीठां तुम दीदार ॥ तरसे छे ते कारणे, जिम चातक जलधार ॥ ३ ॥

॥ ढाल बावनमी ॥

॥ हो मतवाले साजना, मुज कोई न छेडोबे ॥ ए देशी ॥ बोले कुमर ते बेतमां, मुख नाकतणी अणि मरडी रे॥ मूछें वल देतो थको, वली नजर करीनें करडी रे॥ बो० ॥ १ ॥ काम किस्युं छे माहरुं, अहो वलि ए हने केणें रे॥ संकटमां नाख्युं किसुं, तेडे छे मुजने तेणें रे॥ बो० ॥ २॥ जो एहवुं होय तो कहो, ईंडादिकने पण बांधी रे॥ आणी सोपुं एहने. श त्रु जाणी तक सांधी रे॥ बो० ॥ ३ ॥ पण अमे नावूं को कने, अमपासें पण जो कोई रे॥ नहीं आवे तो शुं थशे, सर्वे मेल्युं छे जोई रे॥ बो०॥

॥ ४ ॥ काज किश्युं किणें नीपजे, आखर महारा पिंम पाखें रे ॥ हूं एह वो नथी कोइ देखतो, जे रणथंन्नीने राखे रे ॥ बो० ॥ ५ ॥ तव मंत्री कहे तेहने,जिहां वाजे तुम यस वाय रे ॥ तिहांलगें महाराजा शिरें, शत्रु कोई ऊन्नो न थाय रे ॥बो०॥ ६ ॥ जनक जगत अति लाजमी, जगमांहे इक तूं जायो रे ॥ ताहरी जनितायें तुं सही, शूरां शिरताज कहायो रे ॥बो०॥७॥ पण ए न घटे बोलवुं,तुम सरिखाने सुणो स्वामी रे ॥ पितृ काजें पण आवुं नहीं, ए वातें ठे तुम खामी रे ॥बो०॥८॥ ॥ आर्यावृत्त ॥ शौर्यं सौंदर्यं वा, विद्या लक्ष्मीर्वचस्विताऽन्योवा ॥ शोन्नां नावहति गुणो, विनयालंकारप रिहीणः ॥१॥ वसंततिलका छंद ॥ त्यागोगुणोगुणशतादधिको मतो मे, विद्या विजूषयति तं यदि कं ब्रवीमि ॥ पर्याप्तमस्ति यदि शौर्यमपीह किंतु, यद्यस्ति ते जुवि नयः सगुणाधिराजः ॥ २ ॥ श्लोक ए बे सचिवें कह्या, कुमरने शी खामण कामेंरे ॥ कुमरें पण सूण्यो अठे,आगममां कोइक ठामेंरें ॥बो०॥ए॥

॥ यतः॥आर्यावृत्तं दुःप्रतीकारौ माता, पितरौ स्वामी गुरुश्च लोकेऽस्मि न् ॥ तत्र गुरुरिहामुत्रच, सुदुष्करावरप्रतीकारः ॥ १ ॥ इम आगल वलि कांई उच्चरे, तव कुमरने तिहां शैलराजें रे ॥ प्रेर्यो तव बोल्यो फरी, गर्वें जरी समाजें रे ॥बो०॥१०॥ रे ज्ञानदग्ध गमार तूं, अमने शिक्षा शी आपे रे ॥ त्रिजुवन तत्व लहुं अमें, जीते कोई अमसुं जवापें रे ॥ बो० ॥ ११॥ ते माटे ताहरा बापने, जई शीखामण जांखे रे ॥ जिम थाए ए पाधरो, उणिम कांई मति राखे रे ॥ बो० ॥ १२ ॥ इम कहीने गले कालीने, का ढी मेल्यो तव तेहो रे ॥ जई कहे ते महाराजने, संबंध सवे धुर ठेहो रे ॥ बो० ॥ १३॥ उदय रतन इम ऊचरे, बावनमी ए में बोली रे ॥ ढाल गु मानी लोकने, गमशे जो जो दिल खोली रे ॥ बो० ॥ १४ ॥

॥ दोहा ॥

॥ तव चिंते ते नूपती, अहो मुफ पुत्र अत्यंत ॥ अहंकारें ए आवस्यो, जिरती कसि न लहंत ॥ १ ॥ राज तज्युं तिण कारणें, वसवुं मोहने रा ज ॥ हवे मुफने जुगतुं नथी, साधुं पर जव काज ॥ २ ॥ इम चिंती अंग ज प्रते, रंगे देवा राज ॥ सामग्री सघली सजी, मोहें ते महाराज ॥ ३ ॥ गोप्य राखी ते गेलिसुं, प्रेखे वली प्रधान ॥ तनुजने एक दिन तेडवा, रा ग वशें राजान ॥ ४ ॥ तिंहा जई ते कहे तेहने, कोईक काज विशेष ॥

तात तेडे छे तुमने, आवो शीघ्र क्षण एक ॥ ५ ॥ शैलराजा संकेतथी, अनुक्रमें एकाएक ॥ अपमान देई अवगण्यो, कुमरें मंत्री छेक ॥ ६ ॥ अवहेल्यो सामंत गण, मंमलिक मेल्या धूल ॥ जे जे आवे तेडवा, ते तोल लहे अकतूल ॥ ७ ॥ तव तसु माता मोकली, निपट निभ्रंछी तास ॥ पण पुत्र स्नेहें न उसरे, अनेक करी अरदास ॥ ८ ॥ पाय पडी जिम तिम करी, माए महिपति पास ॥ अति कष्टें ते आणिउ,तव नृप थयो उल्लास॥९॥

॥ ढाल त्रेपनमी ॥

॥ पांच सोपारी ले हाथें ॥ ए देशी ॥ तव नरपति निज पास, आसन एक मंमावीयुं जी ॥ ते ऊपर बेठो कुमार, रेष न अंग नमावीयुं जी ॥ १॥ भाखे तव भूपाल, सूरगुणे संसारमां जी ॥ जस तुऊ व्याप्यो जोर, नावे जस कोई हारमां जी ॥ २ ॥ देश देशथी दूत, कन्यादान काजे सही जी ॥ राजवीयें मन रंग, मोकल्या छे तुम गुण लही जी ॥ ३ ॥ पूरो मनोरथ तास, ए राज्य तुमारुं संग्रहो जी ॥ अमे थासुं अणगार, प्रजाने तुमे निर्वहो जी ॥ ४ ॥ तव शैलराजें अवलोह, मंत्र गुमाननो मेलीउ जी ॥ त्यारें भ्रकुटी चडावी भाल, उत्तर तिणें इम दिउ जी ॥ ५ ॥ रजसरखो ए राज, शुं आपो तुमे अमने ज। ॥ एवां तो राज सतेक, प्रगट करी दिउं तुमने जी ॥ ६ ॥ इम कही पगनो प्रहार, आसन ऊपर मारीने जी ॥ ऊठी नीसर्यो बार, वन जावुं मनें धारीने जी ॥ ७ ॥ अयोग्य जाणी तत खेव, सम्यक् दर्शनें ते तज्यो जी ॥ मोह राजाने साथें, तव सहसा आवी भल्यो जी ॥ ८ ॥ एकलो अटवीमांहि, पहोतो ते तजि गेहने जी ॥ नील नामें लघु जात, राज्य दीधुं नृपें तेहने जी ॥ ९ ॥ पोतें लेई संयम भार, शिव पद पाम्यो अनुक्रमें जी ॥ हवे ते कुवेर कुमार, एकलो अटवी मां भमे जी ॥१०॥ चित्र नामें एक चंम,ते व्याघ्र पल्लिपति सुत तदा जी ॥ युद्ध समय गयो नासि,ते वनमांहे वस्यो मुदा जी ॥ ११ ॥ तेणें दीठो ते कुमार, तीरें मार्यो तव ताकिने जी ॥ पामी मरण अकाल, नरकें गयो मद छाकिने जी ॥ १२ ॥ मल्लादिकनी गतिमांहि, काल अनंतो घेरियो जी ॥ त्रेपनमी ढालें तेह, उदय कहे उदे करियो जी ॥ १३ ॥

॥ दोहा ॥ महापुर नगरे मेलिउ, कर्मे ते वलि काढि ॥ धनाढ्य श्रेष्ठिने घरे, पूरो तेह धनाढ्य ॥ १ ॥

॥ ढाल चोपनमी ॥

॥ साहिबो रे माहरो जलि रह्यो भागोयें ॥ ए देशी ॥ पदम नामें तिहां थापित रे, आजन्म थकी ते बाल ॥ अनंतानुबंधि मायाबलें रे, मायावी अति असराल ॥ पोढो रे प्राणी जो जो मायानो पास ॥ १ ॥ राग केसरी जीते सुता रे, बहुली जस बीजुं नाम ॥ तेहने उदयें ते थयो रे, एक कपट कलानुं धाम ॥ पो० ॥ २ ॥ बालपणें पण बहुविधें रे, छोकराने छेतरी तेह ॥ खावुं धूर्ती खाये सवे रे,जेहना छलनो नावे छेह ॥ पो० ॥ ३ ॥ साधु स्वभाव जाणे सहु रे, सुणि वचन तणा विलास ॥ मोटो थयो तव मायने रे, बापने पण पाडे पास ॥ पो० ॥ ४ ॥ भाईने पण भोलवे रे, भगनिने भमाडे जोर ॥ परिजनने पट धे घणां रे, करी कपट कला कठोर ॥ पो० ॥ ५ ॥ धूर्ते धर्म दाता प्रतें रे, मित्रसुं मांमे महा कूड ॥ देवनी पण खोटें दिलें रे, महास्तवना करी ते मूढ ॥ पो० ॥ ६ ॥ निवेद मोदक ले हरी रे,अंगलूहणा घंटा आदि ॥ कक्षांतर घाली गछे रे,माने नहिं किमे अपराध ॥ पो० ॥ ७ ॥ साचो किहांए न ऊतरे रे, कोइ न लहे मन अभिप्राय ॥ वंच्याविण मेले नहीं रे, कुण परजन स्वजनने माय ॥ पो० ॥ ८ ॥ जनकादिक जाणे इश्यो रे, तेडी तेहने गुरुपास ॥ आवीने इम उचरुं रे, एक अवधारो अरदास ॥ पो० ॥ ९ ॥ भगवन अमारे कुलें रे, आजलगें एहवो कोय ॥ नर मायावी न नीपनो रे, सेवक पण एहवा न होय ॥ पो० ॥ १० ॥ महेर करीने ते वती रे, एहवो आपो उपदेश ॥ मायावीपणुं मूकिने रे, कुलवटें चाले सुविशेष ॥ पो० ॥ ११ ॥ चोपनमीयें चेतजो रे, ढालें सहु धरमी लोक ॥ धूर्तपणुं जोतां धरा रें, आखर उपाये सोक ॥ पो० ॥ १२ ॥

॥ दोहा ॥

॥ तव गुरु करुणा आणिने, धर्म कथा कही धीर ॥ माया शील मानवतणी, सहु मनें धरे अधीर ॥ १ ॥ अपराध जो न करे किश्यो, तो पण सर्पनी पेर ॥ आशंका मन ऊपजे, सहुने जाणी जहेर ॥ २ ॥ मायावी वलि मानवी, अधम कुलें अवतार ॥ मरि पामे महिलापणुं, डक्करगरुली अपार ॥ ३ ॥ इम ते प्रतिबोध्यो थको, दिन केताइक तांइ ॥ मूके माया

वीपणुं, कांइक कर्म सहाय ॥ ४ ॥ मिथ्या दर्शन वल घर्‍यो, तव समकि तनी सेव ॥ करतां दिन केता गया, हरखें सुणो सहु देव ॥ ५ ॥

॥ ढाल पंचावनमी ॥

॥ समवसरण त्रिभुवन पति सोहे ॥ ए देशी ॥ एक दिन तस उपनें विसवासें, पिताएं राख्यो ते पासें हो ॥ पोतें सुंपी एक वासरें, जनक ज मवा निजघरें ॥ पहोतो जिहारे जलटमरें, श्रोता सुणजो ते अवसरें ॥ जो जो पास मायानो ॥ १ ॥ घोडो खेलावतां नृपना करथी, मुद्रा रत्न पडयुं धरती हो ॥ मूसी लीधूं ते केणें, लेई देखाडयुं तेणें ॥ पदमने हट श्रेणें, देखि उलख्युं एणें ॥ जो० ॥ २ ॥ अवसर जाणी पूर्वे मायाएं, तव ते प्रेर्‍यो तिणें गायें हो ॥ लेतुं अलंकार एह, मुफ बले सस्नेह ॥ हीये हर्ष धरेह, दीये उत्तर गुणगेह ॥ जो० ॥ ३ ॥ कथन थयुं तेहनुं एणें मनमां, तव मिथ्या दर्शन तेहना तनमां हो ॥ मोह सहित संक्रमिउ, तिहांरे स मकित वमिउ ॥ अल्पमूलें तव गमिउ, नूषण लीधो अण मविउ ॥ जो० ॥ ४ ॥ तातने पण कांइ न कह्युं कपोतें, प्रछन्न राख्यो पोतें हो ॥ तव नृपें ढंढेरो, पुरमां फेर्‍यो सवेरो ॥ मुद्रा रत्नए मेरो, जे कोई आपे वहेले रो ॥ जो० ॥ ५ ॥ ते निर्दोष थई साबाशी लेशे, नहिं तो प्राण सहित मु द्रा देशे हो ॥ तव सारुं ते नगर, थयुं चिंतायें विगर, जिम आगममां अगर, थाये वलीने फगर ॥ जो० ॥ ६ ॥ पाडोशियें ते कांई वात जणावी, धना ढ्य शेठने आवी हो ॥ तव ते एकांतें धरी धरी, पूछे पुत्रने फरी फरी ॥ कांन ढांकी हे हरी हरी, एशुं बोलो छो अरी अरी ॥ जो० ॥ ७ ॥ एहवो कुण थइ साहस नागी, मरण लिये मुखें मागी हो ॥ महर्द्धिक लोकें पिता यें, पुरजन पडोसी मायें ॥ अनेक अनेक उपायें, तेहने बुझव्यो त्यांयें ॥ ॥ जो० ॥ ८ ॥ जुनी वंसनी जडने न्यायें, अनिप्राय तेहनो न जणाये हो ॥ इकदिन राज नंमारी, जवहरीमां शिरदारी ॥ तेहनो मित्र एक नारी, परदेशी विवहारी ॥ जो० ॥ ए ॥ कोईक कामविशेषें त्यांहि, आव्यो ते उ छाहिं हो ॥ नंमारीने संकेतें, थई वणजारो हेतें ॥ पदम पासें ते प्रीतें, प होतो कपटेंसु रीतें ॥ जो० ॥ १० ॥ कहे ते तेडी एकांते, सिंहलेश्वर नृ कंते हो ॥ मुद्रारत्नने कामे, मुफने प्रेर्‍यो ए गामें ॥ जो होए तमारे धामें, देखाडो तो आ गामें ॥ जो० ॥ ११ ॥ मूल मुखें तुमे मांगसो जेतो, अ

मे आपसुं तेतो हो ॥ तव ते पदम विचारे, एहने आपे निरधारे ॥ जासे देश उतारे,प्रगट नहीं थाए किहारे ॥जो०॥१२॥ इम चिंती ते देखाडे निज हाथें, राज पुरुष तिहां तेहवे साथें हो ॥ भंमारीनी ते साने, पकडी आवी ते थानें ॥ व्याना सहित राजाने, जई सोंप्यो पदमाने ॥ जो० ॥ १३॥ प्राणांत लगें दीधो प्रहार, अनेक विधनो मार हो ॥ मरी काल अनंत, भवमां भमिउ ते जंत ॥ पंचावनमी ए तंत, ढाल उदय कहंत ॥ जो०॥१४॥

॥ दोहा ॥

॥ जयपुर नगरें अन्यदा, श्रावक कुल श्रीकार ॥ धनदत्त धामें ते थयो, सुत सोमदत्त उदार ॥ १ ॥ सुकुल संयोगें पामिउ, सम्यक् दर्शन संग ॥ पण निर्धन धातो फरे, धन काजें धरी रंग ॥ २ ॥ सर्वगाथा ॥ १०२३ ॥

॥ ढाल बपनमी ॥

॥ चांदलीउने उग्यो रे हरणी आथमी रे ॥ ए देशी ॥ धननें काजें रे ते धातो फरे रे, संबल हीण सदीव रे ॥ तैलादिक रें वणिज करे वहीरे, आपद सहे अतीव रे ॥ ध० ॥ १ ॥ इणि परें करतां माया गांठडी रे, गर थनी कांइक गांठ रे ॥ घणे कालें रें बाजी तेहने रे, पाधरी आवी कोई आंट रे ॥ ध० ॥ २ ॥ व्यापार तिहारे रे कणनो करे रे, तव राग केसरी धाय रे ॥ अनंतानुबंधी रे लोभ तिहां मोकल्यो रे, भल जेहनो भडवाय रे ॥ ध० ॥ ३ ॥ बहुली केरो रे जे लघु बंधवो रे, सागर बीजुं जस नाम रे ॥ तनुज ते जाणो रे राग केसरी तणो रे, तेहना तनुमां वश्यो ताम रे ॥ ध० ॥४॥ दामनी तिहारे रे ते सोमदत्तने रे, इछा वाधी उदाम रे ॥ वणिज वधाख्या रें तव बहु भांतिना रे, सहस्रपति थयो ताम रे ॥ ध० ॥ ५ ॥ लघु डुख सहेतां रें थयो लखेश्वरी रे, दिन केता इक छेह रे ॥ कोडि क्लेश वेठी रे वलि केते दिनें रे, कोटिध्वज थयो तेह रे ॥ ध० ॥ ६ ॥ जिमजिम वाधे रे वैभव तेहथी रे, वमणो वाधे तिम लोभ रे ॥ अगनि न धाए रे जिम ज ग इंधणें रे, तिम लोभनो दीसे नहि थोभ रे ॥ ध०॥७॥ अतिशय लोभेंरे देवने अवगणे रे, गुरुसुं राखे ते गाढ रे ॥ सेव्यो पण नापेरे दमडी केहने रे, कोडी काजें करे राढ रे ॥ ध० ॥ ८ ॥ उपदेश देतांरे मनें आंटी भजे रे, धर्मने कामें धरे ढील रे ॥ पापने गामेंरे पुरुपातन फोरवे रे, दान देतां करे अडखील रे ॥ ध० ॥ ए ॥ समकित तिहारें रे रखुं वेगलुं रे, मिथ्या

दर्शनने मोह रे ॥ सपरिवारें रे तिहां आवी वस्या रे, तव वाधी तेहनी सोह रे ॥ ध० ॥ १० ॥ दिल दोडावी रे बहु देशावरें रे, विध विधना व्यवसाय रे ॥ मोटा मोटा रे तिणें तव मांमिआ रे, जलवट थलवटें धाय रे ॥ ध० ॥ ११ ॥ क्लेश साथें रे वाधी संपदा रे, केइ रत्ननी कोडी रे ॥ तृष्णा पूरें रे तिणे मेली तदा रे, अंगथी आलस छोडी रे ॥ ध०॥ १२ ॥ उदयरत्न इणि परें उचरे रे, ए छपनमी ढाल रे ॥ परखी जोतांरे मोहना सैन्यमां रे, लोभ सुभटो चंमाल रे ॥ ध० ॥ १३ ॥

॥ दोहा ॥

॥ तो पण तृष्णा नवि मिटे, अर्थ उपायो जेह ॥ रखोपुं करतां तेहनुं, निद्र नावे नयणेह ॥ १ ॥ रात दिवस झूरण रहे, लेखुं जूए लखवार ॥ बिलाडीना बच्चा परें, फेरवे अर्थ अपार ॥ २ ॥ बदाम काजें त्यजे बापने, मातने मूके दूर ॥ याचक लागे जहेरसो, भोजन न करे भूर ॥ ३ ॥ तोली मापीने गणी, जोइ आपे तेह ॥ घण कष्टें घर खरच पण, तिल पापड थयो तेह ॥ ४ ॥ खाए खोरूं धान ते, नवुं न खाए रेष ॥ हाथो हाथें आपतां, प्रतीत न पामे एष ॥ ५ ॥ सर्वगाथा ॥ १०४१ ॥

॥ ढाल सतावनमी ॥

॥ मोरा आदि जिन देव देखी तुजने आनंद भयो ॥ ए देशी ॥ सुलाइ भाइने तिणे, एकदा निज आथ ॥ कोडि गमे सोंपी किमें, लोभने परमाथ ॥ जो जो लोभनां काम ॥ लोभ भूंमो एह कंमो दरिद्र लह्यो ॥ १ ॥ नाणानुं ते लेखूं करतां, बहु कीया तव पंच ॥ पूरा न पडे तेहने काजें, थई खिंचा खिंच ॥ जो० ॥ २ ॥ पग बंधीने लेखूं करतां, वही गया दिन सात ॥ सुलाई ते मृत्यु पाम्यो, विसूचिका संघात ॥ जो० ॥ ३ ॥ तव दुष्टमां शिरदार तेहने, लोक कहे ए लंम ॥ बल्या हाथनो बिरुद एहवुं, वली कहे करचंम ॥ जो० ॥ ४ ॥ प्रसिद्ध एहवी परवरी रे, आप्युं तेहनुं कोय ॥ हाथमां न झाले हाहा, लोचें थुं थुं होय ॥ जो० ॥ नगरमांहे एकदा तिहां, सुंघो थयो कात ॥ खेरनी महा खोट पडी, नहीं आव्यानो घाट ॥ जो० ॥ ६ ॥ सागरें तव प्रेख्यो तेहने, कां मेहलियें लाभ ॥ हिमत हिए राखतां, उंमलिमांहे आभ ॥ जो० ॥ ७ ॥ तनुजने पण ते न धीरे, काई नापे काम ॥ रखे जाणे ए मांहरो, इष्ट वेरे दाम ॥ जो० ॥ ८ ॥ पांच

सें सकट लेइ, लोजने उब्बांहि ॥ स्वजनलोकें वारतां ते, गयो अटवीमांहि ॥ जो० ॥ ए ॥ काष्ट तिहां मजूर कापे अरहा, परहा को क्यांहि ॥ एकाकी तें आप जइ, बेगो तरुडांही ॥ जो० ॥ १० ॥ दैवयोगें डुष्ट तिहां, आव्यो एक वाघ ॥ देखी सोमदत्तने तिणें, मास्यो जोइ लाग ॥जो० ॥ ११॥ विलपतो विलुरी नाख्यो, नखें नस ताणि ॥ एकेंड्रियादिकमांहे जई, उपनो ते प्राणी ॥ जो० ॥ १२ ॥ वलि तिहां नवनी ते कोडी, नमिउ काल अनंत ॥ उदये ए ढाल कही, सतावनमी तंत ॥ जो० ॥१३॥

॥ दोहा ॥ ॥ समकित डुर्लन पामिने, इणि परें वार अनंत ॥ बल हीणो ते बापडो, जगमां हास्यो जंत ॥ १ ॥ सर्वगाथा ॥ १०५५ ॥

॥ ढाल अठावनमी ॥

॥ सुसाधु गुरुसही मोरे मन माने ॥ ए देशी ॥ किहांएक रागें किहां एक द्वेषें, किहां एक अनंतानुबंधि ॥ क्रोध मान माया लोनयोगें, समकित न शक्यो संधि ॥ जगतमां जो जो मोहनो जोरो ॥१॥ बीजे पण एहवे नव बहुले, पामीने नीगमिउ ॥ समकित सुरतरु सरिखो सहेजे, डुर्गति डुखें तिणें दमिउ ॥ ज० ॥ २ ॥ किहां एक शंका दोष संयोगें, अने वली अतिचारें ॥ किहां एक क्रीडा कामविकारें, किहां एक कुटंबने नारें ॥ ज० ॥ ३ ॥ किहां एक वल्लनतणें वियोगें, धन नाशादिक सोगें ॥ किहां एक परदल नयप्रयोगें, किहां एक रागने योगें ॥ ज० ॥ ४॥ किहां एक डुर्गंग दारिड् नावें, पुरुष स्त्री नपुंसक वेदें ॥ किहां एक संगें व्यसनने रंगें,किहां एक कुशास्त्रने नेदें ॥ ज० ॥ ५ ॥ इम प्रत्येकें काल अनंते, नरनव लही लही हास्यो ॥ समकित रतन चिंतामणि करथी, संसार तिणें वधास्यो ॥ ज० ॥ ६॥ मोह राजाने जोरें करीने, सम्यक् दर्शन साथें ॥ पूरी जिहां तिहां न प्राति वंधाणी तिणें, डुःख लह्यां तेह अनाथें ॥ ज० ॥ ७ ॥ क्षेत्र पल्योपम असंख्यात नागें, प्रदेश राशि प्रमाणे ॥ समकित फरस्या पठी ल्यो प्रीठी, नव कीधा ते प्राणि ॥ ज० ॥ ८ ॥ अगवनमी ढाल ए बोली, उदयरत्न कहे आगें ॥ सबंध ए सावधान थइने, श्रोता सुणजो रागें ॥ ए॥

॥ दोहा ॥

॥ विजय खेटपुरें अन्यदा, धर्म श्रेष्टिने गेह ॥ सुंदर नामें सुत थयो, जीव संसारी तेह ॥ १ ॥ सुगुरु समीपें श्रुत सुणी, समकित धरी सुजाण

॥ विचरे जिन मारग विधें, धरतो व्रत पचखाण ॥ २ ॥ कर्में तव करुणा करी, धर श्रुत अध्यवसाय ॥ तदरूप करवाल तसु करें, आप्युं तेणे गाय ॥ ३ ॥ मोहादिक महा शत्रु जे, शरीरतणा तिणें अंश ॥ अधिकतर छेदे तदा, करतो कर्म प्रशंस ॥ ४ ॥ भीनाकुल भागा तदा, अप्रत्याख्यानाव रण ॥ कषाय ते करवालथी, जिम सिंह आगे हरण ॥ ५ ॥ सम्यक् दर्शन तव सचिवें, सुगुरु पासें लेह ॥ चारित्र धर्म महा चक्रवर्त्ति, देखाड्यो नयणेह ॥ ६ ॥ गुरें तव गुण तेहना कह्या, चारित्र धर्मने जेह ॥ सुविधें सेवि सहजें लहे, सुर नर शिव सुख तेह ॥ ७ ॥ वली विशेषें वर्णव्या, गुरुराजें गुण तास ॥ तव सुंदरें सो स्वामी कस्यो, अंगें धरि उल्लास ॥ ८ ॥

॥ ढाल उगणसातमी ॥

॥ कर जोडी रही ॥ ए देशी ॥ समकित धारी सांभल्यो, चारित्र धर्म नृपालें रे ॥ योग्य जाणी तव तेहने, परणावी उजमालें रे ॥ स० ॥ १ ॥ देशविरति लघु कन्यका, तेहने संगें ते धारे रे ॥ नाहक त्रस जीव नवि हणुं, डुविधि त्रिविधि हुं किहारें रे ॥स०॥२॥ स्थूल प्राणीने जालवुं, वलि वरजुं अतिचार रे ॥ वध बंधन छेदन नवि करुं, न भरुं वधतो भार रे ॥ ॥ स० ॥ ३ ॥ भात पाणी रोकूं नही,ए पांचे मन शुद्ध रे ॥ अतिचार ते टा[illegible]ल सदा, व्रत राखवानी बुद्धें रे ॥ स० ॥ ४ ॥ इम करतां हवे एकदा, पिता तेहनो पढीनो रे ॥ तव घरना कारभारमां, सुंदर रहे ते भीनो रे ॥ स० ॥ ५ ॥ अवसर त्यारे उलखी, पासें तेहने प्रेखी रें ॥ स० ॥ निस्तृंसता मोहादिकें, जे व्रतने नाखे उवेखी रे ॥ स० ॥ ६ ॥ तसु संगें ते आदरे, निर्दयपणुं अतागें रे ॥ लंघावे ते लोकने, धन जे पासे मागे रे ॥ स० ॥ ७ ॥ वध बंधन ताडन करे, कोइ मरे अकलाइ रे ॥ इम करतां निर्धन थयो, तव राज्य कामूं ल्ये धाइ रे ॥ स० ॥ ८ ॥ तव हिंसा प्रगटी हे जसुं, अप्रत्याख्यानावरण रे ॥ क्रोधादिक पण थया छता, अधम जेहनां आचरण रे ॥ स० ॥ ए ॥ व्रतनी भाग। तव वासना, बंधनें केहनें बंधे रे ॥ ताडे तरजे ने हणें,धर्म त्यजि पड्यो धंधे रे ॥ स० ॥ १० ॥ देशविरति डुलही तदा, अलगी रही तेहथी रे ॥ पण कुलक्रम मूके नही, छूटी न शके जेहथी रे ॥स०॥११॥ देव वंदे देहरासरें,पक्षपाती थई पूजे रे ॥ जिन दर्शन करे दिन प्रतें,दिल नवि राचे दूजे रे ॥ स०॥१२॥ नरकें न गयो ते

वती, पण देशविरति विराधी रे ॥ वलि समकित विराधिउं, तेणें मरी ते अपराधी रे ॥ स० ॥ १३ ॥ भुवनपतिमां ऊपनो, हीन जाति थयो देव रे ॥ भव अनंता वलि भम्यो, ते जाणे जिन देव रे ॥ स० ॥ १४ ॥ उदय रतन कहे अहो भवी, उंगणसातमी ढालें रे ॥ समकितथी चूको रखे,जेणें पडियें भव जालें रे ॥ स० ॥ १५ ॥

॥ दोहा ॥

॥ शालिभद्र विवहारिउं, समकित दृष्टि तास ॥ अंगज ते थयो एकदा, माणिभद्र नामें तास ॥ १ ॥ समकित तिहां सहेजे लह्यो, देशविरति वरि दार ॥ स्थूल मृषावाद विरमण, व्रत कर्युं अंगीकार ॥२॥सर्वगाथा १०ए०

॥ ढाल सातमी ॥

॥ शुं करियें जो मूलज कूडुं ॥ ए देशी ॥ कन्या गो भूमि थापण मो सो, कूडी साखने कूडो दोसो ॥ इत्यादिक जे जूठां मोटां, डुविध त्रिविध न बोले खोटां ॥ १ ॥ बीजुं व्रत साधे इणि भातें ॥ अतिचार पांच त्यजे मन खांतें ॥ सहसातकारें आल न बोले ॥ स्वदार तणुं वलि गुह्य न खो ले ॥ २ ॥ कूडो उपदेश ने कूडो लेख ॥ अज्ञात कांइ न बोले विशेष ॥ ए पांचे अतिचारने त्यजतो ॥ व्रत बीजाने रहे ते भजतो ॥ ३ ॥ एक दि न जनक गयो अन्य हाटें ॥ कोइक वस्तु लेवामाटें ॥ तव मोहादिक प माडवा क्षोभ ॥ अप्रत्याख्यानावरण जे लोभ ॥ ४ ॥ मृषावाद आदे भ ट सोई ॥ तेह पासे मेल्या तक जोई ॥ तेहतणे आगमनें एह ॥ वणिज काज वदे अलिक अछेह ॥ ५ ॥ पाडोसीनुं वस्त्रादिक ल्यावे ॥ वमणो ला भ ते पोतें खावे ॥ पोतानुं आपे परहाथें ॥ बहु मूल खावा पर माथें ॥ ॥ ६ ॥ ग्राहक जो पूछे सुण सेठ ॥ शुं एहनुं मूल लेसो नेट ॥ तव ते क हे अमें कह्यो जेतो ॥ सोगन सेंती लेसुं तेतो ॥ ७ ॥ तव ग्राहक कहे बोलोने साचुं ॥ एक मूल कहो तो अमे राचूं ॥ तव कहे कहुं हुं निरधार, एतामांहि नहीं फेरफार ॥८॥ वारु तमे ए लेसो केते ॥ ग्राहक कहे अमे लेसुं एते ॥ तव सेठ कहे ए मूलें जो आपुं ॥ तो वर अमे शुं ग्रहणे थापुं ॥ ए ॥ इत्यादिक बोली वंकाई ॥ भोला लोकने मेले वाही, मनसुं मूल ते साचुं मानी ॥ लाभ आपी ते जाए अज्ञानी ॥१०॥ उदयरत्न कहे सातमी

ढालें ॥ जिम तिम लोकने नाखे जालें ॥ लोभिउ नर जगमां लख वातें ॥ पण जयकारो न लहे दिनरातें ॥ ११ ॥
॥ दोहा ॥ समय लही सागर तदा, इम तसु दे उपदेश ॥ जूठुं तूं शुं जंपता, शंकायें सुविशेष ॥ १ ॥ सर्वगाथा ॥ ११०२ ॥
॥ ढाल एकसठमी ॥
॥ गोकुल गामने गोंदरें रे ॥ ए देशी ॥ जूठुं बोलतो लोखमां रे, मलि मलि शुं करे मांझ ॥ माहरा वाहला रे, मृषावाद वदे इस्युं रे, लोचें प्रेख्यो तें लांझ ॥ मा० ॥ जू० ॥ १ ॥ फेरव्यो तुं बोले फलुं रे, नथी लहेतो कांइ न्याय ॥ मा० ॥ घरनुं खरच बहु ढंकुं रे, प्रचूर भांमां भराय ॥ मा० ॥ जू० ॥ २ ॥ वाणोतरी वली आपवी रे, करवा भोगोपभोग ॥ मा० ॥ वेसराणि बहु बाजारमां रे ॥ जोडवा विवाहादिक योग ॥ मा० ॥ जू० ॥ ॥ ३ ॥ साचूं बोलतां सोंखिया रे, लहियें न लाभ अपार ॥ मा० ॥ अलिक अछे अक्षय निधि रे, केतेक गामें निरधार ॥ मा० ॥ जू० ॥ ४ ॥ यतः श्लोकः ॥ वाणिज्ये परमो भीवी,वेश्यानां परमो निधिः ॥ लिंगीनां परमाधारो, मृषावाद नमोस्तुते ॥ १ ॥ जूठूं बोले बीजा बहु रे, तेहनी थासे जे पेर ॥ मा० ॥ गति थाशे माहरी पण तेहवी रे, वणिजने साचने वेर ॥ मा० ॥ जू० ॥ ५ ॥ ते पण कानें कांई तूं धरे रे, जे मुखथी बके ए मूंझ ॥ मा० ॥ पर घर सूरा पिंमिया रे, अखंम एहनां पाखंम ॥ मा० ॥ जू०॥ ॥ ६ ॥ न घर बारा नकरा सदा रे, सुखें आपे ए शीख ॥ मा० ॥ पण कह्युं एहनुं जे करे रे, ते आखर मागे भीख ॥ मा० ॥ जू० ॥ ७ ॥ माथुं मुंमाववुं जो होय रे, तो मुंमना मानियें वयण ॥मा०॥ सोहेलुं न रहेवुं संसारमां रे, जोने उघाडिने नयण ॥ मा० ॥ जू० ॥ ८ ॥ उपदेश तेहनो ते सांभली रे, अलिक बोले निशंक ॥ मा० ॥ व्रत भागुं वीशे वीसारे, देशविरति नाठी लहि वंक ॥ मा० ॥ जू० ॥ ए ॥ देव पूजादिक आचरे रे, अनुक्रमें पूरी ते आय ॥ मा० ॥ हीन व्यंतर ते उपनो रे, समकित भ्रष्ट महिमाय ॥ मा० ॥ जू० ॥ १० ॥ किहां मुंगो किहां बोबडो रे, कंठ तालु जीभ दंत ॥ मा० ॥ अधर रोग डुर्गंधता रे, एहवा मुख रोग लहंत ॥ मा० ॥ जू० ॥ ११ ॥ किहांयें वोल्युं गमे नहिं रे, डःस्वर सहु रहे दूर ॥ मा० ॥ नर भव पामी एहवा बहु रे, पीडा दीठी प्रचूर ॥ मा० ॥ जू० ॥ १२॥

नरक तिर्यंचमां ते भम्यो रे, एणी परें काल अनंत ॥ मा० ॥ एकसठमी ढालें उदय वदे रे, जूवें वाह्यो ते जंत ॥ मा० ॥ जू० ॥ १३ ॥

॥ दोहा ॥

॥ एक दिन ते वलि रूपनो, वणिक श्रावकनो पुत्र ॥ सोमनामें अति सुंदरुं, समजे सघला सूत्र ॥ १ ॥ धण कण सोवन रजत रस, इंधण वस न तृण आदि ॥ वादर अदत्त न आदरे, डुविधि त्रिविधि आल्हाद ॥ २ ॥ त्रीजुं व्रत भजे सर्वथा, स्थूल अदत्तादान ॥ अतिचार पंच वरजे सदा, तेहमां थई सावधान ॥ ३ ॥ सर्वगाथा ॥ ११२८ ॥

॥ ढाल वासठमी ॥

॥ हरि गुण गातां लाज लागे तो लागजो रें ॥ ए देशी ॥ चोरनी आणी वस्तु, न ल्ये चित्तसुं लही रे ॥ न ल्ये चित्तसुं लही रे ॥ चोरीने काजें क्यारे साहाय्य, वली आपे नही रे ॥ व० ॥ १ ॥ उलंघे न राज्य विरुद्ध, आपद पद ते कदा रे ॥ आ० ॥ कूडा तोलने कूडां मापके, वरजे ते सही रे ॥ व० ॥ २ ॥ सरसमां निरस न भेले, क्रियाणां केलवी रे ॥ क्रि० त्रीजूं व्रत पाले तेह के, इम मन मेलवी रे ॥इ०॥३ ॥ वहूली सागर वेढ़ ते,

भवमां भमियो भूर ते, क्लीब थई पछे रे ॥ क्ली० ॥ १३ ॥ बोली बासठमी ढाल, ए उदय ते भचरे रे ॥ ए० ॥ धन्य सदा नर तेह, जे धर्म हृदय धरे रे ॥ जे० ॥ १४ ॥

॥ दोहा ॥

॥ उपनो पुनरपि अन्यदा, धनबहुल इण अभिधान ॥ समकित धारी श्राद्धते, पंचम अणुव्रतवान ॥ १ ॥ खेत्र वास्तु रूप्य हेम धन, धान्य द्विचतुष्पद कुप्य ॥ परिमाण तेहनुं ते करे, चितमांही धरि चूंप ॥ ॥ २ ॥ योजन दान बंधन वली, कारण भावादिक ॥ अतिचार पांचे पृथक, तेहना लहो तहकीक ॥ ३ ॥ दुर्गम कांई लही एहनो, विवरी कहुं विचार ॥ सभाजन सहु सुणजो तुमें, नेहेंसुं नर नार ॥४॥ सर्वगाथा॥११३६॥

॥ ढाल त्रेसठमी ॥

॥ गोडी रागें जकडीनी देशीमां ॥ खेत्र वास्तु परिमाणथी, अधिक तणी इछायें जी ॥ पासेंनां लेई प्रेमसुं, एक करें उछाहे जी ॥ आगल पाछलनां ग्रहे उछाहे, एक करे जे योजना ॥ वाडी वरडी टालीनें ते, भावेंसुं सुणो भवि जना ॥ अतिचार पहेलो एह प्रीछयो, पांचमें व्रत शुभ मती ॥ अतिचरी जे अधिक लोभें, खेत्र वास्तु प्रमाणथी ॥ १ ॥ तार अने सोना तणो, नियम करे जे नेहथी जी ॥ चोमासादिक समय लगें, अधिक न राखुं एहथी जी ॥ अधिक न राखुं एहथी, इम त्रेवडी मनें अगेला ॥ पछे नृपादिक मोज योगें, आथ पामी अगेला ॥ स्वजनादिकने सोंपी ते फरी, संग्रहें धरि मोह घणुं ॥ इणि परें थाए नियम रुडुखुं, भार अति सोनातणुं ॥ २ ॥ धन धान्यादिक मान जे, उलंगे अति लोभें जी ॥ वृद्धि देखी मूछी लगें, मनमां जाए न थोभें जी ॥ मन न थोभे लाभ जाणी, पोतानुं करी पर घरें ॥ थापे तथा निज जनने आपे, एम बहु बंधन करे ॥ मुंफादिक वलि बांधे मोटा, इणि विधें अज्ञान जे ॥ अतिचरी अतिचार त्रीजे, धन धान्यादिक मान जे ॥ ३ ॥ द्विपद चतुष्पदमां नथी, जे तृष्णाने जोरें जी ॥ प्रसव लही पशु बालनो, अवधि अपूगे चित चोरी जी ॥ चित चोरी धरे पर घरें इम, कारणे अवसर लही ॥ पछे आणे घरें पोताने, निंदाने अवसर लही ॥ अतिचार चोथो एह प्रीछयो, सुगुरुवचनें ज्ञानथी ॥ लोभें जे इम मन न मगावे, द्विपद चतुष्पद मानथी ॥ ४ ॥ कुप्य शय

नासन आदि दे, भाजन शस्त्र कचोलां जी ॥ दश पंच ते मेली मोकलां, वाकी नियम बहुलां जी ॥ व्रत उपहरे वृद्धि देखी, भंजावी ने घाट ते ॥ स्थूल घडावे तजी थिरता, पण जाणो उवाट ते ॥ जिम तिम करीने संख्या पूरी, पण पूराए भव आपदें ॥ इम राग वसें जे अधिक राखे, कुप्य शयनासन आदि दे ॥ ५ ॥ ते पण बहु दिन पालिने, सागरने उपदेशें जी ॥ स्थूल परिग्रह परिमाण ते, व्रतते भांगी विशेषें जी ॥ व्रतने भांगी भम्यो भवमां, पूरवनी पेरें ते वली ॥ दिगपरिमाण पण तिमज भ्यारें, खंम्यूं सागरने मली ॥ भोगोपभोग पण तिमज भाग्युं, अनर्थ दंम उजालिने ॥ भाख्युं धरि तिम सामायक व्रत, ते पण बहु दिन पालिने ॥ ६ ॥ वली लेई विराधियां, देसावकासिक आदे जी ॥ दशमुं अग्यारमुं बारमुं, व्रत विषयादि प्रमादें जी ॥ प्रमादें पोषधोपवास, व्रत विषंभी को भवें ॥ अतिथिसंविभाग भांगें, अदत्त गुणने अनुभवें ॥ हास्य विकथा रौद्र आरति, ध्यान योग न सांधियां ॥ विषय कषाय ने राग द्वेषें, वली लेई विराधियां ॥ ७ ॥ इणिपरें भमतां तिणें, वे त्रण पांच चार जी ॥ ठ सात आठ कोइक भवें, नव दश अग्यार नें बार जी ॥ बारे व्रत धरी बहुल नेहें, वलि वलि मोहने ठलें ॥ विराधीने वमी समकित, दुःख दीठां दुरगति पलें ॥ अनुभवी महा आपदा मुखें, कही न जाए ते किणें ॥ ढाल त्रेसठमी ए उदय भाखे, इणिपरें भमतां तिणें ॥ ८ ॥

दिन इम आलोचे रे ॥ अहो अहो ए ऊंची चढी, शुं करशुं एम शोचे रे ॥ १ ॥ मोह राजा मनें खीजियो, दिशने रखे दिलगीरो रे ॥ तव सचिवा दिक सहु मली, कहे नाखो मनहीरो रे ॥ मो० ॥ २ ॥ तव मोहनृप बोल्यो मुखें, शुं पूछो छो सचिवो रे ॥ रोहिणी दिशि थई रागिणी, अरि आपणासुं अतीवो रे ॥ मो० ॥ ३ ॥ ते हवे किम वश आवशे, आपणे एम सुणी ने रे ॥ तव हसि बोल्या ते सहू, अरियणने अवगणिने रे ॥ मो० ॥ ४ ॥ निवड सहु जग तिहां लगें, प्रनुजी तुम एक पालो रे ॥ जई न पहोंचे जि हां लगें, ए शुं बोल्या तमें आलो रे ॥ मो० ॥ ५ ॥ तव मोह कहे तिहां मोकलो, कोइक एहवो जोरालो रे ॥ जे पाछी वाले तेहने, देखाडी निज चालो रे ॥ मो० ॥ ६ ॥ तव ते कहेवा करे तेहने, इम सुणिने तव आपें रे ॥ ऊनी थई इम ऊच रे ॥ विकथा निज बल व्यापे रे ॥ मो०॥ ७ ॥ प्र साद करीने ए प्रनु, आपो मुजने आदेशो रे ॥ प्रमाण पेखुं हूं तेहनुं, ति हां जईने सुविशेषो रे ॥ मो० ॥ ८ ॥ तरतरी देखी तेहने, प्रधानादिकें प्रेरी रे ॥ तव तसु पासें जई तिणें, ततखिण लीधी घेरी रे ॥ मो० ॥ ए ॥ चार रूपें चतुरा थई ॥ विकथा योगिनी वारू रे, वदनें वसी जइ तेहनें, क्लेश करी दीदारू रे ॥मो०॥१०॥ चोसठमी ए ढालमां, उदय वदे ए आंटी रे ॥ मोटी मोह राजातणी, मुगती जातां छे घांटी रे ॥ मो० ॥ ११ ॥

॥ दोहा ॥

॥ तात घरें रहता तिहां, नलां वसन नोजन्न ॥ पामे परिघल रोहिणी, जी जी करे सहु जन्न ॥ १ ॥ काम काज न करे किश्युं, अरति न एक लगार ॥ मात पिता सुपसायथी, को न कहे तुंकार ॥ २ ॥सर्व०॥११४५॥

॥ ढाल पांसठमी ॥

॥ वीर वखाणी राणी चेलणा जी ॥ ए देशी ॥ देव नुवन तव गए थ के जी, ऊलट आणी ऊर ॥ वात प्रीय कोइ प्रेखीने जी, देव वंदन त्यजे दूर ॥ १ ॥ विकथानें रसें वाही रोहिणी जी, पोतें जइने तेह पासे ॥ बे साडीने ते बोले इश्युं जी, ए मेंहली सुण्युं तुज आवासे ॥वि०॥ २ ॥ आज ए तुम घरें नीपनुं जी, काज कस्यो मुने केणें ॥ ते कहे अलिक ए ऊचस्युं जी, तुज आगल सहि तेणें ॥ वि० ॥ ३ ॥ तूं वारुरे माही वदे रोहिणी जी, मुजने पण ऊलवे छे मांम ॥ सा कहे समजण विना सही जी, जिम

तिम शुं जवेढे नांम ॥ वि० ॥४॥ इम उत्तर पडुत्तर आपता जी, वढवाडे आव्यो त्यां पार ॥ तव बीजासुं राजकथा करे जी, विकथाएं वाही अपार ॥ वि० ॥ ५ ते पण घरें गई थाकिने जी, तव त्रीजीसुं तेणे सराग ॥ पुरुष स्त्रीनी प्रारंजी कथा जी, ते सासरियाने नयें गई नाग ॥ वि० ॥ ६ ॥ चोथीसुं चाहीने तेकरे जी, नक्त कथा तिहां नूर ॥ इम पांचमीसुं देशकथाकरे जी, आवे तव शिर परें सूर ॥ वि० ॥ ७ ॥ इम आचरतां विकथा अनुदिने जी, कोई श्रावक कहे एक दिन्न ॥ कर जोडीने ते कामनी प्रतें जी, नइ आवी देव जुवन्न ॥ वि० ॥ ८ ॥ एक मनें त्यजिने आशातना जी, नमवुं घटे नाथने पाय ॥ ते वंदनातो रहि वेगली जी, किम करो ढो कर्म कथाय ॥ वि० ॥ ए ॥ तव उत्तर आपे ते तेहने जी, बंधव बीजे को गाम ॥ किहारे को नवि मिले केहने जी, केहने को न जाये धाम ॥ वि० ॥ १० ॥ प्रिय मेलो थाये ए थांनकें जी, तेणे सुख डुःखनी कूण एक ॥ पासठमी ए ढालें धर्मने कर्मनी जी, वात थाये विसराल ॥ वि० ॥ ११ ॥

॥ दोहा ॥

॥ उपाश्रय पण अज्ञा तणे, सहेजे तजि व्याख्यान ॥ जे ते श्राद्धि सुं करे, विकथा तेह सदाय ॥ १ ॥ साधु श्रावकने श्राविका, साधवीना सुविशेष ॥ अवर्णवाद मुख ऊचरे, अनुदिन तेह विशेष ॥ २ ॥ तव सीखामण धे साधवी, नइ नणतर सर्व ॥ जाए ढे तुऊ वीसरी, जिम गुण जाए गर्व ॥ ३ ॥ एह नवे डुःख दायिनी, केवल कष्ट निवास ॥ एहवी कथा करे शुं होय, अनर्थ दंम आवास ॥ ४ ॥ सदन जे संपत्ति तणुं, मुक्तिपुरीनुं मूल ॥ सुधासम स्वाध्याय कर, अहनिशि थई अनुकूल ॥ ५ ॥

दीठो क्यांहि ॥ गु० ॥ ४ ॥ सरल पणे अमे सही रे, जेवूं देखुं ज्यांहिं ॥ गु० ॥ परने पण मुख ऊपरें रे, तेहवूं नाखुं त्यांहि ॥ गु० ॥ ५ ॥ कपट न जाणुं केलवी रे, अवरां परें एक रेष ॥ मुह रखती सगाबापनी रे, वात न जंपुं विशेष ॥ गु० ॥ ६ ॥ को रुसो तूसो कोई रे, पण अमे अमारी टेव ॥ मरणांते मूकूं नहीं रे, जो डुहवाए देव ॥ गु० ॥ ७ ॥ सद उपदेश नवि सद्दहे रे, अयोग्य बापडी एह ॥ अजाण जाणी तव अज्ञाए रे, उवेखी मेली तेह ॥ गु० ॥ ८ ॥ शंका तजी सा एकदा रे, श्रुत सुणतां गुरु पास ॥ वस्त्रें वदन आछादिने रे, मुसकें मुंकति हास्य ॥ गु० ॥ ए ॥ जणजण श्रवणे जूजूआ रे, अनेक वदे अवदात ॥ लख लख करती ते करे रे, वखाणमांहे व्याघात ॥ गु० ॥ १० ॥ माती महीषी तलावनुं रे, जल जिम मोहोले जोर ॥ तिम वखाण मोल्युं तिणे रे, सभा जनसुं करी शोर ॥ गु० ११ ॥ सारथवाहनी सुता लही रे, कोइ न वारें कांइ ॥ तिम तिम बमणी थाइने रे, लवती लाजे नांहि ॥ गु० ॥ १२ ॥ जो गुरुवादिकवारे कदारे, तो आडी कहे तनु भीड ॥ भगवत हूं बगनी परें, बेसी रहूं मुख बीड ॥ गु० ॥ १३ ॥ पण पडुत्तर पूछ्यातणो रे, जो जिम तिम न देवाय ॥ तो लोक सहु मुंगी कहे रे, ते बीके कांइ बोलाय ॥ गु० ॥ १४ ॥ अयोग्य जाणीने सर्वथा रे, गुरें पण मेहली उवेख ॥ तेव निशंक मुखें मोकले रे, विकथा करे विशेष ॥ गु० ॥ १५ ॥ छासठमी ढालें कुई रे, वातें विणसे काज ॥ आखर उदय रतन कहे रे, वातें विगडे लाज ॥गु०॥१६॥

॥ दोहा ॥

॥ विकथाने जोरेंकरी, वीसर्युं विद्या पूर ॥ अर्थ सहु आगम तणा, दिलथी तव थया दूर ॥१॥ व्रत मेल्यां वीसारिने, आलोए नहिं अतिचार ॥ प्रमादें न गमे देवने, न गमे नियमाचार ॥२॥ भणतां मन भेदे नहीं, धर्मे न धाए चित्त ॥ पडिकमणुं अनादरपणे, करे विकथाएं सहित ॥ ३ ॥

॥ ढाल सडसठमी ॥

॥ करेलडां घडी देरे ॥ ए देशी ॥ कोइक सार्थे एकदा, विकथा कोइ कुगाम ॥ मगनपणे मांभी तिणे, केवल जाणे क्लेशने काम ॥ १ ॥ अछतुं आल न दीजियें रे, आलें थाए उतपात ॥ वरजो विकथा वातडीरे ॥ तजो पियारी तात ॥ अ० ॥ २ ॥ रखे कोई इहां सांभले, न रह्यो ते उपयोग

॥ विकथानें वस परवसें, सहसा वदे सुणे लोग ॥ अ० ॥ ३ ॥ पटराणि ए पुरनाथनी, अति डुसीला डुष्ट ॥ सम्यग हुं समकूं अछुं, पापिणी बे ए पुष्ट ॥ अ० ॥ ४ ॥ कोइएक जलें माणसें, कह्यो मुजने एह ॥ तेमाटे वीसे वसा, साचुं ए नहीं संदेह ॥ अ० ॥ ५ ॥ तिणे समे ते थानके, कोइक काम विशेष ॥ ते राणीनी दासीयें तिहां, उदंत सुण्यो ते अशेष ॥ अ० ॥ ६ ॥ राणीने दाख्यो तिणे, राणियें राय हजूर ॥ आदिथकी अवदात ते, कह्यो करी दिल क्रूर ॥ अ० ॥ ७ ॥ तिहां राये तेडावी रोहिणी, तेने तेडी गयो तिहां तात ॥ प्रथवीपति पूछे तदा, एकांते तेडी ते वात ॥ अ० ॥ ८ ॥ कहे जइ जे तें सुण्यो, मुज महिला अवदात ॥ ते शुं साचो सुंदरी, विवरी कहो ते वात ॥ अ० ॥ ए ॥ ए तो में सुण्युं नथी, सा कहे सांजलो स्वामि ॥ हुं केहनुं कांई जाणुं नहीं, बेठी रहुं निज धाम ॥ ॥ अ० ॥ १० ॥ जिम तिम लवती जाणी तिहां, तव ते दासी तेडि ॥ अहिनाणें सहु अवनीपति, पूराव्या करि केडि ॥ अ० ॥ ११ ॥ मुखामुखें इम मेलतां, संशयमां पडी सोय ॥ उत्तर नवि आपे किश्यो, जगति सा हासुं रही जोय ॥ अ० ॥ १२ ॥ तव सारथवाह सुजइने, तिहां रोषें तेडी राय ॥ ते दासिपें दाखाविउं, संबंध ते समजाय ॥ अ० ॥ १३ ॥ तव सहसा वज्र पडे सिरें, तिम थई पूछे तात ॥ अहो अहो पुत्री ए किश्यो, दासी वदे अवदात ॥ अ० ॥ १४ ॥ एकांतें पण ए किश्यो, पूछंतां बहु पेर ॥ उत्तर जव आपे नहीं, तव तातें तजि हेर ॥ अ० ॥ १५ ॥ तेडावी ते तारुणी, जे आगल एणे वात ॥ आगलथी कही हुती, उलखी ते दासी संघात ॥ अ० ॥ १६ ॥ कामनी ते आवी कहे, सारथवाहनी साख ॥ हा एणे इम उच्चर्युं, न जाणुं श्ये अजिलाष ॥ अ० ॥ १७ ॥ जनक तेहनो जाणे अछे, मूल थकी मुख दोष ॥ ते वनिताने वश जाइने, तनुजाने तेडी सरोष ॥ अ० ॥ १८ ॥ आवी अवनीपति कनें, नेत्रें धरतो नीर ॥ पयंपे ते पाए नमी, दिलसुं थई दिलगीर ॥ अ० ॥ १ए ॥ सडसडमी ढालें नटकी, सहू को रहे सेण ॥ उदय वदे आपद पडे, कोई न माने कहेण ॥ अ० ॥ २० ॥

॥ दोहा ॥

॥ आज लगें प्रनु अमकुलें, दीगे पण कोई दोष ॥ जीव जातां लगें

नवि वदे,पापनो जाणी पोष ॥१॥ अण दीठो अण सांभल्यो,ए दोष दाखी महाराज ॥ कलंक प्रथम ए मुफ कुलें, एणें चढाव्युं आज ॥ २ ॥ बीज तणां शसिहर थकी, विमल मुफ वंश विशेष ॥ कबुरुयें ते कालो कस्यो, अलिक वदीने एष ॥ ३ ॥ मोकलजीनी लोकमुखें, जाणीने में जेह ॥ वारी नहीं ए ते वती, तकसीर माहरी तेह ॥ ४ ॥ विविध गृह व्यापार वसें, संभारीने शीख ॥ नवि दीधी वलि नवि तजी, लागी तो ए लीक ॥ ॥ ५ ॥ ते माटे प्रभुजी तुमें, जिम जाणो तिम जोर ॥ ए अपराधिण ऊपर करो, निशंक थई निठोर ॥ ६ ॥ सर्वगाथा ॥ ११८८ ॥

॥ ढाल अडसठमी ॥

॥ धणरारे पंथी ढोला मत वादलियें ॥ ए देशी ॥ परतात कीएं इमसा विगोइ हो, हो सुगुणा रे, सुणजो श्रोता ॥ प० ॥ निगुणा रे, नर तिहां विगोता ॥प०॥ पुरनारे जन मलि जोता ॥ प० ॥ ए आंकणी ॥ नृप कहे मारा नगरमां रे, अवल पुरुषनुं एक ॥ वचन न लोपूं हूं ताहरुं, मुफने मानवा योग्य तूं ठेक हो ॥ सु० ॥ १ ॥ शतखंभ करी चोवटें रे, नहिं नाखूं ते माट ॥ पण देशोटो देवो घटे, जिम अवर को न वहे उवाट हो ॥ ॥ सु० ॥ २ ॥ अवनिपति तेहने इम कही रे, विसर्ज्यो तिणे ठाय ॥ तेणे पण तेहज गामथी, तनुजा ते कीधी विदाय हो ॥ सु० ॥ ३ ॥ राजनरें वींटीथकी रे, राजमारग सा जाय ॥ देशवटे डुखणी घणुं, डुष्ट लोक वदे तव त्यांहि हो ॥ सु० ॥ ४ ॥ अहो अहो आते श्राविका रे, अहो देव वंदनाए तेह ॥ पडिकमणो मुखे वस्त्रिका, आते पूठडुं फूल्युं अठेह ॥ सु० ॥ ५ ॥ अहो ए ते भणतर भलुं रे, एहवो ए जैननो धर्म ॥ अवगुण अठता ऊचरे, परना परख्या विण मर्म हो ॥सु०॥६॥ पग पग इम पामरजनें रे, निंदाती निज धर्म समेत ॥ नगर बाहिर ते नीसरी, संभारती सहुना हेत हो ॥ सु० ॥ ७ ॥ जनक वैभव न वीसरे रे, मातनो संभारी मोह ॥ बंधु जन गौरव बहु परें,मनें समरे पामि विठोह हो ॥सु०॥८॥ परिजनना ते परें परें रे, आदर ध्याती अनाथ ॥ सुगुरु वियोगें शोचती, गमन करे धूजती गात हो ॥ सु० ॥ ए ॥ मुर्छाति मुखे विलपती रे, गति हीण गामो गाम ॥ भीक्षाने काजें भमे, किहांयें पामे नहि विश्राम हो ॥ सु० ॥ १० ॥ वनमांहें वींधाए वली रे, कांटे कोमल चरण ॥ रुधिर धा

राये सींचे धरा, कषराला थयां आभरण हो ॥ सु० ॥ ११ ॥ क्रोध तदा कोप्यो घणुं रे, अप्रत्याख्याना वरण ॥ आरति सैन्य उदेरीने, तिणे समकितनुं कखुं हरण हो ॥ सुं० ॥ १२ ॥ आयु पूरी ते कपनी रे, अपरि ग्रहीता व्यंतरी हीन ॥ एकेंड्रियादिकमां वली, अति डुःख दीगं थई दीन हो ॥ सु० ॥ १३ ॥ किंहां वेहेरी किहां बोबडी रे, किहां थयो जिव्हा रोग ॥ अड सठमी ढालें सुणो, उदय वदे आस्तिक लोग हो ॥ सु० ॥ १४ ॥

॥ दोहा ॥

॥ तालि लेइ मोहराय तव, महा मूढता प्रिय साथ ॥ हसी कहे सुण हे प्रिये, विस्मयकारी वात ॥ १ ॥ सूधी निवड जे श्राविका, निश्चल जे हना नीम ॥ विकथायें जुउ तेहनी, शी शी भांजी सीम ॥ २ ॥ ए गरीब डीनुं कहो शुं गजुं, सा कहे सांभलो स्वाम ॥ अचंभो श्यो ए वातनो, जो नर सुरपति तुम नाम ॥ ३ ॥ सर्वगाथा ॥ १२०४ ॥

॥ ढाल उंगणोतेरमी ॥

॥ सूर्य साह्मी पोलें ॥ ए देशी ॥ पुरोहित चक्रीने पूज्य हो प्रभु, अम रगणें अक्षोभ जे ॥ महारा लाल ॥ जगमां अतुलबल जास ॥ हो० ॥ सहु जीवने ये थोभ जे ॥ म० ॥ १ ॥ शिव शोधना जे सोपान ॥ हो० ॥ चौद ते मांहे अग्यारमें ॥ म० ॥ पगथीए पहोता जे सूर ॥ हो० ॥ पग मांमवा चाहे बारमे ॥ म० ॥ २ ॥ पुरुष पलकमां तेह ॥ हो० ॥ हुंकार मार्गे तिहांथकी ॥ म० ॥ पाडी नमाव्या पाय ॥ हो० ॥ दीन ते जिहां तिहां रुले डुखी ॥ म० ॥ ३ ॥ ए जीव संसारी अनंत ॥ हो० ॥ आण प्रमाण करी सहु ॥ म० ॥ हाजर बंधा होय ॥ हो० ॥ सुविधें तुम सेवे बहु ॥ म० ॥ ४ ॥ तव सम कालें त्यांहि ॥ हो० ॥ सामंत मंत्री सहु कही ॥ म० ॥ अहो देवीने बुद्धि ॥ हो० ॥ वातनी विगतें केहवी लही ॥ ॥ म० ॥ ५ ॥ जुउ संसारी ते जीव ॥ हो० ॥ नरभव पामी एकदा ॥ ॥ म० ॥ समकित पाम्यो शुद्ध ॥ हो० ॥ मोहे ते भ्रष्ट कस्यो मुदा ॥ म० ॥ ६ ॥ देतां कोइकभवें दान ॥ हो० ॥ अनुचरें मोहनी आणथी ॥ म० ॥ तनखिण जई थंभ्यो तेह ॥ हो० ॥ किहां एक चुकाव्यो शीलथी ॥ म० ॥ ॥ ७ ॥ कोधें कियो कीहां जेर ॥ हो० ॥ तपना देखी तानमां ॥ म० ॥ किहां एक कस्यो भावना भंग ॥ हो० ॥ धरी तेहने डुष्ट ध्यानमां ॥ म० ॥

॥ ८ ॥ देश विरतिथी दूर ॥ हो० ॥ किहां एक वली तसु वासिउ ॥ म० ॥ मोकली मोहें नृत्य ॥ हो० ॥ परंपरें सुख पीसीउ ॥ म० ॥ ए ॥ इम यो जन कूपने माने ॥ हो० ॥ क्षेत्र पल्योपम लहो खरो ॥ म० ॥ असंख्या तमो तसु जाग ॥ हो० ॥ सूक्ष्म रोम खंमें जखो ॥ म० ॥ १० ॥ ते प्र देस रासि प्रमाण ॥ हो० ॥ देशावरति सुण में वरी ॥ म० ॥ पण मो हने सुजटें तेण ॥ हो० ॥ कषायादिकें लीधो हरी ॥ म० ॥ ११ ॥ अप्र त्याख्यानावरणचार ॥ हो० ॥ कषाय तणे उदयें करी ॥ म० ॥ देशविरति जाए दूर ॥ हो० ॥ आगमें जाखी इणि परे ॥ म० ॥ १२ ॥ उदयरतन इणि जांते ॥ हो० ॥ उगणोतेरमी ए ऊचरी ॥ म० ॥ ढाल ए ढलते रागें ॥ हो० ॥ सुणजो सहु ऊलट धरी ॥ म० ॥ १३ ॥

॥ दोहा ॥

॥ चंद्रमौलि नृप इणि समे, मोदें मुनिना पाय ॥ प्रणमीने पूछे इश्युं, करी रोमांचित काय ॥ १ ॥ जगवन् ए जूंमा घणूं, मोहादिक अरिमस्त ॥ पीडे जे सहु प्राणिने, सोंपी डुःख समस्त ॥ २ ॥ सुख सघलां ले संहरी, डुःख सघलां ये डुष्ट ॥ शल्य पडो ए मोह शिरें, पापी जे महापुष्ट ॥ ३ ॥ सकल सिद्धांतनुं रहस्य ए, उत्तम तुम आख्यान ॥ ए विचें अवर जे पू छियें, न घटे ते जगवान ॥ ४ ॥ केवल संदेह कारणे, प्रश्न पूछुं जे कांइ ॥ अपराध खमजो ते प्रजु, महिर धरी मनमांहि ॥ ५ ॥

॥ ढाल शीतेरमी ॥

॥ जमर गीतानी देशी, धन्याश्री रागें ॥ जगवन पहेलुं तुमे जे जांखि उं, समकित जेणे वेघडी फासिउं ॥ अर्ध पुजल परावर्त्तन रह्यो, संसार ते हने उत्कृष्टो कह्यो ॥ कह्यो वलि समकित संगम, तेहने असंख्याते जवें ॥ ते वार पछि पण तिमज तेणे, देशविरति लाधी सवें ॥ ते वेहुथकी थई भ्रष्ट जवमां, जूरि जव लगें डुःख लह्यो ॥ ते जूरि जवनों मान जाखो, सांसो मुऊने ए रह्यो ॥ १ ॥ जुवनजानु जापे तव केवली ॥ किहां एक सं ख्याता असंख्याता वली ॥ किहा एक अनंता जव पण ते करे ॥ समकित देशविरति तजी फरे ॥ फरे अनंती उत्सर्प्पिणी, अवसर्प्पिणी ते प्राणिउ ॥ अर्द्ध पुदगलें केम अनंतरें, आगम मांही जाणिउ ॥ इणि परें विचे विचे काल, अनंता अनंत जेदें जमे ॥ अंश मात्र तोपण अर्द्ध पुजल, तणो जोतां

नवि समे ॥ २ ॥ अनादि कालनो जीव निगोदिउ ॥ अव्यवहार रासें अति डुखें नेदिउ ॥ समकितहीणो तिहांथी नीसरी ॥ व्यवहाररासें वखते अव तरी ॥ अवतरे ते लाख चोराशी, जीवा योनी सर्वदा ॥ परावर्त्ततां अनंत पुद्गल, पार नवि पामे कदा ॥ समकित वण संसारपारा, वार पार न पा मियें ॥ बकायमां बेदन नेदन, डुःखे जिहां तिहां दामियें ॥ ३ ॥ समकित पाम्यानो महिमा जुउ ॥ मुहूर्त्त लगें जे समकेती हुउ ॥ मोहादिक जो त स कोपे घणुं ॥ तो पण तेहने अर्ध पुदगलिकपणुं ॥ घणुं तेहने अर्ध पुद्गल, लगें नवनी अर्गला ॥ पढें परमानंद पामे, नांजी नवना आम ला ॥ हलु कर्मी कोइक जीव वहेलो, मुगति गामी माहाबली ॥ समकि तनुं ए फल में नाख्युं, सुण तुं राजन मन रली ॥ ४ ॥ नृप नमि मुनिनें तव कहे पडवडो ॥ नाखो नगवन ए अचरज वडो ॥ समकित देश विर ति वस्या स्वामी ॥ मोहादिक डुःख एम दीये दामी ॥ दामी डुःख द्ये डुष्ट स घला, सुनट मोह राजातणा ॥ तव केवली कहे अनंत कालें, अरि न उसरे ए घणा ॥ सर्वदा सर्व जीवने ए, संतापे सर्व पापिआ ॥ ते माटे सहु ज्ञानीये पण, इमज उत्तर आपिआ ॥ ५ ॥ यतः ॥ समत्त देश वि रया, पलियस्स असंख नाग मित्ताउ ॥ अठ नव उवरिते, अणंतकालं च सम एत्ति ॥ १ ॥ पूर्व ढाल ॥ समम्यक् दर्शन देश विरति लही ॥ क्षेत्र प ल्योपम असंख्य नागें सही ॥ केश प्रदेश राशिमांहे जेती ॥ तेहना नवनी संख्या कही तेती ॥ तेती संख्या लहो तेहने, चारित्र सामायकवंतने ॥ न व आठ तस नगवंते नाष्या, पढे पामीनव अंतने ॥ श्रुत सामायक सम्य क् दृष्टि, मिथ्यादृष्टि नावें लहो ॥ त्रसमांहे ते नव अनंता, नमे साचुं सद्दहो ॥ तेणे शीतेरमी एह नाखी, ढाल एम उदय वदे ॥ संसार सागर तेह तरशे, शास्त्र जे धरशे हृदे ॥ ६ ॥

॥ ढाल ॥ एकोत्तरमी ॥

॥ मारुजी हो अवर नदीरे माहरी बेहेनडी हो राज ॥ ए देशी ॥
राजा जी हो त्यारे कहे रे तेह केवली हो राज ॥ मनुष्य क्षेत्रेंपुर एक ॥ सहाय लहोने राज, संसारीने ॥ स० ॥ अवतारीने ॥स०॥ सद्धकुं समकित छे सुखदाय ॥ स० ॥ टेक ॥ रा० ॥ इंद्रपुरें रे तेह ऊपनो हो राज ॥ विश्व थकी व्यतिरेक ॥ स० ॥ १ ॥ रा० ॥ समीरण नामें रे नृप सोहे तिहां हो राज, जयंति नामे तसु नार ॥ स० ॥ रा० ॥ कर्म नृपें लई ते जीवने हो राज ॥ तेहनी कूखें दियो अवतार ॥ स० ॥ २ ॥ रा० ॥ पूरे मासे रे जनम्यो ते यदा हो राज ॥ अरविंद तेहनुं अभिधान ॥ स० ॥ रा० ॥ थाप्युं थयो रे सद्ध कलाधरु हो राज ॥ निरुपम सुगुण निधान ॥ स० ॥ ॥ ३ ॥ रा० ॥ तव तरुण ते थयो रे तेहने ते समे हो राज ॥ अवसर ल ही उत्छरंग ॥ स० ॥ रा० ॥ उद्यानमांहि आणि मेलिउ हो राज ॥ कर्म नृपें गुरु संग ॥ स० ॥ ४ ॥ रा० ॥ मोहें नमी रे ते मुनींद्रने हो राज ॥ ते कुमर बेगे तिहां पास ॥ स० ॥ रा० ॥ तव कर्म नृपें रे तेहने आपिउ हो राज ॥ खडग वारु एक खास ॥ स० ॥ ५ ॥ रा० ॥ अध्यवसाय रे अ ति सुंदरु हो राज ॥ तदरूप ते करवाल ॥ स० ॥ रा० ॥ मोह आदि रे शत्रु सातना हो राज ॥ स्थिति रूप तनु तिणे ताल ॥ स०॥ ६ ॥रा०॥ सागर संख्याएं रे तव छेद्यां तिणे हो राज ॥ तेहुनां तनु केटलां एक तेह ॥ स० ॥ रा० ॥ तेहने योग्य जाणीने तव ते साधुएं हो राज ॥ निर्मल धरी मननेह ॥ स० ॥ ७ ॥ रा० ॥ सम्यक् दर्शन रे ते मंत्रीसरु हो राज ॥ धरपति जे चारित्र धर्म ॥ स० ॥ रा० ॥ आगल थकी ते बन्हे मेलव्या हो राज ॥ जे सेव्या आपे शिव शर्म ॥ स० ॥ ८ ॥ रा० ॥ सर्व विरति रे नामें सुंदरी हो राज ॥ सालंकारा सुवेश ॥ स० ॥ रा० ॥ दिव्य देखाडी गु ण दाखवी हो राज ॥ ते मुनिएं धरि मोह अशेष ॥ स० ॥ ए ॥ रा० ॥ राज कुमरें रे तव रीझिने हो राज ॥ सर्व विरति वरी वेग ॥ स० ॥ रा० ॥ सुगुरु समीपें व्रत उचर्यां हो राज ॥ शुद्ध धरी संवेग ॥ स० ॥ १० ॥ रा० ॥ दीक्षा महोत्सव रे कीधो दीपतो हो राज ॥ उदय वदे मनोहार ॥ ॥ स० ॥ श्रोताजी हो एकोतेरमी ढालें तातें सही हो राज ॥ नित मु निने नमो नर नार ॥ स० ॥ ११ ॥

॥ दोहा ॥

॥ धरपति चारित्र धर्मनुं, सैन्य पाम्युं संतोष ॥ तव तेहने पासें रहे, दूर निवारण दोष ॥ १ ॥ अतिशय बोध आनंदिउ, सम्यक् दर्शन थिर नाव ॥ पामी तसु पासें वसे, नांगरीउं जिम नाव ॥ २ ॥ सदागम लीन रहे सदा, आचरि शुद्ध आचार ॥ प्रथम आनूषण पहिरणे, मार्दव मंमन सार ॥ ३ ॥ उपे ते आर्जव गुणे, संतोषसुं मन मेल ॥ तप तरवारने जे धरे, करे संयमसुं केल ॥ ४ ॥ सेवें सत्य सुमित्रने, शौचसुं धरी सनेह ॥ अकिंचन ब्रह्मचर्य ऊपरें, राखी राग अछेह ॥ ५ ॥ चारित्र धर्म नृप अंगना, दशे मिल्या ए दोस्त ॥ ते अरविंद अणगारशुं, जिम पाणीसुं मले पोस्त ॥ ६ ॥ सदबोध सदागम प्रेरिउ, मुनिवर ते महा धीर ॥ सबल मोहनां सैन्यसुं, रोज चढे रणवीर ॥ ७ ॥ सर्वगाथा ॥ १२५० ॥

॥ ढाल बहोतेरमी ॥

॥ कडखानी देशी ॥ इम तेह अरविंद अणगार अरिशुं नडे, रण वढें रोज मन मोज धरतो ॥ मोह दल दलन बलवंत नड नंजणो, अखंम रिपु चंमना खंम करतो ॥ इ० ॥ १ ॥ चढी अप्रमाद अदनूत गजऊपरें, ऐन अदंनते धरि अंवाडी ॥ समाधि सिंदूरसुं जेह शणगारिउ, अलोन गुण घंट घणणंत गाढी ॥ इ० ॥ २ ॥ धनुष समवृत्ति शुन सधर धरिउ करें, नावना रूप सर नूरि वरसे ॥ मारि मोह रायने मर्म स्थानकें लही, शत्रुनी सूरते सीम फरसे ॥ इ० ॥ ३ ॥ नलकि ब्रह्मचर्यने काम नट नेदिउ, रणमां हृदयांतरें रोप पूरें ॥ घेरी राग केसरी जोर घूमाविउ, अराग आयुधें ते नसाडशुं दूरे ॥ इ० ॥ ४ ॥ द्वेष गजेंद्र अक्रोध बाणे धस्यो, जाए नागो तदा चीस पाडी ॥ एम सदबोध सदागमे उलखी, सैन्य शत्रुतणी तिणे नसाडी ॥ इ० ॥ ५ ॥ वीर विश्वानर वींध्यो समता सरे, विनय बाणे वली शैल्य राज ॥ सरल बाणें करी बहुली दूरें करी, लोन निर्लोनसरे आण्यो बाज ॥ ॥ इ० ॥ ६ ॥ हिंसा असत्य अदत्त मैथुन तथा, मूर्छा आदिमहावेरी बलिया ॥ अहनिशे तेहनुं मूल उन्मूलतां, सर्व सामंतना गर्व गलिया ॥ इ० ॥ ॥ ७ ॥ प्रमाद दंमाधिपें मोहने अन्यदा, तेह ऋषिराजने जोर घेस्यो, ताम ग्याम अणागार ते उलखी, श्रुति रूप दूतियें इम कहेस्यो ॥ इ० ॥ ८ ॥ ॥ यतः ॥ वरं हलाहलंजुत्तं, वरं अग्गिपवेसणं ॥ वरं सप्पोहि सहवासो,

मा पमायाए संगमो ॥ १ ॥ एहवा आगमतणा अर्थ मन धारिने, शत्रु ना सैनने जोर भूंसे ॥ परिसह बावीस मोह राय पटाउते, एकदा घेरिडे आवि हुंसे ॥ इ० ॥ ए ॥ धरिअ निज धीरता वीर ते वेरिने, देहनी अनि त्यता आदि फोजें ॥ दूरकरि उष्टने आप बल दाखवी, मोहसुं इम चढे तेह मोजें ॥ इ० ॥ १० ॥ त्रिविधि उपसर्ग भट उत्कट मोहना, विकट लेइ कटक थया निकट वरती ॥ प्रवचन वयणथी कर्म गति पारखी, ताम करि दूर तस तेह वरती ॥ इ० ॥ ११ ॥ तरुण तपसी वृद्ध बालने गिलान नी, विविध परें सेवना नित्य करते ॥ जोर संज्वलन कषायें जोरो कर्यो, उपशम्यो प्रशम रस ध्यान धरते ॥ इ० ॥ १२ ॥ शब्द रूप गंध रस फरस आदि वली, प्रगट थया पंच ए प्रौढ पापी ॥ सकाम रणांगणे प्रगट थई तव तिणे, तास संतोष बलें शीख आपी ॥ इ० ॥ १३ ॥ मुनि मोह रायसुं एम युद्धें जड्यो, हारे ने जीत करे हाथो हाथें ॥ उदयरतन्न कहे कर्म कर्त्ता अछे, बहोतेरमी ढालमां आव्युं धातें ॥ इ० ॥ १४ ॥

॥ दोहा ॥

॥ जय पराजय पामतां, इणि परें ते अणगार ॥ जय लक्ष्मी वरि जे समे, ते समे सुणो नर नार ॥ १ ॥ गाढो ते तरज्यो गुरें, कोईक काम विशेष ॥ घेर्यो तव तेहने घणुं, आपणो अवसर देखि ॥ २ ॥ प्रत्याख्यानावरण जे, क्रोध मान भट दोय ॥ पीड्यो तिणे निर्दयपणे, मर्मस्थाने मुनि सोय ॥ ३ ॥

॥ ढाल तहोतेरमी ॥

॥ उधव माधवने कहेजो ॥ ए देशी ॥ वेरी कषाये वाहीने, घेरी चोफेरें ॥ बलवंते बेहु जणे, यती कीधो जेरें ॥ वे० ॥ १ ॥ तव थई ते तरतरो, गुरु साहमो गमार ॥ बोलवा लागो ते वेतमां, लोपी लाज अपार ॥ वे० ॥ २ ॥ अहो आचारज जी अमे, कीधो श्यो अपराध ॥ युगतें विचारीने जुर्ज, बोलें पामशो बाध ॥ वे० ॥ ३ ॥ अणगार तो अनेक छे, गुरुजी तुम गछ मांहि ॥ समोवडिआ मुझ सारिखा, तेहने न कहो कांही ॥ वे० ॥ ४ ॥ ग भीर लही गुनह विना, केवल मुझ वंक ॥ दाखो छो सहु देखतां, कोण छे निकलंक ॥ वे० ॥ ५ ॥ जो कोई बीजो पण यती, एहवुं आचरे नांहि ॥ तो मुझनें उवेखवो, इम घटे आंहि ॥ वे० ॥ ६ ॥ थविर वारे जव तेहने, कुलवंत तुझ केम ॥ इम घटे इहां बोलवुं, जट्ट बोले जेम ॥ वे० ॥ एतो कु

ल मुज भगटे, इम चिंते ते ताम ॥ अहंकार कोपें ऊफण्यो, गाढो तिणे ताम ॥ वे० ॥ ८ ॥ जब गुरु कांइक कहे फरी, तब त्राडी कहे तेह ॥ सा ह तुमारा सांभली, हीए पडेछे वेह ॥ वे० ॥ ए ॥ मलि मलि एह मेहलो फरी, शुं करशो छेडि ॥ आ ल्यो तुम उंघो मुहपति, मूको माहरी केडि ॥ ॥ वे० ॥ १० ॥ वेष तजावी वेगसुं, इणि परें अवहेलि ॥ सुंप्या तिणे मोहना सैन्यना, तेहने तिण वेलि ॥ वे० ॥ ११ ॥ डुष्टें भली ते दीनने, निंदनीक ग्रहवेष ॥ पहेरावीने परे परे, दीधां डुःख अनेक ॥ वे० ॥ १२ ॥ भीख मांगी करे चाकरि, पर घरें भरे पेट ॥ वरष तेहने वोल्यां घणां, करतां लोकनी वेठ ॥ वे० ॥ १३ ॥ अहो में भ्रष्ट बुद्धें भज्यो, धर्म त्यजी अधर्म ॥ अंत समय ते इणि परें, निंदे कृत कर्म ॥ वे० ॥ १४ ॥ इह लोकें लही आपदा, पर भवें वहु पीड ॥ पामीश एहना प्रभावथी, भवनी पण भीड ॥ वे० ॥ १५ ॥ इम ते आतम निंदतो, मरी ज्योतिषीमांहि ॥ अमरपणे जई ऊपनो, सुण नृप उछांहि ॥ वे० ॥ १६ ॥ तिहांथी चवीने जीवते, भव भमिउ भूर ॥ बोली ए तिहोतरमी, ढाल उदयें सनूर ॥ वे० ॥ १७ ॥

॥ दोहा ॥

॥ उपनो ते वलि अन्यदा, मंत्री सुत मनुहार ॥ राज्य पुरें रम्य आढ्य ते, चित्रमति नामें कुमार ॥ १ ॥ मावित्र परलोके गयां, तव पुत्र रवी निज गेह ॥ पोते संयम आदरी, वहुदिन पाले तेह ॥ २ ॥ पूर्व परें मोह सैन्यने, मुहकम देतां मार ॥ अंते विषय सुख महाभटें, हरव्यो ते अणगार ॥ ३ ॥ संयम विराधी सुर थयो, सौधर्मैं सुर लोय ॥ पल्योपमने आउखें, तिहांथी चवीने सोय ॥ ४ ॥ भूरि भवांतर ते भम्यो, क्षेमंकर नृप धाम ॥ कंचनपुरें थयो एकदा, सुत विजयसेन इण नाम ॥ ५ ॥ तिहां पण सदगुरु संगथी, धर्म सुणी सुखखाण ॥ मात पितादि मूकिने, संयम लीये सुजाण ॥ ६ ॥ तिमज हरखे रहे ते कने, सदागमने सदवोध ॥ मोहराजाना सैन्यनुं, युद्ध करे ते जोध ॥ ७ ॥ सदागमसुं थयो स्नेह अति, सद बोधनो थयो पोष ॥ अप्रमाद भेद्यो अंगमां, स्थिर थयो संतोष ॥ ८ ॥ तव पाम्यो ते महा मुनि, अप्रमत्त गुण स्थान ॥ सिद्धिसौधनुं सुंदरुं, सातमुं जे सोपान ॥ ए ॥ सर्व गाथा ॥ १२ए३ ॥

॥ ढाल चमोत्तरमी ॥

॥ चोपाईनी देशी ॥ कोईक कर्म परिणाम पसाय ॥ उपशम श्रेणि ना में तिणि ठाय ॥ महावज्र दंम मुनि पाम्यो तेह ॥ उग्रवीर्य तव उलस्युं अछेह ॥ १ ॥ अनादिकालना जे महा अरी ॥ तव शिरें मास्या तेह दंमें करी ॥ क्रोध मान माया ने लोन ॥ अनंतानुबंधी जे नव थोन ॥ २ ॥ नस्म पाम्यो रहे वह्नि छिपी ॥ तिम ते चारे रह्या तव लिपी ॥ अछता थई ते पड्या अचेत ॥ जिम कोईक घायल रण खेत ॥ ३ ॥ विशुद्ध समकित मोहनी पछे ॥ अर्द्ध विशुद्ध जे मिश्र अछे ॥ अविशुद्ध मिथ्यात मोहनी जोय ॥ त्रिहुं नेदे दर्शन मोहनी होय ॥ ४ ॥ ए त्रिणे थई तुं सांनल नूप ॥ मिथ्या दर्शन मंत्री रूप ॥ तव तेणे दंमें हणिउ तेम ॥ अचेत थई ने पडिउ जेम ॥ ५ ॥ अपूर्व करण नामें गुणथान ॥ पहोतो तव आठमे सोपान ॥ नवमुं निर्वृत्ति बादर संपराय ॥ तुरत ते थाने चढयो ऋषिराय ॥ ६ ॥ हणी मूर्छा पमाड्या त्यांही ॥ नपुंसक ने स्त्रीवेद उछांहि ॥ हास्यरती अरतीने शोक ॥ नय डुगंछादिक छ दोष ॥७॥ पुरुष वेद कियो गति नंग ॥ क्रोध मान मायानां अंग ॥ त्रिहुं नेदें जाणे तहकीक ॥ अप्रत्याख्यानावरणादीक ॥८॥ बिहुं प्रकारना लोन समेत ॥ अनुक्रमें एहने कस्या अचेत ॥ संज्वलनानें देतां मार ॥ नासी लोन गयो तिणि वार ॥ ए ॥ दशमे गुणस्थानें ते डुष्ट ॥ सूक्ष्म संपराय पापिष्ट ॥ छतो न जणाए तिम ते छिप्यो ॥ सूक्ष्म रूप करीने लिप्यो ॥ १० ॥ ते पण केडें आवी तेण ॥ मूर्छागत कीधा ततखेण ॥ एह अगवीस कारण नूत ॥ मोहतणां जाणो अदनूत ॥ ११ ॥ अंगित माणस पडते सहु ॥ मोह पण मूर्छा पाम्यो वहु ॥ जिम जड थड शाखा कापवे ॥ वृक्ष घणुं विसंस्थल हवे ॥ १२ ॥ उपशम श्रेणि महावज्र दंम ॥ सकुटुंबे हणि मोह प्रचंम ॥ इम निचेष्ट करी गुणगेह ॥ परमानंद पद पावतो तेह ॥ १३ ॥ उपशांत मोह नामें गुण स्थान ॥ एकादशमे पहोतो सोपान ॥ केवलीना सरिखुं चारित्र ॥ धरतो ते तिहां पुण्य पवित्र ॥ १४ ॥ ध्ये सर्वार्थ सिद्धि विमान ॥ सकल सुरासुर पूज्या स्थान ॥ पद एहवो ते मुनि पामियो ॥ वे घडी लगें तिहां विसामिउ ॥ १५ ॥ तव लोन्नें कांईक चेतन लही ॥ निज तनुथी जे जूदी नहीं ॥ देहोपकरण मूर्छा नाम ॥ वेरि कोप धरी तिणि ठाम ॥ १६ ॥ मोकली ते

मुनिवरने पास ॥ तिणें जई कस्यो हृदयमां वास ॥ देहादिक मूर्छा घेरियो॥ गले फाली पाछो फेरियो ॥ १७ ॥ इग्यारमां गुण गणाथकी ॥ पापणीएं ते पाड्यो रूपि ॥ अनुक्रमें पडतो ते अडवड्यो ॥ पहिले पावडिएं जई प ड्यो ॥ १८ ॥ मिथ्यादर्शन मंत्रीने हाथ ॥ सुंप्यो ते मूर्छाएं अनाथ ॥ तव तें अरि सघलायें कठ ॥ पड्याते मुनिवरने पूंठ ॥ १९ ॥ परिघल पाप करावी तास ॥ एकेंद्रियादिकमां दीधो वास ॥ नरकादिक गतिमां नरपूर ॥ नवमां तेह नमाड्यो भूर ॥ २० ॥ उदय वदे सुणजो उजमाल ॥ चमोत्तरमी ए नाखी ढाल॥ कर्म तणी गति जे नर कले ॥ त्रिधा ताप तस दूरें टले ॥ २१ ॥

॥ दोहा ॥

॥ ब्रह्मसूर नामें अछे, नगर निरूपम एक ॥ सुनंद नामें श्रावक ति हां, वसे धनवंतो छेक ॥ १ ॥ श्रेष्ठिमां ते शिरोमणी, धना नामें तस ना र ॥ तनुज थयो ते तेहनो, पुंमरिक नामें कुमार ॥२॥ सर्व गाथा ॥१३१६॥

॥ ढाल पच्चोत्तरमी ॥

॥ मेरो नाह निठुर अभिमानी हो ॥ ए देशी ॥ बालपणाथी ते बुद्धि दरीयो, सकल कलाएं वरीठ हो ॥ तेने जोर पवन मति जागी हो, थो डा दिनमां ते घणुं भणीउ ॥ गुणवंतें मुख्य गणीउ हो ॥ ते० ॥ १ ॥ अ धित विद्याएं ते अण धातो, कोई मुनिने पूछे वातो हो ॥ ते तो आगम नो अति रागी ॥ सकल कलानो सघलो वेरो ॥ किहां छे कहो अधिके रो हो ॥ ते० ॥ २ ॥ द्वादशांगिमां छे कहो साधु, चौद पुरवथी वाधु हो ॥ ते० ॥ विद्या अनेरे ठाम न दीसे, जाणो विसवा वीसे हो ॥ ते० ॥३॥ तव ते पयंपे ने केवडां तेह, तुमें पूर्व कह्या छो जेह हो ॥ ते० ॥ गुरुने पू छो ते कहे कुमरने, तव ते पूछे जई गुरुने हो ॥ ते० ॥ ४ ॥ गुरु कहे ग ज सम मिसि जो थाय ॥ तो पूरव पहेलुं लखाय हो ॥ ते० ॥ गण वम णी इम मिसि पुंजे, सघलां लिखवा सूजे हो ॥ ते० ॥ ५ ॥ पण पुस्तकें लिख्या नथि केणें, मान कह्यो मिसि एणें हो ॥ ते० ॥ पूर्व ए मुखपाठे जे भणाए, किणही लिख्या न जाए हो ॥ ते० ॥ ६ ॥ कौतक पामी ते कहे एतो, मुजनें भणावशो एतो हो ॥ ते० ॥ गुरु कहे ग्रहस्थने केम न णावुं, तव कहे साधु में थावुं हो ॥ ते० ॥ ७ ॥ मात पितानी अनुमति मागी, संयम लीये ते सोभागी हो ॥ ते० ॥ महा महोत्सवसुं लई दीक्षा, गु

रु तणी सुणि शीक्षा हो ॥ ते० ॥ ८ ॥ चौद पूर्वे ते भण्यो भूपें, उदय व दे अनूपें हो ॥ ते० ॥ पञ्चोत्तरमी ढालें चित धरजो, प्रमादने परिहर जो हो ॥ ते० ॥ ए ॥

॥ दोहा ॥

॥ मोह महाचरें तिणि समे, तन्मय देखी तास ॥ सनामां सहुको देखतां, मुखें मेल्यो नीसास ॥ १ ॥ सर्व गाथा ॥ १३२६ ॥

॥ ढाल बहोतेरमी ॥

॥ रंगी रातो चूडो ॥ ए देशी ॥ सनायें बेठे सहु सेवकें, पाणी जोडी रे तव पूछ्युं एम ॥ जो जो मोहनो जोरो ॥ नीसासो आज नाथजी, अति लांबो ते मुखें मेल्यो केम ॥ जो० ॥ १ ॥ करकपालें थापिने, मुखें बोले रे हवे आव्युं मोत ॥ जो० ॥ अलवे पंखी उमाडतां, जिम जाएरे गोफ णी गोला सोत ॥ जो० ॥ २ ॥ सदागम वेरी सदा, अमारो रे तुमे जाणो अतीव ॥ जो० ॥ अनेद बुद्धें तेहसुं मिल्यो, जय कामें रे ते संसारी जीव ॥ जो० ॥ ३ ॥ सदागम कहेसे सवें, अमारा रे ए आगल मर्म ॥ जो०॥ जण जणने ते जणावशें, गहगहसे रे तिहारे चारित्र धर्म ॥ जो० ॥ ४ ॥ पुत्र पौत्रादिक गोत्रने, तव लणसे रे मली सघला लोक ॥ जो० ॥ वंशो छेद थाशे तदा, मोह बोले रें इम मेलतो पोक ॥ जो० ॥ ५ ॥ तेहवो कोइ नथी देखतो, जे विघटे रें ए डुष्ट संयोग ॥ जो० ॥ सखेद देखी स्वामिने, थया जांखा रें परषदना लोक ॥ जो० ॥ ६ ॥ निड़ा नामें नारी तिसे, कंध आलस रे वैकल्य अंग जंग ॥ जो० ॥ स्वप्न जंखन भ्रम शून्य ता, जृंनादिक रे निज परिकर संग ॥ जो० ॥ ७ ॥ मावा पासाथी उठी ने, करजोडीने कहे सुण स्वामि ॥ जो० ॥ ए अनाथनो श्यो आशरो, तुम दासियें रे एतो सीझे काम ॥ जो० ॥ ८ ॥ चिंता शी ए वातनी, खण वो मूंगर रे हणवो मूषक महामल्ल ॥ जो० ॥ कीडी नगारा ऊपरे, शी कटकी रे देवजुठ दिल्ल ॥ जो० ॥ ए ॥ ताजा तृणनी ऊपरें, कुहाडो रे जिम मारे कोय ॥ जो० ॥ आरति ए तिम जाणवी, तुम नामें रे कुण अनमी होय ॥ जो० ॥ १० ॥ काल्हे किसुं दीठुं नही, मूठीयें रे गले फाली तेह ॥ जो० ॥ एकादशमा सोपानथी, वाल्यो पाठो रे जिम पवनें खेह ॥ जो० ॥ ११ ॥ हरषें कहे तव हेजमां, महाराजा रे मरकलडो देह

॥ जो० ॥ वारु वारु वळी वेगसुं, करो कारज रे तुमें कह्यो जे जेह ॥ जो० ॥ १२ ॥ ताहरी पण मन कामना, सिद्ध थाउ रे इम दीधी आशीस ॥ ॥ जो० ॥ बहोतेरमी ढालमां, वदे उदय रे धरो हृदयमां हीस ॥जो०॥१३॥

॥ दोहा ॥

॥ तव सा पोती ते कने, पापणि परिकर लेह ॥ अवतार्यो तसु अंगमां, आलस प्रथम अछेह ॥ १ ॥ आलसनें उदयें करी, संभारी सहि सूत्र ॥ अरथ लेतां आरति वधे, जिम तिम लवें उत्सूत्र ॥ २ ॥ तव बीजे त्रीजे दिने, थविरे थिर करि तास ॥ गुणवा वेसाड्यो जोरसुं, पण न गमे अभ्यास ॥ ३ ॥ सर्वगाथा ॥ १३४२ ॥

॥ ढाल सीतोतेरमी ॥

॥ होजी झरमर वरसे लो मेह ॥ ए देशी ॥ होजी तव निद्राएं अशेष, परिकर प्रेर्यो ते कने हो लाल ॥ हो जी सम कालें सर्वांग, व्याप्यो न कहे तां ते बने हो लाल ॥ १ ॥ हो जी जंभाएं ते जोर, वांसो घणुं मरडे वली हो लाल ॥ हो जी हाथपग शिरने सर्वांग, कंपावे उंघने वलें हो लाल ॥ ॥ २ ॥ हो जी उंची धरी भुज दोय, कड कड मोडे आंगली हो लाल ॥ हो जी भूतावेशनी भांति, धुजंतो धरणी ढली हो लाल ॥३॥ हो जी अंगी पूठे बहु पास, ढले ढीकलीनी परें हो लाल ॥ हो जी थविर पगावे प्राण, पण अक्षर मात्र न उचरे हो लाल ॥४॥ हो जी निंद नीसामां आप, पछे घणुं ने घेरियो हो लाल ॥ हो जी पडे पशुनी परें तेह, जिहां तिहां प्रमिला प्रेरियो हो लाल ॥ ५ ॥ हो जी काष्टपरें कुगमें, सूवे संथारा विना हो लाल ॥ हो जी घोराएं घणुं जोर, चित्तमां न रहे चेतना हो लाल ॥ ६ ॥ हो जी पडिकमणे प्रभात, थविर उगाडे महा डखें हो लाल ॥ हो जी कभो करी इक दिन्न, गुरु सूत्र गुणावे मुखें हो लाल ॥ ७ ॥ हो जी पलकमांहि भूपीठ, प्रमिलायें तव पाडियो हो लाल ॥ हो जी कुंहणी ढींचण ने शीश ॥ भांपीने भमाडिउ हो लाल ॥ ८ ॥ हो जी अक्षर न भणे एक, मुनि पण मौन धरी रह्या हो लाल ॥ हो जी अतिव्यापी तव अंघ, चिह्न न जाए जेहनां कह्यां हो लाल ॥ ए ॥ हो जी क्रिया करतां अनेक, चकुना चाला करे हो लाल ॥ हो जी केहि मध्य कर ने पाय मोडे पसारे बहु परें हो लाल ॥ १० ॥ हो जी नचावियां हो लाल

॥ हो जी एहवां जोई आचरण, अचरज सहुने आवियो हो लाल ॥ ॥ ११ ॥ हो जी एवडी एसी उंघ, एम सुजाण सहु को वदे हो लाल ॥ हो जी सीत्योतेरमी ए ढाल, उदय वदे धरजो हृदे हो लाल ॥ १२ ॥

॥ दोहा ॥

॥ इम निडायें आचस्यो, आगम विण अन्यास ॥ छिड हस्त जलनी परें, गलवा लागुं तास ॥ १ ॥ गहन अर्थ गया वीसरी, जिम जिम थाये भ्रंश ॥ तिम तिम लागे जहेरसो, आगम न गमे अंश ॥ २ ॥ अमृतसी गणि उंघने, अज्ञाने अहोराति ॥ सूई रहे नवि सलसले, वीसरी सूत्रनी वात ॥ ३ ॥

॥ ढाल अग्गोतेरमी ॥

॥ वेटी टोमर मल्लकी ॥ ए देशी ॥ तव गुरु नणे सो साधुकूं, केवल नणवा काज वे ॥ घर गोरी घणे आयसें, पायो तें आगम राज वे ॥ ॥ १ ॥ जाग वे ज्ञानी जागनां, जागना बे श्रुत जागनां वे ॥ जा० ॥ देवे जो डुर्गतिकों हरी, सुर नर शिव सुख खानि वे; सो हाथें आया क्यों ह रियें, गुनसागर श्रुत ज्ञानि वे ॥ जा० ॥ २ ॥ नरक निशानी नींदको, मूढ देवे कौन मान वे ॥ चौद पूरवरस छोरके, कह्या मेरा सचें मान वे ॥ जा० ॥ ॥ ३ ॥ तव तातो होयके सो वके, कहो उंघाता है कौन वे ॥ तुमकों जूठ कहे किने, बूरी ए वात जबून वे ॥ जा० ॥ ४ ॥ गुरुजी हम तो गुनेहथे, सूत एते एते कल्ल वे ॥ हम तो मगनहिं पाठमें, दूजा न आवे दिल्ल वे ॥ जा० ॥ ५ ॥ गुरु तव चिंते चित्त में, अहो अहो एतो नवीन वे ॥ अ वगुण एहमां आपनो, महाजूठ वोले मलीन वे ॥ जा० ॥ ६ ॥ विष घा रित परें अन्यदा, मूर्छित घायल समान वे ॥ वोलाव्यो वोले नहीं, उंघ्यो सो असमान वे ॥ जा० ॥ ७ ॥ दिवसें सुपना देखिके, ज्यों ज्यों वकें जो र वे ॥ जगावे जो कोउ जायके, तो वहुत करे वकोर वे ॥ जा० ॥ ८ ॥ जोरे ताकूं जगाय के, गुरु कहे क्यों वत्स आज वे ॥ एती वेर उंघ्या हता, तव सो तजिने लाज वे ॥ जा० ॥ ए ॥ उत्तर गुरुकूं यूं दियो, जव हुं अ र्थ चिंतु एकध्यान वे ॥ तव तुम सवकूं उंघेकी, भ्रांति लगी नगवान वे ॥ ॥ जा० ॥ १० ॥ जूठो ताकूं जानिके, मुनिजनें मेल्यो उवेख वे ॥ कोउ क दर्थना नवि करे, गुरुयें पण त्यज्यो छेक वे ॥ जा० ॥ ११ ॥ मोह राजा ने माणसें, आवखुं तेहनुं अंग वे ॥ सदागम तव नागो सही, सदबोधे

त्यज्यो संग वे ॥ जा० ॥ १२ ॥ चारित्र धर्म पण चालियो, सर्व विरति स्वयमेव वे ॥ पहिलेज पलाये तदा, डुर्गंधें जिम देव बे ॥ जा० ॥ ॥ १३ ॥ क्षमादिक नासीने गया, दशेपटाकत दूर वे ॥ सम्यक् दर्शनें सीम तेहनी, तजी वाज ते तूर वे ॥ जा० ॥ १४ ॥ मिथ्या दर्शन मंत्रीसरें, तव तिहां पूख्यो वास वे ॥ मोहादिकें मलि तेहने, पीडी निझपास वे ॥ ॥ जा० ॥ १५ ॥ मरण पमाडी मोकल्यो, निगोद एकेंडि मफार बे ॥ नव मांहे नमाडिउं, पढे तेहने निरधार वे ॥जा०॥१६॥ अठोतेरमीयें सांनलो, ढालें धर्मनो ढाल वे॥धरमीजन धरजो सदा, उदय वदें उजमाल वे जा०॥१७

॥ दोहा ॥

॥ चित्त वृत्ति अटवि इस्ये, विवेक गिरीनें श्रृंग ॥ अप्रमत्त कूटें अति सुनग, जेनेंड्पुरें महाइंग ॥ १ ॥ निरानंद उत्साह विण, मजलस मेली सर्व ॥ चारित्र धर्म नृप आदि दे, वेंग ठे हतगर्व ॥२॥ मांहोमांहे इम उचरे, अहो शुं कीजें आंहि ॥ अनव्य डुर्नव्य आप्या जुउ, मोहने अनेक सहाय ॥ ३ ॥ अस्खलित ते सघले फरे, फेडे आपणो पक्ष ॥ आपणने नीरु एकज दीउं, तेपण नहीं सुदक्ष ॥ ४ ॥ अनंत कालें आवी मिल्यो, आपणने ते जीव ॥ तेने पक्ष पोषतां आपणो, उपजे व्यथा अतीव ॥ ॥ ५ ॥ आपण जव उंचो करां, तव नीचो घाले तेह ॥ उंचो आवण नवि दिये, अरि मोहादिक एह ॥ ६ ॥ आपण एहने सुख इछिएं, ए न लहे उपगार ॥ मोहादिकने जइ मिले, आरति लहे अपार ॥ ७ ॥ गुणठाणे इग्यारमें, चौद पूर्व धर आदि ॥ पद आपण आरोपिएं, तजावी तास प्रमाद ॥ ८ ॥ तिहां थकी पण जीव ते, धर्म तजीने धाय ॥ मोहना दलने जई मिले, कोइक कर्म पसाय ॥ ए ॥ शुं करियें कहियें किशुं, किहां जईएं फरियाद ॥ अहो वेरा वाधी गया, किम जीतासे वाद ॥१०॥ सर्व०॥१३८७॥

नो कर्म न लोपे स्वाल ॥ म० ॥ हिं० ॥ २ ॥ काल परणति कर्मनी रे, छे पटराणी प्रौढ ॥ म० ॥ कही न जाये ते वली हो लाल, भवितव्यता करे भांजणी रे, गति छे तेहनी गूढ ॥ म० ॥ हिं० ॥ ३ ॥ जे संसारी जीव कनें रे, भव करावे छे भूर ॥ म० ॥ हितकरी तुमे तेहने हो लाल, आरोपो ऊंचे पदें रे, उलट आणी ऊर ॥ म० ॥ हिं० ॥ ४ ॥ चौद पूर्वधर जो करो रे, उपशांत मोह आरूढ ॥ म० ॥ तो पण तें जीव तिहां थकी हो लाल, मोहादिकने मलि करी रे, महा अज्ञानी मूढ ॥म०॥हिं०॥५॥ भवमां उत्कृष्टो भमे रें, अर्द्ध पुद्गल परावर्त्त ॥ म० ॥ विवहार ए अनादिनो हो लाल, चाल्यो आवे सहु जीवनें रे, भमतां भव आवर्त्त ॥ म० ॥ हिं० ॥ ६ ॥ विस्मयश्यो ते वातनो रे, हृदयमां राखवो रेख ॥ म० ॥ तटें वेगां जुउ तुमे हो लाल, मिथ्यानुं अंगज कहो अछो रे, जे कांई अविवेक ॥ म० ॥ हिं० ॥ ७ ॥ अरिनो एकज भीरु ए रे, छेदी मूलनो पक्ष ॥ म० ॥ यश पडहो वजडावश्यां हो लाल, सुखी संसारी ए जीवने रे, करस्यां सहु समक्ष ॥म०॥हिं०॥ ८ ॥ तो पण सिद्धिहोसे सही रे, भवितव्यताने भोग ॥ म० ॥ समवायनां संयोगथी हो लाल, भव स्थिति कालपरिणतें रे, शुभ कर्मोदय जोग ॥ म० ॥ हिं० ॥ ए ॥ जे आपण कहो अछो रे, एक ए पाम्या सहाय ॥ म० ॥ ए पण न घटें आलोचवुं हो लाल, बहु भीरु पण पामिने रे, मोहादिक मुंझाय ॥ म० ॥ हिं० ॥ १० ॥ रोधन करे रूंधा थका रे, बाकी बल नवि होय ॥ म० ॥ अरीए आपण ऊपरें हो लाल, अंत कीजें तक जोय ॥ म० ॥ हिं० ॥ ११ ॥ एक ए किम आणे जुउ रे, शत्रु अंत सहाय ॥ म० ॥ श्याने थाउ सहु आकुला हो लाल ॥ जय पराजयनुं पारखुं रे, जाते दीहें जणाय ॥ म० ॥ हिं० ॥ १२ ॥ ऊंता वलानां पालिया रे, धीराना प्रासाद ॥ म० ॥ सहु जाणे संसारमां हो लाल ॥ उगन्यासीमी ढालमां रे, उदय रत्न आल्हाद ॥म०॥ हिं०॥ १३॥

॥ दोहा ॥

॥ तव ते जेटले सर्व ते, सदबोधनुं व्याख्यान ॥ करे तव कहाव्युं ति हां, कर्म परिणाम राजान ॥ १ ॥ अहो प्रतिज्ञा आज में, पूरी पाडी तेह ॥ पण पांकीने पूरवें, तुमसुं करी हुती जेह ॥ २ ॥ पदमस्थल पुर राजिउ, सिंह विक्रम इणे नाम ॥ कमलिनी नामें छे प्रिया, तस उदरें अ

निराम ॥ ३ ॥ अंगज में अवतारिउ, सिंहरथ नामें सोय ॥ जेह सहायें तु मतणो, जीव तें अवसर जोय ॥ ४ ॥ हवे करो हर्ष वधामणां, एणे न वें ए जीव ॥ पद्म तुमारो पोषशे, आशक थई अतीव ॥ ५ ॥ पडशे नहि मोह पाशमां, पूरण पुण्य सहाय ॥ आप्यो छे में एहने, जेणे पातक क्षय जाय ॥ ६ ॥ चलव्यो केहनो नहिं चले, सदबोध सदागम लीन ॥ मुगतें जातां लगि मोहने, दलें न होसे दीन ॥ ७ ॥ सर्व गाथा ॥ १४०७ ॥

॥ ढाल एंशीमी ॥

॥ वागा जांगी ढोल ॥ ए देशी ॥ इम सुणि आणंद पूरें, हे सखि इम सुणि आणंद पूरें ॥ उठी ते महा आनंद नरें ॥ समकित आदि सनूर, ॥हे०॥ मलिने महोत्सव बहु करे ॥ १ ॥ जिनेंद्र पुरनो लोक ॥हे०॥ वारु करे रंग वधामणां, शम्यो समूलो शोक ॥ हे० ॥ नीरुनां ले नामणां ॥ २ ॥ वांधे तोरण वार ॥ हे० ॥ कमलें आछादित करुं ॥ कनक कलश धरि द्वार ॥हे०॥ सोधें सोधें सुंदरुं ॥ ३ ॥ शणगारी हट श्रेणि ॥हे०॥ घर घर गुडी उछले ॥ छटकायो हरपेण ॥ हे० ॥ राज मारग कुंकम जलें ॥ ४ ॥ मृग मदने घनसार ॥ हे० ॥ नेली चंदननें रसें ॥ रायांगण दरवार ॥ हे० ॥ छयल पुरुष छांटे तिसे ॥ ५ ॥ कनक रत्ननो राशि॥ हे० ॥ मन मोर्दें थे मांगणां, अनय दान उल्लास ॥ हे० ॥ देवरावे राजा घणा ॥ ६ ॥ वागां मंगल तूर ॥ हे० ॥ माननें माप वधारियां ॥ शोना वाधीसनूर ॥ हे० ॥ जिन मंदिर शणगारिया ॥ ७ ॥ उदयरतन कहे एम ॥ हे० ॥ एंशीमी ए ढालमां ॥ धरमशुं धरजो प्रेम ॥ हे० ॥ मत पडो माया जालमां ॥ ८ ॥

पण न गमे नारीनुं नाम ॥ ६ ॥ विरमे क्षण क्षण विश्वथी, वांछे शिव सुख वास ॥ गुण निधि नामें गुरु तिणे, एक दिन भेट्या खास ॥ ७ ॥ चउ नाणी ते गुरुकने, सांभलि श्रुत सुविशेष ॥ विधिसुं ते संयम वरे, आरंभ त्यजी अशेष ॥ ८ ॥ सर्व गाथा ॥ १४२३ ॥

॥ ढाल एक्यासीमी ॥

॥ बेंडले भार घणो छे राज, वातां केम करो छो ॥ ए देशी ॥ चारित्र धर्म राजा चितमांहे, तव पाम्यो महा तोष ॥ सहित परिकर रहे ते पासें, पुण्यनो करवा पोष ॥ १ ॥ इम ते जोर भडें अणगार, मोह नृपना भड सार्थे ॥ ए आंकणी ॥ अति अनुरक्त थई ते मुनिसुं, त्रिभुवननी जे त्राता ॥ सर्व विरति नामे सा श्यामा, योगिनी जे जय दाता ॥ इ० ॥ २ ॥ सद बोध योध सदा पासेथी, अध क्षण न रहे अलगो ॥ सम्यक् प्रकारें सम्यक् दर्शन, वपु सार्थे रहे वलगो ॥ इ० ॥ ३ ॥ अप्रमाद महासिंधुर ऊपरें, भजि भावन अंबाडी ॥ प्रशम कवच पहेरी भली भांते, विवेक निसान वजाडी ॥ इ० ॥ ४ ॥ ते गजें बेसी सिर सोहावे, संतोष टोप सनूरें ॥ अढार सहस सीलांग सामंते, परवरिउ दल पूरें ॥ इ० ॥ ५ ॥ धर्म धनें दिन दिन वाधंतो, पुण्योदय इणे नामें ॥ दंम नायक ते आगल दोडे, अरि उसारण कामें ॥ इ० ॥ ६ ॥ समय समयप्रत्यें शुभ मनना, प्रगटे जे परिणाम ॥ पायक ते चाले खल घायक; आगल जिहां अभिराम ॥ इ० ॥ ७ ॥ अणियें अणि आवीने अडिउं, मोह राजा मुनि सामो ॥ वक्षस्थल वींध्युं तव तेहनुं, तत्व कुंतीं धरि तामो ॥ इ० ॥ ८ ॥ ज्ञान दर्शन चारित्ररूपी ए, त्रिढुंसह्लें करि त्राडे ॥ हृदयमां रागने द्वेषने रोषें, कामने कूटी पाडे ॥ इ० ॥ ए ॥ जीव दया परिणाम निवाणे, हणे हिंसा सामंत ॥ मृषा वादने सत भाषारूप, मुजरें मारे संत ॥ इ० ॥ १० ॥ अदत्तादान सुभटनुं मस्तक, शौच भलकें करी छेदे ॥ ब्रह्मचर्य भालाडें महा भट, मैथुनने उछेदे ॥ इ० ॥ ११ ॥ मान सुभटनुं मान मुनि सो, मार्दव दंमें मोडे ॥ रिजु भालडियें माया मुसी, दोपी न दीगे ठोडे ॥ इ० ॥ १२ ॥ संतोष यष्टिकायें ते भट, लोभनुं मस्तक मोडे ॥ शूरो देखीने कोई शत्रु, साहामां सिंग न जोडे ॥ इ० ॥ १३ ॥ देह असार चिंतन धर्म साधन, साहस सत्व ने धीर ॥ इत्यादिक आयुधें जीते, परिसहने ते वीर ॥ इ० ॥ १४ ॥ तनुनी थि

रता लेई तोमर, उन्मूली उपसर्ग ॥ इम मारीने कीधो अचेतन, वेरीनो ते ऐ वर्ग ॥ इ० ॥ १५ ॥ इन्द्रा रोधगवाने मारे, परिग्रह जटने त्रोडे ॥ द सा रूपीउ खड्ग धरीने, क्रोधनी सिंधि विछोडे ॥ इ० ॥ १६ ॥ उदयरतन कहे एक्यासीमी, ढाले धरमी लोक ॥ सदा करजो सेवा साधुनी, जे साधन परलोक ॥ इ० ॥ १७ ॥

॥ दोहा ॥

॥ शत्रुने इम समावतां, जरतां पुण्य जंमार ॥ बहु प्राणीने बोधतां, स फल करे अवतार ॥ १ ॥ प्रबल करी निज पक्षने, खल पमाडी क्षीण ॥ अंत समे लहि ढूकडो, तनू जाणी बल हीण ॥ २ ॥ सर्वगाथा ॥१४४२॥

॥ ढाल ब्याशीमी ॥

॥ कुंतारे माता इम जणे ॥ ए देशी ॥ नमो रे नमो निर्ग्रंथने, एहवा जे आचारी रे ॥ घणा काल लगें आदर घणे, तार्यां बहु नर नारी रे ॥ ॥ न० ॥ १ ॥ संलेपणा सो साधुयें, विहुं जेदें कीधी रे ॥ द्रव्य अने जावें थकी, अठे जेह प्रसिद्धि रे ॥न०॥२॥ तव गीतारथ तपोधने, पुरथी ते प रवरिउ रे ॥ पर्वतनी कम्हणे जई, संथारो तिणे करिउ रे ॥न०॥३॥ प्रथम शिला तल पूंजिने, फासुनो संथारो रे ॥ पाथरीने ते ऊपरें, मन करि एक तारो रे ॥न०॥४॥ बेसी पर्यंकासने, कर संपुट धरी सीसे रे ॥ अमाडीने ऊचरे, शक्रस्तव सुजगीसे रे ॥ न० ॥ ५ ॥ नमी सहु जिनराजने, शास नपतिनें सोइ रे ॥ प्रणमीने पूठे नमी, गुरुने गुणवंत जोइ रे ॥ न० ॥ ॥६॥ पचरव्या ते तो पण पठे, पापस्थान अढार रे ॥ प्रेमेंसुं पचखे फरी, नियमें चार आहार रे ॥ न० ॥ ७ ॥ प्रतिबंध तनुनो परिहरि, अतिचार आलोइ रे ॥ आहार सवि पचखे वलि, हिए हरषित होइ रे ॥न०॥ ८ ॥ पादोपगमन अणसण, लेइने गह गहितो रे ॥ देव मनुष्य तिर्यंचना, उप सर्ग ते सहितो रे ॥ न० ॥ ९ ॥ एक मास तांइ इणि परे, अणसण आ राधी रे ॥ बेंतालीस चमासा लगें, शुद्ध संयम साधी रे ॥ न० ॥ १० ॥ स माधि कालें करि थयो, सातमें सुर लोगें रे ॥ दिव्य ते महर्द्धिक देवता, संयम फल योगें रे ॥ न० ॥ ११ ॥ उत्कृष्टो तिहां आउखो, सागरोपम सोल रे ॥ जोगवे एके आगलुं, करतो रंगरोल रे ॥ न० ॥ १२ ॥ उदय

वदे इम व्यासीमी, ढाल ए में बोली रे ॥ संसारमां धर्म सार छे; जुर्ज अंतर खोली रे ॥ न० ॥ १३ ॥

॥ दोहा ॥

॥ तीर्थे तीर्थंकरनी तिहां, भगति करी तिणे भाव ॥ पुण्योदय पोढो कीयो, मुनिने सीस नमावि ॥१॥ सुरपदनां सुख भोगवी, तिहांथी चवि ने तेह ॥ कमल पुर नामें पुरी, वारू पूर्व विदेह ॥ २ ॥ श्रीचंद्र नामें नृप तिहां, कामिनी कमलातास ॥ अंगज तेहनो ऊपनो, भानु नामें ते खास ॥ ३ ॥ पूर्व परें बाल कालथी, धरतो तिमहिज धर्म ॥ पुण्योदयने पेखतो, करे सदा शुभ कर्म ॥ ४ ॥ अनुक्रमें भोगवी राज सुख, पुत्रने आपी पाट ॥ दीक्षा ग्रही तिणें मोह दल, दूर कर्युं दह वाट ॥ ५ ॥ संयम सूधुं पा लिने, अंते अणसण धारि ॥ नवमें ग्रैवेकें सुर थयो, ते भानु अणगार ॥ ६ ॥ त्रीस सागरोपम आउखो, पाली पूर्व विदेह ॥ पदम पुरें तें सुत थ यो, सीमंतक नृप गेह ॥ ७ ॥ राजवियां सिरसेहरो, इंद्रदत्त अभिधान ॥ राज्य तजी संयम भजे, तेमहिज ते तिणि थान ॥ ८ ॥ क्षीण पमाडी मो ह दल, पुण्योदय करि पुष्ट ॥ अंते अणसण ऊचरि, दूर कर्या अरि दुष्ट ॥ ९ ॥ मरण समाधें ते मरी, सर्वार्थ सिद्धि विमान ॥ अहमिंद्र सुरपणें ऊपनो, महर्द्धिक महा रिद्धिवान ॥ १० ॥ सर्व गाथा ॥ १४६५ ॥

॥ ढाल त्र्यासीमी ॥

॥ धण समर्थ पीउ नान्हडो ॥ ए देशी ॥ सकल मंगल जय दायिनी, चारित्र धर्म राजानी सेव ॥ भुवन भानु कहे केवली, फले तेहना नृप सु ण तुं देव ॥ स० ॥१॥ एहज गंधिलावती विजयमां, इंद्रपुरीथी अधिक अ नूप ॥ चंद्रपुरी नामें पुरी, अकलंक नामें राजा तिहां भूप ॥ स० ॥ २ ॥ सकल भूपाल मौलि श्रेणे, पूजित छे जस पदअरविंद ॥ सुभग समृद्धि सत्तें करी, अवनि तल ऊपे जिम इंद्र ॥ स० ॥ ३ ॥ जे श्रीजिनपदपंकजें, मधुकरनी परें रहे मगन्न ॥ देवी छे तेहने सुदर्शना, शीलशुं जेहने लागी लगन्न ॥ स० ॥ ४ ॥ धवल समकितने धारिणी, सुपनमांहि ते देखी सिंह ॥ उज्वल शसिसो एकदा, वदन प्रवेश करंतो अबीह ॥ स० ॥ ५ ॥ ते इं द्रदत्त अणगारनो, तिहांथी जीव चवी ते तास ॥ उदरें आवी ऊपनो, पु त्र पणे पहोती मन आस ॥ स० ॥ ६ ॥ तव सा हरखी सुपन ते, जगत

पतिने भाखे जाय ॥ सुपन पाठक तेडी तदा, परमारथ तस पूछे राय ॥ स० ॥ ७ ॥ तनुज होसे तुम ते कहे प्रंभु, ए उत्तम सुपन पसाय ॥ कुल दीवो कुल केसरी, अखंम भूमंमल भोगी राय ॥ स० ॥ ८ ॥ तव तूठो चे नृप तेहने, पारितोषिक दान प्रचूर ॥ विदाय कस्या संतोषिने, अग्रम हीपी आनंद ऊर ॥ स० ॥ ए ॥ सुखें गर्न ते निर्वहे, देवपूजा दानादि अनेक ॥ मोहोला जे जे ऊपजे, पूरे नृप ते एके एक ॥ स० ॥ १० ॥ प्रसवे सा पूरे दिनें, पुत्र रतन्न पुंज समान ॥ आवासने उद्योततो, तरणि परें तपे तेजवान ॥ स० ॥ ११ ॥ हरखें हीए कुलरावती, महोटो मुक्ताफलनो हार ॥ उल्लसते उरें दोडीने, चंड धारा दासीयें ते वार ॥ स० ॥ १२ ॥ वसुधापतिने वधामणी, तनु जन्म्यानी दीधी तिणें जाय ॥ पहोचे सात पेढी लगें, दान तेहवुं तस दीधुं राय ॥स०॥१३॥ नगरमांहि ते नव नवा, मादलना थाए धोंकार ॥ आणंद रंग वधामणां,उत्सव तिहां थाए अपार ॥ स० ॥ १४ ॥ कनकादिक वहु दान चे, वंदीवानना ढोडे वंध ॥ महापूजा जिन मंदिरें, नेहसुं रचावे नरिंद ॥ स० ॥ १५ ॥ खान पानने दानसुं, गीत गान अति तान मान ॥ राजाने पुरजन सवें, मुदित कस्यो देई वहु मान ॥ स० ॥ १६ ॥ मानने माप वधारियां, राज कर मेल्या महाराज ॥ उदयरतन कहि ढाल ए, ब्यासीमी वोली शुन्न साज ॥ स० ॥ १७ ॥

यतः ॥ जोगी दाता शुचिर्दक्षः, स्थूलगंभोमहाबलः ॥ अर्थवानल्पज्ञापीच, स्थिरचित्तोजनप्रियः ॥ १ ॥ परोपकारी कांतश्च, बहुपुत्रः शौर्यसंयुतः ॥ एवं गुणगणोपेतो,वृषेजातो जवेन्नरः ॥२॥ समानां च शतंजीवेत्,पंचविंशति कं यदि ॥ नृमृतश्चतुष्पदातस्य, मरणं रोहिणीबुधे ॥३॥ सर्व गाथा ॥ १४ए३ ॥

॥ ढाल चोरासीमी ॥

॥ कोई पत्र लावे दीनानाथनुं ॥ ए देशी ॥ जूर्ज पुण्यतणां फल प्राणियां, जव फंद जे फेडे ॥ पुण्यें ग्रह होय पाधरा, वली वैरी न विहडे ॥ जू० ॥ १ ॥ बारें राशिनां फल बहु, जाष्यां जलि जांतें ॥ अवनिपतिने इणि परें, गणकें गुणवंतें ॥ जू० ॥ २ ॥ महाविदेह क्षेत्रमां, रूपनो ते माटे ॥ कोडि पूरवनो आउखो, लहो तेहनुं सुघाटे ॥ जू० ॥ ३ ॥ वलि ते जोसी नृपने वदे, बारे राशिनां बहुलां ॥ फल जाख्यां बे आगमें, समजो ए सघलां ॥ जू० ॥ ४ ॥ शीखव्यां ते सुशिष्यने, सर्व जे शुज टाणें, व्याप्या तिहांथी विश्वमां, तेह काल प्रमाणें ॥ जू० ॥ ५ ॥ यतः ॥ ज्योतिषं निर्निमित्तं च, यच्चान्यदपि तादृशः ॥ अतींद्रियार्थं तच्छास्त्रं, सर्वं सर्वज्ञपूर्वकं ॥ १ ॥ ततोत्रयोव्यजिचारंःस्यात्केवलं नरदोषतः ॥ विजागं हि न जानीते, शास्त्रस्याल्पश्रुतोनरः ॥२॥ पूर्व ढाल ॥ जन्म समय जोतां सही, बालक ए बलीउ ॥ होसे जाचा हीरा जिस्यो, अनमी अति कलीउ ॥ जू० ॥ ६ ॥ जाण घणुं जोसी तुमे, सदा रहो ताजा ॥ सत्य कहो संशय विना, रीजी कहे राजा ॥ जू० ॥ ७ ॥ सर्वज्ञ विण संदेह विना, साचूं कुण जाखे ॥ अज्ञानीनुं जच्युं, कोई कबूल न राखे ॥ जू० ॥ ८ ॥ ज्ञानी विना ए ज्ञाननो, निर्वाह किम थाय ॥ सर्वज्ञ विण संसारमां, किणें सत्य कहेवाय ॥ जू० ॥ ए ॥ प्रेमें इम प्रशंसिने, दान जोसीने दीधुं ॥ राजाएं महा रीजनुं, लक्ष्मीफल लीधुं ॥ जू० ॥ १० ॥ दानमानें सनमानिने, वीसर्ज्या तेह ॥ उदय वदे कही ढालमें, चोरासीमी एह ॥ जू० ॥ ११ ॥

॥ दोहा ॥

॥ वली कुमर ते बालनुं, निरुपम दीधुं नाम ॥ सहु सायें शुज मुहूर्तें, सानंदें पुरस्वाम ॥ १ ॥ पांच धावे पाली जतो, वाधे दिन दिन वीर ॥ पुण्योदयना पूरथी, शिशु ते महा सुधीर ॥ २ ॥ बालपणाथी बहु थयो, सदबोधशुं तसु संग ॥ समकित तो सायेज बे, पूरण पुण्य प्रसंग ॥ ३ ॥

सकल कला साधी सवल, क्षमा गुण न लहे कोन ॥ गुरुता अने गंनीरता, थिरता थई थिर थोन्न ॥ ४ ॥ सर्वगाथा ॥ १५१० ॥

॥ ढाल पंच्याशीमी ॥

॥ आसाढो धुर उनह्यो ॥ ए देशी ॥ योवन वय ते पाम्यो यदा, वाध्यो तव तनु वानो रे ॥ सुजाण सूधा जन संगनो, तेहने लागो तानो रे ॥ ॥ यो० ॥ १ ॥ स्नात्र महोत्सव नित करे, विधिसुं सुणे गुरुवाणी रे ॥ देहरे देव पूजे सदा, अंगें उलट आणी रे ॥ यो० ॥ २ ॥ शासननी उन्नति करे, रथ यात्रा गीत गानो रे ॥ नृत्य करावे नित नवां, दीनने दीए दानो रे ॥ यो० ॥ ३ ॥ चारित्र धर्मना सैन्यसुं, अति परिचय थयो तासो रे ॥ बीहीकें निज बल लेईने, मोहें लीधो वनवासो रे ॥ यो० ॥ ४ ॥ राग द्वेष दूरें रहे, मचकी मारी क्रोधें रे ॥ शैलराज न जुए साहमुं, शठता कूप ने शोधे रे ॥ यो० ॥ ५ ॥ सागर खारे सागरें, गयो जोइ गति माठी रे ॥ विषय पंचेनी वासना, निपट जाये ते नाठी रे ॥ यो० ॥ ६ ॥ कृपणता कोपी घणुं, नय पामी जाए नागी रे ॥ अविनयें कचालो नख्यो, लालचने बीहिक लागी रे ॥ यो० ॥ ७ ॥ विनय प्रशम मृडुने ऋजु, संतोष आदि सुरंगें रे ॥ गांनीर्य स्थैर्य शौर्यादिक, गुण ए वस्या तसु अंगें रे ॥ यो० ॥ ॥ ८ ॥ कीरति प्रसरी दशो दिशें, मात पिताने मोहो रे ॥ अतिशय ते उपर रूपनो, क्षण न खमाये विठोहो रे ॥ यो० ॥ ए ॥ घर घर गुण गीत तेहनां, कुलवधु गाये केई रे ॥ केई सुरी केई किन्नरी, हीए हर्ष धरेई रे ॥ यो० ॥ १० ॥ नाट चारण केई नणे, गुण जेहना गह गाटो रे ॥ सुधी जनने मुखपण केई, बोले तस गुण पाठो रे ॥ यो० ॥ ११ ॥ पंचाशीमी ढालमां, फेरा लाख चोराशी रे ॥ उदय वदे ते नवि फरे, मति जेणें जिनमतें वासी रे ॥ यो० ॥ १२ ॥

णि स्थान ॥ ३ ॥ सकल कलायें शोभती, सुमुखी सकल सुरम्य ॥ ऊतारा नृपें आपिया, रहेवा तेहने रम्य ॥ ४ ॥

॥ ढाल छयासीमी ॥

॥ अवधें आवियें महाराज ॥ ए देशी ॥ व्रतविषे मन वासना, बली कुंमरनी बलवंत ॥ वली तिणें विवाहनी, कांई चाह न धरे चिंत ॥ तव इम कहे मातने तात ॥ १ ॥ सुदर्शना तसु मावडी, अकलंक राजा आप ॥ अभिप्राय कुमरनो उलखी, जई कहे एम जवाप ॥ त० ॥ २ ॥ खांतें ते खोला पाथरी, खरे डखें पडदो खोल ॥ एकांतें अंजलि बांधिनें, बोले ते एहवा बोल ॥ त० ॥ ३ ॥ मावीत्र धर्मनुं मूलतो, जेहना उलींगल न थवाय ॥ पुत्रनुं प्रीछे अछे, इम जंपे श्रीजिनराय ॥ त० ॥ ४ ॥ मावित्र जो करी लेखवे तो, कह्युं अमारुं एक ॥ मान तुं मन कोमल करी, हठीला न थईएं छेक ॥ त० ॥ ५ ॥ तुज गुणें आकर्षीथकी, बहु राजसुता गुणरास ॥ मात पितानी मोकली, आवीछे आपणे वास ॥ त० ॥ ६ ॥ स्वयंवरा ए सुंदरी, नाजुक नवले वेश ॥ इहां आवी जो पाछी फरे, तो ऊजड थाये देश ॥ त० ॥ ७ ॥ अवला निराशें ए वली, तो अमने आरति होय ॥ आंटी तजी तूं तेवती, एक वार ते छंचो जोय ॥ त० ॥ ८ ॥ कह्युं अमारुं जो करो, तो ह रिणाक्षीयें हाथ ॥ ग्रहीने मन मेलसुं, सुख भोगवो सहु साथ ॥ त० ॥ ए ॥ ए वापडी इहां चालिने, आवीछे धरी ऊमेद ॥ इछा पूरो एहुनी, भोगवी सुख बहु भेद ॥ त० ॥ १० ॥ अमने पण सुख ऊपजे, जो जोइएं ताहरुं राज ॥ पछी पाट आपी पुत्रने, साधजे परभव काज ॥ त० ॥ ११ ॥ मा वापनुं मन राखतां, अवगुण तुजने रेख ॥ इहां ऊपजतो नथी, दिलमां वि चारी देख ॥ त० ॥ १२ ॥ छयासीमी ए ढालमां, उदयरत्न भांपे एम ॥ उ सिंगल माय बापना, कहो न थवाएं केम ॥ न० ॥ १३ ॥

॥ दोहा ॥

॥ वली कुंमर तव चिंतवे, अहो ए मोटो बंध ॥ ए महारा मा बापनो, ए कज हूं तूं नंद ॥ १ ॥ जो उलंघूं आण तो, आरति लहे अत्यंत ॥ तिणें मुज मननी कामना, हवणां न होवे तंत ॥ २ ॥ पूरुं तिणे प्रेमेंकरी, हवणां ए हुंती हुंस ॥ छूटाये नहि जे विना, सो खांउं जो सुंस ॥ ३ ॥ भोग करम विण भोगवे, योगनो न मिले योग ॥ सरोगने सरस अहारनो, जिम न

वटे संयोग ॥ ४ ॥ इम मनमां आलोचिने, मात पितानो मोद ॥ पूरो ते पाम्यो तिणें, वधू वरी सविनोद ॥ ५ ॥ वारु विवाह उत्सव कस्यो, पुर जन वाधी प्रीत ॥ आनंद सहुने ऊपनो, रूडी देखी रीत ॥ ६ ॥

॥ ढाल सत्यासीमी ॥

॥ नवो पलेवडो रे ॥ ए देशी ॥ तव अकलंक ते राजिए रे, सुंदर जोई शुभनारी रे ॥ जो जो पुण्यथी रे ॥ कुमरनें काजें कराविया रे, मोहल घणा मनोहार रे ॥जो०॥१॥ पुण्यथी परिघल भोग, पुण्यथी सुखसंयोग, पामी जोग, रसिउं भोगवे रे ॥ एक पासें वहे आपगा रे, एक पासें आराम रे ॥जो०॥ क्रीडा गिरि सर वापियें रे, उंपे ते थल अभिराम रे ॥ जो० ॥ २ ॥ वारु वृक्षनी आवली रे, दीसे गुहिर गंभीर रे ॥ जो० ॥ आगल कारंज ऊछले रे, नीझरणें झरे नीर रे ॥ जो० ॥ ३ ॥ सुंदरीना सोहामणा रे, बिहुं पासा प्रासाद रे ॥ जो० ॥ विचे बेठकनो बंगलो रे, विमानसुं मांमे वाद रे ॥ जो० ॥ ४ ॥ पोपट बोले पांजरें रे, हेठे हींमोलाखाट रे ॥ जो० ॥ ऊपर मोतीनां झूंबखां रे, चंडुएं शुभ थाट रे ॥ जो० ॥ ५ ॥ बत्रीस बद्ध तिहां बेसीने रे, निरखी नाटारंभ रे ॥ जो० ॥ नित नवलां सुख भोगवे रे, नित नवला अचंभ रे ॥ जो० ॥ ६ ॥ सुरना जहेवी साहेबी रे, भोगवे जे भरपूर रे ॥ जो० ॥ पूर्व भवना पुण्यथी रे, नित नित चढते नूर रे ॥ ॥ जो० ॥ ७ ॥ कुवलयचंद्र केवली कने रे, तात देई तेहने राज रे ॥जो०॥ महाव्रत लेई मुगतें गयो रे, सास्यां आतम काज रे ॥ जो० ॥ ८ ॥ माता पण महाव्रत आदरी रे, पाली पहोती सुरलोक रे ॥ जो० ॥ वलि राजा राज भोगवे रे, पुण्यनो करे बहु पोप रे ॥ जो० ॥ ए ॥ अनमी आण मनाविआ रे, सीमाडा सामंत रे ॥ जो० ॥ चालीस लाख पूरव लगें रे, राज करे ते भंत रे ॥ जो० ॥ १० ॥ वीश लाख पूरव बोलियां रे, कुमर पणे निरधार रे ॥ साठलाख पूरव सहु मली रे, इम बोल्या उदार रे ॥ ॥ जो० ॥ ११ ॥ दया धर्म दीपाविउं रे, जैन शासन तिणे जोर रे ॥ जूना

भंग रे ॥ जो० ॥ १४ ॥ भोग तिणे एवा भोगव्या रे, देवने जे दुर्लभ रे ॥ जो० ॥ राज करतां पण राजिये रे, दिलमां न धस्यो दंभ रे ॥ जो० ॥ ॥ १५ ॥ उदय रतन इम ऊचरे रे, सत्यासीमी ढालें वयण्ण रे ॥जो० ॥ बूऊावतां बूजे सदा रे, पण सुं बूजे वयण्ण रें ॥ जो० ॥ १६ ॥

॥ दोहा ॥

॥ चौदशनें दिन एकदा, उपवासें ते तेण ॥ सांऊ समे जिन पूजिने, सऊाय करी हरखेण ॥ १ ॥ सामायक पोसह ठवी, भावन भावतां भूरि ॥ रजनी विरामें राय ते, सदबोधादि पूरि ॥ २ ॥ चित्तमांहि इम चिंतवे, इतर परें संसार ॥ केवल विषयने कारणें, में हास्यो अवतार ॥ ३ ॥

॥ ढाल अठ्यासीमी ॥

॥ घणो प्यारो घणो प्यारो प्राणथी तुं प्रजुजी ॥ ए देशी ॥ सुर भोगें सुरे भोगें जे उभगी नहीं जी, तुछ नरनें तुछ नरने भोगें ते किम एह हो ॥ पूराये पूराये विषयनी वासना जी, अहो एतो अहो एतो कहेवाये अछेह हो ॥ १ ॥ जम वारो जम वारो अहो अहेलें गयो जी, संसारें संसारें नहीं कांई सार हो ॥ भ्रांते जे भ्रांतें जे रम्य भासे अछे जी, देहादि देहादि स्वजन परिवार हो ॥ ज० ॥ २ ॥ पण ते तो पण ते तो आखर अनित्य छे जी, वाघणनें वाघणने मुखें जिम कोई हो ॥ पेसीने पेसीने वांछे जीववुं जी, पण केतो पण केतो जीवे सोइ हो ॥ ज० ॥ ३ ॥ मूढ मनसुं मूढ मनसुं माने मोहेंकरी जी, यौवनने यौवनने रूप अनूप हो ॥ पण दुष्ट पण दुष्ट रोगतणे वसें जी, क्षणमांहि क्षणमांहि थाय ते कुरूप हो ॥ ज० ॥ ४ ॥ सुरवधुनां सुरवधुनां जे मन रीऊवे जी, तेहने न करे तेहने न करे चंमाली कबूल हो ॥ जराने जराने रोगना योगथी जी, तेहवुं तनु तेहवुं तनु थाए सूल हो ॥ ज० ॥ ५ ॥ वाह्यदष्टें वाह्यदष्टें जे प्यारी लागे वहू जी, कमलारो कमलारो कोडी उपाय हो ॥ इछंतां इछंतां आवी नवि मिले जी, जो मले तो जो मले तो जोतांमां जाय हो ॥६॥ छते तो छते तो सुख नहीं तेहवुं जी, वित्त जाते वित्त जाते जेहवुं दुःख थाय हो ॥ जो रहे तो जो रहे तो आखर पण छांमवुं जी, तेह धनने तेह धनने काजें कुण धाय हो ॥ ज० ॥ ७ ॥ राज्य पदनो राज्य पदनो पण मद जे करे जी, अविवेकें अविवेकनुं विलसित तेह हो ॥ नृप केई नृ

प केई नीख मागे घणा जी, जिहारे जिहारे आवे पुण्यनो नेद हो ॥ज० ॥ ८ ॥ जोरालो जोरालो होय जे जेहथी जी, ते तेहने ते तेहने गंजे तत्काल हो ॥ जगें मल्ल जगें मल्ल गजा गजनी परें जी, एक एकनो एक एकनो जाणो काल हो ॥ ज० ॥ ए ॥ जावजीव जावजीव जो कोई पुण्यथी जी, राज हुंति राज हुंति ज्रष्ट न थाय हो ॥ उत्कृष्टो उत्कृष्टो तो आरंन करी जी, सातमी ते सातमी ते नरके जाय हो ॥ ज० ॥ १० ॥ राज काजे राज काजे केई रणमां मरे जी, रंगीला रंगीला जे राजान हो ॥ राज तेहने राज तेहने कांई काजें आवे नहीं जी, तो तेहनुं तो तेहनुं कीजें शुं मान हो ॥ ज० ॥ ११ ॥ सुत बंधु सुत बंधु वधू आदे सहू जी, परिकर ले परि परिकर ले माहरी पूर हो ॥ आणमानी आणमानी सदा चाले अले जी, पण नली पण नली ए बांधी मूठ हो ॥ ज० ॥१२॥ आपगरजें आपगरजें सहु आवी मिले जी, परगरजें परगरजें न मंमे को पाय हो ॥ कुण माता कुण माता पिता नाई नारजा जी, वेकारें वेकारें ए सवि वद लाय हो ॥ज०॥१३॥ जन्म जरा जन्म जरा अने यम चोटथी जी, कांई राखी कांई राखी न सके कुटंब हो ॥ तेहने काजें तेहने काजें विविध विटंबनाजी, कुण सहे कुण सहे करे कुण दंन हो ॥ ज० ॥ १४ ॥ कवि उदय कवि उदय रतन कहे एटले जी, अठ्यासी अठ्यासीमी थई ढाल हो ॥ केवली ने केवली ते जुवनजानु जणे जी, चंडमौलि चंडमौली सुण नूपाल हो ॥१५॥

॥ दोहा ॥

॥ सरस गीत श्रवणे सुणुं, रमणिक जोउं रूप ॥ नला गंध नित नोगवुं, रस आस्वाडुं अनूप ॥ १ ॥ फरस सुकोमल फरसियें, ए पंच विषय सुख देखि, मान करे को मूढ नर, ते पण मोहविशेष ॥ २॥स०॥१५८॥

ते विषयसुखने, निखर जे निदान रे ॥ रे० ॥ ३ ॥ विषयने वश वेर परथी, ऊपजे अनेक रे ॥ रे० ॥ लोक पण लख गमे नंमे, नूप दंमे ठेक रे ॥ रे० ॥ ४ ॥ अण मलते ऊचाट थाय, अरति उपजे अंग रे ॥ मरणांत पण लहे आपदा, बहु पडया विषयने संग रे ॥ रे० ॥ ५ ॥ मृग मीन मधुकर अने मयगल, परवशें पतंग रे ॥ एक एक इंडि रसें आतुर, अंगनो करे नंग रे ॥ रे० ॥ ६ ॥ वंछित कोइक लहे विरलो, पामीने पण प्राप्ति रे ॥ रोग वियोग ने जरा योगें, नोगवी सके नाहिं रे ॥ रे० ॥ ७ ॥ पुण्यवलें जो विषय सुखनो, पूरो पामी साज रे ॥ अवतार आखो अनुनवे, कोई चक्री के महाराज रे ॥ रे० ॥ ८ ॥ तो मरी ते तेहने विपाकें, पामे नरक निवास रे ॥ ते माटे ठे नेट निखरा, विषयना विलास रे ॥ रे० ॥ ए ॥ इम बीजी पण अनेक वस्तु, रम्य नासे तेह रे ॥ आखर ते अनित्य सघली, ठटकि दाखे ठेह रे ॥ रे० ॥ १० ॥ प्रेम दंमने प्रहारे मूर्छित, राजमदें उन्मत्त रे ॥ विषयविषे गहिरे थके, वैनवरसें मयमत्त रे ॥ रे० ॥ ११ ॥ आज लगें में एवडी कांई, लही न कालनी लात रे ॥ अवतार अहिलें नीगम्यो, वाउल दीधी बाथ रे ॥रे०॥१२॥ उदय रत्न कहे ए नेव्यासीमी, सुणो श्रोता ढाल रे ॥ धर्मनो दृढ राख जो, जिम नाजे नव जंजालरे ॥रे०॥१३॥

॥ दोहा ॥

॥ कुवलय चंड ते केवली, जिणे तार्यो मुज तात ॥ हवे जो नेटुं तेहने, तो साधुं परमार्थ ॥ १ ॥ आतम चिंता इणि परें, करतां थयो प्रजात ॥ पोसहादि व्रत पारी तव, नारी ने नरनाथ ॥ २ ॥ देव पूजा दिल रीजीने, सिंहासनें ते राय ॥ आस्थान सना मंमप जई, वेगो जडी सनाय ॥ ३ ॥ कुवलयचंड पण केवली, वलि नृपनो अनिप्राय ॥ उलखीने आव्या वही, तिणि अवसर तिणि गाय ॥ ४ ॥ कनकमय पंकज ऊपरें, मृगरमण उद्यान ॥ परखदें वींटया केवली, वेगा ज्ञान निधान ॥ ५ ॥ सुर नर तिहां आव्या वहु, केवली कहे उपदेश ॥ वलि राजा पण तिणे समे, पहोतो तेणे प्रदेश ॥ ६ ॥ अनिगम पांचे सांचवी, त्रण प्रदक्षिण देह ॥ वंदीने वेगो तिहां, सुणवा धर्म सनेह ॥ ७ ॥ सर्व गाथा ॥ १६०० ॥

॥ ढाल नेवुंमी ॥

॥ देवजी श्गलाथी चूडो वापरीउ ॥ ए देशी ॥ श्रोताजी ॥ धर्मनी देशना

सांनली, प्रणमी मुनिना पाय रे ॥श्रो०॥ पूढे अवसर पामिने, कर जोडी वलि राय रे ॥ १ ॥ श्रो० ॥ केवलियें ते नृपनुं मन हरीउं ॥ ए आंकणी ॥ प्रनुजी ॥ नगवन् में नव हारीउं, केवल विषयने काज रे ॥ प्र० ॥ शरणे आव्यो हवे तुमतणें, जाणी तारण तरण जिहाज रे ॥ के० ॥ २ ॥ प्र० ॥ शेष रह्यो जे थाकतो, ए माहरो अवतार रे ॥ प्र० ॥ सफल थाये हवे जे हथी, तेहवो कहो प्रकार रे ॥ प्र० ॥ ३ ॥ रा० ॥ केवली कहे तव तेहने, एहज तुं नव एक रे ॥ प्र० ॥ हार्यो नथी सुण पूरवें, हार्यो ढे अनेक रे ॥ के० ॥ ४ ॥ राजाजी ॥ कहेतां कहेवाए नहीं, नय उपजावे नूर रे ॥ रा० ॥ अचरज कारी अति घणुं, जिम दरियानुं पूर रे ॥ के० ॥ ५ ॥ रा० ॥ वलि राजा तव बोलिउ, स्वामी सुणो एक वात रे ॥ रा० ॥ सांनलवा रतुं अवुं, ते कहो महारो अवदात रे ॥ के० ॥ ६ ॥ रा० ॥ केवली कहे सुण राजिया, कोडी जीने पण कोय रे ॥ रा० ॥ कहेतां न पामे पारने, आयु पण पूरुं होय रे ॥ के० ॥ ७ ॥ रा० ॥ अचरज जो तुजने अढे, तो सांनल थई सावधान रे ॥ रा० ॥ कहुं कांइक संक्षेपिने, अवदात तुज अ समान रे ॥के०॥८॥रा०॥ श्रोताजी ॥ उदयरतन कहे एटले, नेवुंमी निर धार रे ॥श्रो०॥ ढाल थइ पण धर्मनो, आगे सुणो अधिकार रे ॥के०॥ए॥

॥ ढाल एकांणुमी ॥

॥ हो रे वणजारीडा ॥ ए देशी ॥ इणि परें कीधी रे भवनी आवली, कुलनी भमतां बहु कोडि हो ॥ हो रे सुण राजीया ॥ चोरासी लख जीवा योनिमां, पग पग पाम्यो तूं खोड हो ॥ १ ॥ हो० ॥ श्री निलयनगरें तूं थयो एकदा, वैश्रमण नामें वणीक हो ॥ हो० ॥ धर्मनी उपनी तिहां धीषणा, श्लोक सुणी एक रमणीक हो ॥ २ ॥ हो० ॥ यतः ॥ स्वजनधनभुवनयौवन, वनिता तत्वाद्यमनित्यमिदमखिलं ॥ ज्ञात्वापत्राणसहं, धर्म्म शरणं भजत लोकाः ॥ १ ॥ कुधर्मनी बुद्धि तव आवी फरी, त्रिदंडिउ तापस कीध हो ॥ हो० ॥ एकेंड्रियादिकमां वली अवतारीने, दुःख बहुलां मोहें दीध हो ॥ ३ ॥ हो० ॥ पुद्गल अनंता परावर्त्या वली, नरभव लही अंतरालें हो ॥ हो० ॥ कुधर्म बुद्धिने उपदेशेंकरी, जिहां तिहां पड्यो जंजालें हो ॥ ४ ॥ हो० ॥ आलस उंघादिक सुभटें मली, अलगो नाख्यो उवेडि हो ॥ हो० ॥ तिमज अनंता पुदगल परावर्त्या, कुदृष्टि लागी तिहां केडि हो ॥ ५ ॥ हो० ॥ विजय वर्द्धनपुरें नंदनने भवें, आयु टालिने सात हो ॥ हो० ॥ कर्म ते छेद्यां यथाप्रवृत्तकरणें, खडगें तिहां करी ख्यात हो ॥ ६ ॥ हो० ॥ एक कोडाकोडि सागरनी स्थिति, साते रह्या ते शेष हो ॥ हो० ॥ ग्रंथी भेद लगें पहोतो जई, पण मोहें मेलावी अशेष हो ॥ ७ ॥ हो० ॥ अश्रद्धानने राग द्वेषादिकें, पाछो वाली तिणें ताल हो ॥ हो० ॥ निगोदादिकमां तिमहिज फेरव्यो, कह्यो न जाये ते काल हो ॥ ८ ॥ हो० ॥ ते वली मलयपुरें विश्वसेनने, भवें करी ग्रंथी भेद हो ॥ हो० ॥ अपुरव करण खडगतेणे वलें, आगें वली धरी उमेद हो ॥ ९ ॥ हो० ॥ अनिवृत्तिकरण दंभ उसारीने, मोहादिक वेरी महा मल्ल हो ॥ हो० ॥ सम्यग् दर्शन मंत्री भेटीउं, अवसर पामी अवल्ल हो ॥ १० ॥ हो० ॥ कुदृष्टि रागें तव दीधो दगो, सुभगभवें वली सोय हो ॥ हो० ॥ स्नेह रागें वली समकित हारिउं, जुगतें विचारी तुं जोय हो ॥ ११ ॥ हो० ॥ विषयरागें वली सिंहतणें भवें, जिनश्रीएं द्वेष विशेष हो ॥ हो० ॥ ज्वलनसिख क्रोधें कुवेरें मानथी, पदमें माया वलेण हो ॥ १२ हो० ॥ सोमदत्त लोभें एम अनेक भवें, ताहरे जीवें राजन्न हो ॥ हो० ॥ मोह राजाना सुभट तणे छलें, हार्युं समकित रतन्न हो ॥ १३ ॥ हो० ॥ देशविर

ति हारि हिंसाएं सुंदरें, मणिचूड मृषावाद हो ॥ हो० ॥ सोमदत्तें अदत्ता दानथी, दत्तें मैथुन उनमाद हो ॥ १४ ॥ हो० ॥ धन बहुल सेठें परिग्रह ने पूरें, रोहिणियें विकथायें हो ॥ हो० ॥ देशविरति लही असंख्य भवें, हारी तें मोह महीमायें हो ॥ १५ ॥ हो० ॥ अरविंदने भवें सर्वविरति हारी, क्रोधने मान पसायें हो ॥ हो० ॥ चित्रमतियें विषयसुख लालचें, पाम्यो विजय सेन मूर्छायें हो ॥१६॥हो०॥ संयम ने वली चौद पूरवथकी, पुंडरीकने भवे उंघें हो ॥ हो० ॥ पाडी अनंता पुदगल परावर्तन, भ माड्यो भवसंगें हो ॥ १७ ॥ हो० ॥ मोहादिकें मलीने एणि परें, तुजने वार अनंत हो ॥ हो० ॥ भवमांहे भमाड्यो फरी फरी, कहेतां न आवे तसु अंत हो ॥ १८ ॥ हो० ॥ वली सिंहरथने भवें संयमवरी, अस्खलि त तेह आराधी हो ॥ हो० ॥ सुरलोकें महाशुक्रे सुर थयो, पुण्यदिशा ति हां वाधी हो ॥ १९ ॥ हो० ॥ भानुभवें संयम शुद्ध साधिने, अणसणे म रिने समाधि हो ॥ हो० ॥ नवमे ग्रैवेयकें वली सुर थयो, तिहां पण पु ण्योदय वाधी हो ॥ २० ॥ हो० ॥ वली इंद्रदत्त महाराजा भवें, संयम साधि सुविधाने हो ॥ एकावतारी सुर पद पामिउं, सर्वार्थ सिद्धि विमाने हो ॥ २१ ॥ हो० ॥ तिहांथी चवीने इहां तुं भूपनो, वली राजा बलवान हो ॥हो०॥ उदय वदे एकाणुंमी ढालमां, सुणजो थइ सावधान हो ॥२२॥हो०

॥ ढाल बाणुंमी ॥

॥ गोरीके नयन वडे वडे रें लाला ॥ ए देशी ॥ कथन ए केवलीनां सुणी रे लाला, हृदयमां उपनो राग ॥ हो रे लाला ॥ अवसर ए वली दोहिलो रे लाला ॥ इम चिंते महानाग ॥ हो० ॥ १ ॥ मोदे महाबल राजा, मन रीझी मोहने रे, मोक्ष देवा संयम पंथे धस्यो ॥ टेक ॥ इम चिंतिने उतावला रे लाला, जेष्ट सुत नयसार ॥ हो० ॥ रति सुंदरी राणी तणो रे लाला, जण्यो तेडी तिणिवार ॥ हो० ॥ मो० ॥ २ ॥ राज नलाव्युं तेहने रे लाला, सहु मंत्रीनी साख ॥ हो० ॥ पोते महापूजा रची रे लाला, पूरिया याचक अनिलाष ॥ हो० ॥ मो० ॥ ३ ॥ अमारि पडहो वजडाविने रे लाला, महामहोत्सव मंमाण ॥ हो० ॥ व्रत लेवाने संचस्यो रे लाला, रंगनरें महाराण ॥ हो० ॥ मो० ॥ ४ ॥ सामंत पुरजन मंत्रवी रे लाला, पांचशें लेई साथ ॥ हो० ॥ अंतेउरी पण केटली रे लाला, संगें धरी नरनाथ ॥ हो० ॥ मो० ॥ ५ ॥ पंच महाव्रत उचरे रे लाला, आवी ते केवली पास ॥ हो० ॥ नृप ते केतिक नारिशुं रे लाला, पांचसे नरशुं उल्लास ॥ हो० ॥ मो० ॥ ६ ॥ कल्प क्रिया श्रुतनी कला रे लाला, गीतार्थी गुण जेह ॥ हो० ॥ पुण्योदयना प्रनावथी रे लाला, शिखी दिन थोडे तेह ॥ ॥ हो० ॥ मो० ॥ ७ ॥ चौद पूर्वधर ते थयो रे लाला, अतिशयवंत अपार ॥ हो० ॥ कुवलयचंद्र केवली तदा रे लाला, आपी एहने गबनार ॥ हो० ॥ ॥ मो० ॥ ८ ॥ पोतें शैलेसी करी रे लाला, कर्म खपावी शेष ॥ हो० ॥ परमपद पाम्या सही रे लाला, अमर थयो अलेख ॥ हो० ॥ मो० ॥ ए ॥ राजऋषि रूडी परें रे लाला, वली आचारय तेह ॥ हो० ॥ सदबोध सदागमयोगथी रे लाला, अरिनो लेतो बेह ॥ हो० ॥ मो० ॥ १० ॥ गाम नगर पुर आगरें रे लाला, विचरे देश विदेश ॥ हो० ॥ मोहना बंधने मोडतो रे लाला, नर नारीना अशेष ॥ हो० ॥ मो० ॥ ११ ॥ उदय वदे ढाल ए कही रे लाला, में बाणुंमी अनूप ॥ हो० ॥ अवसर लहीने चेतजो रे लाला, जिम चेत्यो बलि नृप ॥ हो० ॥ मो० ॥ १२ ॥

॥ दोहा ॥

॥ पाम्यो ते मुनि अन्यदा, अप्रमत्त गुणस्थान ॥ अकस्मात तव उपनुं, अति विशुद्ध शुन्न ध्यान ॥ १ ॥ सर्वगाथा ॥ १६६४ ॥

तिणिथान ॥ ६ ॥ आंखें पम्हल जिम कथडे, फलकें ज्योति अनूप ॥ तिम मुनि निरखे ते तदा, लोकालोक सरूप ॥७॥ सिद्धि सौधनुं तेरमुं, पगथीउं पाम्युं ताम ॥ संयोगि केवलि गुण स्थानकें, पहोतो सो गुणधाम ॥ ८ ॥ तव नृप चारित्र धर्मनुं, सैन्य सकल सम काल ॥ पाम्युं परमानंदने, वैरी थते विसराल ॥ ए ॥ सर्वगाथा ॥ १६८५ ॥

॥ ढाल चोराणुंमी ॥

॥ कमल रस फूंबखडां ॥ ए देशी ॥ तिवार पछी वली केवली, मोहादिकना सुविशेष ॥ सकलजनसुखकरू, मर्म प्रकाशी लोकने, छोडवे देई उपदेश ॥ स० ॥ १ ॥ विचरतां वसुधातलें, बहु जननां मोह बंध ॥ स० ॥ गामो गामें छोडावतां, फेडतां भवना फंद ॥ स० ॥ २ ॥ विहार करतां आविआ, अनुक्रमें आणे देश ॥ स० ॥ सांप्रत तुम सहु लोकने, देवाने उपदेश ॥ स० ॥ ३ ॥ बूफविया बहू लोकजे, तिणें गुण निष्पन्न ॥ स० ॥ भुवनभानु नाम तेहनुं, धरियुं लही ज्ञानभुवन्न ॥ स० ॥ ४ ॥ समजो ते हूं केवली, इम सांभली अवनीस ॥ स० ॥ चंद्रमौलि चित्त चमकियो, तव कठी सुजगीस ॥ स० ॥ ५ ॥ पाय लागी प्रणमी कहे, साधु साधु तुमे स्वामि ॥ स० ॥ भगवन पाउधास्या भले, अम तारवा हित काम ॥ स० ॥ ६ ॥ सकल सिद्धांतनुं रहस्य ए, वारु तुमारुं चरित्र ॥ स० ॥ कही अमने पावन कस्या, प्रभु तुमे पुण्य पवित्र ॥स०॥७॥ तव केवली कहे तेहने, राजन. निजआख्यान ॥स०॥ निजमुखें कहेवुं नवि घटे, थाए निजव्याख्यान ॥स० ॥ ८ ॥ निज गुण कहेवा निज मुखें, निषेधे नीति ग्रंथ ॥ स० ॥ कीरति ते जे बीजो कहे, पौराणिक ए पंथ ॥ ॥ स० ॥ ए ॥ पण तुमने हित कारणे, खरो कह्यो एह संबंध ॥ स० ॥ संक्षेपे में माहरुं, भाजे जे भवबंध ॥ स० ॥ १० ॥ उदयरतन कहे आगमें, बोल्या जे छे बोल ॥ स० ॥ चोराणुंमी ढालें ते सद्दहो, चित्त धरी रंग चोल ॥ स० ॥ ११ ॥

॥ दोहा ॥ विस्तारें जो वर्णवुं, चंद्रमौलि सुण राय ॥ तो कोडि पूरवने आउखे, पूरुं एह न थाय ॥ १ ॥ केवल ए जे कारणे, महारायीज निहाल ॥ प्राहें संसारी जीवनी, सहुनी एहज चाल ॥ २ ॥ सर्वगाथा १६ए८

॥ ढाल पंचाणुंमी ॥

॥ विंदली मन लागो ॥ ए देशी ॥ चौद लोक च्यारे गति, जगमांहि स

हु जीव ॥ महाराज ॥ मोह राजाना राज्यमां, नमण करे अवतीव ॥ म० ॥ १ ॥ नवमां इम सहुए नमे, नथी कोइ ते स्थान ॥ म० ॥ एकेंडि नी जातिमां, नाखे श्री नगवान ॥ म० ॥ २ ॥ न० ॥ नहीं विगलेंडी रू प ते, नहीं ते तिर्यंच जाति ॥ म० ॥ नरकावासो ते नथी, नरक सोध तां सात ॥ म० ॥ ३ ॥ न० ॥ गाम नगर पुर पेखतां, नर लोकें नहि तेह ॥ म० ॥ जिहां सहु जीव न ऊपना, अनंती वार अबेह ॥ म० ॥ ४ ॥ न० ॥ नुवनपति व्यंतर ज्योतिषी, सौधर्म ईशान सुर लोय ॥ देवनी दे वी ते नहीं, जिहां उपना नहिं सहु कोय ॥ म० ॥ ५ ॥ न० ॥ दश देव लोक आगलें, नव ग्रैवेयक पर्यंत ॥ म० ॥ प्राहे नथी कोई स्थान ते, जि हां उपना नहीं सर्व जंत ॥ म० ॥ ६ ॥ न० ॥ जे सहु जीवें न नोगव्युं, ते सुख डुःख नहिं संसार ॥ म० ॥ डव्यथी नहीं जिन लिंगते, जे न ल ह्युं अनंती वार ॥ म० ॥ ७ ॥ न० ॥ जाति योनि कुल तें नहीं, नहीं को ई तेहवो वेष ॥ म० ॥ सहु संसारी जीवडे, जे वेव्यो न वार अनेक ॥ म० ॥ ८ ॥ न० ॥ सामान्यथी कह्यो जे सवे, ए माहरो विरतंत ॥ म० ॥ नव अनंता जे नम्या, विचें विचें वार अनंत ॥ म० ॥ ए ॥ न० ॥ ते संख्याते आउखे, कहो केम कह्यो जाय ॥ म० ॥ क्रमें क्रमें सुखें कहेतां

था विस्तारी ए कही, उपकार लही अभिराम ॥ २ ॥ सघलूजी संसारथी, पहोता पेले पार ॥ तो पण परने कारणें, उद्यम करो अपार ॥ ३ ॥

॥ ढाल ठन्नुंमी ॥

॥ अ मलती चाकरी रे ॥ ए देशी ॥ कहो भगवन करुणा करी, केता नीसरे एके काल ॥ प्रभु प्रकासीएं रे ॥ अविवहार निगोदथी, प्राणी पूछे इम भूपाल ॥ प्र० ॥ १ ॥ विवहार रासें थकी रे, जेता मुगतें जाए जीव ॥प्र०॥ कहे इम केवली रे ॥ सूक्ष्मनिगोदथी नीसरी रे, आवे तेटला सदीव ॥ क० ॥ २ ॥ यतः ॥ सिझंत्ति जित्तिया खलु, इहय ववहार रासिजीवाउ ॥ इति अणाइ वणस्सइ, मझा उ तत्तिया चेव ॥१॥ करवा नाल तणी परें रे, जाईने आवे इम तेह ॥ क० ॥ मुगति न भराए कदा रे, नावें निगोद तणो पण छेह ॥ क० ॥ ३ ॥ यतः ॥ जइआवि होइ पुछा, जिणाण मग्गंमि उत्तरं तइया ॥ ईकस्स निगोअस्स, अणंत भागोअ सिध्धिगउ ॥ १ ॥ ॥ पूर्वढाल ॥ तव राजा कहे कहो प्रभु रे, निगोदथी निसरिया जीव जेह ॥क०॥ एटलेज चाले ते सवे रे, पामे मुगति सदा सुख गेह ॥ क० ॥ ४ ॥ बहु जीव तो माहरी परें रे, सीझे ते जाणो तहकीक ॥ क० ॥ थोडे कालें पण केटला रे, केताएक तेहथी नजीक ॥ क० ॥ ५ ॥ मरुदेवा मातानी परें रे, केता एक सीझे ततखेव ॥ क० ॥ अभव्य ते सीझे नहि कदा रे, न चाले मोभ सामां जिम नेव ॥ क० ॥ ६ ॥ चंद्रमौलिनृप चाहिने रे, बोले त्यारे बे कर जोडी ॥ प्रभु मया करी रें ॥ तारो भवसागर थकी रे, मुझने मोह तणो मद मोडि ॥ प्र० ॥ ७ ॥ संयम लेवो में सही रें, तुम पासें तजीने राज ॥ भणे इम भूपति रे ॥ मुनी कहे विलंब न कीजियें रे, साधतां पर भवनां काज ॥ भ० ॥ ८ ॥ प्रेमें निज पाटें ठवी रे, नंदन चंद्रवदन इणि नाम ॥ नमो ते साधुने रे ॥ सुविधशुं सयंम वरे रे, साथें लई केतिक वाम ॥ न० ॥ ९ ॥ पुरजन ले संग केटला रे, केटलाएक ले मंत्री सामंत ॥ न० ॥ पंच महाव्रत उच्चरे रे, चंद्रमौलि राजा गुणवंत ॥ न० ॥ १० ॥ थोडे दिन सीखी घणी रे, विद्या चौद पूरव विस्तार ॥ न० ॥ योग्य लही वली केवली रे, आपे तव तेहने गछ भार ॥ न० ॥ ११ ॥ चालीस लाख पूर्व लगें रे, पाल्युं संयम कांईक न्यून ॥ न० ॥ कोडि पूर्वनो आउखो रे, सघलुं जाणो ते देसोन ॥ न० ॥ १२ ॥ उदयरतन कहे एट

ले रे, पूरी तेरमी थई ढाल ॥ भ० ॥ साचो श्री जिन धर्म ले रे, बीजुं जाणो आल पंपाल ॥ भ० ॥ १३ ॥

॥ दोहा ॥

॥ अंते सैलेसकरण जे, करमांही करवाल ॥ मोह रिपु दलशेष लें, फोडे देई फाल ॥१॥ वेदनीने वली आउखो, नाम गोत निरधार ॥ भवो पग्राही कर्म भट, चूरीने ए चार ॥ २ ॥ चढी सोपाने चौदमे, अयोगि के वलि गुणठाण ॥ अ इ उ ऋ लृ कहितां लगें, तिहां कीधुं रहिठाण ॥ ३ ॥ संयम धर्मने भोगवि, उन्नति करी अतीव ॥ त्रिगुण रहित थईने तदा, वलि रूपि केवलि जीव ॥४॥ पाम्यो परमानंद पद, शाश्वत मुक्ति सुठोर ॥ अजर अमर अविचल थयो, जिहां नहि यमनुं जोर ॥ ५ ॥ स्नेह न को माता समो, घृत सम नहि रसघूट ॥ सुख न को शिवपदसमो, शुं कीजे वैकुंठ ॥ ६ ॥ साकर समो न स्वाद को, मुक्ति समी न मोज ॥ संयम समो न सखाइउ, चित्तमां धरजो चोज ॥ ७ ॥ सर्व गाथा ॥ १७४५ ॥

अशुद्ध जे कांई इहां, में कह्यो जे होय जबाप ॥ सुधा जन ते शोधजो, मुझ गुनहो रे वली करजो माफ ॥ ध० ॥ ए ॥ तपगच्छ मंमण तिलकसो, श्रीराजविजय सूरिराज ॥ तरणि जिस्यो तस पाटवी, रत्नविजय रे सूरी शिर ताज ॥ ध० ॥१०॥ गुरुराज राजसमाजनो,दीवो सेव्यो सदीव ॥ हीररतन सूरी हेजशुं, पूरे आश्या रे प्रतापे अतीव ॥ ध० ॥ ११ ॥ जयरत्न सूरी जयकरु,संप्रती तेहने पाटें ॥ भावरतन सूरी भेटतां, डुःख मेटे रे नमीयें ते माटें ॥ ध० ॥ १२ ॥ श्री हीररत्न सूरिंदनो, सोहे वडेरो सीस ॥ लब्धिरत्न पंमित तेहनो, नमुं वाचक रे जेनी जगमां जगीश ॥ध०॥१३॥ श्री मेघरत्न मुणिंदनो, अमररत्न अनुचर तास ॥ शिवरत्न गुरु सुपसाउलें, में गायो रे वलिऋषि गुण खास ॥ ध० ॥ १४ ॥ सतरसें उगण्योत्तर समे, वदि तेरस मंगलवार ॥ पोष मास पूर्वाषाढ भे, हर्षण योगे रे थयो हर्ष अपार ॥ ध० ॥ १५ ॥ गुणनिधि उनाउवा गाममां, भीडभंजन श्रीजिन पास ॥ तास प्रसादें पूरो थयो, रसलहरी रे नामें ए रास ॥ ध० ॥ १६ ॥ जे सांभले सूधे मनें,वली जे भणे मनने भाव ॥ ते मुक्ति पामे मानवी,समता रसें रे सहु कर्म खपाव ॥ ध० ॥ १७ ॥ गगने ग्रह मंदर गिरी, धरा सिंधु जिहां लगें धर्म ॥ अविचल रहो ए त्यां लगें, एह संबंध रे दायक शिव शर्म ॥ ध० ॥ १८ ॥ आज सखी महारे आंगणे, सुरतरु फलिउ सार ॥ कामगवी प्रगटी नवी, आज अभिनव रे थयो जय जय कार ॥ध०॥१ए॥ सुख श्रेणी मंगल मालिका, दीपालिका दिन जेम ॥ भुवन भानु केवलीतणा, गुण गातां रे लीला लहिएं तेम ॥ ध०॥२०॥ इम छन्नुमी ढालमां, उदयरत्न द्ये आशीष ॥ सुख संपद वाधो सदा, सहु संघनी रे पहोचो सुजगीश ॥ ध० ॥२१॥ इति श्रीउदयरत्नजीमहाराजकृत भुवनभानुकेवलीनो रास संपूर्ण ॥ ग्रंथा ग्रंथ श्लोक संख्या २४१४ ॥

॥ इति श्रीउदयरत्नजीमहाराजकृत

भुवनभानुकेवलीनो रास संपूर्ण ॥

अथ

श्रीमद्यशोविजयजी उपाध्यायकृत समकितना षट्स्थान स्वरूपनी चोपाई अर्थसहित प्रारंभ

॥ प्रथम ग्रंथकर्त्तानुं मंगलाचरण ॥

इंद्रश्रेणिनतं नत्वा, वीरतत्त्वार्थदेशिनम् ॥
सम्यक्त्वस्थानषट्कस्य, भाषेयं टिप्यते मया ॥१॥

॥ मूलगाथा ॥

॥ वीतराग प्रणमी करी, समरी सरसति मात ॥ कहिशुं भविहित कारणे, समकितना अवदात ॥ १ ॥ अर्थः—श्रीवीतराग देवने प्रणमी करी प्रजुनी वाणी जे श्रीसरस्वती माता तेने समरीने भव्यजीवना हितने कारणे समकितना अवदात एटले चरित्र कहीशुं ॥ १ ॥

॥ दर्शन मोह विनाशथी, जे निरमल गुणगण ॥ ते समकित तस जाणियें, संखेपे खट गण ॥ २ ॥ अर्थः—दर्शनमोहनीयकर्मनो विनाश जे क्षय, उपशम अने क्षायोपशमरूप तेथी जे मलरहित एवुं गुणनुं स्थानक ऊपजे ते निश्चयथी समकित जाणियें. उक्तंच ॥ सेयसमत्तपसहे, सम्मत्त मोहणिज्जकममाणु ॥ वेयणोवसमखय, समुहेसु हेआय परिणामे ॥ ॥ इति ॥ ते समकतना संक्षेपेंकरी जे कहेशे ते षट्स्थानक जाणवां, जे ससमय श्रद्धान प्रकार ते स्थानक कहियें ॥ २ ॥

मकेतनां षट्स्थानकथी जे विपरीत बोल ते मिथ्यात्वनां ठ स्थानक जा णवा ॥ उक्तं च ॥ संमतौ ॥ णत्थिणाणेणिञ्चो, ण कुणइ कयंणंवेएईणत्थि ॥ णि व्वाणं णत्थिय मोरको वाउ मिछ्त्तठाणाइं ॥ १ ॥ ए थानकें वर्त्ततो मिथ्यावा दी होय. ते गाढ मिथ्यात्व परिणामी घणो अविनीत होय, ते मिथ्यात्वी नां वचन ते मांहोमांहे आपआप हवें जोइयें तो कोइनां मले नही. ते सर्वे उंधा कूवा सरखा ठे ॥ ४ ॥

॥ पहेलो नास्तिक जाखें शून्य, जीव शरीरथकी नहि जिन्न ॥ मद्य अंग थी मदिरा जेम, पंचनूतथी चेतन तेम ॥ ५ ॥ अर्थः—हवे प्रथम स्था नवादी पहेलो नास्तिक चार्वाक ते (शून्य के०) तत्वज्ञानें करी शून्य कोण मुक्तिनो कहेनार (जाखे के०) बोले ठे. ते नास्तिक कहे ठे के जीव जे ठे ते शरीर थकी जिन्न एटले जूदो नथी, अने चेतनपणुं जे होय ठे ते पंच नूतना संयोगथीज थाय ठे. जेम मद्यनां अंग जे गुड, डाक्ष, इक्षुरस, धा वडीपुष्प प्रमुख ठे तेथी मदिरा नीपजे ठे, तेम जाणवुं ॥ ५ ॥

॥ माखणथी घृत तिलथी तेल, अगनि अरणिथी तरुथी वेल ॥ जिम प डियारथकी तरवार, अलगो तो दाखो इणिवार ॥ ६ ॥ अर्थः—जो जीव शरीरथकी जिन्न होय तो माखणथी जेम घृत, तिलथी जेम तेल, अरणी थी जेम अग्नि, वृक्षथी जेम वेल, तथा पडियारथकी जेम तरवार अलगी करी देखाडीयें तेम जीवने शरीरथकी जिन्न करीने आ वेलायें देखाडवो जोइयें. ते शरीरथकी जिन्न करीने कोइ देखाडतो नथी. तेमाटे जीव जे ठे ते शरीरथकी जिन्न नथी ॥ ६ ॥

॥ जिम जलथी पंपोटा थाय, ऊफणतां तेहमांहे समाय ॥ नूजादिक जेम क्षिति परिणाम, तिम चेतन तनुगुणविश्राम ॥ ७ ॥ अर्थः—जे म पाणीथी पंपोटा थाय ठे, अने ते पंपोटा उफणीने वली पाणीमांहेज समाय ठे. तथा नूज प्रमुख ते जेम (क्षिति के०) पृथ्वी तेहनो परिणा म ठे एटले पृथ्वीमांहेथी उपजीने पृथ्वीमांहेज लीन थाय ठे, तेम चेत ना जे ठे ते (तनु के०) जे शरीर तेना गुणनो विश्राम ठे, एटले शरीर थकी उपजीने वली शरीरमांहेज लय पामे ठे. ए उत्पत्तिपक्ष अने बीजो अजिव्यक्तिपक्ष ठे. ते मतें कायाकार परिणामें चेतनानी अजिव्यक्ति होय ठे ७

॥ नहिं परलोक न पुण्य न पाप, पाम्युं ते सुख विलसो आप ॥ वृकपदनी

परें न्नय दाखवे, कपटी तप जपनी मति ठवे ॥ ८ ॥ अर्थः—ए चार्वाकने मतें परलोक नथी, पुण्य नथी, पाप नथी, ते एम कहे ठे, के जे पाम्युं सुख न्ने ते पोतें विलसो. जे माटें वर्त्तमान सुखने मूकीने अनागत सुखनी वांठा करवी ते खोटी ठे, सुखन्नोगमां जे वृकपदनी पेरें नरकादिकनो न्नय देखाडे ठे, तेतो माता जेम पोताना बालकने हाऊ देखाडे ठे, तेम लोकने न्नोलवीने ते कपटी पोतें न्नोगथी चूका, अने बीजाने चूकावे ठे, अने तप जप कहेतां राख्यानी मति एटले बुद्धि ठवे एटले थापे ठे ॥८॥

॥ एहवा पापी न्नाखे आल, बांधे करमतणां बहु जाल ॥ आतमसत्ता तेहने हवे, जुगति करी सद्गुरु दाखवे ॥ ए ॥ अर्थः—चार्वाक एहवी जुठी युक्ति बोले ठे तेथी ते कर्मनां घणां जाल बांधे ठे, माटे सद्गुरु तेने युक्तियें करीने आत्मसत्ता ठे एवुं देखाडे ठे ॥ ए ॥

॥ ज्ञानादिक गुण अनुन्नवसिद्ध, तेहनो आश्रय जीव प्रसिद्ध ॥ पंचन्नूत गुण तेहने कह्यो, इंद्रिय ग्राह्य न किम सद्दह्यो ॥ १० ॥ अर्थः—ज्ञान, दर्शन, सुख, वीर्य प्रमुख गुण जे अनुन्नवसिद्ध अनुमानप्रत्यक्षें प्रसिद्ध ठे, ते गुणनो जे आधार ते जीवद्रव्य ठे, ते अनुमानप्रमाणें आवे. ते अनुमानप्रमाण जे न माने ते परना मननो संदेह केम जाणे? अने तेवारें ते परने उपदेश पण केम दइ शके? अने जो तेहने ज्ञानादिक गुणने पंचन्नूतनो संयोगज गुण कह्यो, तो इंद्रिय ग्राह्य केम न मानो? न्नूतगुण जे काठिन्य शीतत्वादिक ते इंद्रियग्राह्य ठे चेतना इंद्रियग्राह्य नथी. तेमाटे ते आत्मानो गुण जाणवो ॥ १० ॥

॥ प्रज्ञादिक थिति सरिखी नहीं, युगलजाति नरने पण सही ॥ तो किम ते कायापरिणाम, जुउं तेहमां आतमराम ॥ १२ ॥ अर्थः—प्रज्ञादिक स्थिति एक वीर्योत्पन्न युगल मनुष्यनी पण नथी. कोइक अंतर तेहमां पण छे. तो ते बेंतनी कायानो परिणाम केम कहेवाय? एक माता पितायें नी पाया छे तेमां आत्माराम जूदो छे. तेणेंकरीज प्रज्ञादिकनो नेद संनवे छे॥ १२॥

॥ रूपीपण नवि दीसे वात, लक्षणथी लहियें अवदात ॥ तो किम दीशे जीव अरूप, तेतो केवल ज्ञान सरूप ॥ १३ ॥ अर्थः—हवे जे पूर्वें कह्युं छे के जीव जो शरीरथी निन्न होय तो आत्मा अलाधो करी देखाडो? तेनो उत्तर कहे छे. (वात के०) वायरो जे छे ते पुजल छे माटें रूपी छे; तोपण दीसतो नथी. पण तेना अवदात एटले प्रकटलक्षण कंप, धृति, शब्दादिक लिंगें करी लहियें छैयें. तिहां लतादिकनो कंप, अर्कतूलादिकने आकाशें धृति, फंफादिकनो शब्द जेहने अनिघातें तथा संयोगें होय ते वायुड्व्य छे, एम अनुमान प्रमाणें जाणियें छैयें. तो अरूपी जीव तेतो केवलज्ञानस्वरूप छे, ज्ञान मने प्रत्यक्ष छे, ते लिंगें जाणवुं. तेनो आश्रय जे आत्मा तेनुं अनुमान करियें. यद्यपि ज्ञानगुण प्रत्यक्ष छे माटे आत्मा पण तदंशें प्रत्यक्ष छे "गुणपच्चरकतणउ, गुणिवी जीवो घडोव्व पच्च रको" इत्यादि विशेषावश्यकवचनात् ॥ वायुपनीति सुरनिड्व्यपणेंज गंधाशें ए प्रत्यक्षज छे. तथापि वादिविप्रतिपत्ति अनुमान करियें. उक्तंच॥ शतशः प्रत्यक्षपरिकलितमप्यर्थमनुमिमीषन्त्यनुमानरसिकाः॥ अथवा ज्ञानाश्रय प्रत्यक्षज छे तेहने, तत्त्वनिन्नतानुं अनुमान करियें छैयें ॥ १३॥

॥ बालकने स्तनपान प्रवृत्ति, पूरवनव वासना निमित्ति ॥ ए जाणो परलोक प्रमाण, कुणजाणे अणदीठुं ठाण ॥ १४ ॥ अर्थः—हवे बालकने दृष्टांतें परलोकनुं प्रमाण कहे छे, बालकने जे स्तनपानप्रवृत्ति छे, ते इष्टसाधनतास्मरणहेतुक छे. ते स्मरण अनुनवथी थाय ते स्मरण आ नवें नथी, तो परनवनुंज स्मरण आवे, तज्जनित वासनायें आ नवें स्मरण थाय. ए परलोकनुं प्रमाण जाणो. नहीं कां अणदीठुं स्थानक कोना जाणवामां आवे? माटे जो पूर्वे दीठुं छे, तोज ते स्मरणमां आवे छे. एमज मरण त्रासें पण पूर्वेनवना मरणानुनवने अनुनवे नहींकां अणदीगायी

त्रास केम होय ? जातमात्रें तो मरण दीठुं नथी, अने त्रास तो पामे छे. तेथी जाणियें जे परलोक छे ॥ १४ ॥

॥ एक सुखिया एक डुखिया होय, पुण्य पाप विलसित ते जोय ॥ करम चेतनानो ए भाव, उपलादिकपरें ए न स्वभाव ॥ १५ ॥ अर्थः—सरखेज बाह्य कारणें एक सुखिया अनें एक डुखिया जे होय छे ते पुण्य अने पापनो विलास जोजो. उक्तंच ॥ जोतु च साहणाणं, फले विसेसो ण सोविणा हेक ॥ जऊत्तणउ गोयम, घडोव्वंहेक अ से कम्मं ॥ १ ॥ इहां कोइ एम कहेशे के एक पाषाण तो पूजाय छे, अने एक पाषाण रझले छे, तेम ए पण स्वभावें हशे तेनें उत्तर कहेवुं के, पाषाणादिकने पूजा अने निंदाथी सुख डुःख वेदन नथी, अने जीवने ते सुख डुःख वेदन छे, तो ए भोग चेतनानो करेलो भाव छे. दृष्टान्वयव्यतिरेक स्वभावें निराकरियें तो दंमादिकने घटादिक प्रत्यें पण कारणता केम कहिये ? ॥ १५ ॥

॥ निःफल नहीं महाजन यत्न, कोडीकाज कुण वेचे रत्न ॥ कष्टसहे ते धरमारथी, मानो मुनिजन परमारथी ॥ १६॥ अर्थः—महाजन जे पुण्यार्थें तप जप क्रियारूप प्रयत्न करे छे ते निःफल नथी. निःफलकार्यें बुद्धिवंत प्रवर्त्ते नहीं जो एम कहेशो के लोकरंजनने अर्थें ते प्रवर्त्ते छे, तो कोडीने काजें रत्न कोण वेंचे ? इहां लोकरंजन ते कोडी छे तो तेने अर्थें महाप्रयाससाध्यक्रिया तद्रूप रत्न वेंचवुं एवुं फोकट डुःख भोगववुं तो, कोइ वांछे

कहे बे के, जे अतिही अनुपम मनोहर क्षण संततिरूप जे ज्ञान तेहज आत्मा बे. तथाच तन्मतम् ॥ प्रवृत्तिविज्ञानोपादानमालयविज्ञानमेवात्मा ॥ प्रवृत्तिविज्ञान जे नीलाद्याकार ते उपादेय अने तेनो अहमाकार उपादान ते आलय विज्ञानरूप नेदें उपादान उपादेय नाव बे, पण परमार्थे ज्ञान क्षणे बे. परं एक नित्य आत्मा कोइ बे नहीं. माटे जे एक नित्य आत्मा माने बे, तेने मोक्ष वेगलो बे. जे कारणमाटे जेवारें नित्य आत्मा माने तेवारें आत्मा ऊपर स्नेह होय. ते स्नेहथकी सुखनो राग अने दुःखनो द्वेष थाय, तेथी तेना साधननो राग द्वेष थाय, एम करतां राग द्वेष वासनाद्वारा निरंतर वधे तेवारें कर्मबंधनो अंत आवे नही. तेमाटे आत्मा क्षणिकज मानवो ॥ १८ ॥

॥ सर्वनाव क्षणनाशी सर्ग, आदिअंत जो एक निसर्ग ॥ क्षणिकवासना दिये वैराग, सुगतज्ञान नाषे वडनाग ॥ १९ ॥ अर्थः—तथा सर्व जे (नाव के०) पदार्थ ते क्षणनाशी बे. तो आत्मानुं शुं कहेवुं? तिहां ए प्रमाण आपे बे के, जे अनादि अने अंत जो एक (निसर्ग के०) स्वनाव मानियें तो क्षणनाशिपणुंज आवे, स्थिति नाश स्वनाव मानियें तो आदि क्षणें पण तेहज स्वनाव मानवो तेवारें द्वितीय क्षणें नाश थयो अंत नाश स्वनाव न मानीयें तो क्यारें नाश न थाय. तावत्काल स्थायी स्वनाव मानीयें तो फरी तेटला कालपर्यंत रेहवो जोइयें एम तावत्काल स्थायीना स्वनावनी अनुवृत्तें कल्पांतस्थायिता होय क्षणिकआत्मज्ञानीयें वासना ते वैराग्य आपे. एम जेवारे आत्माज क्षणिक जाण्यो. तेवारें कोनी ऊपर राग होय? सर्व क्षणिक अनित्य वस्तु जाणियें, तेवारें गमे अल्पें नाग्यें फूट्युं क्षणेंक नावे ॥ अनित्यताकृतमतिर्म्लानमालोनशोंति नित्यताकृत बुद्धिशुनसामपि शोचतीतिवचनात् ॥ एम महानाग्यवंत (सुगत के०) बौद्ध ते ज्ञान नाखे बे ॥ १९ ॥

॥ रागादिक वासना अपार, वासित चित्त कह्यो संसार ॥ चित्तधारा रागादिक हीन, मोक्ष कहे ज्ञानी परवीन ॥ २० ॥ अर्थः—चित्तमेवहिसंसारो, रागादिक्लेशवासितः ॥ तदेव तैर्विनिर्मुक्तं, नवांतरेति कथ्यते ॥ १ ॥ धर्मकीर्त्तिनिरूपपप्लवाचित्तसंततिः परमार्थ इति मोक्षलक्षणम् ॥ २० ॥

॥ एह बौद्धनुं मत विपरीत, बंध मोक्ष न घटे क्षण चित्त ॥ मानो अनु

गत जो वासना, द्रव्यनित्य तेह्ज शुभमना ॥ २१ ॥ अर्थः— एह्वुं बौद्धनुं मत विपरीत एटले मिथ्याज्ञान रूप छे. जेमाटे (क्षणचित्त के०) क्षणज्ञानरूप आत्मा मानीयें तो बंधमोक्ष न घटे. जे बंध कह्यो ते मोक्षक्षण जे बंधक्षण नहीं. अने जो एम कहेशो के वासना एक छे, तो मन शुभ करी विचारो पूर्वापर ज्ञानक्षण अनुगत जे एक वासना कहो छो, तेह्ज स्वभाव नियत आत्मद्रव्य छे, अने जो कहेशो के वासना बुद्धिमात्र कल्पित छे, पण परमार्थें नथी, तो परमार्थ पर्यायनो एक आधार ते कोण? ज्ञानक्षणने नानाकार योगें तत्त्वनो विरोध नथी, तो द्रव्यने नानाक्षणयोगित्वनो श्यो विरोध ? पर्याय छता अनुभवियें छैयें तेम द्रव्यपण छतुं अनुभवियें छैयें. निर्विकल्पबुद्धि तो विकल्पथी प्रमाण छे ॥ यत्रैवयनेयेदेशं तत्रैवास्यांप्रमाणतेतिवचनात् ॥ अने निर्विकल्पबुद्ध्युत्तरविकल्पबुद्धि तो द्रव्य पर्याय बे भासे छे, माटे बे ज्ञानादि पर्याय सत्य छे, तो तदाधार आत्मद्रव्य पहेलां सत्य करी मानवुं ॥ २१ ॥

॥ सरखा क्षणनो जे आरंभ, तेह वासना महोटो दंभ ॥ बंधमोक्षक्षण सरखा नहीं, शकति एक नवि जाये कही ॥ २२ ॥ अर्थः— सदृशक्षणनो जे आरंभ तेह्ज वासना छे, एम कहेवुं ए महोटुं कपट छे, जेमाटे बंध मोक्षना क्षण सरखा नथी. तो जे बंधाय ते मूकाय एम कह्युं जाय नही. तेवारें मोक्षने अर्थे कोण प्रवर्त्ते ? वली कहेशो के, बंधजने तो शक्तिवंत क्षण जूदा छे, अने मोक्षजने नशक्तिवंत क्षण जूदा छे. बंध छे ते एकत्वाधिवासित

नो नेद नथी तो पूर्व अपर पर्यायने नेदें द्रव्य नेद न पामे. माटे मताग्र हनो खेद गंमीने द्रव्य एक आदरो ॥ २३ ॥

॥ जो क्षणनाशतणो तुज धंध, तो हिंसाथी कुणने बंध ॥ विसदृश क्षणनुं जेह निमित्त, हिंसक तो तुज मन अपवित्त ॥ २४ ॥ अर्थः–वली क्षण नाशी वस्तु माने ने तिहां दोष कहे ने. जो क्षणनाशनो धंध तुजने लागो ने, तो हिंसाथी बंध कोने थाय, जेमाटे जीव तो क्षणेंक्षणें नाश पामे ने, तो हिंसापण कोनी केहथी थाय ने? तेवारें हिंसाथी जे पापबंध कह्यो नो ते पण कह्यो केम मले? हिंसाविना अहिंसा पण क्यांथी होय? ते अहिंसाने विनाशें तहारे व्रतपण क्यांथी होय? जेमाटे व्रतपण अहिंसानी वाडिरूप कह्यां ने. एम सर्व वातोनो लोप थाय. जो एम कहेशो के, मृगने मार्यो तेवारें मृगनो सदृशक्षणारंन टल्यो, विसदृशक्षणारंन थयो, तेहनुं निमित्त कारण आहेडीप्रमुख ते हिंसक कहियें. एवीरीतें बोलनारा ते बौद्धने कहेवुं के, एमतो तहारुं मनपण हिंसायें अपवित्र थयुं. जेमाटे व्याधिक्षणनी परें ताहारो पण अनंतरक्षण मृगविसदृश क्षणनो हेतु थयो ॥ तदुदितः स हि यो यदनंतरः इति न्यायात् ॥ क्षणना अन्वयव्यतिरेक तो सरखा ने. तज्जाति अन्वयव्यतिरेकनुं ग्राहक प्रमाण नथी ॥ २४ ॥

॥ समलचित्त क्षण हिंसा यदा, काययोगकारय नहिं तदा ॥ अनुमंता ने हंता एक, तुजविण कुण नाखे सविवेक ॥ २५ ॥ अर्थः–जो कहेशो के, अमे असचित्तकृत कर्मवैकल्प वानी बूंटे तेमाटे मृगमारणाध्यवसायवंत व्याध चित्तसमल ने, ते क्षणने हिंसा कहियें बैयें. तो एक काययोगें हणे अने एक तेने प्रशंसे, ए बेहुमां फेर नथीज. तो मोक्ष कहेतां योगनेदें प्रायश्चित्तनेद कह्यो ने ते न घटे. जेमाटे निमित्तनेद विना नमस्कार नेद होय तो सर्वावस्था लोप थाय ॥ २५ ॥

॥ खलपिंमीने माणस जाणि, पंचे तेहने गुणनी हाणि ॥ नर ने खल जाणे नवि दोष, कहियो बुधने तेहथी पोष ॥ २६ ॥ अर्थः–मनःपरिणाम पणें आज्ञायोगेंज प्रमाण ने. तमें एम कह्यो नो जो खलपिंमीने माणस जाणीने पंचे तेने घणी हाणी होय, जेमाटे नरने खलपिंमी जाणवाथी तेने मनुष्य हणवानो नाव थयो. जो कहेशो के नरने खलपिंमी जाणे थके कोइ दोष नथी. कारण के तिहां मनुष्यने हणवानो अध्यवसाय नथी पिं

मपरिणाम शुद्ध छे तेणेंकरी बुद्धने पारणुं करावीयें, पोषीयें, तो सूजे ॥ उक्तंच ॥ पुरिसं च विद्धूणकुमारगं वा, सूलंमि केई पमइ जाय तेए ॥ पिन्नाग पिंमस इमारुहित्ता, बुद्धाण ते कप्पइ मारणाए ॥ २६ ॥

॥ संघन्नगति अजमांसें करो, दोष नहीं तिहां इम उच्चरो ॥ ए महोटुं छे तुम अज्ञान, जोजो बीजुं अंग प्रधान ॥ २७ ॥ अर्थः–तथा बोकडाने मांसें संघभक्ति करो गो, अने तेमां कांइ दोष नथी एम मुखें उच्चारो गो, ए महोटुं तमारुं अज्ञान छे. ते विचारी जोजो ॥ उक्तंच श्रीसूयगडांगसूत्रे, यतः ॥ थूलहउरन्नइहमारिआणं, उदिठ्ठभत्तं च पकप्पइत्ता ॥ तल्लोणतल्लेण उवरकमित्ता, सविप्पजाइ पहंति मंसंतं भुंजमाणा मिसिअं एगभूयणं, उवलिप्पा सुवयंरएण ॥ इच्चेवमाहंसुअणज्जधम्मा, अणायरिआ याव रसेसु गिद्धा ॥ इत्यादि ॥ एम तमारे मतेंतो माताने स्त्री करी सेवतां पण दोष न लागो जोइयें. मंमलतंत्रवादी तो अगम्यागमनें पण दोष नथी केहेता. ए सर्व ज्ञान व्यवहारलोपक मिथ्यात्व छे ॥ २७ ॥

॥ हणियें जे परयाय अशेष, दुःख ऊपाइवुं ने संक्लेश ॥ एह त्रिविध हिंसा जिन कथी, परशासनें न घटे मूलथी ॥ २८ ॥ अर्थः–जिन श्रीवीतराग देवें कहेली हिंसा त्रण प्रकारें छे, तेमां एक तो जे मृगादि पर्याय ध्वंस करियें ते, तथा बीजी ते जीवोने दुःख उपजाववुं ते, त्रीजी पोताना मनमांहे संक्लेश एटले मारवानो भाव धारण करवो, ए त्रण प्रकारनी जे हिंसा ते जे एकांत नित्य अने एकांत अनित्य आत्माने माने छे, एवा जे परशासनी तेने मूलथी न घटे. जेमाटे मृग मरीने मृगज थयो. तिहां विसदृश क्षणनो आरंभ क्यां छे? संतानक्यनी अपेक्षायें व्यक्तिवैसदृश्य कहेतां तो दुर्व्यवस्थज आवे. इत्यादि विचारवुं ॥ २८ ॥

नित्य मानीयें तेमाटे ध्रुव निश्चय राग नथी. जेमाटे रागद्वेष ते मनःसं कल्परूप छे. आत्मा ज्ञानी निर्विकल्पस्वभाव समताभावमांहे आवे तेवारें राग वासनानो लाग नथी. साम्य संस्कार ते राग संस्कार विरोधी छे. आत्माने नित्यपणुं माने तो, फल मोक्ष अने हेय आत्मज्ञान चारित्रप्रमुख तेनो एक द्रव्यसंबंध संभवे नही. तो बंध मोक्ष क्षणना संबंधविना सर्व प्रवृत्ति अंधपरंपरा थाय ॥ ३० ॥

॥ रयणातणीपरें थाये विशुद्ध, नित्य आतमा केवल बुद्ध ॥ रागविना नवि प्रथम प्रवृत्ति, तो किम उत्तर होय निवृत्ति ॥३१॥ अर्थः—नित्य आत्मा मानियें तेवारेंज प्रथम अशुद्ध हतो ते केवलज्ञानें विशुद्धि थइने शुद्ध थाय. जेम रत्न पहेलां अशुद्ध होय. ते उपायथी आत्मा नित्य छे तेऊपर राग होय तोज धनार्थीने दुःखक्षयनेअर्थें पहेलां प्रवृत्ति होय, अने ते न होय तो निवृत्ति पण पछी क्यांथी होय ? ॥ ३१ ॥

॥ छांमीजें भवबीज अनंत, ज्ञान अनंत लहीजें तंत ॥ पण नवि उछो अधिको भाव, नित्य आतमा मुक्तस्वभाव ॥ ३२ ॥ अर्थः—नित्य आत्मा मानियें तोज आविर्भाव तिरोभाव रूपें सर्व पर्याय मले; ते कहे छे. भव जे संसार तेनां बीज रागद्वेषादिक अनंत छे. तेने छांमियें छैयें. ततः परमार्थ ज्ञान पर्याय अनंत लहियें छैयें. पण आत्मानो भाव एकअंशे उछो अधिको नथी. अनंतधर्मात्मकस्वरूप आविर्भावमात्रज नित्य सत्य मुक्तात्मक छे. ॥ उक्तं च सिद्धसेनाचार्यैः॥ भवबीजमनंतमुज्झितं, विमलज्ञानमनंतमर्जितं ॥ नचहीन कलोसि नाधिकःसमतांचाप्यतिवृत्य वर्तसे ॥३२॥ ए दृष्टांतें कहेछे.

॥ घनविगमें जिम सूरज चंद, दोष टले मुनिहोय अमंद ॥ मुगतिदशा थिरदर्शन घटे, ते मेली कुण भावें अटे ॥ ३३ ॥ अनित्यवादी गतः ॥ अर्थः—ए दृष्टांतें कहे छे (घन के०) मेघ तेने (विगमें के०) नाशें जेम सूर्य चंद्र (अमंद के०) शुद्ध थाय, तेम दोष जे रागद्वेषादिक ते टले थके मुनि पण अमंद एटले शुद्धबुद्धि मुक्त स्वभाव थाय. एणीपरें थिरवादीने दर्शनें मुक्तिदशा घटे ते मले अनित्यवादी बौद्धनुं मत आदरीने कोण संसारमांहे (अटे के०) भमे, अर्थात् कोइपण बुद्धिवंत भमे नहीं ॥३३॥

॥ नित्य आतमा मानो एम, योगमार्गमां पामो खेम ॥ करता भोक्ता भाखुं हवे, ते न रुचे जे जूठुं लवे ॥ ३४ ॥ अर्थः—एवीरीते आत्मा

नित्य मानीयें तेमाटे ध्रुव निश्चय राग नथी. जेमाटें रागद्वेष ते मनःसं कल्परूप छे. आत्मा ज्ञानी निर्विकल्पस्वभाव समताभावमांहे आवे तेवारें राग वासनानो लाग नथी. साम्य संस्कार ते राग संस्कार विरोधी छे. आत्माने नित्यपणुं माने तो, फल मोक्ष अने हेय आत्मज्ञान चारित्रप्रमुख तेनो एक द्रव्यसंबंध संभवे नही. तो बंध मोक्ष क्षणना संबंधविना सर्व प्रवृत्ति अंधपरंपरा थाय ॥ ३० ॥

॥ रयणतणीपरें थाये विशुद्ध, नित्य आतमा केवल बुद्ध ॥ रागविना नवि प्रथम प्रवृत्ति, तो किम उत्तर होय निवृत्ति ॥३१॥ अर्थः—नित्य आत्मा मानियें तेवारेंज प्रथम अशुद्ध हतो ते केवलज्ञानें विशुद्धि थइने शुद्ध थाय. जेम रत्न पहेलां अशुद्ध होय. ते उपायथी आत्मा नित्य छे तेऊपर राग होय तोज धनार्थीने दुःखक्षयनेअर्थें पहेलां प्रवृत्ति होय, अने ते न होय तो निवृत्ति पण पछी क्यांथी होय ? ॥ ३१ ॥

॥ छांमीजें भवबीज अनंत, ज्ञान अनंत लहीजें तंत ॥ पण नवि उछो अधिको भाव, नित्य आतमा मुक्तस्वभाव ॥ ३२ ॥ अर्थः—नित्य आत्मा मानियें तोज आविर्भाव तिरोभाव रूपें सर्व पर्याय मले; ते कहे छे. भव जे संसार तेनां बीज रागद्वेषादिक अनंत छे. तेने छांमियें छैयें. ततः परमार्थ ज्ञान पर्याय अनंत लहियें छैयें. पण आत्मानो भाव एकअंशे उछो अधिको नथी. अनंतधर्मात्मकस्वरूप आविर्भावमात्रज नित्य सत्य मुक्तात्मक छे. ॥ उक्तं च सिद्धसेनाचार्यैः॥ भवबीजमनंतमुज्झितं, विमलज्ञानमनंतमर्जितं ॥ नचहीन कलोसि नाधिकःसमतांचाप्यतिवृत्य वर्तसे ॥३२॥ ए दृष्टांतें कहेछे.

॥ घनविगमें जिम सूरज चंद, दोष टले मुनिहोय अमंद ॥ मुगतिदशा थिरदर्शन घटे, ते मेली कुण भावें अटे ॥ ३३ ॥ अनित्यवादी गतः ॥

अर्थः—ए दृष्टांतें कहे छे (घन के०) मेघ तेने (विगमें के०) नाशें जेम सूर्य चंद्र (अमंद के०) शुद्ध थाय, तेम दोष जे रागद्वेषादिक ते टले थके मुनि पण अमंद एटले शुद्धबुद्धि मुक्त स्वभाव थाय. एणीपरें थिरवादीने दर्शनें मुक्तिदशा घटे ते मले अनित्यवादी बौद्धनुं मत आदरीने कोण संसारमांहे (अटे के०) भमे, अर्थात् कोइपण बुद्धिवंत भमे नहीं ॥३३॥

॥ नित्य आतमा मानो एम, योगमार्गमां पामो खेम ॥ करता भोक्ता भाखुं हवे, ते न रुचे जे जूठुं लवे ॥ ३४ ॥ अर्थः—एवीरीते आत्मा

नित्य बे एम मानो, अने योगमार्गमां क्षेम पामो. ए नित्य आत्मा नामें वीजुं स्थानक पुरूं थयुं ॥ २ ॥ हवे आत्मा कर्त्ता अने आत्मा नोक्तानां स्थानक नांखुं बुं. जे मतवादियो जूतुं लवे बे, वोले बे, ते मुजने रुचता नथी.

॥ एक वेदांती वीजो सांख्य, कहे कर्ता नोक्ता नहिं मुख्य ॥ प्रथम कहे दृग् मात्र प्रमाण, नास उपाधिनेद मंम्माण ॥ ३५ ॥ अर्थः–हवे एक वेदांती अने वीजो सांख्य ए वे वादीउ कहे बे के, आत्मा कर्त्ता नोक्ता नथी. तेमांहें प्रथम वादी वेदांती कहे बे, जे दृगूमात्र ज्ञानमात्र प्रमाण बे, सर्व वादी ज्ञान माने बे, जल पृथ्वी ते एक बे, अनादि अनंत बे, नेदादि प्रतिनास चित्तोपाधि विषयक बे, ते ज्ञाननी उपाधि विश्वनेदनु मंमाण बे, आत्माध्यासरूप सर्व प्रपंच बे ॥ ३५ ॥

॥ मायादिक मिश्रित उपचार, ज्ञान अज्ञान ग्रंथी संसार ॥ दृश्यपणें मिथ्या परपंच, सघलो जिम सुहणानो संच ॥ ३६ ॥ अर्थः–(माया के०) अज्ञान 'अहं मां नजानामि' इत्यादि प्रसिद्ध सर्व प्रपंच मूलकारण अनादिनाव ते प्रमुखें करी मिश्रित जे उपचार ते ज्ञान अज्ञाननी गांवरूप संसार बे, अज्ञानाध्यस्तनेविषे शरीराध्यस्तनेविषे, इंड्रियाध्यस्त इत्यादि उपचार ग्रंथी जाणवी, सर्व प्रपंच दृश्यपणा माटे मिथ्या बे, जेम सुहणानो संच स्वप्नमोदकादिक कहेवाय तेम बे ॥ ३६ ॥

॥ जिम कटकादिविकारें हेम, सत्य ब्रह्म जगजालें तेम ॥ जे परिणामी तेह असंत, अपरिणाम मत कहे वेदंत ॥ ३७ ॥ अर्थः–जेम कटक केयूर प्रमुख सुवर्णना विकार बे, ते जूग ते कार्य पणे बे जेहना एवुं हेम बे, तेम जगजालरूप विकार जूग बे, ते मध्ये अविकारी ब्रह्म सत्य बे. जे परिणामी ते असत्, जे अपरिणामी ते सत्, एम वेदांत कहे बे ॥ कालत्रयनावप्रतियोगित्वमसत्यत्वं तन्निन्नत्वं सत्यत्वं ॥ उक्तंच ॥ आदावंतेचयन्नास्ति मध्येपिह्चितत्तथा ॥ वितथैः सदृशाः संतो वितथा इव लक्षिताः ॥३७॥

॥ जिम तातादिक अबता कह्या, श्रुतिसुषुप्तें बुद्ध सद्दह्या ॥ तिम ज्ञानें अबतुं ब्रह्मंम, अहिज्ञानें नासे अहिदंम ॥ ३८ ॥ अर्थः–जेम तात प्रमुख अबता कह्या, अत्र ' पिता अपिता नवति, माता अमाता नवति, ब्राह्मणो अब्राह्मणो नवति, ब्रूणहा अब्रूणहा नवति ' इत्यादि श्रुतें वेदांत पंम्तिें सद्दह्या. तेम आत्मज्ञानें ब्रह्मांम अबतुं थाय. जेम अहिज्ञानें

अहिदंम नाशे, तेमज आत्मज्ञानें आत्मज्ञानजनित प्रपंच नाशे, शुक्तिज्ञाननाश्य जाघवथी शुक्ति रजत छे ॥ पण ते ज्ञान नहीं. तेम आत्मज्ञानना नाशें पण प्रपंच जाणवो ॥ ३८ ॥

॥ अधिष्ठान जे नवभ्रमतणुं, तेहज ब्रह्म हुं साचुं गणुं ॥ तेहने नहीं करमनो लेप, होय तो न टले करतां खेप ॥ ३९ ॥ अर्थः—प्रपंचभ्रांति तेहनुं अनुष्ठान जे ब्रह्म तेहज हुं साचुं गणुं छुं. जेम रजतभ्रमाधिष्ठान शुक्ति अहिभ्रमाधिष्ठान रज्जुप्रतें ब्रह्मप्रपंचने सादृश्य नथी तो भ्रम केम होय ? एवी शंका न करवी जेमाटें कोइ तमसादृश्य नीरपण होय छे. नभोनीलमितिवत्. ते ब्रह्मपरमार्थसत्यनें कर्मनो लेप नथी. जो चेतनने कर्मनो लेप होय तो घणुये उद्यम करतां टले नहीं ॥ ३९ ॥

॥ जे अनादि अज्ञान संयोग, तेहनो कहियें न होय वियोग ॥ भाव अनादि अनंतज दिठ, चेतन परें विपरीत अनिठ ॥ ४० ॥ अर्थः—जेमाटे (अज्ञान के०) ज्ञानावरणकर्म तेहनो अनादि संयोग जीवने मानो तो कहियें क्यारें वियोग नथी तथा भाव अनादि होय ते अनंतज होय जेम चेतनभाव विपरीत अनिष्ट छे. अनादिसांत भाव प्रमाणसिद्धज नथी. तेमाटे कर्मसंयोग जीवने अनादि नथी, सदा कर्ममुक्तज ब्रह्म छे. नित्यमुक्तने अविद्यायेंज बंध जणाय छे. ते आगली गाथायें दृष्टांतें दृढावे छे ॥ ४० ॥

॥ काच घरें जेम भूंके श्वान, पडे सिंह जलबिंब निदान ॥ जिम कोलिक जालें गुंथाय, अज्ञाने निजबंध न थाय ॥ ४१ ॥ अर्थः—जेम काचना घरमां प्रतिबिंबने अपर बीजो श्वान न जाणीने श्वान भसे छे, जेम सिंह जलमांहे पोतानुं प्रतिबिंब देखी तेना निमित्तें अपरसिंह जाणी क्रोधें करी तेमांहे पडे छे, जेम तंतुवाय पोतें जाल करे तेमांहे पोतेंज गुंथाय छे, तेम ब्रह्मज्ञानविना भेदप्रतिभासें जूठें जूठुंज बंधन थाय छे ॥ ४१ ॥

॥ इम अज्ञानें बांधी मही, चेतन करता तेहनो नहीं ॥ गल चामीकरने दृष्टांत, धरमप्रवृत्ति जिहां लगे भ्रांत ॥ ४२ ॥ अर्थः—एम अज्ञानें (मही के०) पृथ्वी ते बंधाणी छे, ते बंधनो कर्त्ता चेतन नथी. जो परमार्थथी बंध नथी, तो बंधवियोगने अर्थें योगी केम प्रवर्त्ते छे ? ते आशंकायें कहे छे. (गलचामीकर के०) कंठगत हेममाला तेहने दृष्टांतें भ्रांति छे. तिहांसुधी धर्मनेविषे प्रवृत्ति ते जेम छतीज कंठसुवर्णमाला गले जाणी, कोइक घणा स्या

नकें शोधे, तेम अबद्ध ब्रह्मनेज बंध जाणी बंध वियोगने अर्थे तपस्वी प्रवर्त्ते छे.

॥ भ्रांतिमिटथे चिन्मात्र अगाध, करता नहिं पण साखी साध ॥ व्यवहारें करता ते होउ, परमारथें नवि बांध्यो कोउ ॥ ४३ ॥ अर्थः—ते भ्रांति मटे. अगाध निस्तरंग चेतना विलासमात्र छे, ते दिसायें साधु करता नथी. पण शाक्षी छे व्यवहारें लोक प्रत्यें ते कर्त्ता भासे छे परमार्थें कोइ बांध्यो नथी ॥ ४३ ॥

॥ अभिधानयोजन कैवल्य, गुण पामे श्रुति कहे निसल्य ॥ परमारथ व्यवहार अन्यास, भासनशक्ति टले सवि तास ॥ ४४ ॥ अर्थः— अभिमुख ध्यान तें अभिध्यान वेदांत श्रवणयोगें मुक्तिने ते योजन तत्त्वज्ञान (कैवल्य के०) विदेह केवलभाव ए त्रण गुण पामीयें, ते जीवने अनुक्रमे प्रपंचनी पारमार्थिक व्यावहारिक आभासिकता प्रतिभासननी शक्ति छे, ते मटे. तिहां नैयायिकादि वासनायें प्रपंचने परमार्थिकपणुं जणातुं ते वेदांत श्रवण पछी मटे तेवार पछी प्रपंचने योगी व्यावहारिक करी जाणे, पण पारमार्थिक करी न जाणे वलतुं तत्त्वज्ञान उपजे तेवारें प्रपंचने व्यावहारिकपणें न जणाय. बाधितानुवृत्त्यात्यंतिकदुःखनिवृत्तौ विदेहकैवल्यप्रपंचनुं ज्ञानमात्रज टले. निःप्रपंच चिन्मात्र होइ रहे. तस्याभिध्यानाद्योजनात्तत्त्वभावाद्भूयश्चांते विश्वमायानिवृत्तिरिति श्रुतिः ॥ ४४ ॥

॥ जीवन मुक्त लह्यो निज धाम, तेहने करणीनुं नहिं काम ॥ जिहां अविद्या करणी तिहां, वीसामो छे विद्या जिहां ॥ ४५ ॥ अर्थः—तत्त्वज्ञाने संचित कर्म करी प्रारब्ध मात्र भोगीनी प्रतीक्षा करतो, जीवन्मुक्त थयो ते पोतानुं तेज पाम्युं. तेने करणीनुं काम नथी. ज्यांसुधी अविद्या छे, त्यांसुधी क्रिया छे, ज्यां विद्यातत्त्वसाक्षात्काररूप आवी, तिहां वीसामो छे. यतः आरुरुक्षोर्मुनेर्योगं, क्रिया कारणमुच्यते ॥ योगारूढस्य तस्यैव, शमः कारणमुच्यते ॥ १ ॥ ४५ ॥

॥ विधिनिषेध ज्ञानीने कही, प्रारब्धें तस किरिया कही ॥ अवर कहियें नहि तास अदृष्ट, जीवनकारण अन्य अदृष्ट ॥ ४६ ॥ अर्थः—तत्त्वज्ञानीने विधिनिषेधरूप वैदिकक्रिया कोइ नथी. जेमाटे विधिनिषेध सर्व अविद्यावत्पुरुष विषय छे, आहारविहारादि क्रिया शरीरसाधन छे, तेपण प्रारब्धादृष्ट छे, एम सांप्रदायिक वेदांति कहे छे. उछृंखल कहे छे ॥ क्षीयंते

चास्य कर्माणि, तस्मिन् दृष्टे परावरे ॥ ज्ञानाग्निः सर्वकर्माणि, जस्मसात् कुरुतेऽर्जुन ॥ इत्यादिवाक्यें कर्म सर्वपद संकोचनी अन्यायतायें ज्ञानीने अदृष्टमात्रनो नाश माने ढे, अने तेने शरीराश्रित कारण ते ईश्वर शरीरनी परें अन्यादृष्ट ढे ॥ ४६ ॥

॥ करे न जुंजे इम आतमा, वेदंति बोले महातमा ॥ सांख्य कहे प्रकृति सवि करे, चेतनरूप बुद्धिमांहे धरे ॥ ४७ ॥ अर्थः– एरीतें आत्मा न कर्त्ता न जोक्ता एम वेदांति बोले ढे, ए वेदांतिनो मत कह्यो. हवे सांख्यनो मत कहे ढे. ते सांख्य मतवाला कहे ढे के सत्व, रज अने तमोगुणनी साम्यावस्था अनादि मूलकारण प्रकृति ढे, तेहज सर्व प्रपंच करे ढे, स्वपरिणाम महत्तत्त्वापर नामक स्वब्ब बुद्धि ढे तेहमां चिन्मात्र आत्मरूप प्रतिबिंब धरे ढे ॥ ४६ ॥

॥ जिम दरपण मुख लालिम तास, बिंब चलननो होइ उल्लास ॥ विषय पुरुष उपराग निवेश, तिम बुद्धि व्यापारावेश ॥४७॥ अर्थः–तेवारें त्रण प्रकार थाय ढे ते दृष्टांते देखाडे ढेः–जेम दर्पण एटले आरिसाथी मुख नीलो तेम रक्त जो देखाय अने ते दर्प्पणनी चलनायें बिंबनी चलनानो उल्लास होय, तेम ते बुद्धि चित्प्रतिबिंबें घटादि विषयोपराग 'अहं' ए पुरुषोपराग क्रियारूप व्यापारावेश होय ॥ ४७ ॥

॥ हुं जाणुं ए करणी करुं, ए त्रिहुं अंशे माने खरुं ॥ पण ते सरव जरमनी जाति, जाणे शुद्ध विवेकह ख्याति ॥४ए॥ अर्थः–हुं एटले आत्मा, जाणुं घटादिक, करण गमनादिरूपकार्य करुं, ए त्रण अंशें जीव खरुं करी माने, पण ते सर्व प्रतिबिंब च्रमनी जाति ढे. (विवेकहख्याति के०) प्रकृतिपुरुषान्यजाव जेहने होय ते शुद्ध केवलात्मस्वरूप जाणे ॥ ४ए ॥

॥ प्रकृतिधर्म हित अहित आचार, चेतनना कहे ते उपचार ॥ विजय पराजय जिम जटतणा, नरपतिने कहियें अतिघणा ॥ ५० ॥ अर्थः–अपरोक्षच्रम ते अपरोक्ष साक्षात्कारेंज निवर्त्ते ते शुद्धात्मक ज्ञान ढे, (हित अहित के०) विधिनिषेध आचार क्रियारूप ढे ते सर्व प्रकृति नाना धर्म ढे, आत्मातो अक्रिय ढे तेहने जे चेतना कहे ढे ते उपचार करी जाणवो. जेम सुजटना विजय पराजय अतिघणा ढे ते सर्व राजाना कहियें एटले सुजट जीते राजा जीत्यो, अने शुजट हार्ये राजा हार्यो, एवो

व्यवहार ढे एम प्रकृतिगत शुनाशुन किरिया ते आत्मानी करीनें व्यवहारी लोक माने ढे ॥ ५० ॥

॥ प्रकृति करे नवि चेतन कलीव, प्रति बिंबे ते नुंजे जीव ॥ पंचवीशमुं तत्त्व अगम्य, ढे कूटस्थ सदा शिव रम्य ॥ ५१ ॥ अर्थः—प्रकृति ते सर्वे कार्य करे ढे, चेतन आत्मा नथी करतो जेकारण माटें ते कलीव ढे, क्रियानुं असमर्थ ढे, ज्ञस्वनाव ते कर्तृस्वनाव केम होय, बुद्धि करे ढे, ते प्रतिबिंबे जीव नुंजे ढे, बुद्धिनिष्ठप्रतिबिंबग्राहित्वमेव चितो नोगः अतएव सांख्यमें शाक्षात् नोक्ता आत्मा नथी. पचवीसमुं तत्व आत्मरूप अगम्य अगोचर ढे. (कूटस्थ के०) अनित्यधर्मे रहित सर्वकाल सदा (शिव के०) निरुपद्रव (रम्य के०) मनोहर ढे ॥ ५१ ॥

॥ आपविलास प्रकृति दाखवी, विरमे जिम जग नटुइ नवी ॥ प्रकृति विकार विलय ते मुक्ति, निर्गुण चेतन थाये शुक्ति ॥ ५२ ॥ अर्थः—प्रकृति ते आत्म विलास मदादि प्रपंच देखाडी विरमे निवर्त्ते जेम जग नवी नटूइ नाटक देखाडी विरमे ॥ उक्तंच ॥ रंगस्य दर्शयित्वा निवर्त्तते नर्त्तकी यथा नृत्यात् ॥ पुरुषस्य तथात्मानं प्रकाश्य विनिवर्त्तते प्रकृतिः ॥ प्रकृतिविकारनो विलय तेहज मुक्ति ते चितिरसंक्रमा इत्यादि सूत्रानुसारें निर्गुण चेतननेंज थापे ढे ॥ ५२ ॥

॥ पंथी लूंट्या देखी गूढ, कहे पंथ लूंटाणो मूढ ॥ प्रकृतिक्रिया देखी जीवनें, अविवेकी तिम माने मने ॥ ५३ ॥ अर्थः—पंथी लोकनें लूंट्या देखीने तेनो गूढ एटले रहस्य ते मूढबुद्धि एवुं कहे ढे. जे पंथ लूंटाणो. इहां (पंथ के०) नाग ते अचेतन ढे तेनुं लूंटवुं ते वली किश्युं होय. ए उपचार वचननें अनुपचार करी माने तेने मूढ कहियें तेम प्रकृतिनी क्रिया देखीने अविवेकी पुरुष, जीवने क्रिया पोताने कृत्या दयो मनस्थो धर्मानेदाग्रहात् पुरुषे नासंते ॥ ५३ ॥

॥ मूल प्रकृति नवि विकृति विख्यात, प्रकृति विकृति महदादिक सात ॥ गण षोडशक विकारी कह्यो, प्रकृति न विकृति न चेतन लह्यो ॥ ५४ ॥

अर्थः—जे मूलप्रकृति ते विकृतिरूप न होय, कोइनुं कार्य महदादिक सात पदार्थ महत् अहंकार पचतन्मात्र ए प्रकृति कही अने विकृति कहियें उत्तरोत्तरनुंकारण पूर्व पूर्वनुं कार्य ढे तेनणी पांचनूत अने इगीआर इंद्रि

य ए षोडशगण विकारी कह्यो. ए कार्य छे,पण कारण नथी. चेतन नें प्रकृते नहीं कारण वकार्य नहीं तो कूटस्थ चैतन्यरूप कह्यो छे॥ तडुक्तं सांख्यसप्तति कायाम् ॥ मूलप्रकृतिरविकृतिमहदाद्याः प्रकृतिविकृतयः सप्त ॥ षोडश कस्तु विकारी न प्रकृतिर्निविकृतिः पुरुषः॥गंधतन्मात्र १ रसतन्मात्र २ रूपतन्मात्र ३ स्पर्शतन्मात्र ४ शब्दतन्मात्र ५ ए पांच तन्मात्र नाम. श्रोत्र घ्राण जिव्हा नयन स्पर्शन ए पांच बुद्धींद्रिय. वाक् पाणि पाद पायु उपस्थ ए पांच कर्मेंद्रिय अने इग्यारमुं मन इंद्रिय ॥ ५४ ॥

॥ ए बिहुंने साधारण दोष, न करे तो किम बंधनमोख ॥ मनबंधाये छूटे जीव, एतो जुगतुं नहीं अतीव ॥ ५५ ॥ अर्थः—एम जीव अकर्त्ता अनोक्ता सांख्य वेदांती ए बे मतवाला कहे छे. हवे ते बेहुने दूषण दीये छे. ए बेहुने साधारण एटले सरखो दोष छे. जो जीव करे नही, तो तेने बंध पण न घटे,तथा मोक्षपण घटे नहीं. जो एम कहेशो के, क्रियावती प्रकृति छे. तेमाटे प्रकृति बंधाय. सात्विक राजस तामस नावे प्रकृतिनेज संबंध छे. तद्विकार महत्तत्वना ए नाव छे. जीवमां तो अध्यास मात्रें सविलास प्रकृति निवृत्तिरूप मोक्ष ते जीवने छे. ए तो घटे नहीं. जे कारणमाटे जे बंधाय छे. ते छूटे. परंतु अन्यने बंध अने अन्यने मोक्ष ए कहेवुंज केम होय? ॥ ५५ ॥

॥ परमारथे नवि बंधन मोख,उपचारें जो करसो तोष ॥ मोक्षशास्त्र तो तुम सवि वृथा, जेहमां नहीं परमारथकथा ॥ ५६ ॥ अर्थः—हवे कोइ कहेशे के, बंध मोक्ष तो जीवने व्यवहारें कहियें छैयें. परं परमार्थें तो अबंधमुक्तिमत् स्वरूप छे ॥ नमुमुक्षुर्न वै मुक्त इत्येषा परमार्थेतेति वचनात् ॥ तेहने कहियें के, जो परमार्थें बंध मोक्ष नथी तो मोक्ष उपचारें होय छे. ए वातेंज तमे संतोष करशो तेवारें तो सर्व तमारे वृथा छे. मोक्षशास्त्र रूप परमार्थनी कथा जेमां नथी तेवारें ॥ पंचविंशतितत्त्वज्ञो,नरोह्या त्रिंशके रतः ॥ तटी दरी शिखी चापि, मुच्यते नात्रसंशयः ॥ १ ॥ ब्रह्मविद् ब्रह्मरूपमाप्नोति इति आदिशास्त्र सर्व प्रवर्त्तक न थाय ॥ ५६ ॥

॥ प्रकृति अविद्या नाशें करी, पहेली आत्मदशा जो फिरी ॥ तो कूटस्थपणुं तुम्ह गयुं, नाहिंतो कहो शुं अधिकुं थयुं ॥ ५७ ॥ अर्थः—हवे ए बेहु मत आत्माने कूटस्थपणुं माने छे,ते दूषे छे. प्रकृतिनो सांख्यमतें अने अ

विद्यानो वेदांतमतें जेवारें नाश होय, तेवारें जे पहेली आत्माने संसारी दशा हती ते जो फरी गइ तो तमारे मतें कूटस्थपणुं पण गयुं. परिणाम पणु थयुं. नहीं तो कहो के मुक्तिदशायें अधिकुं शुं थयुं. जे सर्वदा शुद्ध आत्मा ले तेने प्रकृति अविद्या नाशने अर्थें स्यो साधन प्रयास करावो लो? ॥५७॥

॥ माया नाशन अधिको भाव, शुद्ध रूपतो प्रथम विभाव ॥ रत्नादिक मां शुद्धि अशुद्धि, जो कहो तो शी इहां कुबुद्धि ॥ ५८ ॥ अर्थः—जो कहेशो, के माया नाशअधिको भाव नथी. अधिकरण स्वरूपज ले. तो ए थिवि भावरूप आत्मा ते शुद्धरूप थइ जाय. जेमाटे ते आत्मामांहे मायिकभावनो अत्यंताभाव ले. शुद्धरूपज्ञानेंज जो शुद्ध थाय तो समलभाजनादिक पण निर्मलता ज्ञानेज निर्मल थवुं जोइयें. रत्नादिकने जेम शुद्ध अशुद्ध उपाधें कहो लो. तेम आत्माने परिणामविशेषें जाणो. ए शी कुबुद्धि? जे पुजलद्रव्यने परिणामें शुद्ध कहो लो,अने आत्माने तेम नथी कहेता?॥५८॥

॥ रतनशोध जिम शतपुट खार,तिम आतमशोधक व्यवहार ॥ गुणधारायें अखिल प्रमाण, जिम भाखे दासूर सुजाण ॥ ५ए ॥ अर्थः— जेम रत्नशोध करे तेने दोषनो टालणहार शतपुट खार एटले शोखार पुट ले. तेम आत्माना दोषनो शोधक क्रियाव्यवहार ले. चरमक्रियासाधन माटे प्रथमादि क्रिया पण लेखे ले. प्रथमादिविना चरमखारपुट न होय ते विना रत्नशुद्धि न होय. ए क्रियादृष्टांत जाणवो. गुणधारा वृद्धि सर्व प्रमाण ले. एहज अभिप्रायें योगवाशिष्ठ ग्रंथमध्ये दासूर रुषी रामचंद्र प्रत्यें बोल्या॥५ए

॥ सतुषपणुं जिम तंडुल तणुं,श्यामपणुं त्रांबानुं घणुं ॥ क्रियाविना नवि नाशे पुत्र, जाणि पुरुषमल तेम अपवित्र ॥ ६० ॥ अर्थः— सतुषपणुं फोतरासहितपणुं जेम तंडुलतणुं व्रीहीतणुं जेम! त्रांबाभाजननुं घणेरुं श्यामपणुं मलिनपणुं ते कुट्टन मांजनादिकें जाय. तेम क्रियाविना हे पुत्र रामचंद्र,अपवित्र जे अनादिकालीन पुरुषमल कर्मरूप ले,ते क्रियाविना ज्ञानमात्रें नाशे नही. वचनमात्रें आत्मसंतोषें शुं थाय? ॥ उक्तंच ॥ भणंतो अकरंतो य,बंधमुक्खपइन्निणो॥ वाया विरयमित्तेणं, समासंतिय अप्पयं॥६०॥

॥ एतो शुद्धाशुद्ध स्वभाव,कहियें तो सवि फावे दाव ॥ कालभेदथी नहीं विरोध, सघट विघट जिम भूतल बोध ॥ ६१ ॥ अर्थः—एतो आत्मानो स्वभाव जो संसारी दिशायें अशुद्ध एम शुद्धाशुद्ध स्याद्वाद प्रमाणें क

री माने तो सर्व दाव मुक्तिशास्त्रनो पामे. पण एकांतवादें तो कांइ मली शके नहीं. विरोध परिहार छे कालभेदथी विरोध नहीं जेमाटे एकज घट कालें घटवत् स्वभाव छे, अन्यकालें अघटस्वभाव छे. एम शुद्धाशुद्धोभयस्व भावकालें भेद माने तो विरोध नथी. अन्यनें जे भावाभावसंबंधघटक ते जन्म हारे स्ववलस्वभाव छे ॥ ६१ ॥

॥ केवल शुद्ध कही श्रुति जेह, निश्चयथी नहिं तिहां संदेह ॥ ते निमित्त कारण नवि सहे, चेतन निजगुण करता कहे ॥६२॥ अर्थः—श्रुतियें कूटस्थपणुं कह्युं छे ते मेले श्रुतियें जे केवल शुद्धआत्मा कह्यो छे ते निश्चय नथी. तेहथी तेमां संदेह नहीं. जेहनो आविर्भाव सिद्धमांहे छे, ते निश्चय नय निमित्त कारण न माने, शुद्धपर्याय उपादानें व्यतिरिक्तभावेंज शुद्ध कहे.

॥ चेतन कर्म निमित्तें जेह, लागे तेलें जिम रज देह ॥ करम तास करता सद्दहे, नयव्यवहार परंपर ग्रहे ॥ ६३ ॥ अर्थः—तेहने ज्ञानावरणादि द्रव्य कर्म कहियें तेनो कर्त्ता जीव छे. एम व्यवहार नय सद्दहे. ते भाव कर्मघटित परंपरा संबंध माने छे. निश्चयनयने मतें पुद्गलनिमित्तें जीवस्व परिणामकर्त्ता अध्यवसाय निमित्त पुद्गल स्वपरिणामकर्त्ता एम माने ॥६३॥

॥ बीज अंकूर न्यायें एम धार, छे अनादि पण आवे पार ॥ मुगति सादि ने जेम अनंत, तिम भव्यत्व अनादि स अंत ॥ ६४ ॥ अर्थः—एम भावकर्में द्रव्यकर्म अने द्रव्यकर्मं भावकर्म कहेवाथी अन्योन्याश्रय दोष थाय, ते टाले छेः—ए द्रव्यकर्म भावकर्म अन्योन्यापेक्षनी धारा बीज अंकूरपणे अनादि छे. स्थायिकत्वान्न दोषः॥ ए धारा अनादि छे, पण शुक्लध्यानें दाह थाय, तेवारें पार आवे जेम बीजांकूर संताननो एकने नाशे अनादि भावनो केम अंत होय? त्यां कहे छे. जेम सादि होय ते सांतज व्याप्ति नथी. मोक्षपदार्थेंजव्यभिचार होय तेमाटे तेम जे अनादि होय ते अनंतज एम निश्चय न कहेवो. भव्यत्वें विघटे तेमाटे ॥ ६४ ॥

॥ मुगतिप्रागभावह ते गाम, जातियोगता जिय परिणाम ॥ जूठी माया कारण थाय, वंध्या माता किम न कहाय ॥ ६५ ॥ अर्थः—ते जाति भव्यत्वनामें जीव कार्य परिणाम विशेष प्रगटे तदाभिमत मुक्ति प्राग भावने गामे छे, तुछ अभावरूप जो माने तो जातिकार्य न करे मुक्त्यधिकार ते भव्यत्व छे. शमदमवत्वे अधिकार ना होय तो तदज्ञाने प्रवृत्ति तडुक्त

र शमादि संपत्ति एम अन्योन्याश्रय थाय इत्यादि घणी युक्ति न्यायालोकें कही ढे ते भव्यत्ववंत जीव तथा भव्यत्व परिणामे तत्तत्कार्यनो कर्त्ता ढे. जो जूठी मायाज कारण कहीयें तो, वंध्या माता ए साचुं थाय ॥ उक्तंच हेमसूरिभिः ॥ माया सतीचेद्द्वयतत्त्वसिद्धिरथासती चेच्च कुतः प्रपंचः॥ मायैव चेदर्थसहा चतत्किं माता च वंध्या च भवेत्परेषामिति ॥ १ ॥ ६५ ॥

॥ जग मिथ्या तो ए शी वाच,आशामोदक मोदक साच ॥ जो अज्ञान कहे बहु रूप, साच भावनो इयो अंधकूप ॥ ६६ ॥ अर्थः—जो सविला साज्ञान जग केम मिथ्या कहो डो, तो ए शी वाच जे एक आशाना मोदक अने एक साच मोदक ए बे अज्ञानजन्य ढे. जो अज्ञान जाग्रत्स्वप्नप्र पंचारंभक भिन्न भिन्न मानो, तो साच भाव घटपटादिक दृष्टवैचित्र्यवंत मानो, तो तुमने ए स्यो अंधकूप ढे. अत्र श्लोकः ॥ आशामोदकभूता ये, ये चास्वादितमोदकाः ॥ रसवीर्यविपाकादि, तुल्यं तेषां प्रसज्यते ॥ ६६॥

॥ साधक ढे सविकल्प प्रमाण,तेणे सामान्य विशेष मंमाण ॥ निरविकल्प तो निजरुचि मात्र, अंशें श्रुति निर्वाहे यात्र ॥ ६७ ॥ अर्थः—साधक ढे सविकल्पें प्रमाण ज्ञान अवश्य उपस्थित ढे तेहने विषय स्वबंध प्रागभावादिकजने गौरव ढे तेमाटें बाह्यसंबंधरहित अनाद्यंत ब्रह्मज ढे. सत्य अन्य वस्तु प्रमाण भावेज असिद्ध ढे. तेने कहियें जे तमे साधकता न अवलंबो डो ते सविकल्पज प्रमाण ढे. निर्विकल्प स्वयं असिद्ध ते पर साधक केम होय. ते सविकल्पनो सामान्य विशेषरूप अर्थ निग्रहे ढे. स्वयं उपयोगरूपे तथा अवग्रहादिरूपें सामान्य विशेषरूप ढे. तेवारें सर्वत्र त्रिलक्षणपणुंज सत्य ढे. निर्विकल्प मानवुं तेतो निजरुचिमात्र ढे, बोध स्वलक्षण विषय ते माने वेदांती ब्रह्मविषय ए सर्व रुचिमात्र थयुं. श्रुति जे निर्विकल्पब्रह्मप्रतिपादक ढे ते (अंशें के०) नयें (यात्र के०) व्यवहार ते निर्वाह ढे ॥ ६७ ॥

॥ ब्रह्म परापर वचने कह्यो, एक ब्रह्म उपनिषदें रह्यो ॥ मायोपम पण जग श्रुति सुण्युं, जेहनी जिम रुचि तिम तिणे सुण्युं ॥ ६८ ॥ अर्थः—द्वे ब्रह्मणी वेदितव्ये परं चापरं च ए वचने वेदमांहे ब्रह्मपरात्पर द्विभेदें कह्युं. उपनिषदें एकज ब्रह्म लह्युं. एकमेवाद्वितीयं ब्रह्म नेहनानास्तिकिंचनेत्यादिवचनात् तथा मायोपमं सकलं जगत् ए वचने सर्व जगत शून्यरूप पणें कहेवुं.

तिहां द्वैतवादी अद्वैतवादी शून्यवादीयें जेने जेम रुचे तेणें तेम पुरुं करी ने जाण्युं. वलतुं ते वादी युक्ति पण तेह्वीज कल्पे ॥ ६८ ॥

॥ स्यादवाद विण पण सवि मृषा, खारे जल नवि जागे तृषा ॥ माया मिटे रहे जो अंग, तो किम नहीं परमाय रंग ॥ ६ए ॥ अर्थः—पण ते निज्ज निज नय रुचे बे ते स्याद्वादविना सर्व जूग. जेविना स्वमत निर्वाह न था य. जेम खारा जलथी तृषा न जांजे तेम स्याद्वादविना कांक्षा न टले. जो वेदांतने मतें सर्व माया गवेषे बे, ते मटे तो तत्कार्य अंग केम रहे? जो रहे अंगें पारमार्थिक थाय, तो व्यावहारिक केम कहियें? ॥ ६ए ॥

॥ बाधित अनुवृत्तें ते रही; ज्ञानीने प्रारब्धें कही ॥ कर्मविलास थयो तो साच, ज्ञानें न मट्यो जेहनो नाच ॥ ७० ॥ अर्थः—हवे जो एम क हेशो के ज्ञानीने पण माया बाधितानुवृत्तें रही बे. दग्धरज्जु आकार ते प्रारब्धें करीने ॥ ज्ञानाग्निः सर्वकर्माणि, जस्मसात्कुरुतेर्जुन ॥ इहां कर्मप द प्रारब्धातिरिक्त कर्मपर कहेवुं. पर कहेवुं तो कर्मविलास साचो थयो. प ण कल्पित थयो जेनुं (नाच के०) नाटक ते ज्ञानें पण न मट्युं. सिद्धां त पण एहनोज बे, केवलज्ञान उपने पण जवोपग्राही कर्म टलतां तथा सर्वकर्मक्षय ते युक्तिदिशायें परनी समाधिज सत्य होय ॥ ७० ॥

॥ व्यवहारिक आजासिक गणे, योगी ते बे च्रमअंगणे ॥ योगी अयोगी शरीर अशेष, इयो व्यवहार आजास विशेष ॥ ७१ ॥ अर्थः—जे यो गी व्यावहारिक प्रपंचने आजासिक गणे बे, ते च्रम गृहने अंगणे रमे बे. जे अन्यने अन्य करी जाणवुं तेज च्रमयोगीनुं शरीर, ते आजासिक जाण वुं, अने अयोगीनुं शरीर ते व्यवहारें कथनमात्र सदृश परिणामज दीसे बे, तेणेंकरी जेहवुं बे तेहवुं कहे बे. ज्ञानीने रागादिक जाव बे, ते आजा सिक गुंजापुंजवन्हिसमान ते सर्व निरस्त कह्युं एम जाणवुं, कर्मजनित जाव ते सत्यज बे. तो क्षुधातृषादि जाव पण सर्व जूग थाय. ते तो प्र त्यक्षविरोध ॥ ७१ ॥

॥ अन्य अदृष्टें योगिशरीर, रहे कहे ते नहिं श्रुतिधीर ॥ जो शिष्यादि अदृष्टें रहे, अखिअदृष्ट तेहने किम सहे ॥ ७२ ॥ अर्थः—कोइ उन्मत्तप्राय क हे बे. ज्ञानीने सर्वअदृष्ट गयां शरीर रहे बे. अन्य शिष्यादिकने जेम लो कादृष्टें ईश्वरशरीर रहे बे. ते श्रुतधीर नही. एटले सिद्धांतमांहे धैर्यवंत न

ही. जो योगीनुं शरीर शिष्यादिकने अदृष्टें रहे, तो (अरि के०) वैरी ते ने अदृष्टें कां पडतो नथी, तेमाटें स्वादृष्टेंज निर्वाह मानवो ॥ ७१ ॥

॥ सकति अनंत सहित अज्ञान, कर्म कहो तो वाधे वान ॥ कर्मे होय जनमनी युक्ति, दर्शन ज्ञान चरणथी मुक्ति ॥ ७२ ॥ अर्थः—एम अविद्यामायाशब्दवाच्य अनिर्वचनीय अज्ञान वेदांतिसंमत न घटे. जो अनंतशक्तिसहित अज्ञानरूप कर्म कहोतो, वान वधे. ते तेहना उदयक्षयोपशमादिकथी अनेक कार्य थाय. कर्मक्षयें मोक्ष थाय. तेहज कहे कर्मे जन्मनी संसारनी युक्ति होय. नावें दर्शन, ज्ञान चारित्र थाय तेवारें मुक्ति होय ॥७२॥

॥ प्रतिबिंबे जो नाखें नोग, किम तस रूपी अरूपी योग ॥ आकाशादिकनुं प्रतिबिंब, जिम नहीं तिम चेतन अविलंब ॥ ७४ ॥ अर्थः—चित् प्रतिबिंबे बुद्धिनो नोग ठे, ते साक्षात् आत्माने नथी, जे एम कहे ठे, तेने रूपीअरूपीनो योग संनवे नही. आकाश अरूपीनुं जेम आदर्शे प्रतिबिंब नथी. तेम बुद्धिमांहे चेतननुं अवलंब न होय गंनीरं जलं कहेतां आकाशप्रतिबिंब नथी. गंनीरपणुं ते जलधर्म ठे. प्रतिबिंबस्वरूप देखाडी चित्प्रतिबिंब न होय, एवुं कहे ठे ॥ ७४ ॥

॥ आदर्शादिकमां जे ठाय, आवे ते प्रतिबिंब कहाय ॥ स्थूलखंधनुं संगत तेह, नवि पामे प्रतिबिंब अ देह ॥ ७५ ॥ अर्थः—(आदर्शादिक के०) आरीसा प्रमुख जे स्वछ इव्य तेहमां जे ठाया आवे ते प्रतिबिंब कहियें ॥ उक्तं च ॥ जे आयरियस्स संतो,देहावयवाह हवंति संकंता ॥ तेसिं तवुवलद्धि, पन्नत्ते ॥ इति प्रतिबिंब स्थूल पुजलनुं होय. उक्तं च ॥ सामाउदिया ठाया, अनामुरगयाणि सिंतु कालाना ॥ सत्तेय नासुरगया, संदेहना मुणेयवा ॥ (अदेह के०) अशरीर जे आत्मा ते बुद्धिमांहे प्रतिबिंब न वि पामे ॥ ७५ ॥

॥ बुद्धे चेतनता संक्रमे, किम नवि गगनादिकगुण रमे॥ बुद्धि ज्ञान उपलब्धि अनिन्न, एहनो नेद करे शुं खिन्न ॥७६॥ अर्थः—बुद्धितत्त्वें (चेतनता के०) चैतन्य प्रतिबिंबे,जो संक्रमें, तो गगनादिकरूपी इव्यना गुण बुद्धिमांहे केम नवि रमे ? बुद्धि ते चित्प्रतिबिंबाधिष्ठान ठे. इंडियवृत्ति घटादि संग उपलब्धि ते आदर्श मलिनमांथी प्रतिबिंबतमुखमलिनतास्थानीयन्नोग (सांख्यकल्पना जूठी ठे. ए त्रण एकार्थ ठे. अतएव गौतमसूत्र इस्युं ठे।

बुद्धिरूपलब्धिर्ज्ञानमित्यनर्थान्तरमिति ॥ एहनो भेद खिन्न थको तुं शुं करे छे? समो अर्थ ज्ञान मान्य ॥ ७६ ॥

॥ बुद्धि नित्य तो पुरुषज तेह, ज्ञानप्रवृत्ति इछा सम गेह ॥ जो अनित्य तो किहां वासना, प्रकृति तो शी बुद्धिसाधना ॥ ७७ ॥ अर्थः—बुद्धितत्त्व जे सांख्य माने छे ते नित्य विकल्पें दूषे छे. जो ज्ञानादिक धर्माश्रयबुद्धि नित्य मानीयें तो तेहज पुरुष छे, जे माटें ज्ञान, इछा, प्रवृत्ति (सम गेह के०) समानाश्रय छे. ज्ञानप्रवृत्तिनुं व्यधिकरणपणुं कल्पवुं अनुचित छे. तथा बुद्धि नित्यपुरुषोपाधिरूप न टले, तो मुक्ति पण केम होय? जो अनित्य मानो तो बुद्धिविनाशें वासना किहां रही? अने जो न रही तो पुनः प्रपंचोत्पत्ति केम होय? जो एम कहेशो के, बुद्धि विनाशें प्रकतें लीन वासना रही तो बुद्धि साधनानुं शुं काम? प्रकृत्याश्रितज्ञानादिगुणाविर्भावें ज कार्य थाशे ॥ ७७ ॥

॥ अहंकार पण तस परिणाम, तत्त्व चउवीसतणुं किहां ठाम ॥ सकति विगति प्रकतें सवि कहो, बीजा तत्त्व विमासी रहो ॥ ७८ ॥ अर्थः—बुद्धितत्त्व मिथ्या तेवारें तत्परिणाम अहंकारादिक पण मिथ्या. चोवीश तत्त्वनुं ठाम किहां होय? चोवीश तत्त्वना धर्मशक्ति विगतें करी प्रकतिबीज सर्व कहो, बीजा तत्त्वबुध्यादिक छे, ते विमासीने रहो. एटले प्रकृतिविलास ते अजीवतत्त्वविलासज हुउं. जीवतत्त्वतो मुख्य बीजा उन्नयपरिणाम रूप छे. एम नवतत्त्वप्रक्रिया तेहज शुद्ध थइ जाणवी ॥ ७८ ॥

॥ विरमे रमे यथा नर्त्तकी, अवसर देखी अनुन्नवथकी ॥ प्रकृति अचेतन किम तिम रमे, विरमे जो करता नवि गमे ॥ ७९ ॥ अर्थः— नाटकणी पोताना अनुन्नवथी कार्य नाशादिकने विषे रमे, तथा अवसर देखी दानादिक पामी विरमे, तेम प्रकृति अचेतन छे, ते केम रमे? अने विरमे? जो करता पुरुष तुजने न गमे ॥ एवं च ॥ रंगस्य दर्शयित्वा निवर्त्तते नर्त्तकी यथात्मानं ॥ पुरुषस्य तथात्मानं प्रकाश्य विनिवर्त्तते प्रकृतिः ॥ इत्यादि शिष्य कहे छे, ते शिष्य धंधमात्र कहेवुं. पुरुषने आत्मदर्शन प्रकृति करे, ते अचेतनने न संन्नवे. नवा तिहां प्रयोजन तद्ज्ञान छे ॥ ७९ ॥

॥ प्रकृतिदिदृक्षायें जिम सर्ग, शांति वाहितायें मुक्तिनिसर्ग ॥ कर्त्ताव्रिण ए काजविशेष, तिहां वलगे नय अन्य अशेष ॥ ८० ॥ अर्थः— प्रकृति

दिदृक्षायें (सर्ग के०) सृष्टि जेम सांख्य कहे छे, तेम (निसर्गमुक्ति के०) स्वभावमुक्ति शांतिवादितायें होय, ए बे लक्षण करतांना छे. ते विना जो प्रकृतिपरिणामनां लक्षण कहीयें, तो कालनां लक्षण थाय. तिहां अन्य अशेष नय वर्जे, ते सर्वना अर्थनो अनुग्रह करवा पांच कारणसमवाय मानवो. तेवारें कर्त्ता मुख्यपणें आवे ॥ उक्तं च ॥ कालो सहाव णियइ, पुव्व कयं पुरिसकारणोवगतं ॥ समवाए समत्तं, एगंतं होइ मिच्छत्तं ॥ १ ॥ ७० ॥

॥ प्रकृतिकर्म ते माटे गणो, ज्ञानक्रियाथी तस क्षय भणो ॥ अशुद्ध भाव करता संसार, शुद्ध भाव करता भवपार ॥ ७१ ॥ अकर्तृअभोक्तृवादिनोगतो॥ अर्थः— तेमाटे प्रकृतिने कर्मनुंज नाम गणो, प्रधान कर्म संस्कार वासना विद्या सहजमल ए सर्व एकार्थज शब्द छे दर्शनभेदें ते कर्मनो क्षय ज्ञान शुद्ध भाव छे. ते भवपारनो कर्त्ता छे ॥ अप्पा कत्ता विकत्ता य, सुहाण य दुहाण य ॥ इत्यादि शास्त्रवचनो पण छे ॥ ७१ ॥ अकर्त्ता अभोक्ता आत्मा माने छे ते वादि गया. इहां समकेतनां चार स्थानक पूर्ण थया ॥

॥ एक कहे नवि छे निरवाण, इंद्रिय विणास्यां सुख मंम्पाण ॥ दुःख अभाव मूर्छा अनुसरे, तिहां प्रवृत्ति पंमित कुण करे ॥ ७२ ॥ अर्थः— हवे समकितनुं पांचमुं मोक्षस्थानक कहे छेः— एकवादी कहे छे के, (निरवाण के०) मोक्ष नथी. इंद्रियविलासविना मुक्ति मुख्य छे. तेना मंम्पाण छे. ते कोण सद्दहे. तोके अशेष विशेषगुणोच्छेदरूप वैशेषिकाभिमत मुक्ति मानो. दुःखाभवने अर्थेज मुमुक्षुप्रवृत्ति हशे. ते ऊपर कहे छे— दुःखाभावने पुरुषार्थ नथी. जेमाटें मूर्छावस्थायें पण अविद्या दुःखाभाव छे, तिहां कुप्रवर्त्ते पंमित करे, ॥ उक्तंच ॥ दुःखाभावोपि नावेद्य; पुरुषार्थतयेष्यते ॥ नहि मूर्छाद्यवस्थार्थं, प्रवृत्तो दृश्यते सुधीरिति ॥ १ ॥ ७२ ॥

॥ काल अनंते मुकतें जतां, होइ संसार विलय आजतां ॥ व्यापकने कहो केहो गाम, जिहां एक सुखसंपतिधाम ॥ ७३ ॥ अर्थः— जो मोक्षपदार्थ रात्रिदिवस जीवे करी भरातां अनंतो काल थयो तो आजतांइ ए जीवोने मुक्तिमां जतां संसारनो विलय थाय. एक एक युगमां एक एक मोक्षें जाय तो अनंता युग गया एटले कालें संसार खाली कां न थाय ॥ सत्या अनंता एव ह्यपवृक्तास्तथापि संसारस्य प्रत्यक्षसिद्धत्वादित्यादि करणावलीकारें कह्युं ते तो घटे के, जो कालानंत्यथी जीवपरिणामानंत्य अधिक

होय तेमाटे ए कल्पनामात्र छे. बीजुं आत्मा सर्वव्यापक कहे छे, तेहने ए क सुखसंपतिनुं घर एवो किहां गाम छे? के ज्यां ए जाय. क्रियावत्त्वाज्ञा वान्नात्मनः सिद्धिक्षेत्रगमनइत्यर्थः ॥ ७३ ॥

॥ किम अनंत इक गामें मिले, पहिलो नहिं तो कुंण शुं जले ॥ पहिला जव के पहेला मुक्ति, ए तो जोतां न मिले युक्ति ॥ ७४ ॥ अर्थः– वली मोक्षमां अनंता सिद्ध मानो तो ते एकस्थानकें अनंता केम मले? जो प हेलो अनादिसिद्ध न मानो तो बीजा सिद्ध थाय ते कोणमांहे जले? प हेलो सिद्ध नहीं तो कोण सिद्धने सर्व साधक नमे? तेवारें पहेला संसार के पहेलां मुक्ति? प्रथमपक्षें मुक्ति सादि थइ, एटले आदिसहित थइ? बी जे पक्षें बंधव्याघाते बंधविना मुक्ति केम होय? ए युक्ति जोतां मलती नथी ॥ ७४

॥ जिहां न गीत न जाव विलास, नहिं शृंगार कुतूहल हास ॥ तेह सु गतिथी कहे कृपाल, वनमां जन्म्यो जलो शृंगाल ॥ ७५ ॥ अर्थः– जि हां गीतगान नहीं, जावविलास नहीं, शृंगाररस नहीं, (कुतूहल के०) ख्याल नहीं, ते मुक्तिमांहे शुं सुख हशे? ते मुक्तीथी तो ऋषी कहे छे के, कृपाल वनमांहे सीयाल जन्म्यो होय तो जलो ॥ वरं वृंदावने रम्ये, शृगालत्वं सदैवहि ॥ न तु वैशेषिकीं मुक्तिं, मे मतिर्गंतुमिच्छति ॥ ७५ ॥

॥ जव अजिनिंदि एहवा बोल, बोले ते गुणरहित निटोल ॥ जेहनें नहीं मुगतिकामना, बहु संसारी तेह डुरमना ॥ ७६ ॥ अर्थः– जवअजिनंदि लक्षणवंत जे कह्या छे, ते मुक्ति उच्छापवाने एवा बोल बोले छे, तेने गु णरहित कहियें, अने निटोल, निःश्रूक कहियें, जेहने मोक्षनी कामना ए टले वांछा नथी, ते डुर्मना एटले माठा मनवाला बहुल संसारी एटले अ जव्य अथवा डुर्जव्य कहियें. एतो जे चरमपुजलावर्त्तवर्त्ती होय, तेनेज मुक्तिकामना होय ॥ उक्तंच ॥ मुरकासउवि न तस्स, होइ गुरुजाव मलप्प हावेणं ॥ जह गुरुवाहिविगारन, जाउ पछा सउसम्मं ॥ ७६ ॥

॥ इंडियसुख ते डुखनुं मूल, व्याधि पिंमिगण अतिप्रतिकूल ॥ इंडियवृ त्तिरहित सुख सार, उपसम अनुजवसिद्ध उदार ॥ ७७ ॥ अर्थः–पहे लां मोक्ष सुखरूप साधे छे, इंडियसुख जे छे ते डुःखनुं मूल छे, ते व्याधि प्रतिकार छे, क्षुधायें पीडित होय तेवारें जोजन करवुं जलुं लागे, तृषायें होठ सूकायें, तेवारें पाणी पीवुं जलुं लागे, हृदयमांहे कामाग्नी दीपे ते

वारें मैथुननी इच्छा ऊपजे,ए व्याधिना औषध छे. तेने सुख जाणे छे ॥ मिथ्या यत् सूक्ष्म क्षुधार्त्तः सन् साक्षी कवलयति मांस्या कवलितान्. तृषा शुष्यत्यास्ये पिवति च सुधास्वा द्वसलिलं ॥ प्रदीप्तिकामाग्नो निजहृदि वृषस्यत्यथ वधूं, प्रतीकारो व्याधेः सुखमिति विपर्यस्यति जनः ॥ १ ॥ इंद्रियवृत्तिरहित ध्यानसमाधिजनित उपशम सुख छे. तेहज (सार के०) निरुपचरित छे. ते क्षण एक रागद्वेषरहित थइ आत्मामांहे जोइयें ते अनुभव सिद्ध छे ॥ उक्तं च प्रशमरतौ ॥ स्वर्गसुखानि परोक्षाण्यत्यंतपरो क्षमेव मोक्षसुखं प्रशमसुखं प्रत्यक्षं न परवशं नचाप्राप्तं तथा यत् सर्वविषयकांक्षोद्भवं सुखं प्राप्यते थारोगेण तदनंतकोटि गुणितं मुधैव लभते वीतरागः ॥ इत्यादि ॥ ७७ ॥

॥ तिहां अभ्यास मनोरथ प्रथा,पहिलां आगें नवि परकथा ॥ चंद्रचंद्रिका शीतल धाम, जिम सहजें तिम ए सुखधाम ॥ ७८ ॥ अर्थः—ते उपशमसुख मांहेलां अभ्यास अने मनोरथ तेनी (प्रथा के०) विस्तार होय ॥ दृष्टंचामासिकं मानोरथिकं च सुखं लोकेऽपि ॥ पछी निर्विकल्पकसमाधें परद्रव्यनी कथाज न होय ॥ उक्तंच ज्ञानसारे ॥ परब्रह्मणि मग्नस्य, श्लाघा पौजलिकी कथा ॥ कामीचामीकरोन्मादाः, स्फारा दारादराः क्व च ॥ १ ॥ अभ्यासमाश्रित्याप्युक्तं प्रशमरतौ ॥ यावत्परगुणदोषपरिकीर्त्तने व्यावृत्तं मनो नवति ॥ तावद्वरं विशुद्धैच व्यग्रं शक्तो मनः कर्त्तुं ॥१॥ चंद्रनी चंद्रिका जेम सहेजे शीतल होय तेम आत्मस्वभावस्वरूप उपशम जे छे ते सदे सुखनुं ठाम छे ॥ ७८ ॥

॥ तरतमता एहनी देखियें, अति प्रकर्ष ते शिव लेखिये ॥ दोषावरण तणी पण हाण, इम निःशेष परमपद जाण ॥ ७९ ॥ अर्थः—ए शम सुखनी तरतमता उत्कर्षापकर्ष देखे, जे अतिप्रकर्ष ते (शिव के०) मोक्ष लेखवियें. दोषावरणतणी हाणे पण तरतम भाव छे. जे निःशेष ते परम पद जाण ॥ उक्तंच ॥ दोषावरणयोर्हानिः,शेषारूपतिशायनात् ॥ क्वचिद्यथा स्वहेतुभ्यो, बहिरंतर्मलक्षयः ॥ १ ॥ इति अष्टसाहस्र्याम् ॥ दुःखीभावथी पण सिद्धने सुखज कहेवुं ॥ ७९ ॥

॥ दुखहोवे मानस शारीर,जिहां लगें मन तनु वृत्ति समीर ॥ तेह टले दुखनासे सुख, नहिं उपचार विशेषें मुख्य ॥ ८० ॥ अर्थः—ज्यांलगें मन तनु वृत्ति रूप (समीर के०) वायु ते विस्तारवंत होय त्यांलगें मननुं

अने शरीरनुं डुःख होय, तेह टले. तेवारें निस्तरंगसमुइसमान आत्मदशा होय ते डुःख नहीं. उपचारविशेषें ते (सुरक के०) सुख ठे ॥ उक्तंच ॥ प्रशमरतौ ॥ देहमनोवृत्तिन्यां नवतः शारीरमानसे डुःखे तदन्नावात दन्नावे सिद्धं सिद्धिसुखं ॥ ए० ॥

॥ सर्व शत्रुक्षय सर्वज रोग, अपगम सर्वारथ संयोग ॥ सर्वकामनापूरित सुरक, अनंतगुण तेहथी सुखमुरक ॥ ए१ ॥ अर्थः—कोइने घणा शत्रु ठे तेमांथी एक शत्रुनो क्षय थयो सांनले तो तेने कहेवुं सुख थाय ? तेवारे सर्व शत्रुउनो क्षय थवाथी महासुख होय तेमां शुं कहेवुं ? तेम सर्व रागादि शत्रुक्षयजनित अतिशय सुख मोक्षमांहे ठे. तथा शोल रोग समग्र ऊपना होय ते मांहेलो एक रोग टले तेवारें घणुं सुख ऊपजे, अने शोले रोग टले तेवारें पूरुंज सुख ऊपजे. तेम सर्व कर्मव्याधिविलयजनित सिद्धने सुख ठे, जेमाटे एक अर्थयोगें जे सुख उपजे तेथी सर्व अर्थयोगें अनंतगुण सुख उपजे. तेम सर्व अर्थ सहेजगुण सिद्धिजनित सुख मोक्षमांहे ठे, जेम एक इछा पूर्ण थातां जे सुख उपजे, तो सर्व इछा पूर्ण थातां तो तेथी अनंतगुणुंज सुख होय. एम सर्व अनिछारूप वैराग्येछा पूर्ण थतां अनंत सुख सिद्धने ठे. ॥ उक्तं च ॥ विंशिकायांतें ॥ सवं तु सन्नवाहि, सवठ सन्नसिद्धांऊं खयविगमजोगपत्तीहि ? होइतत्तोअणंतगुणं ॥१॥ इत्यादि ए१

हवे अनंतमोक्षसंख्या केम ठे ? एवुं पूठे ठे, तेहनो उत्तर कहे ठे.

॥ घटे न राशि अनंतानंत, अक्षतन्नवनें सिद्ध अनंत ॥ परिमित जीव नयें न्नवरिक्त,थाये जन्म लहे कइ मुक्त ॥ ए२ ॥ अर्थः—सिद्धना जीवोनी संख्याराशि अनंत ठे ते घटती नथी. एवा प्रश्ननो उत्तर कहे ठे के, अनंतानंतराशि (न्नव के०) संसारी जीवोनी ठे, ते (अक्षत के०) अखो अनें सिद्धपण अनंत ठे; त्रण कालना समयनी अनंत संख्या ठे,तेथी जीवोनी अनंतसंख्या घणी महोटी ठे, माटे एमां कशो वाध नथी. जे मतें ते परिमित जीवसंख्या कहे ठे, तेना मतें तो संसार खाली थवो जोइयें. नहींकां मोक्षमांहेथी जीव इहां पाठा आववा जोइयें ॥ उक्तं च ॥ मुक्तोपि वान्येतु न्नवं न्नवे वा, न्नवश्च शून्योस्तु मितात्मवादे ॥ षड्जीवकायं तुअनंतसंख्यं, न्नाप्यं तथा नाथ यथा न दोषः ॥१॥ इति स्याद्वादमंजर्यां ॥ ज्यारे ज्यारे न्नगवंतने पूठीयें त्यारें त्यारें एवुं कहे के एक निगोदनो अनंत

मो भाग मोक्षें गयो एहवे अनंत जीववादीयें किश्युं बाधक नथी ॥ ए२ ॥

॥ थया अने थासे जे सिद्ध, अंशनिगोद अनंत प्रसिद्ध ॥ तो जिन शासन शी नवहाणी, बिंडु गये शी जलधें काणी ॥ ए३ ॥ अर्थः-पूर्वें कहेली वातनेज स्पष्ट करे छे. जे अतीतअद्धायें सिद्ध थया अने अनागत अद्धायें जे सिद्ध थाशे ते सर्व मली एक निगोदना अनंतमा भाग प्रमाण सिद्ध थाशे. तो जिनशासनमांहे शी हाणी ? संसारसमुद्रमांहेथी एक बिंडु गयाथी शी काणी छे ? ए संख्या उत्कर्षापकर्षे निमित्त नथी. अतीताद्धाथी अनागताद्धा अनंतगुण छे तो पण सर्व मली एक निगोद जीवने अनंतमें भागे छे. ए परमार्थ जाणवो ॥ ए३ ॥

॥ व्यापकने नवि भवनी सिद्धि, बांधे छोडे क्रियविवृद्धि ॥ पण तनुमित आतम अमें कहुं, तिहां तो सघलुं घटतुं लहुं ॥ ए४ ॥ अर्थः- सर्व व्यापक जे आत्मा माने छे, तेने परभवें जावुं नथी. तेवारें न संसार अने न मोक्ष एम घटे, पण अमे तो आत्मा (तनुमित के०) तनु एटले शरीर ते प्रमाण मानीयें छैयें. तिहां तो सघलुं ए घटतुंज लहियें छैयें. जेहवुं गति जात्यादिकने घटतुं आउखुं बांधे तेहने ते उदय आवे तेवारें ते क्षेत्रें जीव जाय. वक्रगति होय, तो आनुपूर्वी तिहां खपावी आणे. मोक्षें तो पूर्वप्रयोगादि कारणे समयांतरें प्रदेशांतर अणफरसतो नियतस्थाने उपजे. तिहां शाश्वतानंदघन थइ रहे छे सही ॥ ए४ ॥

॥ योग निरोध करी भगवंत, हीन त्रिभागवगाह लहंत ॥ सिद्धिशिला ऊपर जइ वसे, धर्मविना न अलोकें धसें ॥ ए५ ॥ अर्थः-केवलज्ञानी भगवंत आवर्जीकरण करी, योगरुंधी चरमभवें जेटलुं शरीर छे तेनी त्रिभागहीनावगाहना पामतो सिद्धशिला ऊपरें जइने वशे. इहां कोइ पूछे के, ते थी आगल केम जातो नथी ? ते ऊपर कहे छे, के (धर्मविना के०) धर्मास्तिकायविना अलोकाकाशमांहे धसे नहीं ॥ ए५ ॥

॥ जिहां एक तिहां सिद्ध अनंत, पय साकरपरें भले एकंत ॥ रूपीनें भलतां सांकडुं, रूपरहितनें नवि वांकडुं ॥ ए६ ॥ अर्थः-जिहां एक सिद्ध छे, तिहां अनंता सिद्ध छे, दूध साकरनी पेरें एकठा भले छे. एकांत ए पण एकदेशिदृष्टांत रूपीने मांहोमांहे भलतां सांकडुं होय, पण रूपरहितने भलतां किश्युंयें वांकडुं नथी ॥ धर्माधर्माकाशादिवत् ॥ अत्रगाथा ॥

जइय एगो सिद्धो, तइ अणंता जवरकयविमुक्का ॥ अन्नुन्नमाहावाहं, चि ठंति सुहीसुहेपत्ता ॥ १ ॥ ए६ ॥

॥ काल अनादें सिद्ध अनाद, पूर्व अपर तिहां होय विवाद ॥ जव निर्वाण तणो क्रम योग, शाश्वत जाव अपर्यनुयोग ॥ ए७ ॥ अर्थः– संसारी टलीने सिद्ध थाय छे, तेवती सिद्ध जे छे, ते यद्यपि सिद्धजावें प्र थम छे, पण कालनी अनादिता छे, तेमाटे प्रवाहें अनादिसिद्ध कह्या. ति हां पहेला कोण अने पछी कोण ए विचार न होय. निर्वाणनो अनुक्रम योग कहेवाय नहीं. शाश्वता जावनो पाछो उत्तर नथी. एमज पहेलां कू कडी के पहेलां इंडुं? रात्रि पहेलां के दिवस पहेलां? इत्यादि जाव श्रीजग वतीसूत्रमध्ये कह्या छे, जे क्षण वर्त्तमानत्व पाम्यो ते अतीत थयो. पण तेमां पहेलो अतीत समय कह्यो, एम कहेवाय नहीं. तेम संसारी टल्यो ते सिद्ध थयो, पण तेमां पहेलो कोण प्रवाहें एम न कहेवाय. अनादिसिद्ध अनादिसिद्ध तो कहियें. व्यक्तें न कहियें. ॥ उक्तं च विंशिकायां ॥ एसो आणाइमचिय, सुद्धोयतउ आणाइ सुद्धुत्ति ॥ जुत्तोअ पवाहेण, ए अन्नहासु द्धयासम्मं ॥१॥ इत्यादि ॥ ए७ ॥

॥ मोक्षतत्त्व इम जे सद्दहे, धर्मेमन थिर तेहनुं रहे ॥ मुक्ति इछा ते मोटो योग, अमृत क्रियानो ए संयोग ॥ए८॥ अनिर्वाणवादी गतः ॥ अर्थ– एमजे परीक्षा करीने मोक्षतत्त्व सद्दहे, तेनुं धर्मने विषे मन थिर रहे. जे मुक्तिनी इछा छे ते अमृतक्रियाना रसने संयोगें महोटो योग छे चरमपुद्ग लपरावर्त्तें अपुनर्बंधकादिकने जारें जे कर्ममल होय ते तेहने न होय ॥ उक्तंच विंशिकायां ॥ मुरकासउवि एएछ, होइ गुरुजाव मलयपनावेणं ॥ जहगुरु वाहिविग्गरेण, जाउव सास उस्सासं ॥ए८॥ अनिर्वाणवादी निरस्त थयो ॥

॥ नास्तिक सरिखा जापे अन्य, छे निर्वाण उपायें शून्य ॥ सरज्युं होसे लहेशुं तदा, करो उपाय फिरो नर सदा ॥ एए ॥ अर्थः– हवे अन्यवा दी नास्तिक सरखा जाखे छे के, निर्वाण छे पण तेनो उपाय शून्य छे. यह छायें होय, जेवारें सरज्युं हशे तेवारें लहेशुं. ते कहे छे के, जे माटे (नर के० मनुष्य तमे उपाय करो, सदाइ फरो पण मोक्ष तो सरज्युं हशे तेवारें मलशे॥ उक्तंच ॥ प्राप्तव्यो नियतिबलाश्रयोर्थः सोवश्यं जवति नृणां शुनोऽशुनोवा ॥ जूतानां महति कृतेपि हि प्रयत्ने, नाजाव्यं जवति न जाविनोऽस्ति नाशः ॥एए॥

॥ दर्शन ज्ञान चरण शिव हेत, कह्यो तो श्यो पहिलो संकेत ॥ गुण विण गुण जो पहिला लह्या, तो गुणमां शुं जाउ वह्या ॥ १०० ॥ अर्थः– मोक्षना उपाय रूप दर्शन ज्ञान चारित्र जो मोक्ष हेतु कह्यो छो तो श्यो संकेत छे ? गुण जो गुणविना लह्या तो गुणमांहे वह्यां शुं फ रो छो ? जेम गुणविना भवितव्यतायें गुण पाम्या तेम मोक्ष पण पामशो. जो एम कहेशो के पहेला गुण शक्तियें हता ते काल परिपाकें व्यक्तें थया, तो भव्यनी शक्ति मोक्षभावनी छे. ते कालपरिपाकें व्यक्तें प्रगट थाशे. कार णनो तंत किहां रह्यो. इत्यादि घणी युक्ति छे ॥ १०० ॥

॥ मरुदेवा विण चारित्र सिद्ध, भरह नाण दरपण घर लिद्ध ॥ थोडे कष्टें सीधा केइ, बहुकष्टें बीजा शिव लेइ ॥ १०१ ॥ अर्थः– वली एह ज वात कहे छेः– मरुदेव्याजी अत्यंतवनस्पति मांहेथी निकली क्यारें ध र्म न पाम्या. क्रियारूप चारित्र पाम्या विना भगवद्दर्शन जनित योगस्थैर्यें ज अंतकृत सिद्ध थयां. भरतचक्रवर्त्ति दीक्षा ग्रह्याविनाज भावना वलें द र्पण घरें ज्ञान पाम्या. माटे जो क्रियाकष्टेंज मोक्ष पामे तो तडत्कर्ष होय ते तो नथी. तेमाटे केटला एक भरतादिक थोडे कष्टें सिद्ध थया. केटलाए क गजसुकुमालादिक बहुकष्टें मोक्ष पाम्या ॥ १०१ ॥

॥ जेहनी जेहवी भवितव्यता, तिम तेहनें होइ निःसंगता ॥ कष्टसहे ते कर्म निमित्त, नियति विना नवि साध्य विचित्त ॥ १०२ ॥ अर्थः– माटे जेहने जेहवी भवितव्यता छे, तेहने तेम ते प्रकारें (निसंगता के०) मोक्ष लाभ होय छे, जेटलुं कष्ट सहेवुं छे तेटलुं वेदनीयादि कर्म निमित्त छे, नहीतो श्रीमहावीरने घणा उपसर्ग थया अने श्रीमल्लिनाथ प्रमुखने कोइ उपसर्गो न थयो, ते केम मले ? नियतिविना विचित्र साध्य न होय. अतएव प्रत्येकबुद्धसिद्धादिभेदस्तथाभवितव्यतेति ललितविस्तरायां ॥ १०२॥

॥ ज्ञानीयें दीठुं तिम जाणि, दीठ भवमां वृद्धि न हाणी ॥ काया क ष्ट करो शुं फोक, क्रिया देखाडी रंजो लोक ॥ १०३ ॥ अर्थः–जेम ज्ञा नीयें दीठुं छे तेम थाय छे एम निश्चय करी न जाणे,दीठ भवमांहे वृद्धि हानी थाती नथी उछो अधिको न थाय,तो शुं फोकट काया कष्ट करो छो, क्रिया देखाडीने लोकनें रंजो छो, जे कष्ट करशे तेहने अने जे कष्ट नहीं करशे तेहने पण ज्ञानीयें जेटला भव दीठ छे तेटलाज थाशे. उक्तंच ॥ नि

यतिद्वात्रिंशिकायां ॥ ज्ञानमव्यभिचारं चेज्जिनत्वे मा श्रमं कृथाः ॥ अथ तत्राप्यनेकांते जिनतां स्मतु को भवान् ॥ १०३ ॥

॥ काम भोग लंपट इम भणे, कारण मोक्ष तणा अवगणे ॥ कारज छे नें कारण नहीं, तेहने ए क्षति मोटी सही ॥ १०४ ॥ अर्थः—एम जे वादी कामभोगना लंपट छे, ते पूर्वोक्त रीते भणे छे. ते वादीउ मोक्ष तणा जे कारण छे, तेने अवगणे छे, उवेखी नाखे छे, तेहने ए क्षिति म होटी छे. एटले महोटुं दूषण छे, के जे कार्यरूप मोक्ष तो छे, अने तेना कारण नथी. एम तो स्वप्रवृत्तिज व्याघात होय. ए दंमथी कार्य कारण भा व साचुं मानवो ॥ १०४ ॥

॥ वायसताली न्याय न एह, सरजे तो सघले संदेह ॥ जो सरज्युं जं पे निसदीस, अव्यभिचारीशुं सी रीस ॥ १०५ ॥ अर्थः—ए (वायसता ली के०) काकतालीय न्याय कहीयें. जेम कागडो उमनार अने ताल फ ल पडनार, एम नहीं समजवुं. जेमाटे नियतान्वयव्यतिरेक छे. जो सर ज्युं थाय एम कहियें तो सघले संदेह थाय. केम सरज्युं हशे, प्रवृत्ति तो इष्टसाधनतानिश्चयथी थाय. जो सरज्युं रात्रदिवस कहियें छैये, तो घटा दिकनो अव्यभिचारि कारण दंमादिक छे, तेनी सार्थे शी रीश करशो ! ते म मोक्षना कारण ज्ञानादिक पण सद्दहवा ॥ १०५ ॥

॥ सरज्युं दीठुं सघले कहे,तो दंमादिक किम सद्दहे ॥ कारण भेली सरजि त दीठ, कहितां विघटे नवि निज इठ ॥ १०६ ॥ अर्थः—जो सर्वत्र स रज्युं दीठुं कहे छे, तो दंमादिक घटादिकना कारण केम सद्दहे. सरज्युं ते तत्प्रकारक सिसृक्षायेज. तेणें तो बाह्य कारण सर्व अन्यथा सिद्ध थाय. ए णें करी ॥ जं जहा तं भगवया दिठं, तं तहावि परिणमइ ॥ ए सूत्रव्या ख्यान थयुं. जेमाटे केवलज्ञान ते व्यापक छे, कारण नथी. तेहज कहे छेः—कारणभेली सरजित दीठुं एम कहेतां तो निज इष्ट विघटे नही जे माटे दंमादि कारण सहितज घटादिक सरज्या छे. एम कहेतां ज्ञानादि कारण सहितज मोक्ष सरज्यो ॥ १०६ ॥

॥ तृप्ति हशे जो सरजी हशे, भोजन करवा शुं धसमसे ॥ पापें उद्यम आगल करे, धरमें शुं सरज्युं उच्चरे ॥ १०७ ॥ अर्थः— अथवा अव्यभि चारी चोरपारदारिकनी सार्थें पण शुं रीश करे छे. तेतो सरज्युं छे तेज

करे ले. वली जो सरज्युंज नइश तेवारें तो सरज्युं हशे तेवारें पोतानी मेले तृप्ति थशे. नोजन करवाने शामाटे धसमसे ले? ए प्रमाणे जोतां तो पापना जेटलां कार्य ले, ते ते कार्यनां जे जे कारण ने. तेने सेववाना उद्यमने आगल करे ले. कृष्यादिक आरंन करतां तो पालो जोतो नथी. पण धर्मनी वेलायें गलीया बलदनी पेरें थइ रहे ले, अने सरज्युं हशे ते थाशे एम मुखमांथी शुं उच्चरे ले ॥ १०७ ॥

॥ पहेला गुणजे गुणविण थया, पाकी नवथितिनी ते दया ॥ थया जेह गुण ते किम जाय, गुणविण किम गुण कारज थाय ॥ १०८ ॥ अर्थः—पहेला गुणविना गुण थयो पली गुणनुं काम ते ऊपर कहे लेः— पहेला जें गुणविना गुण थया ते पाकी नवस्थितिनी दया ले. एटले ते नवस्थिति परिपाक कार्य जाणवुं. हवे ते थया जे गुण ते शुं जाय? केम रहे तेवारें अनन्यथासिद्धनियतावस्थिति पणे कारण केम होय? गुणविना गुणकार्य ते केम थाय? ॥ स्वाव्यवहितोत्तरोत्पत्तिकत्व सामान्याधिकरण्योनयसंबंधेन गुणविशिष्टगुणत्वावच्छिन्नं प्रति गुणः कारणं तदन्यगुणप्रतिकालविशेष इति तत्वम् ॥ १०८ ॥

॥ एक उपायथकी फल पाक, बीजो सहजें कालविपाक ॥ करमतणो इम जाणी नेद,कारणमां शुं आणो खेद ॥ १०९ ॥ अर्थः—नवस्थिति परिपाक तेपण आत्मनिष्ठ तथा नव्यता पर्याय ते गुणविना केम थाय? ते ऊपर कहे ले—एक उपायथी फलनो पाक थाय ले पलाल प्रमुखमां घालीने अकालें आंबा पचवीयें. बीजा सहेजें कालथकीज पाका होय ले, एम कर्मविपाकें एक ऊपाय होय ले, अने एक सहेजे ले. ए कारणना नेद जाणीयें बैयें. माटे कारणमां प्रायें शो कारण खेद आणो लो? केटला एक सहेजें थया तो हवे उद्यम शो करियें, एम शुं मुंजाउ लो? ॥ १०९ ॥

॥ अथवा गुणविण पूरव सेव, मृडुतर माटे होइ ततखेव ॥ तिम नवि गुणविण सिद्धि गरिष्ठ, तेहमां बहुलां कह्यां अरिष्ट ॥ ११० ॥ अर्थः—अथवा अपुनर्बंधकादिक्रिया ते पूर्व सेवा ले ते मृडुतर कार्य थाय तेमाटे गुणविना पण होय (तेम के०) तेणीपरें (ततखेव के०) तत्काल गरिष्ठ सिद्ध गुणविना केम? जेम महाविद्यानी सिद्धिमां वेतालादिक ऊठे तेम उत्कृष्टगुण सिद्धिमां बहुलां अरिष्ट होय ते गुणविना केम टले? अतएव श

मदमादिमंतने अधिकारिता ते जाणी मार्गप्रवृत्तें शमदमादि संपत्ति अन्यो न्याश्रय शास्त्रकारें टाल्या छे. अतुलशमदमादिमंतने अधिकारिता प्रवृत्ति विशिष्ट शमादि सिद्धि ए अभिप्राय ॥ ११० ॥

॥ भरतादिकनें छांमी पंथ, राजपंथ किरिया निर्ग्रंथ ॥ उवटे जातां को इ उगस्यो, तोपण सेर न तजीयें भस्यो ॥ १११ ॥ अर्थः—भरतादिक क्रिया कस्या विना भावनायेंज मुक्ति पाम्या, ते पंथने छांमीने पंथ एटले राजपंथ ते निर्ग्रंथक्रियाज कहियें. जे माटें कोइक उवाटें जातां उगस्यो लूंटाणो नहीं. तोपण भस्यो सहेर (नगर) न त्यजीयें, ए शुद्ध व्यवहार छे. अतएव भरताद्यवलंबन लेइ जे क्रिया उछेदे छे, तेने शास्त्रमां महापातकी कह्या छे. रोग घणा, औषधपण घणा, एम मार्ग भिन्न भिन्न छे, पण राजमार्ग व्यवहारज सद्दहियें ॥ १११ ॥

॥ तीरथसिद्धादिकनो भेद, निियत तिहां नवि क्रिया उछेद ॥ जाणी कष्ट सहे तप होइ, करम निमित्त न कहियें सोइ ॥ ११२ ॥ अर्थः—तीर्थसिद्ध अतीर्थसिद्धादि भेद नियति प्रमाणे छे, पण क्रिया उछेद न होय तत्कालें तत्सामग्री जनक होय. हवे जे एम कह्युं कें, कष्ट करवुं ते कर्म निमित्त छे, ते ऊपर कहे छे—जाणी कष्ट खमे ते तप होय पण कर्मवेदना मात्र नही. अतएव ॥ देहदुःखमहाफलंहोइात्वेति शेष कह्युं. आन्युपगमिक औपक्रमिक दुःखसहन गुण तेहज तप. तेहथी गुणवृद्धि अने गुणाप्रतिपात होय, क्रियानुं पण एहज फल ॥ अवदाम च ॥ गुणवृद्ध्यै ततः कुर्यात् क्रियां स्खलनामयीम् ॥ एकं तु संयमस्थानं,जनानामवतिष्ठते ॥ अतएव मार्गाच्यवन निर्जरार्थं परितोष्टव्याः दरी जहा इति तत्वार्थे प्रोक्तं दुःखस्यानादित्वात्तद्धयोऽनादेयश्चेत्कर्मणोऽनादित्वात्तन्मोक्षोपि तथा स्यात् स्वभावेसमवस्यानेन दुःखतत्सहनसंकल्पश्चेत् मोक्षे भवेच्च सर्वत्र निःस्पृहो मुनिसत्तम इतिवचनात्तदा मोक्षसंकल्पोऽपि नेति तुल्यमदः॥ ११२ ॥

॥ बहु इंधण बहु कालें बले, थोडे कालें थोडुं जलें ॥ अग्नितणी जिम शक्ति अभंग, तिम जाणो शिवकारण रंग ॥ ११३ ॥ अर्थः—कोइ घणे कालें मोक्षें जाय छे, कोइ थोडे कालें मोक्षें जाय छे. ते केम ? ते ऊपर कहे छे—जेम घणा इंधन होय ते घणे कालें बले, अने थोडुं इंधन होय ते थोडे कालें जले, पण अग्नीनी शक्ति अभंगज छे. तेम शिवकारण ते

ज्ञानादिकनो संग जाणो. क्रमे बहुकाल क्षपणीयने साधन बहुकालें खपावे. स्तोककाल क्षपणीयने साधन स्तोककालें खपावे. तथा स्वनाव ते जनयता तथा नियत छे. जो भोगवेज कर्म खपता होय तो केवारे कोइ मोक्षें जाय ज नहीं. चरमशरीरने पण शास्वादनादिक अपूर्वकरणांतने अंतःकोटाकोटि प्रति समये सात कर्मनो बंध छे. माटे क्रमें यथोचित कर्मसाधने जीव मोक्षें जाय इम सद्दहीयें ॥ ११३ ॥

॥ दंमादिक विण घट नवि होइ, तस विशेष मृदुनेदें जोइ ॥ तिम दल नेदें फलमां निदा, रत्न त्रय विण शिव नवि कदा ॥ ११४ ॥ अर्थः—दंमादिक विना घटादिक केवारें नीपजे नही. पण (तस विशेष के०) घटादि विशेष ते उपादान कारण जे मृत्तिकाविशेष तेथी होय. तेम रत्नत्रयविना मोक्ष कदापि न होय पण फल जे तीर्थंकरातीर्थंकरादि सिद्धावस्थारूप तद्भेद ते (दलनेदें के०) जीवदल नेदें होय. ॥ उक्तं च विंशिकायां ॥ एय सञ्च हेउ तुल्ल, नवत्तं हंदि य सव्वजीवाणं ॥ जंति एवय रित्ता, णो तुल्ला दंसणा इआ ॥१॥ विचित्रदर्शनादिसाधनोपनायकविचित्रानंतरपरसिद्धाद्यवस्थापर्यायोपनायक तथा नव्यत्वेतरकारणाक्षेपक मुख्य कारण धारवुं ॥ ११४ ॥

॥ सिद्धि न होय कोइ निजव्रत थकी, तोपण मत विरचो तेह थकी ॥ फलसंदेहें पण कृषिकार, वपे बीज लहि अवसर सार ॥११५॥ अर्थः—कोइ निजव्रतथकी चारित्रादिक क्रियाथकी कर्मवैगुण्यादिकें, सिद्ध न होय तोपण ए मोक्षसाधनथकी विरचसो मां, जेमाटे फल संदेहें पण (कृषिकार के०) करसणी जे छे ते सार अवसर वर्षाकालादि लइने बीज वपे छे, एटले वावे छे. अग्रिमकालनावि पवननैर्गुण्यादिसामग्री विघटक जाणी विरचता नथी. नहि फलावश्यंनावनिश्चयः प्रवृत्तौ कारणं किंतु प्रकृते इष्टोपायत्वनिश्चय एव ॥ ११५ ॥

॥ हेतुपणानो संशय नथी, ज्ञानादिक गुणमां मूलथी ॥ तेमाटे शिवतणो उपाय; सद्दहजो जिम शिवसुख थाय ॥११६॥ इति अनुपायवादीगतः ॥ अर्थः—एहज कहे छेः—ज्ञानादिक गुण जे मोक्ष साधन छे, तेमां हेतुपणानो संशय नथी. सामान्य व्यभिचार अनुगता गुरुधर्मारोपस्थिति विना अन्वयव्यतिरेकें ज्ञानत्वादिकें कारणता निश्चय छे. जे मोक्षें गया छे, तथा जे मोक्षें जाशे, ते ज्ञानादि त्रय साम्राज्यें, अतएव प्रकाशशोधगुप्ति

द्वारें ज्ञान तप संयमने मोक्षहेतुता अवश्यकें कही ॥ नाणं पयासयंसो, हउ तवोसंजमो अ गुत्तिकरो ॥ तिएह पि समाउगे, मुरको जिणसासणे नणिउ ॥ १ ॥ ए गाथायें कारणना प्रकाशादि व्यापार अजेवा मोक्षार्थी प्रवर्त्तें, ए मोक्षनो उपाय सद्दहजो. जेम सत्प्रवृत्तें शिवसुख थाय ॥ ११६ ॥ ए अनुपायवादी गयो. एम मिथ्यामतिना ठ स्थानक थया.

॥ ढाल ॥ चाल ॥ हवे नेदगुणना नांखीजे ॥ ए देशीमां ॥ मिथ्यामतिनां ए षट थानक, जेह त्यजे गुणवंतो जी ॥ सूधुं समकित तेहज पामे, इम नाखें नगवंतो जी ॥ नयप्रमाणथी तेहनें सूजे, सघलो मारग साचो जी ॥ लहे अंश जिम मिथ्या दृष्टी, तेहमां को मत राचो जी ॥ ११७ ॥

अर्थः— ए मिथ्यामतिना ठ स्थानक थयां तेमां एक नास्तिकवाद, बीजो अनित्यावाद, त्रीजो अकर्तृवाद, चोथो अन्नोक्तृवाद, पांचमो मोक्षानाववाद अने ठहो अनुपायवाद, ए ठ वादने जे गुणवंत त्यजे, ते सूधुं समकित पामे. तत्त्व परीक्षाजन्य अपाय रूप ज्ञान तेहज समकित ठे. उक्तंच ॥ संमतौ ॥ जं जं तत्त परिस्सा, सद्दहमाणस्स नावउ नावे ॥ पुरिसस्सा नणिबोहे, दंसण सद्दो हवइ जुत्तो ॥ १ ॥ षटस्थानविषय तत्त्वप्रकारक ज्ञानें सम्यक्त्ववंत नगवंत न थाय. सम्यक्दृष्टी ते अंशअंशथी केवली ठे, तेने नयप्रमाणें करी सघलो मार्ग साचो सूजे, अने मिथ्यादृष्टी ते एक अंशने तत्त्व करीने ग्रहे. बीजाशुं द्वेष करे, माटे तेमांहे कोइ राचशो मां ॥ ११७

॥ ग्रही एकेक अंश जिम अंधल,कहे कुंजर ए पूरो जी ॥ तिम मिथ्यात्वी वस्तु न जाणे, जाणे अंश अधूरो जी ॥ लोचन जेहनां बिहुं विकस्वर, ते पूरो गज देखे जी ॥ समकितदृष्टी तिमज सकल नय, सम्मत वस्तु विशेषें जी ॥ ११८ ॥ अर्थः— जेम कोइक अंधो पुरुष ते हाथीनो कोइएक अंश ग्रहीने ए कुंजर ठे, एम सद्दहे. जे गजना दंत ग्रहण करे, ते हाथीने मूलकप्रमाण कहे, जे सूंम ग्रहे ते दंमप्रमाण कहे, जे कर्ण ग्रहे ते सूपडा प्रमाण कहे,तेम मिथ्यात्वीपण वस्तुनो यावत्कर्म माने ठे, तावत्कर्मनान पूर्ण जाणे नही, अधूरो एक अंशनेदादिक जाणे, परंतु जेहना बेहु लोचन विकस्वर ठे, अनुपहत ठे, तेतो गजने करचरणदंताद्यवयवें, संस्थानरूपादिकें विशिष्ट पूर्ण देखे. सकलनयसम्मत वस्तु ठे, ते विशेषें जेम सम्यग्दृष्टी नयवादमां उदासीन थइ रहे, न निंदे, न स्तवे, कारण

विना नयभाषा एम बोले ॥ उद्दारिणिं अप्पियकारिणिंच, जासं न जासि ज्ज सया सज्जुज्जो ॥ इति वचनात् ॥ ११७ ॥

॥ अंशग्रही नय कुंजर ऊठ्या, वस्तु तत्व तरु जांजे जी ॥ स्याद्वाद अंकुशथी तेहनें, आणे धीर मुलाजे जी ॥ तेहनिरंकुश होये मतवाला, चालाकरे अनेको जी ॥ अंकुशथी दरबारें ठाजे, गाजे धरिय विवेको जी ॥ ११ए ॥ अर्थः– नयरूप कुंजर ठे, ते एकेक अंशग्रही उन्मत्त थका ऊठ्या ठे, ते वस्तुतत्त्वरूप (तरु के०) वृक्षनें जांजे ठे. अने जे धीर पुरुष ठे, ते अंशग्राही नयरूप कुंजरने स्याद्वाद अंकुशें मुलाजे आणे, वश करे. अने निरंकुश थइने निरपेक्षथको चालतो मतवालो होइने वेदांतादि वादमांहे प्रवेश करीने, अनेक चाला करे, जेम हाथीपण निरकुंश होय, तो हाट घर प्रमुख जांजी नाखे, स्वतंत्रथको वनमांहे फरे, अने जो तेने अंकुश होय तो ते अंकुशथी दरबारें ठाजे, विवेक धरी पट्टहस्ती थइ गाजे, तेम इहांपण जे स्याद्वाद अंकुशे शीखव्या, ते श्रीजिनशासनरूप राजद्वार ठे तिहां आप बलें गाजे ठे ॥ ११ए ॥

॥ नैयायिक वैशेषिक विचस्या, नैगमनय अनुसारें जी ॥ वेदांती संग्रहनय रंगी, कपिल शिष्य व्यवहारें जी ॥ रुजुसूत्रादिक नयथी सौगत, मीमांसक नय जेलें जी ॥ पूर्ण वस्तु ते जैनप्रमाणे, षट्दर्शन एक मेलें जी ॥ १२० ॥ अर्थः– नैयायिक अने वैशेषिक ए बे दर्शन नैगमनयनें अनुसारें विचस्या. ते पृथग् नित्यानित्यादि इव्य माने, पृथिवी परमाणुरूपा नित्या कार्यरूपात्वनित्या ए प्रक्रिया नैगमनय ते नयद्वयात्मक ठे.एकत्र प्राधान्येनोपक्रमात् मिथ्यात्वम् ॥ उक्तंच ॥ दोहिंवि णएहिं सठ, कुलूणयतहवि मिबत्तं ॥ जं सवि सम्मप्पहाणं, त्तणेण अमूण निरवेस्कं ॥१॥ तेम वेदांती संग्रहनयनें रंगें चाल्या, जेमाटे ते शुद्धात्मइव्य माने ठे ॥ उक्तंच ॥ दवियनयपडिसुद्धा, नयएण संगह परूवणाविसउ ॥ तथा कपिलशिष्य पच्चीश तत्त्व प्रक्रिया मानता व्यवहारनयें चाल्या. उक्तंच ॥ जं काविलेय दरिसणं, एयंदं चठियस्स वेत्तवं ॥ व्यवहार ते इव्यार्थिक जेद ठे. तथा सौगत ते चोथा रुजुसूत्रादिक नयथी थया. सौत्रांत्रिक, वैजाषिक, योगाचार, माध्यमिक, ए अनुक्रमे रुजुसूत्र, शब्द, समजिरूढ अने एवंजूत नयथी थया. तथा मी

मांसक उपलक्षणें वैयाकरणादिक नयनेदें नयसांकर्यं थया, अने पूर्ण एट जे पूरण नय नंग प्रमाणे वस्तु षट्दर्शन नये एक मेलवी जैनप्रमाणे छे. नइंमि छ दंसण, समूहमइ अस्सइ इत्यादि वचनात् ॥ १२० ॥

॥ नित्यपक्षमां दूषण दाखे, नय अनित्य पक्षपाती जी ॥ नित्यवाद मांहे जे राता, ते अनित्य नयघाती जी ॥ मांहो मांहे लडे बे कुंजर, नांजे निज कर दंतो जी ॥ स्याद्वाद साधक ते देखे, पडे न तिहां नगवंतो जी ॥ १२१ ॥ अर्थः– अनित्यनयना पक्षपाती क्षणिकवादी बौद्धादिक छे ते नित्यपक्षमांहे दूषण दाखे छे. अंकूरादिजनकाजनकत्वादिविरोधें क्षणिक बीजादि थापे छे. सदृशक्षणदोषें अनेदग्रहादि उपपादे छे तथा जे नित्यवादमांहे राता छे. ते अनित्यनयना घाती छे. ते एकांतें नित्य आत्मादिक माने छे ते मांहोमांहे बे हाथी लडे छे, अने लडतां थकां पोताना कर जे सूंढ तथा दांत तेने नाजे छे. अने जे स्याद्वादसाधक छे, ते तेमनी लडाइ देखे छे. पण नगवंत तिहां पडे नही. उदासीन रहे. उक्तंच ॥ अन्योन्यपक्षप्रतिपक्षनावाद्, यथा परे मत्सरिणः प्रवादें ॥ नयानशेषान विशेषमिछन्नपक्षपाती समयस्तथा ते ॥१॥ इति द्वात्रिंशिकायाम् ॥१२१॥

॥ बूटा रत्न न माला कहियें, माला तेह परोयां जी ॥ तिम एकेक दर्शन नवि साचा, आपहि आप विगोयां जी ॥ स्याद्वाद सूत्रें ते गूंथ्या, समकित दर्शन कहियें जी ॥ समुद्र अंशनी समुद्र तणी परे, प्रगट नेद इहां लहियें जी ॥ १२२ ॥ अर्थः–बूटा रत्नने माला पर्याय न कहियें, जे वारें परोयां होय तेवारें माला पर्याय कहियें. तेम एकेक दर्शन बूटा छे, ते एकांतानिनिवेशें साचा न कहियें. आपेंज आप विगोयां छे, ते स्याद्वादसूत्रें गुंथ्या होय, तेवारें सम्यग्दर्शन कहीयें. स्यात्कारें एकांतानिनिवेश टले. जेम मालाकारने पुष्पादिक सिद्ध छे, तेहनी योजन रूप व्यापार मात्र मालाकार अधीन छे, तेम सम्यग्दृष्टीने सिद्धदर्शनने विषे स्याद्वाद योजनमात्र व्यापार छे. तावताजितं जगत्. समुद्रअंशने समुद्रमां जेटलो नेद तेटलो इहां नयप्रमाणमां प्रगट नेद जाणवो. उक्तंच ॥ ना समुद्रो समुद्रो वा, समुद्रांशो यथोच्यते ॥ नाप्रमाणं प्रमाणं वा, प्रमाणांशस्तथा नय ॥ १ ॥ इति ॥ गीतार्थं सत्य कहेलुं चित्तमां नाविर्य ॥ १२२ ॥

॥ वचन मात्र श्रुत ज्ञाने होवे, निज निज मतआवेशो जी ॥ चिंता

खवचनें चराव्यो. जेवारें संजीवनी औषधी मुखमांहे आवी तेवारें स्वरूप प्रगट थयुं. तेम भावनाज्ञानवंत सद्गुरु ते भव्यप्राणिने अपुनर्बंधकादिक क्रिया मां तेरीतें प्रवर्त्तावे. जेरीतें तेने सम्यग्दर्शनरूप संजीवनी औषधी आवे, के जेथी तेनुं निश्चयरूप प्रगट थाय. मिथ्यात्वमय पशुरूप टली जाय. उक्तंच षोडशके ॥ आद्य इह मनाक् पुंस, स्तद्वारा दर्शनग्रहो भवति ॥ न भवत्यसौ द्वितीये चिंतायोगाद् यद्यपि चारिचरकचारणाविधानं ततश्चर मे सर्वत्र हि तादृशीस्तिगांभीर्यात् समरसापत्यापश्रोसत्यतमभावि ॥ उदक अमृत सरखां कह्यां छे. उक्तंच ॥ उदकपयोमृतकल्पं, पुसां मऽज्ञान एव मारय ॥ तद्विधिमत्त्व चतुर्गुरुर्विपयतृरूपद्दारिनियमेन ॥ १२३ ॥

॥ चरण करण मांहे जे अति राता, नवि स्व समय संभाले जी ॥ निज पर समय विवेक करी नवि, आतमतत्व निहाले जी ॥ सम्मति मांहे कह्युं तिण न लह्युं, चरण करणनो सारो जी ॥ तेमाटे ए ज्ञान अभ्यासो, एहज चित्त दृढ धारो जी ॥ १२४ ॥ अर्थः—जे साधु चरणसित्तरी करणसित्तरी मांहेज अत्यंत राता छे, स्वसमयव्यवहारथी स्वसिद्धांतार्थपरिज्ञाननिश्चयथी जडश्रुति विचारजन्य आत्मविवेक न संभारी, निजपर विवेक अण पामी, शुद्धात्मस्वरूप न निहाले, तेणें संमुग्धजीवाजीवादिज्ञानें क्रिया कीधी. पण चरणकरणनो सार न पाम्यो. जेमाटे शुद्धात्मज्ञाननो सार चरणकरणादिसाधन छे, ते तत्कारणीभूत भव्यत्वशुद्धिद्वारें उपकारी छे. मिथ्याज्ञानोन्मूलननुं कारण तत्वज्ञान छे, साधनमांहे पण ज्ञान अंतरंग छे, क्रिया बहिरंग छे, ए सर्व संमतिग्रंथ मध्ये कह्युं छे. तथा गाथा ॥

चरणकरणप्पहाणा, ससमय परसमय मुक्कवावारा ॥ चरणकरणस्स सारं, णिच्छिय सुद्धं ण याणंति ॥१॥ श्रीदशवैकालिक मध्येपण "पढमं नाणं तउ दया" ए उपदेश छे. तिहां ज्ञान ते चारित्रोपयोगें षड्जीवनिकायानें संमुग्धपरिज्ञान एम जाणी मनःसंतोष करवो. जेमाटे तेहनी हेतु स्वरूप अने अनुबंध्यादि शुद्धि करवी. ते परीक्षारूप निश्चयज्ञान विना न होय. निश्चयज्ञाननेंज निश्चय चारित्र आवे. उक्तंच आचारांगे ॥ जं सम्मति पासहा, तं मोणंति पासहा ॥ जं मोणंति पासहा, तं सम्मति पासहा ॥ इत्यादि एम कहेतां अगीतार्थ साधु क्रियावंत छे, तेने चारित्र नावे. कोइ कहेशे के, एम कां कहो छो? तेने कहियें के, जो गीतार्थ निश्चय न होय, तो नहींज आवे. जो गीतार्थनो निश्चय होय तो उपचारें चारित्र होयज. उक्तंच ॥ गीयच्छो य विहारो, बीउ गीयच्छनिस्सहो नणिउ ॥ इत्तो तइअविहारो, नाणुन्नाहो जिणवरेहिं ॥ १२४ ॥

॥ जिनशासन रत्नाकरमांथी, लघुकपर्द्दिका माने जी ॥ उद्धरिउ एह नाव यथारथ,आप सकति अनुमाने जी ॥ पण एहने चिंतामणि सरिखा, रतन न आवे तोलें जी ॥ श्रीनयविजय विबुध पय सेवक, वाचक जस इम बोले जी॥ इति श्रीसम्यक्त्व चतुष्पदी समाप्ता ॥ लोकगिरासमर्थित नयप्रस्थानषट्स्थानकव्याख्या संघमुदे यशोविजय श्रीवाचकानां कृतिः ॥

अर्थः– (जिनशासन के०) प्रकरण परिसमासें एटले जिनशासनरूप रत्नाकर ते मांहेथी ए षट्स्थानक नाव उद्धरिउ. ए उद्धार ग्रंथ यथार्थ छे. जिनशासनरत्नाकरने लेखे ए ग्रंथ लघुकपर्द्दिका मान छे. अने रत्नाकरतो अनेक रत्नें नर्यो छे. ए उपमा गर्व परिहारने अर्थे करी छे. पण शुद्धनाव एवा विचारियें तो चिंतामणी सरखा रत्नपण एने तोले नावे. ग्रंथकर्त्ता गुरुनामांकित यश एवुं पोतानुं नाम कहे छे, एटले श्रीनयविजयविबुधना पदनो सेवक वाचक श्रीयशोविजय उपाध्याय एणीपरें बोले छे ॥१२४॥ इतिश्रीसम्यक्त्व चोपई समाप्ता ॥ श्रीराजनगर एटले अहमदावाद नगरने विषे तिहां प्रसिद्ध जे हेमश्रेष्ठिसुत श्रीताराचंदनाम्ना तेनी प्रार्थना थकी लोक नाषायें करी नयप्रस्थान एटले नयमार्ग तेणे करी षट्स्थानकनी व्याख्या श्रीसंघने हर्षने काजें श्रीयशोविजयजीनी कृति जाणवी ॥

संतोष विषे सोरठा.

॥ हियडा कर संतोष, होणहार ते होयसी ॥ दैव न दीजें दोष, ठेहा लाभ न ठंभियें ॥१॥ दोहा ॥ नांहि सुख संतोषविन,कोटी करो उपाय ॥ चक्रवर्त्ति हू डुःखीव्है, देव सु अधिक दिखाय ॥२॥ मानि न तामें डुःख सुख, नांहि वस्तुमें रंच ॥ पदार्थको नहिं अंत कहुं, कर संतोष प्रपंच ॥ ३ ॥ नृप असंतोषी डुखी, सुखि विरक्त संतोष ॥ कहो सौख्य कामें रहत, सब मनहीको तोष ॥ ४ ॥ जवलों नहि संतोषहिय, तवलों डुःखी सोई ॥ जब संतोष भयो उदय, तासम सुखि नहि कोइ ॥ ५ ॥ विरक्तता में सुख रहत, तस कारण संतोष ॥ जो यति व्है आशा करै, तौ तस डुखको दोष ॥ ६ ॥ जब दमडीकी चाह भइ, तब दमडीको होय ॥ जब दमडीकी चाह गइ,तब सम दीपत सोय ॥ ७ ॥ प्रापतिमें कबु हर्ष नहिं, शोक हानिमें नांहि ॥ सो संतोषी जानियें, लेश डुःख नहिं तांहि ॥ ८ ॥

दैव विषे सोरठा.

॥जाता तणां जुहार, वलतातणा वधामणा ॥ दैवतणो व्यवहार, मेलिये के मिलियें नहीं ॥ १ ॥ दोहा ॥ सरवर केरे दीहडे,कंठे कंठे नीर ॥ दैव संयोगे विधि वसें, कम्यामांहि करीर ॥ २ ॥ दैवह रूठो शुं करे, नाहुं उथले कूअ ॥ के वेस्या घर पाववे, के रमडावे जूअ ॥ ३ ॥ दैव न काहू तें टरत, लिख्यो करै सो सत्य ॥ विधिने दैव कियो प्रगट, तांहि न त्यागत नित्य ॥४॥ दैव कर्म वश है जगत, दोमें आदी कौन ॥ याको करौ विचार जन,सुख पावहुगे जौन ॥५॥ दैव नांहि इतही अधिक, दैव देवमें श्रेष्ठ ॥ देव दैववश पुनि गिरत, भोग न पुनी अनिष्ट ॥६॥ दैव न होवै अन्यथा, कथा सुनो जगमांहि ॥ राम दैव वश वन फिरे, रावण नाश करांहि ॥७॥

प्रीति विषे दोहा.

॥ प्रीति रीति कबु औरहै, जाणे जाणणहार ॥ गुंगे गुड खाया तेणो, स्वाद कहे शुं बार ॥ १ ॥ प्रीत मेह अरु मोरडी, आवत दे अति मान ॥ पुकारि के जगमें कहत, आवत मेह महान ॥ २ ॥ मेह पिछानत मोर नहि, मोर करी तस प्रीत ॥ पुर्व जन्मके कर्मथें, होत प्रीत अस रीत ॥ ३ ॥ प्रीत प्रीत सब जन कहे, जुदी प्रीतकी रीति ॥ लोह चमक जड दोउ पैं, देखत चलत सुनीति ॥ ४ ॥

अथ

॥ गुर्जरभाषासहित दृष्टांतशतकस्य प्रारंभोऽयम्॥

॥ शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥

॥ नत्वा श्रीऋषभं सदा वृषधरं सौख्याकरं सुंदरं, देवेंद्रादिनुतं मुनींद्रम हितं पौरस्त्यतीर्थंकरम् ॥ श्रोतृणां प्रतिबोधकं सुखकरं दृष्टांतकानामहं, कुर्वे काव्यशतं निजापरनृणां व्याख्यानसद्धेतवे ॥ १ ॥ अर्थः—ग्रंथकर्त्ता मंगलाचरणने अर्थे श्रीतीर्थंकरने नमस्कार करे छे. जे निरंतर वृष जे धर्म तेने धारण करनार, सुखना जंमार, तथा सुंदर मनोहर रूपवंत, वली दे वेंद्रादिकें जेमने नमस्कार करेलो छे, अने पुंमरीकादिक महामुनियें जेम नुं पूजन करेलुं छे, एवा जे प्रथम तीर्थंकर श्रीऋषभदेव जगवान तेमने ग्रंथकर्त्ता कहे छे के, हुं नमस्कार करीने, सांजलनारने बोधनुं करनार, त था जव्यजीवने मांगलिकनुं करनार एवुं अने पोताने तथा अन्यजनोने व्याख्यान करवानां रूडा कारणमाटे दृष्टांतना सो काव्यनी अर्थात् दृष्टां तशतक नामा ग्रंथनी हुं रचना करुं छुं ॥ १ ॥

तिहां संसारसुखने मधाबिंडुनी उपमा दईने पहेलो दृष्टांत कहे छे.

॥ कश्चित्काननकुंजरस्य जयतो नष्टः कुबेरालयः, शाखासु ग्रहणं चकार फणिनं कूपे त्वधो दृष्टवान् ॥ वृक्षो वारणकंपितोऽथ मधुनो, बिंदूनितो लेढि स, लुब्धश्चामरशब्दितोऽपि न ययौ संसारसक्तो यथा ॥ २ ॥ अर्थः—कोइक पुरुष, वनमां जतां कोइक हाथीने देखी तेना जयथी नागो. ते जेवारें हा थी तेनी नजीक आव्यो, तेवारें ते पुरुष कुबेरालय एटले कुबेरस्य आलयः कुबेरालयः अर्थात् वडनी पासेना कूवामां लटकती एवी एक वडवृक्षनी जे माल, तेने ग्रहण करतो हवो. एटले जयथी आकुल थयेलो थको कूवा मां लटकती वडवाइने पकडी अधवचाले लटकी रह्यो. तेवार पछी ते पु रुष हेतुं जुवे छे,तो कूआनेविषे चार महोटा सर्प (अजगरने) देखतो ह वो. अने उपर जोयुं तो, जे वडवाइने ते पोतें पकडी रहेलो छे. ते वड वाइने एक कालो उंदर अने बीजो धोलो उंदर एवा बे उंदर कापे छे. व ली तेनी उपर एक वडनी मालें महोटो मधुपूडो वलगेलो छे. एवा सम यमां हाथीयें आवीने ते वडवृक्षने कंपाव्युं. एटले धंधोल्युं. तेथी मधुपू

डानी माखीउ उडीने ते पुरुषनें करडवा लागी. वली मधूआल पण फूटी पड्यो. तेमांथी रहीरहीने मधुनो बिंदू ते पुरुषना ललाट उपर पडवा लाग्यो. ते रेलो उतरतो उतरतो ते पुरुषना होठ उपर आव्यो. तेने तेणें जीनें करी चाख्यो. तेवारें मीठाश आवी, पढी ते वारंवार पडता एवा मधुना बिंदूउमां आसक्त थयेला पुरुषने विमानमां बेसी जनारा कोइ देवतायें विद्याधरें बोलाव्यो. अने कह्युं के, हे पुरुष ! तुं आ विमानमां बेश, अने म्हारी साथें चाल, हुं तुजने आ कष्टमांथी ढोडावुं. तोपण ते पुरुष मधुबिंदूना स्वादनी लालचें, लोनाणो थको, ते देवतानी साथें न जातो हवो. तेम जीवपण संसारमांहे मधुबिंदूसरखा अल्पसुखनी उपर आसक्त थयो थको, देवविमानप्राप्तिसमान धर्मनो अंगीकार करतो नथी. ए कथा इहां संक्षेपथी कही ढे. विस्तारें बीजा ग्रंथोथी कहेवी. ॥ दोहा ॥ जंबूस्वामी प्रतिबूजवे, मकरो हठ मुजनार ॥ नर लुब्धो मधुबिंदूए, तिम हुं न रहुं संसार ॥ १ ॥ मधुबिंदू संसारसुख, जाणी ढांमया आज ॥ साधुपणुं विमानसम, लीजें अविचल राज ॥ २ ॥ इति कथा ॥

हवे अनेकांतवादि एवा एक श्रीजिनधर्मविना बीजा पांचे दर्शनवाला एकांत वादी ढे, ते उपर हाथीनें जोनारा पांच आंधलानो बीजो दृष्टांत कहे ढे.

॥ पंचांधा गजदर्शनार्थमगमन् कर्णांघ्रिशुंमाद्विज, पुढान् वीदय गजं वदंत्यथ मिथो दृष्टो मया कीदृशः ॥ शूर्पस्तंनकदल्ययोधवलवच्चक्रुर्विवादं जडा, स्तद्वत्सर्वमतानुगा मदयुता सर्वांगवादी जिनः ॥ ३ ॥ अर्थः—कोइ एक पांच आंधला पुरुषो हता ते हाथी जोवाने अर्थें हाथीनी पासें आव्या, तेवारें एक आंधलायें हाथीना कान उपर हाथ फेरव्यो, बीजायें पग उपर हाथ फेरव्यो, त्रीजायें सूंढ उपर, चोथें दंतोसल उपर, पांचमें पुढ उपर एम हाथ फेरवी पाढा आवी मांहोमांहे हाथीनुं स्वरूप कहेवा लाग्या. तिहां जेना हाथमां हाथीनो कान आव्यो हतो तेणें कह्युं के, हाथी तो सूपडा सरखो ढे, जेना हाथमां हाथीनो पग आव्यो हतो तेणें कह्युं के, हाथी देरासरना स्तंन जेवो ढे, जेना हाथमां सूंढ आवी हती, तेणें कह्युं जे हाथी केलना स्तंन जेवो ढे, जेना हाथमां दांत आव्यो हतो, तेणें कह्युं के, हाथी मुसल जेवो ढे, अने पांचमाना हाथमां पूंढडुं आव्युं हतुं, तेणें कह्युं के, हाथी वांसडा जेवो ढे. एम ते जड मूर्ख मांहोमांहे विवाद करतां

एकें कह्युं तुं खोटो छो, तो बीजायें कह्युं तुं खोटो छो, अने हुं साचो छुं. एम परस्पर कहेवा लाग्या,तेम पांच मतवाला वादियो सर्व मदयुता एटले अहंकारें युक्त थका अकबक बोल्या करे छे माटे ते अंधसमान जाणवा, अने एक सर्वांगवादी अनेकांत पक्षनो धरनार ते तो जैनमत छे ॥ ३ ॥ ॥ दोहा ॥ षटमत है संसारमें, पंच ते अंधसमान ॥ इकइक वस्तूने ग्रहे, जिनमत सवे प्रधान ॥ १ ॥ कालो सहाव नियइ, पुव्वकयं पुरिसकारयं चेव ॥ समवाए सम्मत्तं, एगंतं होइ मिछत्तं ॥ २ ॥ ३ ॥

हवे जे जेवुं करे ते तेवुं पामे तेनी उपर दीवानो दृष्टांत कहे छे.

॥ श्लोकः ॥ संपृष्टा विभुनैकदा निकटगाः कृष्णं कथं कज्जलं, नो वर्त्यादिषु कालिमा किल ततः प्राहैकधीमान्नृपम् ॥ ध्वान्तं नक्षति दीपकस्तु नृपते तेनैव कृष्णाञ्जन–माहारो भुवि यादृशो जवति वा नीहारकस्तादृशः ॥ ४ ॥ अर्थः– एकदिवसने विषे कोइ राजाए पोताना सन्नामां बेठेला सन्नासदोने पूछ्युं, के चराक दीवो बले छे तेनीउपर दीवानी सिंगे वाट मांथी जे कालुं काजल पडे छे. ते केम पडे छे? कारण के दीवा मांहे कपासनी वाट छे तेतो धोली छे. तेमां कालापणुं नथी. अने वली अग्नि छे, ते रातो, पीलो जणाय छे. अने, तेलपण रातुं पीलुं छे. एमां कालाशतो देखातुं नथी. त्यारें एमां कालुं काजल उत्पन्न थयुं, तेनुं शुं कारण? ते सांनली, एक विद्वान सन्नामांहे बेठो हतो, तेणें राजाने कह्युं के, हे राजन्, दीपक जे कराय छे ते अंधकारनो नाश करवा माटें कराय छे. माटें ते दीवो अंधकारनुं नक्षण करे छे. तेथी कालुं काजल उत्पन्न थाय छे. जे कारण माटे लोकमांपण प्रसिद्धि छे के, जे जेवा रंगनो आहार करे,ते तेवाज रंगनो निहार पण करे, ए एनो उत्तर छे. तेम जे जन, जेवुं कर्म करे छे, तेने तेवुं फलप्राप्त थायछे. उक्तंच ॥ वर्त्तिस्तु धवला ज्ञेया, तैलं पीतं च दृश्यते ॥ दीपो रक्तस्तथा नाति, कज्जले श्यामता कथम् ॥ १ ॥ यादृशं भुज्यतें चान्नं, पच्यते जठराग्निना ॥ दीपेन तमसं भुक्तं, नीहारोऽपि च तादृशः॥ २ ॥ इति ॥ ४ ॥

हवे जे पोतानी मेले पोतानां वखाण करे, पण गुण विना जगत वखाणे नहिं. तेनीउपर सूवर अने सिंहनो चतुर्थ दृष्टांत कहे छे.

॥ सत्रे क्रोडमृगाधिपौ च मिलितौ ब्रूते हरिं शूकरो, वादं त्वं वद रे मया सह हरे नो चेन्मया हारितम् ॥ श्रुत्वा तद्वचनं हरिर्गदितवांस्त्वं

याहि रे सूकर, लोकान्ब्रूहि मया जितो मृगपतिर्जानन्ति मे ज्ञा बलम् ॥५॥

अर्थः—एक वनने विषे सूवर तथा सिंह ए बन्ने नेला थया. त्यारे सिंहप्रत्ये सूवर कहे छे के, हे सिंह तुं घणा दिवसे मने मल्यो, माटे हवे मारी साथे वाद कर, अने जो वाद न करे तो एम कहे के, हुं हार्यो, अने तुं जीत्यो, एटलुं कहीने पछी जा. एवुं वचन सांभली सिंहें विचार्युं, जे आ नीचनी साथें वाद करवो योग्य नथी. एम चिंतवी सूवरने कह्युं के, अरे सूवर! तुं जा ने लोकोने कहेजे के में सिंहने जीत्यो अने सिंह हार्यो; परंतु हे सूवर जे विद्वान हशे ते माहरी बुद्धिना बलने रूडी रीतें जाणे छे. कह्युं छे के,—'गच्छ शूकर जद्रं ते, वद सिंहो जितो मया ॥ पंमिता एव जानंति' सिंहशूकरयोर्बलम् ॥ १ ॥ ५ ॥

हवे नीचनो संग करवा ऊपर कागडानो पांचमो दृष्टांत कहे छे.

॥ नृपो वृक्षतले स्थितस्तदुपरिस्थौ हंसकाकौ तदा, विष्टाकेन कृता नृपोपरि शरं क्रोधान्नृपो मुंचति ॥ जग्नःपक्षिपतेर्गतश्च बलिन्नुक् हंसोऽपतद्भूतले, तं दृष्ट्वाह नृपो मयोज्ज्वलतरो दृष्टोऽद्भुतो वायसः ॥ १ ॥ अर्थः—एकदिवसें कोइएक राजायें ऊाडनी हेठे पोतानो घोडो उन्नो राख्यो, अने पोतें पण उन्नो रह्यो. एवामां तेज ऊाडनी ऊपर एक राजहंस तथा एक कागडो ए बन्ने पक्षि बेठां हतां तेमां कागडायें राजानां उज्ज्वल वस्त्र देखीने तेनी ऊपर विष्ठा नांखी, तेनाथी वस्त्र खराब थयां, ते जोइ राजाने रीस चडी तेवारे कबाण लइने बाण फेंक्युं, ते वखतें कागडो उडी गयो अने ते बाण हंसने वाग्युं, तेथी ते हंस नीचे राजानी आगल आवी पड्यो. तेनी सामे जोइने राजा बोल्यो के आवो उज्ज्वल कागडो में कोइ दिवस जोयो नथी. ए अपूर्व वात देखाय छे. त्यारे हंस कहे छे के, हुं कागडो नथी, हुं तो उज्वल हंस छुं; पण नीचना संगथी महारुं मृत्यु थयो छे. कह्युं छे के,—'नाहं काको महाराज, हंसोऽहं विमले जले ॥ नीचसंगप्रसंगेन, मृत्युरेव न संशयः ॥ १ ॥ हंस तरंतो देखि के, तुं किम तरियो कग्ग ॥ तोरि पियारी जे करे, तले मुंडि ऊपर पग्ग ॥ १ ॥ इति पंचम दृष्टांत ॥ ६ ॥

हवे जे जेवुं करे ते तेवुं फल पामे ते उपर छठो चोरनो दृष्टांत कहे छे.

॥ दुर्नैदाढ्यगृहेऽकरोन्निशि हरः खातं च पद्माकृति, तन्मध्ये क्षपितौ क्रमौ धनतृषा ज्ञातस्तदा स्वाधिपैः ॥ अंतस्थैर्ग्रहणं पदोर्बहितरं मित्रैः कृतं

हस्तयोः, खातान्तै र्निशितैः प्रपीडिततनुः संघृष्यमाणो मृतः ॥ ७ ॥

अर्थः—कोइ न जेदाय एवा धनवंतना घरने विषे चोरो चोरी करवा आव्या; पण ते घरने पाटीयां जडेलां हतां, तेमां एक चोरें खातर देतां पाटीयांमांहे कमलना जेवुं आकार दीधुं. तेमां इव्यना लोभें जे चोरे खात्र दीधुं हतुं, तेज चोरें पोताना बेहु पग नांख्या. ते वखते घरधणीयो जागी गया, अने तेमां रहेला मनुष्यें चोरना बन्ने पगने पकडी लीधा. त्यारे ते चोरे बाहार रहेला चोरोने कह्युं के, मने जाल्यो छे, माटे बाहेर काहाडो. ते सांभली बहार रहेला चोरो ते चोरने हाथें जालीने खेंचवा लाग्या. ते मज मांहे रहेला पुरुषो तेने मांहेली कोरें ताणवा लाग्या. अने बाहेर रहेला बाहेर ताणवा लाग्या. एम बेहु तरफथी ताणाताण थवाथी कमलाकार खात्रना तीक्ष्ण कांगराथी ते चोर पीडित थयो. तथा घर्षण पाम्यो छतो, तत्काल मरण पाम्यो. माटे जे जन जेवुं कर्म करे, तेने तेवुं फल मले. कह्युं छे के ॥ यादृशं क्रियते कर्म, तादृशं प्राप्यते फलम् ॥ यथा प्राप्तं तु चौरेण, हस्तखातकृतेन वै ॥१॥ तेणे जहा संधिमुहे गहीए, सकम्मुणा किच्चइ पावकारी ॥ एवं पया पिच्च इहं च लोए, कडाण कम्माण न मुख्ख अत्थि ॥ २ ॥ इतिषष्ठी कथा ॥ ७ ॥

हवे तत्काल बुद्धि उत्पन्न थवाथी गइ वस्तु पण लब्ध थाय छे ते
ऊपर रींछनो अने मनुष्यनो आठमो दृष्टांत कहे छे

॥ कस्याप्याध्वनिकस्य सत्रमिलितो भालुस्तदा तद्धृती द्वे गृह्लाति तदं वरं दितमतस्तस्याऽपि तत्राणकम् ॥ तत्रागत्य जडः किमस्त्ययमिति प्राह स्म वक्रादिदंस प्राहास्य मुखात् प्रदेहि सुमते तेनाशु दत्तः करे ॥ ८ ॥

अर्थः—कोइ एक वटेमार्गुने वनने विषे मार्गे जतां एक रींछ मल्यो. ते आवीने तेने वलग्यो. त्यारे ते पुरुषें रींछना बेहु कान पकड्या. तेथी ते रींछनुं कांइ जोर चाल्युं नहीं. बेहु मांहोमांहे अफलावा लाग्या. आथडते आथडते ते पुरुषनुं वस्त्र फाट्युं. तेवारे तेनी कटीयें सोनानी वासणी बांधेली हती तेमां जे सुवर्ण हतुं, ते तूटी हेठल पड्युं. तेटलामां कोइ जड पुरुष त्यां आव्यो. तेणें पूछ्युं के, आ शुं पड्युं छे ? त्यारे तेने बुद्धि ऊपनी, तेथी जवाब आप्यो के, में रींछना कान जालीने अफलाव्या तेथी

एना मुखमांथी सोनैया निकल्या ते पड्या छे. तेवारे ते मूर्खे ते वात सा ची मानीने कह्युं के, हे रुडीबुद्धिवाला तुं आ रींछना कानचोडीवार मने पण अफलावा दे. त्यारें तेणे तेज वखतें ते जडने रींछना कान पकडवा आप्या, अने पोतानुं सुवर्ण वचाव्युं. कह्युं छे के, शीघ्रमुत्पद्यते बुद्धिः, साबुद्धि फलदा यथा ॥ भालुकर्णौ करे दत्वा,पांथेन रक्षितं च स्वम् ॥ १ ॥ इति सप्तमी कथा॥ हवे सीघ्रोत्तर आपवानी बुद्धिविषे त्रण पुरुषोनो आठमो दृष्टांत कहे छे.

॥ केचिद्राजोपकण्ठं ययुस्त्रिपुरुषा भूपेन ते तत्कलाः, पृष्टा ऊचुरथो त्व रोत्तरकराः पश्चात्सभायां पृथक्॥ कूर्चं ते ह्यसितं कथं तव सितं सोऽवग्जरा पाण्डुरं, ऽन्यं ह्यस्मादितरं प्रधावनसितं कूर्चं न मात्रंगकात् ॥ ए ॥ अ र्थः—कोइएक राजानीपासे चाकरी मेलववाने अर्थें त्रण पुरुषो गया तेम ने राजायें पूछ्युं के,तमे कांइ कला जाणो छो! त्यारे ते त्रणे जणें कह्युं के, हे स्वामी ! अमे कोइयें करेलां प्रश्ननो तत्काल उत्तर आपवानी कला जा णीयें छैयें. ते सांभली राजायें तेउने चाकरीमां राख्या. एक दिवस सभा मांहे परीक्षा लेवाने त्रणे जणोनें राजायें जूदी जूदी रीतें प्रश्न पूछ्युं. ते मां पहेलांने पूछ्युं के, ताहरी म्हाढीना वाल काला छे,अने माथाना वाल धोला छे तेनुं शुं कारण ? त्यारे तेणें शीघ्र उत्तर आप्यो के, म्हाढीना वा लथी माथाना वाल वीश वर्ष महोटा छे, कारण के दाढी तो वीश वर्षना माणसने थाय छे तेथी दाढीना वाल काला छे, अने माथाना वाल धोला छे. पछी बीजाने राजायें पूछ्युं के ताहरी दाढीना केश धोला छे, अने मा थाना केश काला छे तेनुं शुं कारण ? त्यारें तेणें पण तरत जवाब आ प्यो के, साहेब दाढी वधारें धोवाय छे तेथी उज्वली रहे छे. पछी त्रीजाने पूछ्युं के, ताहरे दाढी तथा मूछ ए बन्ने नथी तेनुं शुं कारण ? त्यारे तेणें पण तत्काल उत्तर आप्यो के में मातानो पक्ष अंगीकार कर्यो छे, जेमाटे छोरुं होय ते पोतानी माता सरखो अथवा पितासरखो होय तेथी हुं म हारी माता सरखो रह्यो छुं. ॥ ए ॥ कह्युं छे के न दृष्टं न श्रुतं येन, प्रश्ने पृ ष्टे तदुत्तरम् ॥ दीयते समहाप्राज्ञ, स्त्रिभिर्दत्तं नरैर्यथा ॥ १ ॥ अष्टमो दृष्टांतः ॥

हवे भाग्यहीनने आगल आवेलो पदार्थ पण मलतो नथी, ते उपर ब्राह्मण ने ब्राह्मणीनो नवमो दृष्टांत कहे छे.

॥ काष्ठार्थं ह्यधनौ च गछत इतो गौर्या तु दृष्टौ तदा, प्रादेशं च सुखी कुरु

त्वमबले नाग्यं तु नैवैतयोः ॥ यद्यूयं कुरुथाश्च मुंचति तयोरग्रे तदा कुंमलं, नूमावंधगतिं तदग्रवगतावंधाविवापश्यताम् ॥ १० ॥ अर्थः—कोइ एक निर्धन स्त्रीपुरुष काष्ठ लेवाने माटे जाय छे ते समय ए बेहु जणने पार्वतीयें जोयां तेने जोई पार्वतीने करुणा आवी तेथी शिवने कहेवां लाग्यां के हे स्वामी नाथ! आ बेहु निर्धन स्त्रीपुरुषने तमो सुखी करो. त्यारें शिवजीयें कह्युं के हे अबला! ए बेहुनुं रुडुं नाग्य छेज नहीं,तो तेने आपणे शी रीतें सुखीया करी शकीयें? त्यारे पार्वतीयें कह्युं के जो आप तेने धनवान करो तो थाय. शंकरें ते वात स्वीकारीने ते बेहुनी आगल पोताना काननुं कुंमल हतुं ते रस्तामां नांख्युं. तेंवारें ते नाग्यहीन स्त्रीपुरुष विचारवा लाग्यां के,आंधलां मनुष्य रस्तामां केम चालतां हशे? आपणें तेनो अनुनव करी जोइयें. एम विचारी बेहु जण आंखो मीची चाल्यां. तेथी रस्तामां पडेलुं कुंमल तेमनी नजरें न पड्युं,अने कांइक दूर जइने चकु उघाडी जोयुं. अर्थात् ते नाग्यरहित स्त्रीपुरुषने जे स्थलें कुंमल पड्युं हतुं, तें स्थलें अंध मनुष्यने चालवाना अनुनवनी बुद्धि उत्पन्न थइ. कह्युं छे के, नाग्यहीना न पश्यन्ति, नयनाग्रेऽपि मानवाः ॥ दंपतीन्यां यथा मार्गे, न दृष्टं कर्णनूषणम् ॥१॥ एम नाग्यहीन लोको नेत्र आगल पडेली चीजने पण जोता नथी. हवे पोताना स्वामीनुं चित्तेछित काम करनार मंत्रीनो दशमो दृष्टांत कहे छे.

॥ सत्रे राङ्करिणा कृतं च नृजलं गत्वा गतस्तत्स्थितं, दृष्ट्वा चिन्तितवान् सरो नुवि नवेत्तच्चन्हितं मंत्रिणा ॥ तेनागत्य सुकारितं यदि नृपः प्रोचे तदा मंत्रिणं, केनाऽत्रेदमतो मया स नृपते चित्तेप्सितं यत्त्वया ॥ ११ ॥

अर्थः—कोइक राजा वनमां गयो. तिहां राजानो घोडो मूतर्यो. तें मूत्रथी खाबोचीयुं नराणुं. ते थंनाइ रह्युं, पण नूमीमांहे सूकाणुं नहीं. तदनंतर राजा वनमां सेहेल करी ज्यारें पाछो तेज स्थलें आव्यो. तो त्यां नहीं सूकाएलुं एवुं मूत्रनुं खाबोचीयुं नजरे जोइने चिंतन करवा लाग्यो के, जो आ पृथ्वीनेविषे सरोवर होय तो जल सूकाय नहीं. ते राजानुं विचारेलुं कार्य तेना मंत्रियें जाणी लीधुं, अने घरे आव्या पछी केटलाएक दिवसें मंत्रियें ते ठेकाणे सरोवर बनाव्युं. वली पण केटला एक दिवस पछी राजा ते स्थानकें आव्यो. त्यां सरोवर देखीने मंत्रीने केहेवा लाग्यो, के आ सरोवर कोणें खोदाव्युं? त्यारे मंत्रियें कह्युं के, हे राजन्! ए

सरोवर में खोदाव्युं. श्रा वात सांजलीने राजायें मंत्रीनें कयुं के, हे मंत्री! तें मारा मननुं इछित जाण्युं, माटें तुं महाबुद्धिमान् ठो. कयुं ठे के,-'श्रन्येन चिंतितं कार्यं, जानाति स विचक्षणः ॥ महामंत्री जवेड़ाज्ञो, ययात्र त्स सरस्करः ॥ इति दशमदृष्टांतः ॥ ११ ॥

हवे मूर्खनी जणेली गाथा सांजलीने पछरने पण क्रोध चढेठे ते ऊपर पंमितना हाटमांहेला पछरना तोलानो अगीयारमो दृष्टांत कहे ठे.

॥ स्थित्वैकः कतिहट्टके जडमतिः प्राहानृतार्थां कृतिं, हट्टस्या सम शैलकाः सुचलिताः श्रुत्वा जडस्योदितम् ॥ क्रोधात्तेऽकथयन्नरे जडमते त्वं याहि वक्रायतो, हस्ते कोऽपि वलं ददाति हि करिष्यामो रदोत्पाटनम् ॥ १२ ॥ अर्थः- कोइ एक पंमितना हाटमां वेसीने कोइ एक जडमति खोटी गाथा जणतो हतो. तेवारें ते पंमित हाटमां हतो नहीं. पण ते जडनी कहेली गाथा सांजलीने हाटमां पांचसेरी अधशेरी प्रमुख पछरना तोलां पडेलां हतां, तेने रीश चढी. तेवारे ते क्रोधथी कहेवा लाग्यां के हे जडमति? अमारा मुख आगलथी चलीने तुं दूर जा. अमे पंमितनां तोलां ठैयें. माटे अमारा आगल खोटी गाथा जणवाथी अमने जलटी आवे ठे, चक्को आवे ठे, एवामां जो कदाचित् ब्रह्मा अमारा हाथमां वल आपशे, तो अमें ताहरा बत्रीशे दांत पाडी नांखशुं ॥ १२ ॥ कयुं ठे के ॥ गाहा जणइंग मारो, पछरा थरहरंति हट्टमयंमि ॥ पाडेमि दंतपंक्तिं, चजक्क जे को हठ वलं देइ ॥ १ ॥ इति एकादश दृष्टांत ॥ १२ ॥

हवे मूर्खजन जो पोतानी मूर्खाइ बाहेर पडवाथी मुंझाइने अन्यदेशें जाय. तोपण तेनुं मूर्खत्व मटतुं नथी, ते ऊपर एक पुरुषनुं बारमो दृष्टांत कहे ठे.

॥ कश्चित् स्वेष्टजना वदंति जड रे त्वं गछ तिष्ठाथ वा, श्रुत्वा नागरिकास्तथाहुरखिला रोषात् विदेशं गतः ॥ हत्वाकस्ये स करं जलं पिबति तत् पूर्णोदरो मस्तकं, नार्या कंपयति प्रवीक्ष्य हि जडोसि प्राह कैर्लक्षणैः ॥१३॥

॥ अर्थः- कोइ एक मूर्ख मनुष्यने पोतानां मातापितादि सगा वहालां बोलावे त्यारे एम बोलावे के, हे जड! तुं बेस. अथवा हे जड! तुं उठ ऊनोरहे, अथवा हे मूर्ख परहो जा. एम नगरना लोको सांजलीने सर्व ते जडने तेमज बोलाववा लाग्या. पण कोइ नाम लइ बोलावें नहीं. तेथी ते मूर्खने रीश चडवाथी परदेश गयो, मार्गमां कोइ एक नगरने पादर तरष्यो थयो.

त्यां रेंहेट फरतो हतो ते देखी मोढे खोबो मांडी पाणी पीवा लाग्यो. उदर जराणुं त्यां सुधी जल पीधुं. परंतु मोढेथी हाथ खसेड्या नहीं, अने माथुं हलावा लाग्युं. ते जोइ त्यां पाणी जरनारी स्त्रीउयें कह्युं के, तुं मूर्ख देखा य छे. तेने मूर्खे पूछ्युं, जे तमोयें मारा कया लक्षणें मनें मूर्ख जाण्यो? त्यारे स्त्रीउ बोली के, जल पीवानो खोबो आघो नहीं लेतां माथुं धूणावे छे, तेथी जाण्यो. कह्युं छे के ॥ स्वदेशे परदेशे वा, यत्र गच्छति मूर्खकः ॥ तत्रापि प्रक टं जावि, यथा मस्तककंपकः ॥ १ ॥ इति बारमो दृष्टांत ॥ १२ ॥

हवें मूर्ख शिष्य करवो नहीं. तेऊपर एक गोरजीना चेलानो तेरमो दृष्टांत.

॥ पूःस्थौ शिष्यगुरू विनेयक इतो जक्तायलब्धा वटा, द्वात्रिंशत् प्रमिताश्च चिंतयति मेऽर्द्धाः पंचकृत्वो गुरोः ॥ सोर्द्धानत्ति तदाध्वनीह वटकस्तस्येक्षितोऽ न्याः क्व हे जग्धाः पूज्य मया कथं निजमुखे निक्षिप्य शेषोऽदितः ॥ १४ ॥

अर्थः– कोइएक नगरमां गोरजी अने तेनो चेलो बे रहेता हता. एक दिवसें ते शिष्य वोहोरवा गयो. त्यां कोइयें जक्तें बत्रीश वडां वोहो राव्यां. पछी रस्तामां ते शिष्य चिंतन करवा लाग्यो, के मारा गुरुनां अर्द्धा जागनां सोल वडां थाय. माटे हुं अडधां जक्षण करी जाउं. एम मा नी अर्ध खाइ गयो, वली जरा रस्तामां आघो चाल्यो, ने विचारवा ला ग्यो, के गुरुने कांइ खबर नथी. माटे गुरुनां जागनां आठ राखी आठ खाइ जाउं. एम चिंतवी तेमांथी आठ खाइ गयो. वली जगारेक आघो ज इ चार वडां राखी, चार खाधां. वली चोथी वार पण बें खाधां ने बे रा ख्यां. वली पांचमी वार पण एक खाधुं, अने एक राख्युं. पछी उपाशरें आव्यो. त्यारें गुरुयें अन्नपात्र जोइ पूछ्युं, के हे शिष्य! एकज वडुं कोणें वोहोराव्युं? ने बीजां वडां क्यां गयां? ते कहे. त्यारे शिष्य कहेवा लाग्यो के, मारा जागनो अडधो अडधो हिस्सो जाणीने एकत्रीश वडां खाधां छे, तेने गुरुयें पूछ्युं के, ते वडां केम खाधां? त्यारे तेणें मोढुं फाडी एक वडुं मोढामां मूक्युं. ने गुरुने कह्युं, के महाराज जुउ, आम खाधां. कह्युं छे के॥ मूर्खशिष्यो न कर्त्तव्यो, गुरुणा सुखमिच्छता ॥ विडंबयति सोऽत्यंतं, यथा हि वटजक्षकः ॥१॥ माटे मूर्ख शिष्य न करवो इतित्रयोदश दृष्टांत ॥१३॥

हवे दुशमन होय, ते पण जो दयायुक्त होय, तो ते सारो;परंतु निर्दय मित्र पण सारो नहीं. ते ऊपर चौदमो दृष्टांत कहे छे.

॥ चोरो निःस्वगृहे गतो हिमनिशि प्राह प्रियं स्वाबला,त्वत्पार्श्वेम्बरखंभकं झटिति वा तद्देहि लाह्यर्भकम् ॥ नो गृह्णाति शिशुं ददाति न तदा द्वंद्वं च जातं तयोस्तत्तुल्यांबरकं शिशूपरि हरः क्षिप्त्वा गतेऽन्यालये ॥ १५॥ अर्थः- कोइ एक चोर निर्धनना घरमां शियालाना दिवसमां रात्रिने विषे चोरी करवा पेठो. ते वखतें घरमां स्त्री पुरुष बेहु सूतां हतां. पछी टाढथी पीडाती स्त्रीयें पोताना स्वामीने कह्युं, के तमारी पासें लुगडांनो कटको छे, ते मने आपो, अथवा छोकराने ल्यो, बालक टाहाढथी पीडाय छे. त्यारे तेणें बालकने पण तेड्यो नहीं, ने लुगडानो कटको पण आप्यो नहीं. पछी ते बेहु जणने लडाइ थइ. ते लडाइ जोइने चोरना मनमां दया आवी, तेथी तेणें पोतानुं वस्त्र बालक ऊपर नाख्युं. ने बीजाना घरमां चोरी करवा गयो. कह्युं छे के॥ दयायुक्तो दरिद्रोऽपि, शत्रुर्हि सुखकारकः ॥ प्रविष्टे हि यथा गेहे, चौरेण ह्यर्पितं पटम् ॥१॥ इति चतुर्दश दृष्टांतः ॥ १५ ॥

हवे कार्य न थयानी पहेलां लडवा ऊपर स्त्रीपुरुषनो पंदरमो दृष्टांत कहे छे.

॥ कोप्याह स्ववशां च लामि महिषीं त्वं साश्रु नाथानय, मातुर्दुग्धतरीं ददामि हि तदान्योऽन्यं विधत्तः कलिम् ॥ श्रुत्वागत्य विशारदेन हि घटा भग्ना महिष्याद ते, क्षेत्रं मे यदि भक्षित न ललने यूयं कथं युध्यथ ॥ १६ ॥

॥ अर्थः—कोइएक पुरुष पोतानी वशवर्त्ती स्त्रीने कहे छे,के हे स्त्रि,हुं भेंश लावुं ? त्यारें स्त्री बोली के हे स्वामिनाथ ! जलदी लावो, वली स्त्री कहे छे. मारी भेंशना दूधनी तर हुं माहरी माताने आपीश, त्यारें स्वामी कहे छे के, ते तर हुं खाइश. एवी रीतें बेहुने क्लेश थयो. ते क्लेश सांभलीने कोइ बुद्धिमान पुरुषें आवी तेना घरमां पडेलां माटीना ठाम सर्वे भांग्यां. त्यारें स्त्रीएं पूछ्युं के, आ वासण केम भांग्यां ? त्यारे ते बोल्यो, के मारुं खेतर तारी भेंशें खाधुं. त्यारे ते स्त्रीपुरुष क्लेश पडतो मूकी कहेवा लाग्यां के हजी भेंश क्यां आणी छे ? त्यारे बुद्धिमान पुरुषें कह्युं, जे भेंश आव्या विना दूधनी तरनी लडाइ शामाटे करो छो ? ते सांभलीने ते बेहु समज्यां. कह्युं छे के ॥ दोहा ॥ घरें भेंश आणी नहीं, भांग्यां झोवर सात ॥ झगडो तो दंपति करे, दूध तरीनी वात ॥ १ ॥ एनो तो झगडो

सुणी, बुद्धिवंत आव्यो दोडी ॥ झगडो तेणें भांजीयो,झोबर सघलां फोडी ॥

हवे कौतुकार्थी पासे विद्वानोनी विद्या निष्फल थाय छे,ते उपर सोलमो दृष्टांत.

॥ भूपान्ते द्रविणेछया कृतिगमे दत्तं न किंचित्कदा, वीक्ष्येशो नरनाटकं बहु धनं तस्याशु सोवग्गतः ॥ गेहे तान् स्वजनान् न तत्र पठने यत्नस्तु कार्यो विदा, कर्त्तव्यं नटनाटकं च भवतां द्रव्यं नृपो दास्यति ॥ १७ ॥ अर्थः–कोइएक पंमित द्रव्यनी इछायें राजा पासें सेवा करवा आव्यो; परंतु घणा दहाडा सेवा करी तो पण राजायें कांइ द्रव्य आप्युं नहीं. एवामां एक दिवसें राजायें भवायानी भवाइ जोइने तेनुं नाटक देखी प्रसन्न थइ घणुं द्रव्य ते भवाइ करनारने आप्युं. एवुं राजानुं चरित्र जोइ पंमित नीची दृष्टि करी विचारवा लाग्यो के,आपणुं भणवुं सर्वे निष्फल थयुं. त्यारें एकाएक पोताने घेर आवी पोतानां स्वजनने तथा शिष्योने कहेवा लाग्यो के, व्याकरण तर्क काव्य छंद अलंकारादि ग्रंथोना भणवामां यत्न न करो, एथी कांइ राजा रीझे नहीं ने भवाया वगेरे नाटकनो अभ्यास करो तो तमोने राजा रीझीने द्रव्य आपशे अर्थात् राजा विद्वान् नथी पण कौतुकार्थी छे कह्युं छे के ॥ विद्वांसः सावधानाः शृणुत मम वचो द्रव्यलोभार्थिनश्चे,भंतव्यं सादरेण क्षितिपतिभुवने भूपसेवां विधातुम् ॥ मीमांसान्यायतर्कागमविधिवह्वो दूरतो वर्जनीयाः, शिक्षेतव्यास्तु शिष्या धिगधिगधिक्तातथय्थीति प्रशब्दाः ॥ १ ॥ इति षोडश दृष्टांत ॥ १७ ॥

भालमां लख्युं मिथ्या न थाय ते उपर माथानी तुंबलीनो सत्तरमो दृष्टांत.

॥ केन श्रेष्ठिवहिःस्थितेन शवके दृष्टार्यकावाच्यत, लात्वासद्मनि तुंबिकां प्रतिदिनं वै पश्यति स्त्र्येकदा ॥ तं पिष्ट्वा वटिका कृता निजपतेर्मुक्तात्ति सोवक्शुना, सेष्टा या अभवद् वरांगि लिखिते दोषो न ते मे वशे ॥ १८ ॥ अर्थः–कोइएक शेठ बहार वेठेयके स्मशानमां पडेला शवनी तुंबली दीठी. तेमां लखेली गाथाने जोइ वांचवा लाग्यो, ते वांचीने पछी ते तुंबलीने सुंमलामां नांखी, पोताने घेर लावी मूकी. ते तुंबलीने दिन दिनप्रत्ये जई जोवा लाग्यो. एकदा तेनी स्त्रीयें विचार्युं के, आ मारो स्वामी नित्य कोनी सामुं जुए छे ? तो त्यारें जुवे तो त्यां शवनी तुंबली नजरे पडी. पछी ते स्त्रीने रीश चढी, तेवारे तेणे ते तुंबलीने लइ खांमी पीसी वाटीने तेमां बीजी चीजो मसालादिक नांखीने, तेनी वडी बनावी. अने पोताना स्वामीने ते

वडीनुं शाक पीरस्युं. तेने ते वडी खातां तेनो स्वाद लाग्यो तेवारें तेनो स्वामि कहे छे,केआ वडी बहुज सारी थइ छे. माटे शानी बनावी छे ? तेने ते स्त्री कहेवा लागी के,जे आपने वहाली वस्तु हती,अने जेनी सामुं निरंतर आप जोता हता तेनी आ वडी छे. त्यारे शेठ बोल्या, के हे वरांगना, जे लख्युं हतुं ते थयुं. एमां मारो तथा तारो दोष नथी. पछी ते स्त्रीने सर्व वात प्रथमथी मांमीने कही. हवे ते तुंबडीमां शुं लख्युं हतुं ते कहे छे ॥ गाथा ॥ जम्मो कलिंगदेसे, पाणिग्गहणं मरुयदेसमज्झंमि ॥ मरणं समुद्दतीरे, कि जाणे किं नविस्सइ ॥ इति सप्तदशदृष्टांत ॥ १७ ॥

हवे कवि पूछतां वारं उत्तर आपे ते ऊपर अढारमो दृष्टांत कहे छे.

॥ पृष्टः केन गुरुर्हि खिद्यति मनो नेत्रं कथं रोदिति, प्रोचे तं च गुरुर्म नोनयनयोर्नो व्यंजनावग्रहः ॥ वेदाक्षप्रकरपृथग्भवति तद्ध्यं मनोनेत्रयोः मत्त्यविकगृहे स्थितौ समसुखं लभाति तुल्यं तयोः ॥ १८ ॥ अर्थः—कोइ श्रावकें गुरुने पूछ्युं के, महाराज, जेवारें मनमां दिलगीरी पेदा थाय छे,तेवारे नेत्र केम रुदन करे छे. ते सांनली गुरु बोल्या, श्रोत्र,घ्राण,रसना अने स्पर्श ए चार इंद्रियोने पुद्गल ना स्पर्श थकी विषय जणाय, माटे ते व्यंजनावग्रह कहीयें, अने मन तथा नेत्रनो विषय पुद्गल स्पर्श्या विनाज जणाय ते अर्थावग्रह जाणवो. ते माटे मननो तथा नेत्रनो अधिको स्नेह संबंध छे तेथी ज्यारें मन दीलगीर थाय, त्यारे आंख रुवे जेम एक घरमां बेजण रहेतां होय त्यारे एकने दुखें बीजाने दुःख लागे. तथा एकने सुखे बीजाने पण सुख लागे. तेम मन तथा आंखनुं एकज घर छे. कह्युं छे के ॥ सिद्धांत शास्त्रकेष्वस्ति, नास्ति वाह्रि तथा परे ॥ सम्यक्प्रश्ने कृते शीघ्रं, प्रददात्युत्तरं कविः ॥ १ ॥ इति अढारमो दृष्टांत ॥ १८ ॥

हवे अजाण्याने पोतानुं स्थानक देखाडवुं नही ते ऊपर जु अने मांकणनो उगणीसमो दृष्टांत कहे छे.

॥ सुप्तो राए निशि मत्कुणो गत इतोऽनूयूकया वारितः, प्राघूर्णोपि तवास्ति मातृनगिनी प्रोचे तया मानितः ॥ तेने शो दशितस्तदा नृपतिना शय्यादि चालोकिता, लब्धा षट्पदिका हि मत्कुण इतस्तेनाशु सा मारिता ॥ २० ॥

अर्थः—एक राजा रात्रे सुतो हतो. तेनी शय्यामां मंदविसर्पिणी. नामे जुं रहेती हती. तेटलामां एक डंडक नामे मांकड त्यां आव्यो. ते जोइ जुंये

मांकडने कह्युं जे तुं आवीस नहीं. माहरो स्वामी निद्रामां सूतो छे. त्यारें मांकड बोल्यो,के हुं तमारे घेर परोणो आवेल छुं. अने वली कह्युं,के तमे मारी मासी थाउ छो, माटे आव्यो छुं. त्यारे जुंयें लोलवाइने तेने आववा दीधो. माकणें आवी तुरतज राजानें करड्यो. त्यारे राजायें सय्या जोव रावी तो मांकड जतो रह्यो अने जुं हाथमां आवी तेने तरत राजाना अनुचरें मारी नांखी तेमाटे अणउलखीतो जो मीठा वचन बोले तो पण तेंने पासें राखवो नहिं. पोतानी जगामां आववा देवो नहि,जो तेनो विसवास करीयें, तो ते मांकडनी पेरें बीजानी ऊपर नांखीने पोतें नासी जाय. कह्युं छे, के ॥ श्लोक ॥ अज्ञातकुलशीलस्य, न दातव्यं प्रतिश्रया ॥ ढुंढुकस्यापि दोषेण, हता मंदविसर्प्पिणी ॥ १ ॥ ए उंगणीसमो दृष्टांत ॥ २० ॥

हवे छले करी लोला लोक ठगाय छे ते ऊपर वीशमो दृष्टांत.

॥ गुर्विण्यां निजयोषिति क्षितिपतिर्विप्रं तदा पृच्छति, पुत्रं किं च सुता जनिष्यति हि मे पुत्रो न हीत्यंगजा ॥ संलेख्य छदने ददौ नरपते. पुत्रो जविष्यत्यथ, पुत्री चेद्यदि वाशु दीर्घलघुकान् वर्णास्तु वक्ष्ये तदा ॥ २१ ॥

अर्थः—कोइएक राजाने पुत्र न हतो एकदा तेनी स्त्री गर्जवती हती, त्यारें ते राजायें कोइ एक ब्राह्मणने पूछ्युं, के हे महाराज, माहारी स्त्रीने पुत्र थशे, के पुत्री थशे ? त्यारें ब्राह्मणें छल करीने कह्युं के, हे महाराज, हुं तमोनें कागलमां लखी आपीश. तेवात राजायें कबुल करी अने खुशी थयो. पछी ब्राह्मणें चिंतव्युं जे पुत्र अथवा पुत्री बेमांथी एक तो अवश्य थाशे. एम विचारीने कागलमां लख्युं, जे "पुत्र नही पुत्री" एवुं लखीनें राजाने चीठी आपी. हवे ते लखवामां ब्राह्मणें कपट कर्युं. जे पुत्र आवे तो पुत्र आव्यो. नहि पुत्री, एम वांचे अने जो पुत्री आवे, तो पुत्र, नहि. पुत्री एम वांचे. एवी युक्ति करी. कह्युं,छे के ॥ ज्ञानहीना बहुमर्त्या, दृश्यंते छलकारकाः ॥ कृत्वा छलं यथा राज्ञो,दत्तं लेख्यं द्विजेन वै ॥ ए वीशमो ॥२१॥

अदाता पासें याचना करवी निष्फल थाय ते ऊपर एकवीशमो दृष्टांत.

॥ द्वारस्थं गजचित्रकं ह्यलिरिहां दानस्य दृष्ट्वा गतस्तत्कुंभे स्थितवान् तदा ह करिराट् चिंत्याशु तं षट्पदं ॥ अत्रालेह्यि कथं स्थितोऽसि जड रे दानप्रदा वारणा, स्ते सर्वेपि वने वसंति च गिरौ त्वं तत्र याहि द्रुतम् ॥ २२ ॥

अर्थः— दरवाजाने विषे चित्रेलुं हाथीनुं चित्र जोइने कोइ एक

र मदगंधने लेवामाटे आव्यो, अने ते हस्तीना गंमस्थलने विषे बेठो थ को,गुंजारव करवा लाग्यो. ते वखत एक कवि मनमां चिंतवन करीने ते भ्रम रने कहेवा लाग्यो,के हे मूर्ख भ्रमरा,तुं इहां केम बेठो छो ? आंही तारो अर्थ सरशे नहीं. जेमाटे मदने आपे ते ए हाथी नथी. मद आपनारा सर्व हा थीयो वनने विषे तथा पर्वतने विषे वसे छे. माटे मदगंधनी इछा होय,तो तुं उतावलो त्यां जा. कह्युं छे, के ॥ श्लोक ॥ रे चंचरीक मदलोलकपोलवा सी, भित्तिस्थनागवदनेऽत्र कथं स्थितोऽसि ॥ ये दानदा घनवनावनयोर शव्दा, स्ते वारणा वरतरा विपिने वसंति ॥२१॥ इति एकवीशमो दृष्टांत ॥

हवे मूर्खनी साथें पंमितें वाद न करवा अर्थयी बावीसमो दृष्टांत कहे छे.

॥ मूर्खज्ञौ पथि गछतः कुसुमितं ताभ्यां पलाशद्रुमं, दृष्ट्वा वक्ति हि पा टलंजडमतिर्ज्ञो मूर्ख नो पाटलः ॥ वादं तौ कुरुतो जडेन सुकविर्यष्टयादि भिस्ताडितो, यष्टयामुष्टिवशाद्विमुंच जड रे भो पाटलः पाटलः ॥ २२ ॥

अर्थः—कोइ एक समयें मूर्ख अने पंमित ए बे जण मार्गनेविषे चा ल्या. तेटलामां रस्ताने विषे एक पुष्पयुक्त खाखरानो वृक्ष जोयो. त्यारे मूर्ख मनुष्य कहेवा लाग्यो, के आ पाडलनुं झाड केवुं फल्यो फूल्यो छे. ते सांभली पंमित बोल्यो के, हे मूर्ख ! ए पाडल वृक्ष नथी पण पालाशवृक्ष छे. तुं शुंजाणे ? तेवारें मूर्खायें कह्युं के तुं शुं जाणे. ए पाडल छे. एम वा द करवा लाग्या. तेवारें मूर्खने रीश चडी तेथी लाकडी लइने पंमितने मा रवा लागो. तेवारें पंमित बोल्यो, के मारीश मां. मारना भयथी पंमित कहे वा लाग्यो के हाहा ए पाडलवृक्ष छे. जेम मुर्खायें कह्युं तेम कबुल कर्युं. माटे मूर्खानी साथे वाद न करवो. कह्युं, छे के,॥ श्लोक ॥ पलाशं पुष्पितं दृष्ट्वा, मूर्खो वदति पाटलं ॥ यष्टिमुष्टिप्रसादेन, भो भो पाटलपाटलः ॥

जे स्त्री पोताना स्वामीपासे पोतानुं चलण करवानी इछा करे तेनी केवी दशा थाय ते उपर स्त्रीपुरुषनो त्रेवीशमो दृष्टांत कहे छे.

॥ लात्वा स्त्रीं पथिको गृहात्प्रचलितो ह्यग्रे सनीरां नदीं, दृष्ट्वा साद धवं ममांघ्रियुगले रंगोस्ति संगृह्य सः ॥ तस्याः पादयुगं हि कर्षति सरि त्तीरे गतः सा मृता, न्यस्ता मूढ कृतं किमाह तनुभृन्नष्टापि रंगस्थितिः ॥२४॥

आर्थः—कोइ एक पथिकजन पोतानी स्त्रीने सासरेथी तेडीने पोताने गाम जतो हतो. चालतां थकां मार्गमां एक नदीने पूरें आवेली जोइने

स्त्रीयें पोताना स्वामीने कह्युं के, हे स्वामीनाथ आ माहरा बे पगमां मेंदी लगाडी छे ते जेम धोवाय नही अने मारा पगनो रंग न जाय तेम मुने ते डी जाउ. त्यारें ते पुरुषें स्त्रीना बे पग हाथमां लइने उंचा राख्या, अने हाथ महोडुं अने नाकने पाणीमां राख्युं एवी रीतें तेने लइने जलमां चाल्यो. ते जेवारें नदीने कांठे उतर्यो तेटलामां स्त्रीना मोढामां तथा नाक कानमां जल भरवाथी स्त्री मरणशरण थइ. तेवारें जेवी रीते मुवेला ढोरने घसर डे, तेवी रीतें घसरडीनें तेने बाहेर काढी, ते वखतें नदीने कांठे कोइ मनु ष्य उभो रहेलो हतो तेणे कह्युं के, हे मूर्ख तें आ शुं कर्युं? जे माटे आ स्त्री तो मरण पामी. तेवीरीतें तुं उंधे माथे घसडीने जलमांथी केम लाव्यो? ए कहेवो अकार्य कर्यो? त्यारे ते पुरुष बोल्यो के, में जे कर्युं छे, ते जा णीनेज कर्युं छे केम के स्त्रीतो मरण पामी तेनो जीव गयो, परंतु तेना पगना मेंदीनो रंगतो लालज रह्यो छे. कह्युं छे के, ॥दोहा॥ मूढमति मारी प्रिया, गयो नदीने तीर ॥ देखी अन्य नर भांखीयो, कां कीयो जड पीर ॥ १ ॥ तेह प्रतें मूढ बोलीयो, कीधो एह प्रकार ॥ जीव गयो पण रंग रह्यो, मु झ मन एह विचार ॥ २ ॥ इति त्रेवीशमो दृष्टांत ॥ २४ ॥

भाग्य हीनने सर्वत्र दुःख थाय तेनो उपर चोवीसमो दृष्टांत कहे छे.

॥ ग्रीष्मे वत्तुरयो वने विवसनः प्राप्तोऽर्चिषा पीडित, श्छायां वीक्ष्य ग तोऽपि बिल्वकतले, तत्के फलं ग्राववत् ॥ तच्छ्रुत्वा पततीति चिंतति तदा यामि क भग्नं शिरो, दुःस्थो गच्छति यत्र याति तदनु छायेव शीघ्रं विपत् ॥ २५ ॥

अर्थः—कोइ एक दरीद्री अने वली माथामां टाली पडेली एवो टाली यो पुरुष उष्णकालनें विषे वस्त्ररहित सूर्यना तापथी मस्तकमां आकुल थयेलो भूख तृषायें पीडा पामतो छतो एक बीलीना झाडनी नीचें उभो रह्यो, त्यां ते बीलीनां फल पछराना जेवां माथाउपर पड्यां ते फल पड वाथी विचार करवा लाग्यो के, हवे हुं क्यां जाउं माथुं तपवाना दुःखथी ज्यारे हुं बीलीना वृक्ष तले गयो तो त्यां पण मस्तक उपर बीलीफल पड्यां, माटें भाग्यरहित जन जे ठेकाणे जाय तेनी पछवाडे छायानी पेठे आपत्ति शीघ्रतायेंज आवे छे. कह्युं छे के, ॥ श्लोक ॥ खल्वाटो दिवसेश्वर स्य किरणैः संतापितो मस्तके, वांछन् देशमनातपं विधिवशात् बिल्वस्य मूलं

गतः ॥ तस्योच्चैः पतता फलेन महता भग्नं सशब्दं शिरः, प्रायो गच्छति यत्र भाग्यरहितस्तत्रापदां राशयः ॥ १ ॥ इतिचोवीशमो दृष्टांत ॥ २५ ॥

भाग्यमां न होय तो उद्योगथी पण लाभ थतो नथी ते ऊ
पर उंदरनो अने सर्पनो पचीसमो दृष्टांत कहे छे.

॥क्षिप्तः केन करंमकेऽपि भुजगः क्षुत्पीडितोऽनाशको,रात्रौ खादिमकांक्ष्या शु विवरं कृत्वोंदरुस्तन्मुखे ॥ भाग्यादेव तदा स्वयं निपतितस्तन्मांसतृप्तोऽभ वत्, यातस्तेन पथा नृणां स्थिरतरं भोगीव भाग्यं भवेत् ॥ २६ ॥ अर्थः– कोइएक गारुडीयें एक सर्प्प पकडीने कंमीआने विषे नांख्यो. त्यां भूख अ ने तरशें पीडा पामतो, ते साप निरास थइ बेगे हतो, तेटलामां एक उं दरे जाण्युं जे आ करंडीयामां खावानो पदार्थ छे, पक्कान भर्या देखाय छे. एम चिंतवि ते करंमीयाने करडी छिद्र पाडी, रात्रिनें विषे ते उंदर तत्का ल अंदर पेगे. ते समयें ते सर्पना भाग्यें करीनेज ते उंदर पोतानी मेलें सापना मुखमां पड्यो. ते उंदरना मांसेंकरी साप तृप्त थयो. अने तेज उंदरना करेला छीद्रना मार्गें करी साप बाहेर नीकली गयो. माटे सर्पनी पेठे जे मनुष्योनुं प्रारब्ध स्थिर होय छे, तेने दुःखमां नाखवा छतां पण सुख थायछे. तेथी भाग्यस्थिरता मानीने धैर्य राखवुं.कह्युं छे के, श्लोक॥ चिंता न कार्या पुरुषै, र्निगडे पतितैरपि ॥ यद्भाले लिखितं धात्रा, भवेभ्भो जीव नापरम् ॥ १ ॥ इति पच्चीशमो दृष्टांत ॥ २६ ॥

हवे समजण विना स्वेच्छित उत्तर आपवो नहिं ते ऊपर छव्वीसमो दृष्टांत.

॥ नत्वा पृच्छति कार्षिको निजगुरुं वर्षा न वा वर्षति क्षेत्रे ते निशि वक्ति सोपि न परे ज्ञात्वा सशिष्यो घटान् कूपान्सिंचति कं पराह्नि मनुजाः श्रुत्वेति वार्तां गुरोस्ते पृच्छंति तथा ब्रवीषि वहसि ह्याद्दुर्वीनेयास्तदा ॥ २७ ॥ अर्थः–कोइएक करषणी पोताना गोरने नमस्कार करी पूछे छे के हे माहा राज ! वरषाद वरसशे के नहिं वरसे जे माटे माहारा वावेला धान्य सर्व सूकाइ जायछे त्यारें गोरें कह्युं के, आजें रात्रियें ताहारा खेतरमां वरषाद वरसशे पण बीजाना खेतरनुं हुं जाणुं नहिं. पछी ते गुरु रात्रियें शिष्य ने साथे लइ कणबीना खेत्रमां जइ कुवामांथी पाणीना घडा भरी भरीने आ खी रात्र पर्यंत खेतरमां पाणी सींच्युं.तेथी सवारमां खेतरनो धणी पोता

ण तें गुरु पासें आव्या अने तेमज पूर्वली रीतें गुरुनें पूछवा लाग्या तेवा रें गुरुयें पण तेमज पूर्वनी पेठें तेमने कह्युं. ते सांजली शिष्यें जाएयुं जे रखेंने पूर्वली रात्रिनी पेठें आ रात्रियें पण गुरु आपणने घडा वहेवरावे एम जाणी गुरुने कहेवा लाग्या; के हे गुरु! जे कहेशो ते वहेशो, अमा रे कांइ नहि. कह्युं छे के, (श्लोक) कार्यार्थि नोहि वहवो,गुरूं पृछंति स्वा र्थगाः ॥ ज्ञानहीनैर्न दातव्य, मुत्तरं कोविदैर्यथा ॥१॥दोहा॥ एकवार कहणे वह्या, हवे ते न वहसी ॥ गुरुप्रतें शिष्यज बोलीया,जे कहसी ते वहसी ॥ हवे जे संपत्तिवान् छतां कोइने उपकार करतो नथी. तेनुं इव्य गयुं जाणवुं.

ते विषे जोजराजा अने माघ कवीनो सत्तावीसमो दृष्टांत कहे छे.

॥ जोजो वक्ति कृती मृदंगकरवस्यार्थं वदाद्याह्नि सः, ज्ञातं नान्यजनः क रिष्यसि यदीजारोहणं वच्मि तम् ॥ कत्वेशांतगताः किमस्त्ययमतोऽर्थं वक्ष्यति त्वावदत्त्वं गृह्या उपदेशमीश तव जो नो दीयते तद् गतम् ॥ २७॥ अर्थः—एक दिवस जोजराजानी पासें नृत्य थतुं हतुं. ते वखते मृदंगनो शब्द सांजली राजा माघ पंमितने कहे छे, के मृदंग बोले छे तेनो शुं अर्थ? ते कहो. त्यारे पंमिते कह्युं जे महाराज आठ दिवसमां हुं एनो उत्तर कहीश. पछी पंमितें शास्त्र जोयां. पण तेमांथी ते अर्थ जाण्यो नहीं. तेवारें दिलगीर थयो, एवामां एक ब्राह्मण माघ पंमितने घेर आव्यो. तेणे पंमितने दिलगीर थयेलो देखीने पूछ्युं के चिंतातुर केम देखाउ छो. तेने माघें कह्युं के महाराज मृदंगना शब्दनो अर्थ शुं? त्यारे ते पंमितनें कहे छे के जो मुजने हाथी उपर बेसारी राजा पासें लइ जाउ, तो हुं एनो अर्थ राजाने कहुं. पछी ते पंमितने हाथी उपर बेसारीने राजापासें लेइ गयो. तेने हाथीयें बेठो देखीने राजायें पूछ्युं, के आ शुं छे? त्यारें माघ पंमिते कह्युं जे आ पुरुष तमनें मृदंगना शब्दनो अर्थ कहेशे. राजायें ते कबुल कर्युं. पछी पंमितें कह्युं के,हे राजन्! आ मृदंग शब्द धम धम एवे शब्दें करी तमने उपदेश आपे छे. के जे कोइ राज्यसमृद्धि पामी कोइनें न आपे, तो तेनी समृद्धि गइ एम स मजवुं. जुउ हुं पण फाटल उपानहनुं दान देवाथी गजारूढ थयो छुं. ते वि षे श्लोकः— उपानहौ मया दत्ते, जीर्णे कर्णविवर्जिते॥ तत्पुण्येन गजारूढ, स्तगतं यन्न दीयते ॥ १ ॥ ए सत्तावीसमो दृष्टांत ॥ २७ ॥

हवे कपटी पासें कपट पण करवो ते ऊपर अष्ठावीशमो दृष्टांत.

॥ पर्षद्यन्यकविः करोत्यभिनवं,भोजस्य काव्यं तदा, श्रुत्वाहुश्च पुरातनं कविजना भूपोऽपि किं तेऽपठन् ॥ राज्ञा ते हि तिरस्कृताः प्रतिदिनं वादोऽभवच्चैकदा, कृत्वा वेधयुतं स्थिताः सितमुखा लक्षं च लात्वा गतः ॥ २८॥ अर्थः— एकदा भोजराजानी सभामां कोइएक नवो पंमित आव्यो, ते कवि भोजराजानां वर्णननुं नवुं काव्य करीने नित्य आशीर्वाद दीये ढे. पण तेना करेला काव्योने द्वेषथी भोजराजाना सभामां बेसनारा कालिदास वगेरे बीजा पंमितो नित्य नित्य प्रत्यें खंमन करी नांखे. अने राजाने कहे के, हे महाराज! आ जे काव्य करे ढे, ते प्राचीन ढे. ए काव्य तो अमने पण आवडे ढे. त्यारें राजा कहे के ए काव्य तमे बोलो. तेवारें ते कालिदास वगेरे पंमितो एवा हता के कोइ पण श्लोक एक वखत सांभले तो तेने मुखस्थ थइ जाय. तेथी ते पंमितना करेला श्लोक पोते भणी आपे. त्यारें राजा ते नवीन कविनो तिरस्कार करी दूर करे. एम नित्यवाद थयां करे तेवारें ते नवीन पंमितें तिरस्कार पामवाथी एक दिवस वेधयुक्त काव्य कर्युं, ते काव्य कालिदास वगेरे पंमितोने भणतां न आव्युं, तेथी तेमने निस्तेज करी राजा पासेथी लक्ष द्रव्य लीधुं. ते काव्य लखे ढे. ॥ भोजत्वं राजराजः क्षितिपतितिलको धार्मिकः सत्यवादी,पित्रा ते या गृहीता नवनवतियुता हेमकोटयोमदीयाः॥ त्वं ता देहि त्वदीयैः सकलबुधजनैर्ज्ञायते सत्यमेतत्, नो जानंति त्वदीयाः सकलबुधजना देहि लक्षं तथापि ॥ १ ॥ अर्थः—हे भोजराजा! तुं पृथ्वीपतिनेविषे तिलकसमान, धर्मिष्ठ, सत्यवादी, अने भोज कुलने शोभावनार एवो ढो. परंतु तारें बापें मारी जे नवाणुं करोड सोना महोर लीधी ढे, ते तुं आप. ते वात तारा पंमित जनो सत्य जाणे ढे. जो तारा पंमितजनो ए वात न जाणता होय, तो पण एक लक्ष द्रव्य आप. अर्थात् शुं कह्युं जे आ मारो प्राचीन श्लोक होय, तो मने नवाणुं करोड सोना महोर आप, ने आधुनिक होय, तो लक्ष द्रव्य आप. ॥ २८॥ ए अष्ठावीशमो दृष्टांत॥

हवे आ जनमथी रहेलुं रण बीजा जनममां पण आप्याविना बूटको थतो नथी ते ऊपर एक वैश्य अने बलदनो ओगणत्रीशमो दृष्टांत कहे ढे.

श्लोक ॥ भोजार्णं हि विधाय पारभविकं तैल्यालये च स्थितो, वृत्तांतं प्रतिकर्ण्य स ह्यनडुहोर्दृष्ट्वा प्रभातेऽखिलं॥ गत्वा भोजगृहं समर्प्य सकलं भंमा

रेकानां धनं, तान्प्रोचे तदृणं क्रमोऽन्यजन्मिकं दातुं न गेहे गतः ॥ ३० ॥
अर्थः—कोइएक वाणीयायें एवुं विचार्युं जे आ जवमां लीधेलुं दीधेलुं हो
य ते पाछुं परजवमां लेवातुं देवातुं नथी. एवुं मानी तेणे जोजराजानी
पासे जइने कह्युं के हुं आवते जनमें तमोने लक्ष रुपैया व्याजसहित आ
पीश. जो कहो तो खत करी आपुं. एम कही खत लखी आपीने राजा
ना जंमारमांथी लक्ष द्रव्य लइने घांचीने घेर जइ रात्रियें सूतो. तेवामां
अर्धरात्रियें घांचीना बन्ने बलदो परस्पर वातो करवा लाग्या. तेमां प्रथम
एक बलद बोल्यो के, मारे तो पूर्व जन्मना देणामांथी घांचीने मात्र एक
ज त्रांबियो हवे देवो रह्यो छे. ते हुं चार फेरा दइ मरीने छूटीश, अने परजवें
सुखी थइश. त्यारे बीजो बोल्यो के, तुजने धन्य छे. मारे तो घांचीनुं पूर्व
जन्मनुं एक लक्ष द्रव्य हजी आपवुं रह्युं छे. अने हुं पूर्वजन्मना जोजराजा
पासें एक लाख रुपैया मागुं छुं माटे आ सूतेलो वाणियो जो सवारमां
जोजराजानी पासे जइनें कहे के, तमारा पट्टहस्ती सार्थे आ घांचीना ब
लदने लडावो. अने जो बलद जीते, तो घांचीने लक्ष रुपैया तमारे आप
वा एम करे तो हुं जोजराजाना पट्टहस्ती सार्थे लडीने तेने जीती घांचीना ल
क्ष रुपैयाना रुणथकी छुटुं. अने महारुं राजानी उपर लेणुं छे. ते आवी जा
य, तो मरीने सुख पामुं. आ वात ते वाणीयायें सांजली. पछी सवारना पहोरमां
उठी एक त्रांबीयाना रुणवाला बलदें जेम वात कही हती ते सर्व मलती दी
ठी. तेवारें विचार करे छे के, आवता जन्ममां देणुं देवुं पडे छे. ए वात नकी
छे एम सत्यमानीने पोतें जोजराजानी पासें जइने रात्रिनेविषे बनेलुं वृत्तांत
सर्वें कह्युं. वली कह्युं के, महाराथी पण परजवें रुणुं देवाय नहीं. माटे त
मारुं धन पाछुं लेउ. हुं मजुरी करी पेट जरीश. एम समजावी लीधेलुं ध
न पाछुं जंमारीने आपी दीधुं. अने राजायें पण पट्टहस्ती सार्थे बलदने
लडावी घांचीना रुणथी छोडाव्यो कह्युं छे के ॥ दोहा ॥ इह जव देणुं दो
हिलुं, परजव वली विशेष ॥ दृष्टांत सांजली बलदनो, त्यजीयें रुणो अ
शेष ॥ १ ॥ गाथा ॥ दासित्तंदेहि रुणं, अचिरामरणं वणोवि संपन्ने ॥ सव
स्स दाह मग्गी, दिंति कसाया जवमणंतं ॥ २ ॥ ३० ॥

हवे कुलटा स्त्रीने उपकार करियें तो पण ते पोताना स्वामीनी थाय
नहीं ते उपर एक स्त्री पुरुषनो त्रीशमो दृष्टांत कहे छे.

॥ प्रीत्या तेपि सहत्वयाद्य निधने धक्ष्यामि संकेतकृत्, तत्सर्वं रचितं सुरैर्यदि तदार्द्धायुश्च दत्तं स्त्रियै ॥ मुक्ता स्थापितमन्यपत्तनगता तस्मिन पुरेऽसौ गतः, तद्भार्या मिलिता तदा च कुलटा स्वार्थं विनानर्थकृत् ॥ ३१ ॥

अर्थः—कोइएक पुरुषे प्रेमें करीने पोतानी स्त्री सार्थे मांहोमांहे वात करतां संकेत कस्यो, के जो ताहारुं मरण मारी पहेलां थशे तो हुं तारी पछवाडे सत्तो थइश. अने स्त्रीयें कह्युं के जो तमो पेहेलां मरशो, तो हुं तमारी पाछल सती थइश. ए प्रमाणे निश्चय कस्यो. ते सर्व वृत्तांत कोइक देवतायें श्रवण कर्युं. तेथी ते देवतायें ते स्त्रीने मृतकरूप करी नाखी, त्यारे ते पुरुष सत्तो थवाने काष्ठनी चयमां बेगे, अने अग्नि लगाड्यो. पण देवतायें मेघ अंधारी वरषाद करीनें अग्नि उलवी नांख्यो. तेवारें ते पुरुष बहार आवी बेगे. पछी देवतायें ते पुरुषनुं अर्द्ध आयुष्य तेनी स्त्रीने आप्युं, त्यारें ते स्त्री त्यांथी पोताना स्वामीने छोडी समुद्रपार बीजा नगरमां गइ. अने ते पुरुष पण फरतो फरतो तेज नगरमां जइ तेने मल्यो. तेवारे ते स्त्री पोताना धणीने जोइने लाजी. कारण के पुरुषने छोडी ने भागी गइ हती. तेथी त्यां स्त्रीचरित्र करी पोतानुं लुगडुं फाडी बूम पाडी ने कह्युं, जे आ पुरुषे मारी लाज लीधी. ते सांभली त्यांना राजायें ते पुरुषने पकडीने सुली उपर चडाव्यो. एम कुलटास्त्रीयें स्वाथ्य विना अनर्थ कस्यो. कह्युं, छे के ॥ दोहो ॥ उपकार करियें अधिक तर, अयोग न माने एह ॥ अरधुं दीधुं आउखुं, तेहनी न थइ तेह ॥ १ ॥ इति त्रीशमो दृष्टांत ॥ ३१ ॥

भाग्यमां लख्युं होय तेज मले छे. ते उपर दरिद्रीनो एकत्रीशमो दृष्टांत.

॥ दारिद्र्यश्चपलान् सदात्ति भगिनी सोचिंतयन्मेऽस्तिहीं, मिष्टान्नेच्छिकया स्वसुर्गृहगतो भ्रातुश्च हर्षान्विता ॥ भक्त्यर्थं पतिता गृहेपिः चपला स्थाल्यां तद मुंचति, दत्वा स ह्यलके करं वदति तां रात्रौ गता मेऽग्रतः ॥ ३२ ॥

अर्थः—कोइएक दरिद्री प्रति दिवस चोला खातो हतो. एकदा चोला खातां उभग्यो चोला भावे नहिं तेवारे विचारवा लाग्यो के हुं दुःखी छुं पछ मिष्टान्ननी इच्छाये पोतानी वेननें घेर घणे दिवसें परोणो थइने गयो. तिहां भाइने जोइने वेन हर्षित थइ, अने भावें करी घरमां चोला हता ते पोताना भाइने जमाडवा माटे तेणे राध्यां. अने जमवाना वखत भाइनी थालीमां पीरस्या. ते जोइने तेना भाइयें दिलगीर थइ कपालें हाथ दइ वेनने

कह्युं के रात्रिनें विषेज आ चोला माहरी पढ़ेलांज तमारे घेर आवेला ज णाय छे ॥ दोहा ॥ में लीधो छे प्रहसमो, चोले लीधी रात ॥ एहथी ना गो आवियो, वेन थोडेरा घात ॥ १ ॥ देस तजी परदेस भमे, धरे घणी मन आस ॥ सरज्यो ते नर पामीयें, ज्युं चवले लीधी रात ॥ २ ॥ ३२॥ हवे जे पाप करीने पण वली पश्चाताप करे तो ते सुखी थाय,नही तो दुःखी थाय, तेऊपर राजानें मेहेलें जनार बे ग्रामीणनो बत्रीशमो दृष्टांत कहे छे.

॥ हर्म्यारोहणवारितं नृपतिना भृत्यः कथं कार्यतां, वामं गच्छति मुच्य तामिह गतौ ग्राम्यौ तदा क्रोशितौ ॥ वक्त्येकः किमु मारितोऽपरनरो भीत्या छ मां रक्षतां, गत्वाग्रेर्यदि गम्यतां त्वरगते मुक्तः सुखी सोऽभवत् ॥ ३३ ॥

अर्थः—एक राजायें वाडीमां मोहोल कराव्यो. अने पोताना चाकरोने कह्युं जे, आ मोहोलमां कोइने पेसवा देशो नहीं. तेवारें दरवाने पूछ्युं के, कदापि कोइ भूलथी प्रवेश करे, तो तेने केम करवुं ? तेने राजायें कह्युं के तेने पण मारी नांखजो. पण मूकशो नहीं.ते सांभली पोलीयायें फरी थी अरज करी के, हे महाराज ए घणो आकरो दंम छे. तेने राजायें कह्युं के, ते प्रवेश करनारो जो पाछे पगे उतरे तो तेने छोडी मुकजो. एकदा प्र स्तावे कोइ बे ग्रामीण पुरुषो भूलथी ऊपर चडी गया. त्यारें ते बेहु जण ने राजाना मनुष्योयें पकड्या. तेमां एक पुरुष बहु बोल्यो, तेथी तेने मा र्यो. अने बीजो पुरुष बीकथी कहेवा लाग्यो के मारुं रक्षण करो. त्यारे राजसुभटें कह्युं जे तुं पाछे पगे उतरीश तो बचीश ते पुरुषें तेमज कर्युं. त्यारें तेने मुक्यो तेथी ते जइ पोताना कुटुंबने मल्यो, अने सुखीयो थयो. कह्युं छे के, श्लोक ॥ पापं कृत्वा पुनः पश्चात् , यो निन्दति नरोत्तमः ॥ स सुखी जायते लोके, यथैको हर्म्यपश्यकः ॥ १ ॥ इति बत्रीशमो दृष्टांत ॥ विचार्या विना मुर्ख जनने वचन आपवुं नहीं ते विषे तेत्रीशमो दृष्टांत.

॥ भूपाभीरसुते सदाभिरमतोरोदित्यभीरांगजा, वक्त्योरोदिषि किं भवहि रहतः सत्यं धवैको हि नौ ॥ याम्यागच्छसि विट्सभं निशि सखे मार्गे मिलित्वा गतः, भुक्त्वार्यीचलहेतुकां वरमतो ज्ञात्वा गता स्वालये ॥ ३४ ॥ अर्थः— एक राजानी दीकरी बीजी आहिरनी दीकरी ए बन्ने साहेली हती. ते सा थें मली रमत करे.एकदा आहिरनी बेटी रोवा लागी तेने राजानी पुत्रीयें पूछ्युं जे तुं केम रडे छे ? त्यारे ते कहेवा लागी के तुं राजाने त्यां परणी

ने जाइश तिहां तहाराथी वाहेर फराशे नहीं तेवारे मारें ताहरो मेलाप थशे नहीं. तेथी मुजने ताहरो विरह थशे ते डुखथी हुं रडुं बुं. त्यारें राजकन्या कहेवा लागी के, जे ताहरो स्वामी तेहज मारो स्वामी हुं करीश बीजाने परणुं नहीं. एवो बोल दीधो. हवे एकदा ते आहिरकन्या कोइ नीच विटल पुरुषनी साथें निकली जवा लागी ते वखतें राजकन्याने कह्युं जे तुं आनी साथें चालीश ? त्यारें तेणें पण पूर्वें बोल आपवाथी हा पाडी; पठी त्रणें जण मली रात्रियें उठी चाल्यां आगल जतां एक रेंट फेरवनार पुरुषें आंबाना दृष्टांत वाली एक गाथा कही ते सांजली राजकुमारी मनमां समजीने पाठी वली. ते गाथा कहे छे ॥ दोहा ॥ कालुं वांकुं मुह करी, रत्तडा थयो अशास ॥ ते फल दीधे कवण गुण, जो फल दिये पलाश ॥१॥ सुरतरु जाणी सेविउ, रे निगुणा पलाश ॥ जब तें मुह कालो कीयो, तब में बोडी आश ॥ १ ॥ जइ फुल्ला कणियारया, चूयग अइ मासयम्मि धुठंमि॥ तुह न खमं फुल्लेउं, जइ पच्चंता करम्मि म्रमराइ ॥ ए तेत्रीशमो दृष्टांत ॥

नीच जन उंचनी समानता करे तो डुःखी थाय तेनो चोत्रीसमो दृष्टांत.

॥ कारण्येऽग्निजयाद्ध्रदे पतति वै सिंहादिजन्तुव्रज, शांते वह्निजये हरिर्वदति तं पुछं गृहाणाशु मे ॥ ते गृह्णंति तदा हृताः स्थलचरास्तद्धारितं फेरुणा, पश्चात्तेन कृतं तथापि न हृताः पुछं तदा त्रोटितम् ॥ ३५ ॥

अर्थः—कोइएक अटवीने विषे अग्निनो भय उपनो ते भयथी वनमां रहेनार सिंहादिक जंतुउ एक उंडा जलना धरामां पड्या. पठी ज्यारें अग्निनो भय निवृत्ति पाम्यो त्यारें सिंहें ते जंतुसमुदायने कह्युं के, मारुं पूठडुं पकडो, हुं सर्वेने वहार काढुं. ते सांजली वधायें तेनुं पूठडुं पकड्युं अने सिंहें फाल मारी ते सर्वेने बाहेर काढ्यां ते आम्नाय एक शीयालीए धारी राखी तदनंतर वली पण केटलेएक दिवसें दावानलना भयथी सर्वे जंतुउ तेहिज जलनां धरामां आवी पड्या पण ते वखत सिंह आव्यो नहीं त्यारे शियाले कह्युं मारे पुठडे वलगो हुं सौनें वहार काढुं पठी सिंहनी पेठें शियाले बल करी सौने काढवा मांम्यां तेथी ते शियालीयानुं पूठडुं तुटी गयुं अने सर्वे जीव पाठा पाणीमांहे पड्या माटे नीच पुरुष उंचनी समानता करवा जाय तो डुःखी थाय कह्युं छे के श्लोक ॥ आत्मवीर्यं

न जानाति, दृष्ट्वा दृष्ट्वा करोति यः ॥ स दुःखी स्याद्यथाफेरु, रुयुच्यत्पुच्छो ह्यधोऽपतत् ॥ ॥ १ ॥ ३५ ॥

हवे मोहोटानी छाया पण फल दायक छे तो महोटानी संगती फलदायक होय तेमां तो शुं ज कहेवुं! ते उपर एक जरवाडनो पांत्रीशमो दृष्टांत.

॥ च्युत्वाधो न्यपतन्फलानि स ततो दृष्ट्वा तदाचिंतयद्, गोपो मुर्ध्नि हिं खेगमस्य पतिता छाया वरा बुद्धिदा ॥ श्लोकस्तस्य कृतश्च पादरहितः छाया गता नो पदं, तादृक् तेनहि पूरितं निजधिया मक्केति कुंमालिकं ॥ ३६ ॥

अर्थः—एक कूवामां जांबुवृक्षनां फल टूटी पडतां हतां. ते कोइ गोवालीये दीठां, तेवारें गोवालीयें चिंतव्युं, जे आ फल खावा लायक छे. एम विचारे छे, एटलामां तिहां गोवालना माथा उपर सरस्वतीना विमाननी छाया पडी तेवारें ते गोवालने बुद्धि उपजी तेथी तेणे एक श्लोक नां त्रण पद जोड्यां. एटलामां विमाननी छाया चालीगइ, अने चोथुं पद तो थयुं नहीं. तेवारे तेहज गोवालिये पोतानी बुद्धिथी तेहवुंज चोथुं पद रच्युं. ते पद कहे छे डबक अने कुंडालुं. हवे जे श्लोक तेणे रच्यो ते कहे छे ॥ जंबूफलानि पक्वानि, पतंति विमले जले ॥ पतितान्ये वदृश्यंते, मबक अने कुंमालुं ॥ १ ॥ छायैव फलदा पुंसां, महतां तु विशेषतः ॥ विमानछायया वाण्या, गोपो हि पटुतां गतः ॥ १ ॥ ३६ ॥

सद्विद्याथी सहु चमत्कार पामे छे ते उपर छत्रीशमो दृष्टांत कहे छे.

॥ कोप्यागत्य विशारदो वदति मे विद्यां नृपं पश्य भो, स्त्री मुक्त्वै शगृहे गतो हि गगने मृत्वापतत् तत्समम् ॥ सा दग्धा पुनरागतो मम वशे त्वं देहि वार्त्तापि सः, कूटं भोवद चानयामि हि वरं लात्वा गतो विस्मितः ॥ ३७ ॥ अर्थः—कोइ एक पुरुष पोतानी स्त्रीने लइने कोइ राजाना दरबारमां आव्यो, अने राजाने कह्युं के माहारी विद्या जुवो. तेने राजायें कह्युं के भले देखाडो. त्यारें ते पोतानी स्त्रीने अंतःपुरमां मूकीने गयो अनें कह्युं के आकाशमां इंद्रनी अने दैत्यनी मांहोमांहे लडाइ थाय छे. माटे त्यां हुं जाउं छुं एम कहीने गयो पछी आकाश विषे जइ मरण पामीने तेना हाथ पग शरीर प्रमुख नीचे पड्यां ते जोइने ते पुरुषनी स्त्री पण पोतानो स्वामी पड्यो हतो तेनी साथें चयमां सती थइ ने वली गइ के तरतज ते पुरुष पाछो राजानी पासें आव्यो अने कह्युं के माहरी स्त्री आ

पो तेवारें राजायें तेनें पाछल बनेली वात सर्व कही, पण तेणे न मानी अने बोल्यो के हे राजन्! तुं जुतुं म बोल महारी स्त्री ताहरा घरमांज छे. तेने राजायें कह्युं जो घरमां होय तो लइ आव. तेवारें ते घरमां जइ स्त्रीने लइ आव्यो. ते जोइ राजा तथा सन्नाना लोक सर्व विस्मय पाम्या. एम विद्यानो चमत्कार देखाड्यो पछी राजायें पण घणुंक इव्य आप्युं. कह्युं छे के॥ विप्रेण दर्शितां विद्यां, विक्रमः सदसितदा ॥ निरीक्ष्य सुन्नटाः सर्वे, तदा तस्मै धनं ददौ ॥ १ ॥ इति छत्रीशमो दृष्टांत ॥ ३७ ॥

कपटथीज जारस्त्री परान्नव पामे तेनो साडत्रीशमो दृष्टांत कहे छे.

॥ श्लोक ॥ नो पुष्णाति पतिं तमाह कुलटा मेंऽधं करु त्वं सुर, श्रुत्वे तोहविषात तं हि हविषा पीनस्तदंधोऽन्नवत् ॥ पश्चात्तोषितुमारन्ने वदति स पश्यामि नो निर्न्नया, नुंक्तेऽन्यैःसह न्नोगमस्ति बलवन् युग्मं गृहीत्वा हतम् ॥ ३७ ॥ अर्थः—कोइएक विटल जार स्त्री पोताना धणीनुं पोषण करे नहीं. पोतें कुलटा छे, तेथी करी तेने पोताना नरतार ऊपर राग नथी. बीजा पुरुष साथे राग न्नाव राखे छे. एकदा ते जारस्त्रीयें एक यक्षनी पूजा करवा मांमी. अने प्रतिदिन पूजा करीनें एवुं कहेवा लागी के, हे यक्ष! मारा स्वामिने आंधलो कर. एम नित्य कहे एम करतां एक दिवस तेना नरतारें ते वात सांन्नली, तेवारें छल करीने पोतें यक्षनी प्रतिमानी पछवाडे जइ छुपाइने बेसी रह्यो. अने ते जार स्त्रीयें आवीने ज्यारे यक्षनें कह्युं के, हे यक्ष, तुं मारा स्वामीने आंधलो कर. ते वखतें पाछल बेठेलो पुरुष बोल्यो के, हे स्त्री! ताहारा धणीने तुं मिष्टान्न खवरावे तो आंधलो थाय. ते सांन्नली ते स्त्रीयें पोताना स्वामीनें घणो घृत खांम अने चूरमो प्रमुख मिष्टान्न खवरावया मांमयुं. तेवारे तेनो नरतार कपटथी आंधलानी माफक कहे के, हे स्त्री, हुं कांइ चीज देखी सकतो नथी. तेवारे ते स्त्री निर्न्नय थइ थकी ते विटल पुरुषनी साथें न्नोगन्नोगववा लागी. लगार मात्र ते स्त्रीने शंका रही नहीं. एकदा जेवारें तेनो नरतार खाइ पीइने सारी पेठे बलवान थयो, तेवारें ते जार स्त्री तथा जार पुरुष बे जणनें पकडीने मास्या. कागा कूव्या कह्युं, छे के श्लोक ॥ कथं हससि नो हंस, नाहं दर्डुरवाहनः ॥ कालडोवो हि कर्त्तव्यो, घृतांधो ब्राह्मणो यथा ॥१॥३७॥

गुरुयें शिष्यनी परीक्षा करी पोताना पदें स्थापवो तेनो आडत्रीशमो दृष्टांत.

॥ शिष्यान् वक्ति गुरुस्तदाम्रफलमिच्छाम्यानय त्वं पृथक्, पारीक्षाय निवेदितः प्रथमकोवग् वृद्धता ते गुरो ॥ अन्यो गच्छति शब्दितश्च लघुना गत्वा विधिं पृच्छति, त्रैविध्यं ज्ञ विनीतकं हि गुरुणा ज्ञात्वा स्वदत्तं पदम् ॥ ३९ ॥

अर्थः—एक गुरु पोताने पदें स्थापन करवा सारु शिष्योनी परीक्षा करवाने अर्थें प्रथम मोटा शिष्य प्रत्यें बोल्या के, तुं म्हारे माटे आंबाना फल लावी आप त्यारे ते वडो शिष्य बोल्यो के हे गुरु! तमारी अक्कल क्यां गइ देखाय छे जेमाटे तमोने वृद्धपणामां आम्र खावानुं मन थयुं छे? पछी बीजा शिष्यने कह्युं के तुं आम्रफल लाव्य त्यारे ते शिष्य आंबा लेवा माटे चाल्यो ते जोइने तेने गुरुयें पाछो तेडी लीधो पछी त्रीजा न्हाना शिष्यने लेइ आववा कह्युं तेवारें ते शिष्य वंदना करीने गुरुने पूछवा लाग्यो के हे स्वामी आंबा त्रण प्रकारना छे. एवुं तेनुं बोलवुं सांभलीने गुरुयें जाण्युं जे आ शिष्य विनीत ज्ञानवंत क्रियावंत छे माटे आपणा पदने योग्य छे. एम चिंतवी ते शिष्यने पोतानुं पद दीधुं. कह्युं छे के श्लोक ॥ परीक्षा सर्वसाधूनां, शिष्याणां च विशेषतः॥ कर्त्तव्या गणिना नित्यं, त्रयाणां हि कृता यथा १

गुणहीन स्त्रीयो घरने हलकुं पाडे तेनो उगणचालीसमो दृष्टांत कहे छे.

॥ लोलामात्यवशाश्चतुर्मुखसमाः श्रुत्वा नृपस्तद्गृहे, गत्वा पश्यति ताः पतिर्वदति न्नो मौनं विधेयं तदा ॥ तद्भोज्ये नृप वर्णिता सुवटिका तिस्रो गिरोचुः स्वसः, दृग्भ्यां क्रोशति तूर्यका हि हसितः प्रोचे न किं कां पयः॥ ४० ॥

॥ अर्थः—कोइएक प्रधानने चार स्त्रीउ हती ते चारे स्त्रीयो बोबडीयो हती ए वात राजायें सांभली अने विचार कर्यो के आपणा प्रधाननी चारे स्त्रीयो बोबडी छे ए वात खरी छे के खोटी छे माटे तेनी तपास करुं. एम निरधारीने प्रधानने घेर जोवा गयो त्यारे मंत्रियें पोतानी चारे स्त्रीउने वारी राख्युं के तमे बोलशो मां मौनपणुं करजो ए वात प्रधाननी स्त्रीउयें कबूल राखी पछी राजाने जमाडवा वडीनुं शाक कर्युं हतुं. ते ज्यारें राजा जमवा बेठो तेवारे स्त्रीउने हसावीने राजायें कह्युं के वडी वहुज सारी थइ छे एवां वखाण सांभलीने एक स्त्री बोल्याविना रही शकी नहीं. तेथी ते तरत बोली के "ए ववियां तो में तवियां" त्यांतो बीजी बोली के "एववियां तो तें तवीयां जो मांइआइयां तेलाइ पइआं" त्यारे त्रीजी बोली के "आ

शी नामा चंमाल आव्यो तेणे अन्न माग्युं. परंतु ब्राह्मणोयें आप्यु नही अने उलटा रीश करवा लाग्या, क्रोधायमान थया एटलामां एक सर्प निकल्या तेने देखीने ब्राह्मणे मार्यो ते हरिकेशी चांमाले जोयो. तेटलामां एक गोह नीकली. तेने जोइने हरिकेशी मारवा दोड्यो त्यां ब्राह्मणो बोल्या के, एना मुखमां विष नथी माटे मारशो नहीं तेवारें हरिकेशीयें पोतानो वांक जाण्यो. जातिस्मरण ज्ञान उपन्युं तेथी चारित्र व्रत प्रत्यें लेतो हवो अने एक गाथा कहीने तेणें उपदेश दीधो ते गाथा ॥ नद्देण होइ सवं, नदं पावेइ सवउं नदं ॥ हणिउ कन्हो सप्पो, नेरंमो तउ मुंच दीगो ॥१॥

केटलाएक प्राणी कोइ पदार्थने जोइ वैराग्य पामे ते विषे एकतालीशमो दृष्टांत.

॥ दृष्ट्वेशोप्यतिसुंदरं च वृषनं सोटाव्यते चैकदा, मार्गे सत्करकंकुराड निजकान् कस्यायमुक्तो तदा ॥ प्रोचुस्ते तव नो कमिष्टवृषनं श्रुत्वेति दीनोऽपि सन्, वैराग्यं हि विधाय राज्यमखिलं त्यक्त्वा मुनीशोऽनवत् ॥४१॥

अर्थः—करकंकु राजायें अति सुंदर वृषन पोताने त्यां जोइने तेनुं संरक्षण कराव्युं. घणा दिवस वीत्यापछी एक दिवस ते बेलने मार्गमां आरडतो जोइने मनुष्यने कहेवा लाग्यो के, आ कोनो बलद छे ? आनी कोइ संनाल पण लेतुं नथी त्यारें मनुष्य बोल्या के हे राजन्! आपने जे अत्यंत प्रिय हतो ते बलद आ छे, माटे आप पोतें संनाल न ल्यो तो बीजुं कोण ले ? आ वात सांनली राजानां मनमां वैराग्य उत्पन्न थयो, तेथी पोतानी राज्यादिक समृद्धि छोडी दीक्षा लीधी. रुषीश्वर थयो जाण्युं के आ बलदनी अवस्था ते महारी अवस्था जाणवी आ संसारमां सुख छे ते अस्थिर छे.

माटे मोह न राखवो ॥ सेयंसुजायं सुविनत्त सिंगं, जो पासई वसहं घुठ मज्जे ॥ रिध्धिं अरिध्धिं समुपेईयाणं कलिंगरायाविसमिरक धम्मं ॥ ४२ ॥

एकला रहेवाथीज सुख छे ते विषे नमिराजानो बेंतालीशमो दृष्टांत कहे छे.

॥ नाभ्यंगान्नुदति ज्वरोऽपि ललना धर्षयंति ताश्चन्दनं, शब्दं नो वलया वले सहति स त्यक्त्वा समं रक्षितं ॥ पृष्टस्तेन कथं रवो नवति नो ताः प्रोचुरे कैककं, चिंतत्याबहुतो सुखं मम तदेकाक्यस्ति जातो मुनिः ॥ ४३ ॥

अर्थः—नमिराजाना अंगने विषे दाह ज्वर उत्पन्न थयो त्यारें सर्व स्त्रीयो चंदन घसी घसी चोपडे पण साता पामे नहीं. वली ते चंदन घसतां थकां कंकण चूडीना खलखलाट थाय ते सोहाय नहीं, तेवारें ते स्त्रीयोयें मांगलिकार्थे एक एक चूडी राखी बाकी सर्व काढी नांखी तेथी शब्द थातो बंध पड्यो. ते जोइ राजायें पूछ्युं के शब्द केम थातो नथी ? स्त्रीयोयें कह्युं के मांगलिककार्यें एक एक चूडी राखी तेथी शब्द थातो बंध थयो. आ वात सांभली नमिराजायें विचार्युं के एकाकी रहेवे जेवुं सुख छे तेवुं झाझा मनुष्योथी सुख नथी. माटे जो आ ज्वर मटे तो माहरे दीक्षा ग्रहण करी एकलुं विचरवुं एम धर्मध्यान ध्यावतां ज्वर शांत थयो के तुरत ते रुषीश्वर एकाकी विचरी मोक्षने पाम्यो. कह्युं छे के गाथा ॥ वलयाण सदं सुणति राया, पछा असदं तह जाणईया ॥ रिध्धिं अरिध्धिं समुपेइयाण,विदेहराया विसमिरकधम्मं ॥ १ ॥ दोहा ॥ चंदन घसतां चूडीनो,श्रवण शब्द न सुहाय ॥ एक रखावी चिंतव्युं, बहु मलियां दुःख थाय ॥ २ ॥ राज रुध्धि सब परिहरि, लीधो संयम नार ॥ पारिखुं तव इंद्रे कह्युं, न चल्यो नमि लगार ॥

बीजानी देखा देखीयें पोतानुं गमाववा उपर त्रेतालीसमो दृष्टांत.

॥ छिंदंन्निःस्वनरस्तरुं यदि वने देवेन तद्वारितो,ऽन्नार्थी मार्गयतीह देह्यु डदजान् दत्तं वरं गछ नो ॥ गेहे दंतिजना विलोक्य धनिना पृष्टः कुतस्तान थो, प्रोचे तत्र गतः सिताग्रहधृतं तस्यास्तु मुक्तः स तं ॥४४॥ अर्थः—कोइ एक दारीद्री दुर्बल पुरुष वनमां लाकडांनी नारी लेवा गयो तिहां जइ एक सारुं वृक्ष देखी तेने छेदवा लागो. तेने ते वृक्षनो कोइ अधिष्टायिक देव त्यां अदृष्ट रहेलो हतो तेणे कह्युं के आ झाडने कापीश नहीं. त्यारे ते दारिद्री पुरुषे कह्युं के हुं भूख्यो छुं माटे मने खावानुं आप. देवें कह्युं के तुं माग जे जोइयें ते हुं आपुं. तेणे अडदनांढोकलां माग्यां त्यारें देवें

ढोकलांनु वरदान आप्युं पछी ते कठीआरे घेर आवीने ढोकलां खावा मांड्या तेनुं सर्व कुटंब नित्य ढोकलां खाय ते जोइने तेना पडोसी व्यवहारियायें, पूछ्युं के तुं प्रतिदिवस अडदनां ढोकलां क्यांथी लावी खाय छे तेवारे ते गरीब पुरुष बोल्यो के वनमां काष्ट कापतां माहरी ऊपर देवता प्रसन्न थयो तेणे वरदान आप्युं छे तेथी नित्य प्रत्यें ढोकलां खाइयें छैयें ते सांजली ते पडोसी पण तिहां गयो कुहाडो लइ हाथ उंचो कीधो के तरत तेने देवतायें थंनी राख्यो ते कोइ रीते छुटी शके नहीं पछी जेवारें घरनुं घृत पडोसीने आपवा कबुल कर्युं तेवारें देवतायें ते व्यवहारियो मूक्यो ते पुरुष पाछो घेर आव्यो. अने घरनुं घी पण खावाथी चुको स्त्रीये पूछ्युं तेवारे तेना धणीये कह्युं के घरना घृतमां साकर घालीने खा. ॥ दोहा ॥ ढोकल खातां देखीने, होंस हुइ मनमांय ॥ लेइ कुहाडो वन गयो, सुर थंनी तसकाय ॥ १ ॥ वनिता सुरसु वीनवे, धणीतें कचपच कीय ॥ ढोकल तो पाम्यां नहीं, घरना चूका घीय ॥ २॥ इति त्रेतालीसमो दृष्टांत॥

जे सुधर्मी होय ते खोटी वस्तु आगल न करे ते विषे चुम्मालीशमो दृष्टांत.

॥ दृष्ट्वानीकममात्यमाह नृपतिः कस्यास्तिशौर्यं बले, ज्ञात्वेनस्य तदा मृगाधिपपदे त्वारोपिताः स्वामिना ॥ बध्दा कृत्रिमका सटा बलमुखैः संस्थापितस्तं शुनं, स्तत्रागात् नवतीति पृष्ठचरणाभ्यां सोपि नष्टोऽधमः ॥४५॥ अर्थः- कोइ एक राजाना देसमां तेनो डुशमन राजा कटक लइने देश नांजवा आव्यो तेने जोइने राजायें मंत्रीने पुछ्युं के हे मंत्री सैन्यमां वधारे बल कोनुं होय ? त्यारे मत्रीयें कह्युं के सैन्यमां हस्तीनुं बल वधारे होय. राजा कहे एक सिंह कारिमो करशुं एवुं विचारीने सिंहने स्थानके एक कूतराने थाप्यो पछी तेने कारिमो केसरा टोप बांधीनें सैन्यने मुखें कर्यो अने पाछलथी राजा कटक लइ चड्यो ते जे वारे वयरी राजाना कटकनी साहामो आव्यो तिहां ते वयरिना कटकमां आगले मुखमां गजघटा दीठी ते जोइ कूतरो नसीने पाछले पगे नासवा लाग्यो पछी जेम जेम सैन्य सामुं आवे तेम तेम पाछे पगे कूतरो चालतो जाय अने नसतो जाय छे माटें सुधर्मी पुरुष खोटी वस्तुने आगल नकरे कह्युं छे के श्लोक ॥ आबध्द कृत्रिमछटाविकटाशुनक्ति, रारोप्यते मृगपतेः पदवीं यदि स्यात् ॥ मत्तेनकुंनतटपाटनलंपटस्य, नादं करिष्यति कथं हरिणाधिपस्य ॥ १ ॥ ४५ ॥

बांमी गधेडीनी हरियालीना अर्थनो पीस्तालीशमो दृष्टांत कहे छे.

॥ नृपः प्राह ददामि यो मम सुताप्रश्नोत्तरं दास्यति, राज्यार्धं तनयां च तस्य यदी नो शूलिं च दत्तावुभौ ॥ दृष्ट्वैकेन कृता प्रहेलिकवरा मेर्थं प्रदत्तं प्रिये, गत्वा बंडखरी विवाह्य नृपजां राज्यं च लात्वा गतः ॥४६॥ अर्थः– कोइ एक राजा सर्वेने एवुं कहे के मारी दीकरी जे प्रश्न करे ते प्रश्नोनो जे उत्तर आपे तेनें मारुं अर्धुं राज्य आपुं अने वली मारी दीकरी पण परणावुं अने वादकरतां जो उत्तर न आपे तो तेनें शूलीयें चडावुं. एवी प्रतिज्ञा करी अने ते प्रतिज्ञाथी कोइ बे पुरुषने तो शूलीयें पण चडाव्या. एवामां कोइ एक रजपूत पोतानी स्त्रीने आणु करवा जाय छे तेणे ते बे पुरुषने शूलीयें चडाव्या जोइने एक हरियाली जोडी पोतें कुंवरीनी आगल गयो जइने ते हरियाली कही अने विचारीनें कुंवरीने कहेवा लाग्यो के हे कुंवरी! ताहरी हरियालीनो अर्थ तो बांमी गधेडी. पण माहरी हरियाली नो अर्थ तुं कहे तेवारें राजायें जाण्यो जे महारो अर्थ तो एणे कह्यो एम समजीने राजायें तेने कन्या तथा अडधुं राज्य आप्युं ते पुरुष राजने तथा वे स्त्रीउने लइ चाल्यो. हवे राजपुत्रियें पूछेली हरियाली कहे छे ॥ हुतो तेवारे खाजे नहीं, न हुतो तेवारें खाजे ॥ ए हरियालीनो अर्थ कहे, तेहने राजपुत्री छाजे ॥ १ ॥ करी करम तो एक तेम बीजी, करी करमतो छे तेम त्रीजी ॥ राणी कंकण शीतल थाशे, कइक रंक उपर कागडा वासे ॥ २ ॥ आंखमांही पांख वीआइ, शुली दीधुं पाणी ॥ ताहरी हरिआलीनो अरथ वांडी गधेहडी, माहरो अरथ कहे राणी ॥ ३ ॥

हवे बुद्धिथी शशलायें सिंहने मार्यो एवो छेतालीशमो दृष्टांत कहे छे

॥ जीवान् हंति हरिस्तदा वनचराः प्रोचुः किमर्थं हरे, प्रत्येकोप्यपरे वरं हि शशको वस्त्रे विलंब्यागतः ॥ रुष्टो वक्ति सुरे वने तव रिपुर्नो दर्शये हन्मि तं, कूपे स्वं प्रतिबिंबमीक्ष्य पतितस्तेनाशु बुध्या हतः ॥ ४७ ॥

अर्थः–एक वनमां एक सिंह हतो ते घणा जीवोने मारे छे ते जोइ वधा वनचर भेला थइ सिंहने कहेवा लाग्या के हे वनचर! तुं जो नित्य जीव हिंसा करे नहीं तो अमें तुजने प्रत्येक दिवसें एक जीव आपशुं त्यारे सिंहे हा पाडी पछी वधाये वारो काढयो ने जेनो वारो आवे ते नित्य तेनी पाशे जाय एम करतां एकदा कोइ शशलानो वारो आव्यो. ते शशलो घ

णो असूरो विलंबें गयो. त्यारे क्रोधायमान थइ सिंहे शशलाने कह्युं के तुं केम वेहेलो आव्यो नहीं? त्यारे शशलें कह्युं के हे वनराज! ताहरो शत्रु बीजो सिंह वनमां आव्यो छे. तेणे मने आववा दीधो नही तेथी हुं रोकायो, तेने सिंहे कह्युं जे मारो दुश्मन बताव्य. तेवारें सिंहने पोतानी साथें लइ वनमां एक जल भरेल कूवो देखाडयुं के जो तारो शत्रु आमां बेगो छे, पछी सिंहे कूवामां जोयुं त्यां प्रतिबिंब रूप बीजो सिंह जोवामां आव्यो, तेने जोइ सिंह कूवामां पड्यो ने मरण पाम्यो. एम बुद्धियें करी शशलायें सिंहने माख्यो कह्युं छे के, श्लोक ॥ बुद्धिर्यस्य बलं तस्य, निर्बुद्धेश्च कुतो बलं ॥ वने सिंहो मदोन्मत्तो, शशकेन निपातितः ॥ १ ॥

हवे कविनी चतुराइनो सुडतालीशमो दृष्टांत कहे छे.

॥ व्युष्टे याति कविः करेण पतिना कूर्च्यो यदा कर्ष्यते, केशोपि स्वकरे विलोक्य कथितो निर्भाग्य लाह्येककं ॥ सोवक्किं हि करे ददासि तव मे भाग्यं तदा ज्ञायते, तुष्टः सन्कलयन् ददाति कवये कृत्वेशकाव्यं गतः ॥ ४७ ॥

अर्थः—एक दिवस प्रभातनेविषे एक पंमित राजानी सभामां याचना माटे आव्यो. राजाने एवी प्रतिज्ञा हती के कोइ याचक आवे तेवारे पोतानो जमणो हाथ दाढी उपर फेरवे अने जेटला केश हाथमां आवे तेटली शोनामोहोर तेहने आपे. आ पंमितनी वखत राजानें दाढीनो एकज केश हाथमां आव्यो त्यारे राजायें कवीने कह्युं के हे निर्भागीना शेखर तुं एक सोनैयो ले. पंमितें कह्युं के श्यामाटे? तेवारें राजायें कह्युं के महारा हाथमां एकज वाल आव्यो माटे एक शोनामोहोर ले जो घणा केश आवत तो घणा शोनैया आपत. ते सांभली कवियें कह्युं के तमारी दाढी मारा हाथमां आपो तो मारुं भाग्य जणाय आ प्रमाणे प्रसंगोपात अवसरनुं वचन सांभली तेनें पंमित जाणीने राजा खुशी थयो पछी संकल्प करवा ब्राह्मणे हाथमां जल लीधुं ते जलमां जोतां जोतां राजाना वर्णननां सो काव्य कर्यां. अने राजा पासेथी घणुं द्रव्य लइ गयो ते काव्यमांथी बे त्रण श्लोक उदाहरण माटे इहां लखीयें छैयें ॥ मालिनी वृत्तम् ॥ निवसतु तव गेहे निश्चला सिंधुपुत्री, प्रविशतु भुजदंमे चंमका वैरिहंत्री। तव वदनसरोजे भारती भातु नित्यं, न चलतु तव चित्तात् पादपद्मं मुरारे ॥ १ ॥ अनुष्टुपवृत्तम् ॥ त्वदीया दंष्ट्रिका राजन्, मदीये च करे भवेत् ॥ त

दा नाग्यमनाग्यं वा, ज्ञायते स्फुटमेव च ॥ २ ॥ यो गंगामतरत्तथैव यमुनां यो नर्मदां शर्मदां, का वार्त्ता, सरिदंबुलंघनविधेर्यश्चार्णवांत्तीर्णवान् ॥ सो जन्माकं चरमाश्रितोऽपिसहसा दारिद्र नामा सखस्त्वदानांबुसरित्य वाहजहरी मग्नश्च संनाव्यते ॥ ३ ॥ इति सडतालीशमो दृष्टांत ॥ ४७ ॥

हवे असंतोषी ऊपर अडतालीशमो दृष्टांत कहे छे

॥ ड्ंगे कुत्र जटी स्थितः प्रतिगृहस्यात्त्याच्च निक्षां दिने, पृछत्यत्र शुनं जना मम गृहादायाति नो वा तदा ॥ सोऽवक्दुष्टजना वदंति सकलाः किं मे गृहान्नागतं, तेषां तैश्च महोदरंनरिरपि ज्ञात्वेति निष्कासितः ॥ ४ए ॥ अर्थः—कोइ एक नगरने विषे एक सन्यासी मढीमां रहे छे. ते प्रतिदिन घर घरथी निक्षा मागी लावीने खायछे एकदा सर्वजणे मली तेने पूछ्युं के महाराज कोइने त्यांथी निक्षा आवे छे के नथी आवती ? सहुलोक तमारी खबर लीये छे के नथी लेता ? त्यारें माहाराजें कह्युं के लोक दुष्ट थया छे. निक्षा कोण आपे ? त्यारे ते सर्वलोकमांथी एकेक पूछवा लाग्यो के माहाराज अमारे त्यांथी निक्षा नथी आवती ? त्यारे सन्यासी बोल्या के हा वावु तेरे घरकी निक्षा तो आती है. तेमज बीजायें पूछ्युं त्यारें तेने पण एमज कह्युं एम जेणे जेणे पूछ्युं ते सर्वेने एमज कह्युं त्यारें लोकोयें जाण्युं के आ निर्गुणो पेटनरो देखाय छे. खातां पीतां पण कोइनुं सारूं बोलतो नथी माटे ए असंतोषी छे. तेथी एने वाहेर काढवो जोइयें एम चिंतवी तेने गाम वाहेर काढयो. कह्युं छे के ॥ श्लोक ॥ दुःखिताःसंति संसारे,जीवाः संतोषवर्जिताः ॥ संतोषरहितो मर्त्यो, ड्ंगान्निष्कासितो जटी॥ ४ए ॥

हवे नाववंदननी ऊपर साम्वकुमारनो उगणपचासमो दृष्टांत.

॥ कृष्णो वक्ति सुतौ ददामि जवमादौ ये जिनं वंदते, तत् श्रुत्वा सुतपालकौ जिनतटे गत्वालयं शंवकः ॥ अप्याहाश्वमिमं प्रदेहि मम नो पृष्टे जिने नेमिना, इव्यात् नावफलं मतं तु हरिणा शंवस्य दत्तोऽश्वकः ॥ ५० ॥

अर्थः—एक दिवस श्रीकृष्ण पोताना पालक तथा सांव नामना पुत्रने कहे छे के, जे श्रीनेमिनाथने प्रथम जइने वांदे तेने पाट घोडो आपुं, ते सांनली पालक नामना पुत्रें रात्रि लइने तरत जइ श्रीनेमिनाथ नगवान्ने वांद्या अने सांवकुमारे तो पोताना घेर सुतां थकांज नाव वंदना करी. पछी पालकें श्रीकृष्णने आवी कह्युं के मने अश्व आपो तेने श्रीकृष्णें कह्युं

खीर कदंबक नामना उपाध्याय एक पोतानो पुत्र पर्वत, बीजो नारद अ नें त्रीजो वसुराजा ए त्रण शिष्योने नणावीने पोते मरण पाम्या पछी वसु राजा पोताना बापनुं राज्य पाम्यो अने नारद विद्याधर थयो तथा पर्वत पोताना बापनी गादीयें बेठो. एकदा पर्वत अनें नारदने अज शब्दनो वाद थयो, ते बे जण पोतानो वाद मटाडवा पोतानी साथें नणनारो वसु रा जा हतो तेनी सन्नामां गया ने कह्युं के, अज शब्दनो शुं अर्थ? त्यारे पोता ना उपाध्यायना पुत्रनी माताना आग्रहथी वसुराजा मिश्रवचन बोल्यो के अज शब्दना बे अर्थ छे, तेमां एक तो त्रण वर्षनी जुनी शालने पण अ ज कहे छे अने बीजो अर्थ बोकडो पण थाय छे. आवुं मिश्र वचन बोल वाथी ते राजाने देवताउयें सिंहासनथी उंधो पाड्यो ते मरीने सातमी न रकें गयो. कह्युं छे के ॥ परोपरोधादिति निंदितं वचो, ब्रुवन्नरो गच्छति नारकीं पुरीं ॥ अनिंदवृत्तोपि गुणी नरेश्वरो, वसुर्यथाऽगादति लोकविश्रुतः ॥ १ ॥

पंमितनां डुर्लक्षण पण ढंकाय छे तेनो बावनमो दृष्टांत कहे छे.

॥ जातो माघगृहे सुतो हि हरने पित्रा सुतः पाठितो, नोजश्रीसदने गतो निशिहरो गृह्णन् धनं जागृतः ॥ शय्याऽधो नृपतेः स्थितश्च स तथा काव्यं नृपोऽवक्तदा, ज्ञात्वा गर्वयुतं हि तेन पदतुर्येणेश्वरो बोधितः ॥५२॥ अर्थः— माघपंमितने घेर चोर नक्षत्रमां पुत्रनो जन्म थयो, पछी ते पुत्रने पितायें निदान शास्त्र एटले चोरी कीधे महापाप छे एवा निदान शास्त्र नणाव्यां तो पण ते पुत्रनो चोर नक्षत्रमां जन्म होवाथी ते पंमित पुत्र नोजराजाने घेर जइ धनना नंमारमां पेठो, ने धन लेवा लाग्यो, तेमां एक लीये अने एक मूके तेटलामां नंमारनो रक्षक जाग्यो तेने जोइने राजाना ढोलीया नी चें पंमित पुत्र रक्षकना नयथी संताणो, सवारनो वखत थवाथी राजा जा ग्यो अने बंदीजन बिरुदावली बोलवा लाग्या त्यारें राजायें एक काव्य क रवा मांम्युं तेनां त्रण पद कर्यां ते त्रण पद सांनलीने पंमित पुत्रें जाण्युं जे राजा अहंकारें चढ्यो छे तेथी ते चोथुं पद बोल्यो, ते पद सांनली रा जा प्रतिबोध पाम्यो. हवे जे काव्य पंमित पुत्रें कह्युं ते लखे छे ॥ चेतो हराः युवतयः स्वजनोऽनुकूलः, सद्बांधवाः प्रणयगर्भगिरश्च नृत्याः ॥ वल्गंति दंतिनिवहास्तरलास्तुरंगाः, सम्मीलने नयनयोर्नहि किंचिदस्ति ॥ १ ॥

हवे स्त्रीवशपड्यो शुं शुं न करे? ते ऊपर त्रेपनमो दृष्टांत कहे छे.

॥ प्राज्ञेशप्रमदे मिथोऽपि वदतोवश्योऽस्ति मे वल्लभो, नान्यं दर्शयति प्र लेन च पति शंसा प्रिये चेत्कथं ॥ जीवेऽश्वीयपिरोहणं यदि तथेशोऽकं च कुर्या कृतं, तद्दृष्ट्वा परया पतेः समकचा मुंमापितास्तेतदा ॥५४॥ अर्थः—नोजरा जानी स्त्री अने कालिदास पंमितनी स्त्री ए बेहुनें मांहो मांहे बेनपणुं छे. एक दिवस ते बेहु जणीउ परस्पर कहेवा लागी के मारो धणी मारे वश छे, त्यारें पंमितनी स्त्रीयें कह्युं के तारो पति केवी रीते तहारे वश छे? ते मु जने देखाड. राणीयें कह्युं जे जेम तुं कहे तेम देखाडुं तेवारें पंमितनी स्त्री बोली जे ताहरो स्वामी अश्व थाय ने तुं तेनी ऊपर चडे तो तुजने धणी वश करवामां कुशल मानुं, तेवारें राणी मिश करी नांगा त्रुटा खाटला उ पर पडी अने कहेती हवी के कालजुं अचटाय छे मरुं छुं. एवामां राजा तेनी पासें आव्यो अने पूछ्युं के हे राणी! आम केम सूती छो? तेवारें रा णी कहे छे के वात कहेवा जेवी नथी, पण राजायें हठ लीधो जे ते वात म ने कहे त्यारें राणीयें कह्युं जे तमो घोडानी पेठें वांसाउपर पलाण बांधो तेनी ऊपर हुं स्वार थाउं अने तमने सात चाबुक मारुं तो हुं साजी थाउं, राजायें ते सर्व कीधुं राणी स्वार थइ पुंठ ऊपर सात चाबका मार्या ते सर्व चरित्र पंमितनी स्त्रीयें दीठुं, पछी राणीयें कह्युं के ताहरा धणीनी मुछ दाढी अने माथुं मुंमावीने सन्नामां मोकल तो तुजने खरी मानुं त्यारे ते स्त्रीयें पण पंमितने तेमज करी सन्नामां राजा पासें मोकल्यो ते राणीयें दीठो पछी राजायें पुछ्युं जे कये तीरथे मुंमन कराव्युं? त्यारे कालीदास पंमितें तेनो उत्तर आप्यो ते श्लोक ॥ कालिदास कविश्रेष्ठ, कुत्र पर्वणि मुंमनं ॥ अनश्वा यत्र नेष्यंति, तत्र पर्वणि मुंमनम् ॥ १ ॥ किं करोति नरः प्राज्ञो, स्त्रीवाचा प्रे रितो नरः ॥ अश्वरूपी नवेद्राजा, मंत्री मस्तकमुंमितः ॥ २ ॥

जेनुं वचन गयुं ते मुआ सरखो जाणवो ते ऊपर चोपनमो दृष्टांत.

॥ दृष्ट्वाकाकमसिं हि मार्गेति नृपो बाणं छलेनानितं, पुंखित्वा सुबलेन मुंचति यदा काकस्य लग्नं दृढं ॥ प्राप्तोऽधो वनिलुक् तदाह नृपतिं नाहं मृत स्त्वं मृतो, वाक्यं ते नरनूषणं गतमतो धिग् जीवितं तस्य तु ॥ ५५ ॥

अर्थः—कोइ एक राजा वृक्षनीचे बेठो हतो, तेवामां एक कागडो वृक्ष ऊपर बेसीनें बोलवा लाग्यो त्यारें राजायें पोताना चाकरने कह्युं के खड्ग

लाव काकने हुं मारुं एम कही छानी रीते समस्यायें एक बांण धनुषमां संयोजित करी राख्यो ते वात कागडायें सांभली अने विचार कर्यो के ए राजा खड्ग लइने मने मारवा झाड उपर चढशे तेवामां हुं उडी जाइस एम विसवासें रह्यो तेवामां राजायें तेनी उपर जोरथी बाण फेंक्युं, ते कागडाने सूधो लाग्यो तेथी तरफडतो थको तरत नीचें पड्यो अने मरण थवानी तैयारीमां आव्यो तिहां मरतां मरतां कहेवा लाग्यो के हे राजा हुं मरतो नथी पण तुं मरे छे कारणके मनुष्यनो भूषण रूप जे वचन ते वचनथी तुं चूकोछो माटे जे पुरुष पोतानुं वचन गमावीनें जीवतो रह्यो तेना जीवितव्यने धिक्कार छे जेनुं वाक्य गयुं तेनो जीव रह्युं तो पण मुवा सरखोज जाणवो कह्युं छे के श्लोक ॥ असारः सर्वसंसारो; वाचा सारस्तु देहिनां ॥ वाचा चंचलिता यस्य, सुकृतं तेन हारितम् ॥ १ ॥ मग्गियं खग्ग फलयं, काउदेसेण संधिउ बाणो ॥ सुंदमूउ ण काउ, मूआ ते वयण चूकाउ ॥ २ ॥ ए चोपन्नमो दृष्टांत ॥ ५५ ॥

हवे पांम्रवोनी तृषानो पचावनमो दृष्टांत कहे छे.

॥ सत्रे पांडुसुताः सरोपि तृषिता दृष्ट्वाब्धिसंख्यागताः, तत्राहार्पय मे सरः पिब मरिष्यस्युत्तरं नो जलं ॥ पीत्वाद्वश्च पृथक् तदर्थमवदन्निश्चेष्टितास्तेऽभवन्, दत्वार्थं हि युधिष्ठिरः प्रतिसुरं जीवापयत्याशु तान् ॥५६॥ अर्थः— वनमांहे पांचें पांम्रवोने तृषा लागी तिहां पाणी जोतां घणुंज वेगलुं एक सरोवर जलें पूरित दीठुं. तेवारें पांच भाइउमांथी एक भाइ पाणी पीवा तथा बीजा भाइउ सारु पाणी लेवा माटे गयो. ते तिहां सरने विषे जइ पाणी पीवा लाग्यो. तेवारें ते सरोवरनो अधिष्ठायक एक देवता बोल्यो के, जो म्हारा प्रश्ननो उत्तर आपे तो पाणी पी. तेने भाइयें कह्युं के एकवार मने पाणी पीवा दे, पछी हुं तुजने उत्तर आपीश. तेवारें देवता बोल्यो जो उत्तर नहीं आपीश तो मरण पामीश. पाणी पीधा पछी उत्तर देवाणो नहीं. तेवारे तेने देवतायें मृतक करी नाख्यो हवे तेने पाछुं आवतां घणो वखत लाग्यो तेवारें बीजो भाइ आव्यो. एम एकेक केडे चार भाइउ आव्या ते चारेने पूर्वनी पेरें मृतक करी नांख्या. तेवारें राजा युधिष्ठिरें जाण्युं के, जे जाय छे ते पाछा आवता नथी. माटे ए शी बला छे? तेथी युधिष्ठिर पोतें त्यां आव्यो त्यां जुवे तो चारे भाइने मृतप्राय दीठा. अने पोतें जल पी

हवे स्त्रीवशपड्यो शुं शुं न करे? ते ऊपर त्रेपनमो दृष्टांत कहे छे.

॥ प्राङ्गेशप्रमदे मिथोऽपि वदतोवश्योस्ति मे वल्लनो, नान्यं दर्शयति छलेन च पति शंसा म्रियें चेत्कथं ॥ जीवेऽश्वीयपिरोहणं यदि तथेशोक्तं च कुर्या कृतं, तदृष्ट्वा परया पतेः समकचा मुंमापितास्तेतदा ॥५४॥ अर्थः—नोजराजानी स्त्री अने कालिदास पंमितनी स्त्री ए बेहुनें मांहो मांहे बेनपणुं छे. एक दिवस ते बेहु जणीउं परस्पर कहेवा लागी के मारो धणी मारे वश छे, त्यारें पंमितनी स्त्रीयें कह्युं के तारो पति केवी रीते तहारे वश छे? ते मुजने देखाड. राणीयें कह्युं जे जेम तुं कहे तेम देखाडुं तेवारें पंमितनी स्त्री बोली जे ताहरो स्वामी अश्व थाय ने तुं तेनी ऊपर चडे तो तुजने धणी वश करवामां कुशल मानुं, तेवारें राणी मिश करी नांगा त्रुटा खाटला उपर पडी अने कहेती हवी के कालजुं अवटाय छे मरुं छुं. एवामां राजा तेनी पासें आव्यो अने पूछ्युं के हे राणी! आम केम सूती छो? तेवारें राणी कहे छे के वात कहेवा जेवी नथी, पण राजायें हठ लीधो जे तेवात मने कहे त्यारें राणीयें कह्युं जे तमो घोडानी पेठें वांसाउपर पलाण बांधो तेनी ऊपर हुं स्वार थाउं अने तमने सात चाबुक मारुं तो हुं साजी थाउं, राजायें ते सर्व कीधुं राणी स्वार थइ पुंठ ऊपर सात चाबका मार्या ते सर्व चरित्र पंमितनी स्त्रीयें दीठुं, पछी राणीयें कह्युं के ताहरा धणीनी मुछ दाढी अने माथुं मुंमावीने सनामां मोकल तो तुजने खरी मानुं त्यारे ते स्त्रीयें पण पंमितने तेमज करी सनामां राजा पासें मोकल्यो ते राणीयें दीठो पछी राजायें पुछ्युं जे कये तीरथे मुंमन कराव्युं? त्यारे कालीदास पंमितें तेनो उत्तर आप्यो ते श्लोक ॥ कालिदास कविश्रेष्ठ, कुत्र पर्वणि मुंमनं ॥ अनश्वा यत्र नेष्यंति, तत्र पर्वणि मुंमनम् ॥ १ ॥ किं करोति नरः प्राज्ञो, स्त्रीवाचा प्रेरितो नरः ॥ अश्वरूपी नवेद्राजा, मंत्री मस्तकमुंमितः ॥ २ ॥

जेनुं वचन गयुं ते मुआ सरखो जाणवो ते ऊपर चोपनमो दृष्टांत.

॥ दृष्ट्वाकाकमसिं हि मागेति नृपो बाणं छलेनानितं, पुंखित्वा सुबलेन मुंचति यदा काकस्य लग्नं दृढं ॥ प्राप्तोऽधो वलिन्नुक् तदाह नृपतिं नाहं मृतस्त्वं मृतो, वाक्यं ते नरनूषणं गतमतो धिग् जीवितं तस्य तु ॥ ५५ ॥

अर्थः—कोइ एक राजा वृक्षनीचे बेठो हतो, तेवामां एक कागडो वृक्ष ऊपर बेसीनें बोलवा लाग्यो त्यारें राजायें पोताना चाकरने कह्यु के खड्ग

डी देशे, तेणे तेम करवाथी तरत ते मगरमत्स्यना मुखथकी छूटो पड्यो. अने बेहु जण पाछा आवी सुइ रह्यां. आ सर्व वृतांत ते छात्रें छानीरीते ते स्त्रीनी पछवाडे जइने जोयुं अने जाएयुं जे एणे खरेखरुं स्त्री चरित्र कर्युं. पछी बळते दिवसें वळी ते स्त्रीयें कह्युं के माहरी साथे छात्र मोकलो ते वखतें जे छात्रें गइ रात्रियें ते स्त्रीनुं चरित्र जोयुं हतुं. ते सर्व वृत्तांत गुरु समक्ष कही आप्युं त्यारें, स्त्रीयें जाएयुं जे आ विद्यार्थी खरो बुद्धिमान छे अने ब्राह्मणे ते स्त्रीनो त्याग कर्यो, ए स्त्रीचरित्रने कोइकज जाणे. कह्युं छे के श्लोक ॥ दिवा बिभेति काकेभ्यो, रात्रौ तरति नर्मदां ॥ कुतीर्थान्यपि जानाति, जलजंत्वक्षिरोधनं ॥ १ ॥ ५७ ॥ इति छप्पनमो दृष्टांत ॥

हवे जेवी संगत तेवागुण ते ऊपर सत्तावनमो दृष्टांत कहे छे.

॥ इष्टैकं नृपतिं वने निगदिताः कीरेण भिल्लास्तदा, संकल्यांशु गतोग्रके हि मुनयोऽन्येनापि भात्यर्हकं ॥ तेऽन्यागत्य वदंति तिष्ठ नृपते वाक्यांतराद्विस्मितः सोऽवग् संगगुणा हि तस्य पितरावेकौ समस्तस्तथा ॥५८॥ अर्थः– एक दिवस कोइएक राजा वनमां गयो. तेवामां एक भिल्लोनी पल्ली आवी त्यां एक पोपट हतो, ते पण चोरकर्ममां कुशळ हतो तेथी ते राजाने जोइ पोपट बोल्यो, के दोडो दोडो आ राजा आव्यो छे. तेने लूंटो ते सांभळी घोडो दोडावी राजा पलायमान थइ गयो. त्यांथी दूर जतां एक तापसनुं आश्रम आव्युं. त्यां पण एक पोपट बांध्यो हतो, ते बोल्यो के आपणे त्यां महोटो राजा अतिथि आव्यो छे, तेनो सत्कार करो. ए वात सांभळी राजा खुशी थयो, ने ऊभो रह्यो. तेवामां ते सर्व तापसोयें आवी राजानुं आतिथ्य कर्युं. राजायें कह्युं के एक पोपट भिल्लनी पल्लीमां हतो तेणे कह्युं के लूंटो लूंटो? अने आ पोपट केवां मनोहर वाक्य बोले छे? आवात सांभळी पोपट कहे छे के हे राजन्! ते संगतीना गुण छे अमारा बेहुना माता पिता एकज छे पण तेने चोरनी संगती छे. अने मारे रुषीओनी संगति छे. माटे संगतिना गुण एवाज होय छे. कह्युं, छे के श्लोक ॥ माताप्येका पिताप्येको, मम तस्य च पक्षिणः ॥ अहं मुनिभिरानीत,ः स च नीतो गवाशनैः ॥ १ ॥ गवाशनानां स गिरः शृणोतिः, अहं च राजन् मुनिपुंगवानां ॥ प्रत्यक्षमेतत् भवतापि दृष्टं, संसर्गजा दोषगुणा भवंति ॥२॥

हवें नणवानो उद्यम करवा ऊपर अष्ठावनमो दृष्टांत कहे बे.

॥ नृपो यत्र हि गर्द्दनो जवमुनिं दृष्ट्वाह तं धीसख, शत्रुस्तेस्ति तदा व धाय निशिगः श्रुत्वार्यकां तन्मुखात् ॥ बुद्धोंतःकरणे विचारयति राड् मे दीर्घपृष्ठोऽनृतो,, ज्ञानी साधुरयं न ही मम रिपुर्ज्ञात्वा गतः स्वालये ॥५८॥

अर्थः—कोइ एक नगरमां गर्द्दनसेन नामा राजा राज्य करतो हतो. तेना पितायें दीक्षा लीधी बे. ते साधु विनयवंत अप्रमादी हतो. पण कांइ नण्यो नहीं मात्र मार्गमां चालतां गोवालीयादिकनी मुखथी त्रण गाथा धारी राखी बे. हवें एक दिवसें ते साधु पोताना पुत्रने वंदाववा माटे त्यां आवी कुंनारने घेर उतस्यो बे. त्यारें ते राजानो दीर्घपृष्ठनामा प्रधान बे ते प्रधानें राजानी दीकरीनें स्वरूपवान जाणीने पोताना घरमां नोंयरामां संताडी राखी हती. ते जेवारें साधु आव्या तेवारें प्रधान मनमां वीहीनो ने जाण्युं के राजा ए साधुने वांदवा जशे. अने ते ज्ञानी हशे तो माहारी वात प्रगट करी देशे माटे कोइक युक्ति करी राजानुं मन फेरवी मुनिने मरावी नांखुं एम विचारी ते प्रधान राजानें कहेवा लाग्यो के तारा पितानुं मनधर्मथी चल्युं बे अने राज्य पाबुं लेवा इबा राखे बे. आ वात सांनली राजा कोपायमान थयो अने रात्रें ते रुषीश्वरने मारवा माटे कुंनारने त्यां गयो त्यारें रुषीश्वर तो बेठा बेठा मार्गमां सांनलेली त्रण गाथा नणे बे. ते गाथानो परमार्थ जाणीने राजा प्रतिबोध पाम्यो ने जाण्युं जे महारो पितातो ज्ञानी बे मारा मननी वात साचे साची कहे बे. माटे ए प्रधान निश्चय खोटो बे. अने आ गाथा प्रमाणे माहारी पुत्री पण एणेज संताडेली बे. तेथीज बुद्धि केलवीने मने माहारा पिता साधुनी पासे जवानो एणे निषेध कस्यो बे, परंतु ए साधु कांइ महारा वैरी नथी. अनें महारुं राज्य लेवाने पण इब्रता नथी. एवुं चिंतवी पोताने घेर आव्यो अने बीजे दिवसें प्रधाननुं घर शोध्युं तेमांथी पोतानी पुत्री निकली आवी. तेवारे प्रधानने काढी मुक्यो, दुःखी कीधो, हवे जे गाथा नणतां अर्थ सस्यो ते गाथा त्रण नीचें लखीयें बैयें ॥ उहावसीपोहावसी, ममं चेव निरस्कसि ॥ जाणिउं सि अनिप्पाउं, जवं नरकई गद्दहा ॥ १ ॥ उगयातो गया चेव, जोइज्जंति न दीसई ॥ अमे न दीठा तुमें नदीठा, अगोडे बूटा अणुलिआ ॥ २ ॥ सुकमाल कोमल मद्दलया, तमे राति हिंमण सीलणया ॥ अम्म

पसाउ नवि नयं, दीह पिन्नाउतुम्ह नयं ॥ ३ ॥ सिक्खिअवं मनुस्सेणं,अपि जारिस तारिसं ॥ कीस मूढसिलोगेण, जीवियं परिरक्खियं ॥ ४ ॥

हवे कुबुद्धिया मत्स्यनो उगणसाठमो दृष्टांत कहे ले.

॥ तीरे चाम्रफलं सदा वनचरो मीनाय दत्ते तदा, लात्वा स स्वगृहे स्त्रिये वदति सा तन्नक्षकं ह्यानय ॥ कृत्वारोहणमेत्य तं जलनिधौ मेत्त्यंगना ते हृदं, बक्ष्ं मूढ नगे मया किमु कृतं बुद्ध्यागतो जीवति ॥ ६० ॥ अर्थः— समुद्रने कांठे एक आम्र वृक्ष ले. ते वृक्ष ऊपर एक वांदरो आवी ते आंवानां फल खाय ले. एकदा ते वांदराने एक मत्ननी साथे मित्रता हती, तेथी तेने पण आंबाना ठोतरां आपे, तथा फल पण आपे एम करतां एक दहाडे ते माठलो केरीनां ठोतरां तथा फल पोतानी स्त्री वास्ते लइ गयो. ते स्त्रीनें लइ आप्यां. ते खावाथी तेने मीठां लाग्यां त्यारें माठलीयें कह्युं जे ए फल जे खातो हशे तेनुं कालजुं पण अत्यंत मीठुं हशे, माटे हे स्वामी, तेने तुं आहीं तेडी आव तो हुं तेनुं कालजुं खाउं, के जेथी महारो मनोरथ पूर्ण थाय. ते सांजली माठलो वांदरा पासें आवीने कहेवा लाग्यो, जे हे मित्र, मारे स्थानकें आव्य अनें समुद्रनो विनोद तथा उंमापणाने जो महारी स्त्रीपण ताहारा दर्शननो अनिलाष धरे ले. मित्रपण तेनेज कहियें, के जे परस्पर एक बीजाने घेर आवे ने जाय अने एक वीजानें खवरावे पीवरावे, एक वीजाने आपे लीए. इत्यादि वचन सांजली वांदरे हा पामी तेवारें वांदराने पोतानी पुंठे वेसारी माठलो समुद्रमां चाल्यो. मार्गमां ते माठलो वांदरा प्रत्यें वोल्यो, जे हे मित्र, तुं कहे तो हुं साचुं वोलुं, वांदरे कह्युं. सुखेथी वोल तेवारे माठले कह्युं जे महारी स्त्री ताहरुं कालजुं खाशे. आ वात सांजली वांदरो हस्यो, अने बुद्धि करी वोल्यो के हे नाइ, एमां सी महोटी वात ले पण तुं मूर्ख देखाय ले. जे माटे तें पहेलां मने त्यांज केम न कह्युं हुं तो कालजुं आंबे वांधी आव्यो छुं ! माटे तुं कहेतो लइ आवुं, त्यारे मत्ने कह्युं के जा लइ आव पठी वांदरो त्यांथी फलंग मारी समुद्र कांठे आवी आंबा ऊपर चडी वेठो. अने जीवतो रह्यो कह्युं ले के ॥दोहा॥ मित्तफुडाफुडि वोलीए, न जंपीइ अलीएण ॥ मुक्त महीला तो जीवशे, खाधे तुज्क हीएण ॥ १ ॥ रे जलचर सुजलखणा, एको काज न कीध ॥ घट भिंतर जे कालजुं, सो

में आंवे वद ॥ २ ॥ वानर गया मह्वीमंझनें, जलचर जानिज घरे ॥ तुज महिला जीवे नहीं, तो तुं साथे मरे ॥ ३ ॥ जलचर जीव कुबुद्धि था, एको काज न सिद्ध ॥ घट भीतर जे कालजुं, सो क्युं आंवें वद ॥४॥ ॥६०॥

ह्वे धर्म करवामां शंसय न करवा आश्रयी साठमो दृष्टांत कहे बे.

॥ वक्तीशः सचिवं हि दीर्घलघुभिर्नो भाति दृंगं गृहैः, साढ्का धनमंदिरे मम पुरे ते रक्षणीया जनाः ॥ विद्यंते यदि पंचषा वदति भो शून्यं पुरं स्या त्तदा, तत्त्वं मा कुरु तं तथास्तु नृपते तद्धक्षणे साधवः ॥ ६१ ॥ अर्थः- कोइएक राजा पोताना प्रधानने कहे बे, जे माहरा नगरमां केटलाएक निर्धन वसे बे, अने केटलाएक धनवान मोटा लोको वसे बे. तेमज केट लाएक न्हाना न्हाना घर बे, अने केटलाएक मह्वोटां मह्वोटां घरो बे. तेथी नगर शोभतुं नथी. माटे सघला लखेसरी धनवान पैसादार अने चार चार पांच पांच मजलाना सरखा घरवालाने राखीयें. अने सामान्य निर्धन लोकोने काढी मूकीयें. तो नगर शोभे. आ राजानुं कहेलुं सांभ लीने सुबुद्धिमान एवो प्रधान वोल्यो जे, हे राजन्! एम करवाथी तमा रा नगरमां मात्र पांच सात घर रहेशे. नगर आखुं शून्य थइ जाशे. माटे एम न करो. आ वातथी राजा समज्यो. अने प्रधानने कह्युं के, जेम बे तेमज रहेवा आपो. आ दृष्टांते करी पोताना गछनेविषे सर्व साधु कांइ ज्ञान क्रियामां सरखा न होय तो काढ थाल न करतां धर्मनेविषे मनस्थिर राखी धर्माचरण करवुं. कह्युं बे, के ॥ नगरे सदृशाः सर्वे, भवंति धनिनो न हि ॥ गछेपि साधवो ज्ञान, क्रियाभ्यां न हि सदृशाः ॥६१॥ इति साठमो दृष्टांत

कुलटा सासुयें वे जमाइमां राखेला अंतरनो एकसठमो दृष्टांत कहे बे.

॥ इष्टानिष्टसमागतौ स्वसदने जामातृकावेकदा, जग्ध्यर्थं निकटे स्थितौ कुटलया स्थाल्यां तदादेवैरं ॥ मुक्तं पायसकं परस्य सितिकां स्थूलीं विलो क्यास्य किं, सोवग्मे यदि वां किमस्ति तिलकं श्वश्रूः करोस्यास्यकं ॥ ६२ ॥

अर्थः–कोइकने घेर वे जमाइ परोणा आव्या. तेमां एक जण सासुने घणो वाहालो हतो, अने बीजो डवालो हतो. पछी बेहु जण जमवा माटे पासें पासें बेठा त्यारें ते कुलटा सासुयें पोताना वाहाला जमाइने थालमां सेव सुंहाली दूधपाक खाजां खुरमां आदिक पीरश्यां. अने बीजा जमाइ ना थालमां धोला यवनी शुली रांधी पीरशी बेहु जमवा बेठा. तेवारें शु

ली वालो जमाइ बीजा जमाइनुं उत्तम भोजन जोइने कहेवा लाग्यो जे, हे सासु ! तमें पीरसतां भुल्यां छो. किंवा म्हारा कर्मने योगें खीर सेव प्रमुखनी थुली थइ गइ. त्यारें सासु बोली के हुं नथी भूली, अने खीर सेवनी थुली पण थइ नथी. में मोढुं जोइ ने टीलुं कर्युं छे ते माटे थुली यें पेट भरी जवो. ॥ दोहा ॥ एक ने पिरसी सेव सुंहाली, एक ने पिरसी थूली ॥ के मुज दाहाडा वांकडा, के पिरसण हारी भूली ॥ १ ॥ नां तुज दीहा वंकडा, ना पिरसण हारी भूली ॥ मों देखीने टीलुं काढ्युं, मारि गलगल थूली ॥ २ ॥ ए एकसठमो दृष्टांत ॥ ६२ ॥

कोइपण नियम लेवो ते लाभ करें तेनो बासठमो दृष्टांत.

॥ टाल्यां वीक्ष्य ततोद्भि सद्गुरुमुखा देतगृहीतं व्रतं चक्री त्वेकदिने गतः स मृतिकाखन्यां वणिक्टष्ठगः ॥ द्रव्यं तत्र हि निर्गतं यदि वणिक् दृष्ट्वेत्यवग् दूरत, स्त्वं मायाहि अवेहि मेपि सकलं लात्वालये तद्गतः ॥ ६३ ॥

॥ अर्थः—कोइएक नगरमां गुरु आव्या. त्यारें घणां लोकें पच्चरकाण लीधां तेमां एक वाणीयें एवुं नियम लीधुं, जे हुं आ गामना रहेवासी कुंभारना माथानी टालि जोइ, पच्चरकाण पारुं. पछी ते नित्य कुंभारनी टाली जोइ पच्चरकाण पारे एम करतां एक दिवस कुंभार माटी लेवा सारुं धूलनी खाणे गयो हतो पाछल वाणीयो कुंभारने घेर आव्यो तेने घेरथी समाचार मल्या के कुंभार धूलनी खाणे गयो छे तेवारें वाणीयो पण त्यां खाणे गयो ते समय त्यां कुंभारने माटी खोदतां सोनैयानो चरु मल्यो ए अवसरें वाणीयें पण कुंभारनी टाल दीठी. त्यारे वाणीयो कहेवा लाग्यो के " दीठीरे दीठी " एम बोलतो पाछो वल्यो ते सांभली कुंभारें जाण्युं. जे द्रव्यनी कडा ए वाणीयायें दीठी. तेथी कुंभार उभो थइने वाणीयाने साद करवा लाग्यो. के " मजा रे मजा " एम कहेतो वाणीयानी केडें दोड्यो. अने कहेवा लाग्यो जे, अर्धनाणुं मारुं ने अर्धनाणुं तारुं ए वात जाणी वाणीयो पाछो वली अर्धनाणुं लइ घेर आव्यो. माटे कोइ पण नियम लेवो ते लाभकारक छे कह्युं छे, के ॥ योपि सोपि ध्रुवं ग्राह्यो, नियमः पुण्यकांक्षिणा ॥ स्वल्पोप्यनल्पलाभाय, यथा खल्वाटपश्यकः ॥ १ ॥

तथापि दशनानास्ये गुरोश्चैकदा ॥ कृत्वा तेऽनशनं दिवं शवमुखाद्दंतांश्च सो पातयन्, मृत्वा क्रोधवशेन चापि नरकं प्राप्तो विनीतो जडः ॥ ६४ ॥ अर्थः—कोइएक नगरमां गुरुने शिष्य बेहु विहार करतां आव्या. एक दिवस शिष्य नगरमां वहोरवा गयो, त्यां सरशवनी नाजी वहोरी आव्यो. ते गुरुयें एकलायें खाधी, पण शिष्यने दीधी नहीं. तेथी ते शिष्य कोपायमा न थइ विचारवा लाग्यो के, एणे मुजने शाक न आप्युं. माटे आ गुरु ना दांत निश्चें पाडुं. पण ते गुरु जीवतां तो दांत कोइरीतें पाडी शकाय नहीं, तेवारे रात दिवस एज चिंतवन करतो हतो. एक दिवस गुरु अ नशन व्रत करीने परलोकें पहोंच्या. वलता ते शिष्यें पछवती गुरुना श बना दांत पाड्या. ते डुर्नव्य क्रोधना आवेशथी मरीने नरकें गयो. अ विनीत जिन शासननो उड्डापक थयो ए अनंतानुबंधी क्रोध जाणवो माटे क्रोधपरिहरवो कह्युं ठे,के॥ यो नवेद् जगति गवर्जितो, दीर्घरोषसहितश्च मान वान् ॥ सोत्रडुःखमधिकं लनेद्यथा, दंतपातमुनिनात्पमत्रवै ॥ इति त्रेशठमोह०

हवे धनने मान मले ते ऊपर चोशठमो दृष्टांत कहे ठे.

॥ निःस्वं सोदरकं निरीक्ष्य नगिनी भ्राता न मे सूपकृत्, श्रुत्वा सद्यग लं धनं जनपदे लात्वा गतस्तद्गृहे ॥ स्थाल्यां मुंचति खादिमं वदति स स्वा नूषणान्यत्थ नो किं भ्रांतो वदसीति येषु सुकृतस्तेषामहं पूर्वगः ॥ ६५ ॥

अर्थः—कोइएक निर्धन मनुष्य आश्या धरिने पोतानी बहेनने त्यां गयो तेने जोइ ने बेन लाजी ने सहुने कहेवा लागी के, आ महारो नाइ न थी, पण आ महारा पितानें घेर चूलो फुंकनार रसोयो ठे आवा बहेन ना वचन सांनली ते उतावलो धन कमाववा माटे परदेशें गयो. त्यां जइ घणुंक धन कमाणो वली ते धन लइ फरीने पोतानी बहेनने घेर आव्यो. तेवारें बहेनें पण धनवान नाइ जाणीने आगता स्वागता करी, नोजन व खत थालमां सरस पकवान प्रमुख पीरश्यां त्यारें नाइने पूर्वलो दिवस सां नरी आव्यो. तेथी पोतें जे आंगली प्रमुखमां घरेणां पहेर्यां हतां ते सर्व थालीमांहे मूक्यां. अने वेहेन सांनले तेम कहेवा लाग्यो के, हे आनूष णो, तमो आ सर्व पदारथ जमो. त्यारें बहिने कह्युं के नाइ एशुं कहो ठो ? कांइ गांमा तो नथी थया ? त्यारे नाइ कहे ठे के हे बेन हुं गांमो थ यो नथी पण जेनें ते पीरश्युं ठे तेने हुं जमवानुं कहुं बुं जोने पहेलां हुं

निर्धनपणामां ताहारे घेर आव्यो हतो त्यारें मनें तें बापानो रसोयो कह्यो हतो माटे ए धननें मान छे. मने नथी. दोहरो ॥ गरथें आदर दीजीयें, हक्कारीजें दाम ॥ पेहेलें फेरे आपीउं, चुल्ला फूंकण नाम ॥ १ ॥

हवे जेहवुं नाम होय तेवा गुण न होय तेनो पांशठमो दृष्टांत.

॥ नाम्ना ठिंठणपालकोऽस्ति धनवान् तस्यांगना चिंतति, नो तिष्ठामि गृहेऽस्य यामि धनपालस्य स्वगेहाजता ॥ दृष्ट्वाऽध्वन्यमरं मृतं च धनपं ह्यन्या लये भिक्षितं, लक्ष्मीं काष्ठकविक्रयां गृहगता ज्ञात्वा शुभं ठिंठणम् ॥ ६६ ॥

अर्थः—कोइएक नगरमां एक धनवान वसे छे. तेनुं नाम ठिंठणपाल हतुं. तेथी तेनी स्त्री ज्यारे बाहार जाय त्यारे सहु तेने ठिंठणपालनी स्त्री कहिने बोलावे. तेथी ते स्त्रीयें जाण्युं जे म्हारे हवे ठिंठणपाल ना घरमां रहेवुं नहीं कोइ पण धनपाल के जगपाल एवा उत्तम नाम धारकने त्यां जइ ने स्त्री थइ रहेवुं. एमधारी घरथी बाहेर निकली आगल जतां मार्गे मां कोइएक अमरपाल नामें माणस हतो, तेने मरी गयेलो दीठो. वली आगल चाली, तेवारें कोइ धनपाल नामा पुरुषने भीख मागतो दीठो. वली जरा आगल चाली त्यां लक्ष्मी नामनी स्त्रीने काष्ठ वेचती अने छाणा वीणती नजरें जोइ ते सर्व जोइने विचार्युं, जे कांइ नामनुं कारण नथी. माटे मारो ठींठणपाल छे,तेज भलो छे. दोहरो ॥ अमर मरंतो में सुण्यो, भीखंतो धनपाल ॥ लछी वेचंती लाकडां, भलो मारो ठिंठणपाल ॥ १ ॥

हवे गुणग्राहक उपर कृष्णवासुदेवनो छाशठमो दृष्टांत.

॥ इंद्रः पर्षदि वाक्यमाह नृभवे कृष्णो गुणग्राहको, भूत्वा श्वानमृतं सुरो निपतितो मार्गे तमालोक्य सः ॥ दंतश्रेणिशुभ्रां शुनोपि सकलं त्यक्त्वाशुभं दोषकं, भूत्वा भूत्प्रकटं हरिर्दिवि यदा धन्योऽस्ति नत्वा गतः ॥ ६७ ॥

दुर्गंधादिक अवगुणो सर्वे पडता मूक्या. बीजा सर्व लोकोयें कह्युं के, आ दुर्गंध वासे ठे. आवुं गुणग्रहीपणुं श्रीकृष्णनुं जोइ देवता पोतानुं मूल रूप धारण करी, प्रगट थइ, श्रीकृष्णने पगे लागी, प्रशंसा करी वरदान आपीने,पोताने स्थानकें गयो. माटे उत्तम पुरुषें सहु कोइनो गुण लेवो,पण कोइनो अवगुण न लेवो. कह्युं ठे,के॥ श्लोक ॥ संसारे सुखिनो जीवा,नवंति गुणग्राहकाः ॥ उत्तमास्ते च विज्ञेया, दंतपश्यकृष्णवत् ॥ १ ॥ अमलत्वे रसज्ञाया,मिश्रयोः क्षीरनीरयोः ॥ विविच्य पिबति क्षीरं,नीरं हंसोपि मुंचति ॥ २ ॥ असंख्याः परदोषज्ञाः,गुणज्ञाश्चापि केचन ॥ स्वयमेव स्वदोषज्ञा, विद्यंते यदि पंचषाः ॥ ३ ॥ खीरमिव जहाहंसाः, जे घुंटंति गुरुगुण समिध्दा ॥ दोसेवि वज्जयंतो, तं जाण सुजाणयं पुरिसं ॥ ४ ॥ ६७ ॥

हवे दृढ समकेतनी उपर सडसठमो दृष्टांत कहे ठे.

॥ सम्यक्त्वं यदि वर्णितं च हरिणा श्रीश्रेणिकस्यामरो, नूत्वा साधुनिन्नस्तदा जलचरान् गृह्णाति आगत्य सः ॥ दृष्ट्वा वक्ति किमाकरोषि हि मुने त्वं सदयाहेतवे, दुर्नव्यस्त्वमसीति नो जिनमते कृत्वा स्वरूपं स्तुतः ॥ ६८ ॥

अर्थः—एक दिवस इंद्रनी सनामांहे समकेतनी वात चाली त्यारें शक्रेंद्रें श्रेणिक राजानुं समकेत वखाण्युं. अने कह्युं के, ए राजा दृढ समकेतनो धणी ठे. ते सांनली एक मिथ्यादृष्टी देवतायें राजानी परीक्षा करवा माटे, साधुसरिखुं रूप करी उघो, मुहपत्ति, दांमो, कांवली लइ हाथमां ऊोली घालीनें एक तलावमां पेठो. त्यां जइ माठलांठनें ग्रहण करवा मंड्यो, तेने राजायें कह्युं के,हे साधु ! आ विपरीत कर्म केम करो ठो? मुनिवेषने विटंबना शुं करो ठो? त्यारें कपटी साधु बोल्यो के,हेराजा ! तुं साधु धर्ममां समजे नहीं. हुं आ माठलां काढी तेने वेचीने कांबली लइश. तेथी वर्षाकालें जीवदया पलशे. जे माटे पाणीना एक बिंदूमां असंख्याता जीव नगवंते कह्या ठे, ते उगरशे. आ वात सांनली राजा बोल्यो के, तु दुर्नव्य अनंत संसारी देखाय ठे. जे माटे साधुना वेषमांहे आवुं कर्म करे ठे ? जैन शाशनमांहे ए वात कही नथी. जैन शास्त्रथी उलटुं ठे,एम राजायें तेने कह्युं. पण बीजा साधु उपर द्वेष न कस्यो तेवारें ते देवतायें ज्ञानेंकरी जाण्युं. जे आवुं महारुं विपरीत आचरण देखतां पण राजाने बीजा साधुनी उपर अनाव न थयो. तेवारें देवता पोतानुं रूप प्र

कट करी श्रेणिक राजानी स्तुति करी स्वस्थानकें गयो. कह्युं छे के, श्लोक ॥ क्रियाहीनं कुसाधुं च, दृष्ट्वा चित्तं न चाल्यते ॥ तत्सम्यक्त्वं दृढं ज्ञेयं, धर्मे श्रेणिकनृपवत् ॥ १ ॥ इति सडसठमो दृष्टांतः ॥ ६७ ॥

हवे जीवदया उपर अडशठमो दृष्टांत कहेछे.

॥ नृपः पर्षदि वर्णितो हि हरिणा देहीति देवो गतो, ऽवक् श्रुत्वा नृवलिं न चेत्पुरजनान् हन्मीति मंत्रोऽभवत् ॥ सोपायं च तदा जनैर्नृशिशुके लात्वा वधस्थो हसन्, तत्स्थाने नृपतिः स्थितो यदि सुरस्तुष्टो नृपं श्लाघते ॥ ६९ ॥

अर्थः—एकराजा दयावंत हतो, तेने शक्रेंद्रनी सभामांहे इंद्रें वखाण्यो. ते जोइ एक देवता तेमनुं पारखुं करवा माटे ते राजाने कहेवा लाग्यो जे, हे राजा! एक पुरुषनो वलि आपो. अने जो नहीं आपो तो, सर्व नगरवासी लोकोनें हुं मारीश. त्यारें राजा कहे छे. जे वलिनी वात कांइ मुझथी थाय नहीं, ए वात वनेज नही. त्यारे ते देवतायें नगरनी ऊपर नगर प्रमाणे एक मोटी शिला विकुर्वी, अने कहेवा लाग्यो जे, हमणां आ शिलायें करी तारुं आ सर्व नगर चकचूर करीश. पछी जेवारें 'शिला पडी पडी' एम बूमो पाडवी सरु थइ,तेवारें नगरजनो एकठा थइने राजाने कहेवा लाग्यां जे हे राजन्! एक पुरुष वास्ते घणानी हत्या लागशे. तेने राजायें कह्युं के, ए वात कांइ मुझने कहेशो नहीं,जें सरज्युं हशे ते थाशे. एवो कोण छे जे खुशी थइ मरवा वांछे? के जेनुं वली ए देवने आपीयें? तेवारें सर्व नगरजनोयें विचार कर्युं जे एक सोनानुं पुतळुं कोटिरूपैयानुं वनावी,तथा कोटी सोनैयानी रकम कोइ निर्धनने आपीयें,अने ते पोतानो पुत्र खुशी थइने आपणने आपे,तो देवताने वली आपी उपकार करियें. ए वात सर्वकोइयें कबूल कीधी. पछी ते पुतळुं लइने कोइ निर्धन पुरुषें खुशीथी पोतानो पुत्र आप्यो, तेने राजानी पाशें लाव्या, अने वलि देवाने स्थानकें ते वालकनें वेसार्यो. राजाने देखी वालक हसतो हसतो कहेवा लाग्यो जे माहरे आज मोटो उत्सव छे. मरवुं एकदिवस सहु कोइने छे, परंतु मारा एक जीवने माटे आखुं शहेर उगरे छे. आ वात सांभली राजा पोतें ते वालकने स्थानकें वेठो. त्यारें देवता तुष्टमान थयो अने राजानी स्तुती करी कहेवा लाग्यो के, हे दयावंत! तुजने जेवो इंद्रें सभामां वखाण्यो तेवो तुं यथायोग्य छो. एम कही देवता पोताने स्थानकें गयो. कह्युं छे के,

॥ दोहो ॥ सोनुं शरीर समुं देइने, उपर शोनइआ कोडि ॥ आणी वाळ बेसारीयो, बलि देवाने गोडि ॥ १ ॥ स्वामी सामुं देखी हस्यो, बाळक ह दय उल्लास ॥ देखी दयापति मनधरी, आवी वेगा बाळक पास ॥ २ ॥ बाळक मुकी मुजने नखो, जो होय वलीनुं काज ॥ देव संतोषें इम कहे, करो तुमे अविचल राज ॥ ३ ॥ ६ए ॥ इति अडशठमो दृष्टांत ॥

जीवदया उपर मेघरथराजानो उगणोतेरमो दृष्टांत कहे डे.

॥ वज्री पर्षदि वक्ति मेघरथको नूपः कृपातत्परो,नूत्वा नूविहगौ तदापि नृपतेरुत्संगके साध्वसात् ॥ रक्षाऽक्षोऽपतदीश रक्ष शरणे तं तन्नयं मा कुरु,श्ये नायात्मपलं ददौ यदि सुरो नत्वाशु नाकं ययौ ॥ ७० ॥ अर्थः—एक दि वस इशानेंइनी सन्नामां इंइें प्रशंसा करी के, मेघरथराजा दयावंत अने कोइथी चलायमान करी शकाय नहीं एवो डे. आ वात सांनळी कोइक देवतायें पारेवानुं रूप तथा सिचाणानुं रूप विकूर्व्युं. तिहां आगळ पारेवुं अने पडवाडे सिचाणो चाल्यो. तेमांथी प्रथम पारेवुं आवीने मेघरथराजा ना उत्संगमां पड्युं,अने धूजतुं धूजतुं कहेवा लाग्युं के, हे राजन् ! मारी पाडळ मने मारवा माटे सिचाणो आवे डे, तेनाथी मारुं रक्षण करो. आ वात सांनळी राजायें ते पारेवानें पोतानी पासे राख्युं. तेवामां सिचाणो आव्यो. ते राजाने कहेवा लाग्यो के, हे राजन् ! तुं ते पारेवानें डोड, म ने अत्यंत क्षुधा लागी डे. जो तेने न आपो तो तमारुं मांस पारेवा जे टलुं तोळीने मने आपो. त्यारें राजायें तेने पोतानुं मांस कापी कापी आपवा मांम्युं, परंतु देव मायाथी ते मांस पारेवानां बराबर थयुं नहीं. त्यारे राजा पोतेंज आखो त्राजवामां बेठो. अने सिचाणाने कह्युं के, म हारुं नक्षण कर. ते जोइ देवता प्रसन्न थयो, अने कह्युं जे,हे राजा ! तारुं सत्य घणुं प्रशंसनीय डे. एम कही नमस्कार करीने गयो. कह्युं डे के ॥ दयावंत देव सांनळी, कर्यां पंखी बे रूप ॥ एक राजा खोळे पड्यो, एक दीये तस दूप ॥ १ ॥ मेघरथ सुरशुं कहे, मूक पारेवुं एह ॥ हठ लाग्यो मूके नहीं, राजा दीयो तस देह ॥ २ ॥ अतुळ पुण्य उपराजीयो, पाम्या पदयुग जोड ॥ दयाप्रनावें देवता, सेव करे बहु कोड ॥ ३ ॥ ७० ॥

हवे हिंसानिषेधोपदेशनो शित्तेरमो दृष्टांत कहे डे.

॥ श्रुत्वाजावचनं हि नोजनृपतिर्यज्ञे कविं पृच्छति, प्रोचुस्ते किममी नु तं

वदति नो विज्ञप्तिकामीश सः ॥ कीदृक्षां यदि काव्यमेव कविना प्रोक्तं प्रबु
द्धस्तदा, मुक्त्वा सर्वपशून् कृतो हि नियमो यज्ञस्य धर्मे रतः ॥७१॥ अर्थः—
भोजराजायें यज्ञनेविषे बकरां होमवा अणाव्यां. ते बकरां बूम पाडवा
लाग्यां, त्यारें भोजराजायें धनपाल पंमितने पूछ्युं, जे बकरां शामाटे बो
ले छे? पंमितें कह्युं के, हे राजन्! ए अरज करे छे के, सर्वलोक मलीने
सांभलो. तेने राजायें कह्युं के,शी विनंती करे छे? ते तमे जाणता हो तो
कहो. तेवारे पंमितें एक काव्य कह्युं. जे हे महाराज! जो यज्ञमां होम्या
थी पशुउ स्वर्गमां जाय छे, तो पण अमारे स्वर्गमां जवानो खप नथी. अ
ने होमवाथी जीव स्वर्गे जता होय,तो अमने शामाटे स्वर्गमां मोकलो छो?
तमारा मातापितादिकने यज्ञमां होमी स्वर्गमां केम नथी मोकलता? का
रण के सारो पदार्थ पोताना अति वाहाला निकट सगांने अपाय. माटे ते
ने मोकलवा योग्य छे. अमो तमारा माता पितादिक नथी. आ प्रमाणे
बकरां कहे छे, तेनुं काव्य धनपाल पंमितें कह्युं. ते लखे छे ॥ नाहं स्वर्गफ
लोपभोगतृषितो नाभ्यर्थितस्त्वं मया, संतुष्टस्तृणभक्षणेन सततं साधो न
युक्तं तव ॥ स्वर्गे यांति यदि त्वया विनिहता यज्ञे ध्रुवं प्राणिनो,यज्ञं किं न क
रोषि मातृ जनकैः पुत्रैस्तथा बांधवैः ॥१॥ ए वात सांभली राजा प्रतिबोध
पाम्यो. पंमितनी वात खरी जाणीने बोकडा सर्व मुक्या. अने यज्ञ करवानो
पच्चरकाण कर्यो, हिंसा न करवानो नियम लीधो, अने धर्मनेविषे दृढ थयो॥

जिहां संप होय त्यां लक्ष्मीनो वास रहे तेनो एकोत्तेरमो दृष्टांत.

॥ सुप्तेभ्यः कमलाह यामि सदनात्त्वं याचयेन्मां तदा,याचिष्ये हि वरं
प्रभातसमये पृष्टं कुटुंबं च किं ॥ याचे वक्ति पृथग्धनं लघुवधूः स्नेहं कुटुंबे
ऽर्पय, तद्वाक्यं कथितंहि तेन यदि सा नोयामि ते यंत्रिता ॥ ७२ ॥
अर्थः—कोइएक धनवान् शाहुकार रात्रें सुतो छे, तेवामां लक्ष्मीयें आवीने
शाहुकारने कह्युं के, हुं हवे तारा घरमांथी जाइश. माटें तारे वरदान जे
जोइयें ते माग. ते हुं देती जाउं, त्यारें ते बोल्यो जे आजें तो हुं मागीश
नहीं, पण सवारमां माहारा कुटंबीने पूछीने मागीश. तेवारें लक्ष्मी बोली
जे भलुं. पछी प्रभाते शेठे सहु कुटुंबीयोने पूछवा मांड्युं, त्यारें कोइयें जु
दा जुदा धन लेवा कह्या. कोइयें कांइ बीजुं वरदान मागवा कह्युं. एम कर
तां नानेरा छोकरानी वहुनें पूछ्युं त्यारे तेणें कह्युं के, हे ससराजी, आ

॥ दोहो ॥ सोनुं शरीर समुं देइने, उपर शोनइआ कोडि ॥ आणी वाळ
बेसारीयो, बलि देवाने गोडि ॥ १ ॥ स्वामी सामुं देखी हस्यो, बालक ह
दय उल्लास ॥ देखी दयापति मनधरी, आवी वेग बालक पास ॥ २ ।
बालक मुकी मुकने भखो, जो होय बलीनुं काज ॥ देव संतोषें इम कहे
करो तुमे अविचल राज ॥ ३ ॥ ६ए ॥ इति अडशठमो दृष्टांत ॥

जीवदया उपर मेघरथराजानो उगणोतेरमो दृष्टांत कहे छे.

॥ वज्री पर्षदि वक्ति मेघरथको भूपः कृपातत्परो,भूत्वा भूविहगौ तदा
भूपतेरुत्संगके साध्वसात् ॥ रक्षाऽक्षोऽपतदीश रक्ष शरणे तं तद्भयं मा कुरु,इ
नायात्मपलं ददौ यदि सुरो नत्वाशु नाकं ययौ ॥ ७० ॥ अर्थः-एक
वस इशानेंद्रनी सभामां इंद्रे प्रशंसा करी के, मेघरथराजा दयावंत अ
कोइथी चलायमान करी शकाय नहीं एवो छे. आ वात सांभली कोइ
देवतायें पारेवानुं रूप तथा सिचाणानुं रूप विकूर्व्युं. तिहां आगळ पारे
अने पछवाडे सिचाणो चाल्यो. तेमांथी प्रथम पारेवुं आवीने मेघरथराज
ना उत्संगमां पड्युं,अने धूजतुं धूजतुं कहेवा लाग्युं के, हे राजन् ! मा
पाछळ मने मारवा माटे सिचाणो आवे छे, तेनाथी मारुं रक्षण करो. अ
वात सांभळी राजायें ते पारेवानें पोतानी पासे राख्युं. तेवामां सिचाण
आव्यो. ते राजाने कहेवा लाग्यो के, हे राजन् ! तुं ते पारेवानें छोड,
ने अत्यंत क्षुधा लागी छे. जो तेने न आपो तो तमारुं मांस पारेवा
टलुं तोळीने मने आपो. त्यारें राजायें तेने पोतानुं मांस कापी का
आपवा मांड्युं, परंतु देव मायाथी ते मांस पारेवानां बराबर थयुं नहं
त्यारे राजा पोतेंज आखो त्राजवामां बेठो. अने सिचाणाने कह्युं के,
हारुं भक्षण कर. ते जोइ देवता प्रसन्न थयो, अने कह्युं जे,हे राजा ! ता
सत्य घणुं प्रशंसनीय छे. एम कही नमस्कार करीने गयो. कह्युं छे के
दयावंत देव सांभळी, कर्यां पंखी बे रूप ॥ एक राजा खोळे पड्यो, ए
दीये तस भूप ॥ १ ॥ मेघरथ सुरछुं कहे, मूक पारेवुं एह ॥ हठ लाग
मूके नहीं, राजा दीयो तस देह ॥ २ ॥ अतुल पुण्य उपराजीयो, पाम
पदयुग जोड ॥ दयाप्रभावें देवता, सेव करे बहु कोड ॥ ३ ॥ ७० ॥

हवे हिंसानिषेधोपदेशनो शित्तेरमो दृष्टांत कहे छे.

॥ श्रुत्वाजावचनं हि भोजनृपतिर्यज्ञे कविं पृछति, प्रोचुस्ते किममी नु

वदति नो विज्ञप्तिकामीश सः ॥ कीदृक्षां यदि काव्यमेव कविना प्रोक्तं प्रबु द्धस्तदा, मुक्त्वा सर्वपशून् कृतो हि नियमो यज्ञस्य धर्मे रतः ॥७१॥ अर्थः– भोजराजायें यज्ञनेविषे बकरां होमवा आणाव्यां. ते बकरां बूम पाडवा लाग्यां, त्यारें भोजराजायें धनपाल पंमितने पूछ्युं, जे बकरां शामाटे बो ले छे? पंमितें कह्युं के, हे राजन्! ए अरज करे छे के, सर्वलोक मलीने सांभलो. तेने राजायें कह्युं के,शी विनंती करे छे? ते तमे जाणता हो तो कहो. तेवारे पंमितें एक काव्य कह्युं. जे हे महाराज! जो यज्ञमां होम्या थी पशुउ स्वर्गमां जाय छे, तो पण अमारे स्वर्गमां जवानो खप नथी. अ ने होमवाथी जीव स्वर्गे जता होय,तो अमने शामाटे स्वर्गमां मोकलो छो? तमारा मातापितादिकने यज्ञमां होमी स्वर्गमां केम नथी मोकलता? का रण के सारो पदार्थ पोताना अति वाहाला निकट सगांने अपाय. माटे ते ने मोकलवा योग्य छे. अमो तमारा माता पितादिक नथी. आ प्रमाणे बकरां कहे छे, तेनुं काव्य धनपाल पंमितें कह्युं. ते लखे छे ॥ नाहं स्वर्गफ लोपभोगतृषितो नाभ्यर्थिनस्त्वं मया, संतुष्टस्तृणभक्षणेन सततं साधो न युक्तं तव ॥ स्वर्गे यांति यदि त्वया विनिहता यज्ञे ध्रुवं प्राणिनो,यज्ञं किं न क रोषि मातृ जनकैः पुत्रैस्तथा बांधवैः ॥१॥ ए वात सांभली राजा प्रतिबोध पाम्यो. पंमितनी वात खरी जाणीने बोकडा सर्व मुक्या. अने यज्ञ करवानो पच्चरकाण कर्यो, हिंसा न करवानो नियम लीधो, अने धर्मनेविषे दृढ थयो ॥

जिहां संप होय त्यां लक्ष्मीनो वास रहे तेनो एकोत्तेरमो दृष्टांत.

॥ सुप्तेभ्यः कमलाह यामि सदनात्त्वं याचयेन्मां तदा,याचिष्ये हि वरं प्रभातसमये पृष्टं कुटुंबं च किं ॥ याचे वक्ति पृथग्धनं लघुवधूः स्नेहं कुटुंबे ऽर्पय, तद्वाक्यं कथितंहि तेन यदि सा नोयामि ते यंत्रिता ॥ ७२ ॥ अर्थः–कोइएक धनवान् शाहुकार रात्रे सुतो छे, तेवामां लक्ष्मीयें आवीने शाहुकारने कह्युं के, हुं हवे तारा घरमांथी जाइश. माटे तारे वरदान जे जोइयें ते माग. ते हुं देती जाउं, त्यारें ते बोल्यो जे आजें तो हुं मागीश नहीं, पण सवारमां माहारा कुटंबीने पूछीने मागीश. तेवारें लक्ष्मी बोली जे भलुं. पछी प्रभाते शेठे सहु कुटुंबीयोने पूछवा मांम्युं, त्यारें कोइयें जु दा जुदा धन लेवा कह्या. कोइयें कांइ बीजुं वरदान मागवा कह्युं. एम कर तां नानेरा छोकरानी वहुनें पूछ्युं त्यारे तेणें कह्युं के, हे ससराजी, आ

पणा कुटुंबमां स्नेह सुसंप रहे ते मागो ने ते वात ससराना चित्तमां पण बरोबर उतरी. पछी बीजे दिवसें रात्रें लक्ष्मी आवी अने शेठने कह्युं के, वर माग्य. तेवारें शेठें कह्युं के, महारा कुटुंबमां सुसंप रहे ते वर आप. त्यारे लक्ष्मीयें कह्युं के, हवे माराथी जवाय नहीं, कारण के तमोयें संप माग्यो, तो ज्यां संप छे, त्यां मारे रहेवुंज जोइयें. माटे ज्यां संप त्यां लक्ष्मी रहे छे. कह्युं छे, के ॥ दोहो ॥ शेठें कुटुंब संप मागीयो, लक्ष्मी कहे कर जोड ॥ जाऊं तो जाइ शकुं नहीं,राखी मारी मरोड ॥१॥ श्लोक ॥ गुरवो यत्र पूज्यंते,यत्र वित्तं नयार्जितं ॥ अदंतकलहो यत्र,तत्र शक्र वसाम्यहं॥२॥

दुष्टनुं नाम लेवाथी पण विघ्न थाय ते ऊपर बहोतेरमो दृष्टांत.

॥ कश्चित्पृछति किंगरं वद हयः कस्येति यस्यास्म्यहं, कस्य त्वं तदहं तथापि च तवेशाख्या न किं कथ्यते ॥ सोऽ वक्च क्षुधितोस्मि खादिममिदं लाहीश गोत्रं श्रुतं, प्रोक्तं तेन तदा हयेन निहतस्तन्नामतस्तत्फलम् ॥ ७२ ॥

अर्थः—कोइएक पुरुषें सारो घोडो जोयो, त्यारे तेणें ते घोडाना चाकरने पूछ्युं के, नाइ आ घोडो कोनो छे ? गणीयें कह्युं के, जेनो हुं चाकर छुं, तेनो आ घोडो छे. त्यारें फरी गणीयाने पूछ्युं के तुं केहनो चाकर छे ? तेणें कह्युं के, जेनो आ घोडो छे तेनो हुं चाकर छुं. वली ते पुरुषें कह्युं के तुं अवलुं बोलतां ताहरा स्वामीनुं नाम केम नथी लेतो ? त्यारें तेणें कह्युं के हजी दातण कर्युं नथी, तथा जम्यो पण नथी, भूख्यो छुं, माटे प्रनातें तेनुं नाम लेवा योग्य नथी. ते सांनली पुरुष बोल्यो, जे तुं जुठुं बोले छे. जो तुं तारा स्वामीनुं नाम लीये, तो तरत तुजने आ सुखडीयें नरेली तबक आपुं. तेवारे तेणें सुखडीनी लालचें पोताना स्वामीनुं नाम लीधुं. एटले तेज समये घोडो नडक्यो, अने मुखउपरें पाटु मारी, तेथी सुखडी दसे दिशायें परजा परजा थइ गइ, तबक पण क्यांय जइ पडी. एम केटलाएक अधर्मीनां नाम लेवाथी आप्रकारें विघ्न थायछे. माटे एवा पुरुषनुं नाम खावानी अगाऊ न लेवुं. कह्युं छे के, श्लोक ॥ पापिष्ठनाम न ग्राह्यं प्रत्यूषेऽपि कदाचन ॥ यदुक्तं हि तदा तस्य, हतो घोटकलत्तया ॥ ७२ ॥

हवे परजीवनुं मांस सोंघुं ते ऊपर तहोंतेरमो दृष्टांत कहे छे.

॥ नूपः पृछति मांसमौल्यमनुगान, प्रोचुश्च तेऽल्पं सुतोऽनल्पं वक्त्यनयो निवारयति नो तं दर्शयामि प्रनो ॥ गत्वा सर्वगृहे नृपाय हृदिजं तदेहि ना

सं पलं, ग्राह्यं लाहि धनं न तेन तदितो लात्वार्पितं नूपतेः ॥ ७४ ॥

अर्थः—एक दिवस श्रेणिकराजा पोताना उमरावो प्रमुखने कहेवा ला ग्यो हमणा कयी वस्तु सोंघी छे, अने सारी छे? तेवारे उमराव प्रमुखें क ह्युं के,हे महाराज मांस घणुं सोंघुं छे. ते वखत श्रेणिक राजानो पुत्र अ नयकुमार वोल्यो के माहाराज, मांस मोंघुं छे. तेने राजायें कह्युं कें, तुं राज बालक सोंघा महोंघामां शुं समजे? ते वखत अनयकुमारे कह्युं के, ए वातनो निश्चय हुं आपनें थोडा दिवसमां करी देखाडीश. पछी राजाने अनयकुमारें कह्युं के, तमारे जूठी रीतें घरमां मंदवाड जणावी पांच दिवस सनामां आववुं नहीं. तेथी ते वात राजायें कबूल करी ने सनामां न आव्या. त्यारे गाममां खबर पडी के श्रेणिकराजा मांदा छे,एवी प्रसिद्धि थइ. ते वखत अ नयकुमारें युक्ति करीने सर्व उमरावो अने दरबारी मनुष्यो पासें तेमने घेर रा त्रियें जइने कह्युं के हे उमरावो, वैदें कह्युं छे,के उमरावोना कालजानुं मांस राजा खाय तो राजाने करार थाशे. माटे तमे सहु मली पल पल प्रमाण पोतपोतानुं कालजुं काढी आपो. त्यारें कोइयें मांस आप्युं नही. अने सहुयें कह्युं के, अमारे पासे जेटलुं जोइयें तेटलुं धन लीयो, पण का लजुं तो अपाय नहीं. पछी सहु पासेंथी धन लइ राजाने बताव्युं,ने राजा सनामां आव्यो. ते वखतें अनयकुमारें कह्युं के,हे महाराज जुर्ड बधायें धन घणुं आप्युं, पण मांस कोणें न आप्युं माटे मांस केवुं मोंघुंछे. पार का जीवोनुं मांस सोंघु छे. तेपण जोरावरी जोतां तो मोंघुंज छे. ते सांन ली उमराव सर्व चुपकी करी रह्या आ वात राजायें खरी जाणी कह्युं छे के,स्व मांसं डर्लनं लोके,लक्षेणापिन लन्यते॥अल्पमूल्येन लन्येत,पलं परशरीरजम्॥

हवे अनव्यजीव श्रीतीर्थंकरना उपदेशथी पण नेदाय नहीं ते ऊपर चम्मोतेरमो दृष्टांत कहे छे.

॥ मेघं वक्ति च नारदस्तव रिपुर्मुजाख्यशैलो नुवि, श्रुत्वा कुप्यति सो णुकस्त्वमसि तं रे याहि मुजागतः ॥ कोऽग्रेयं मम वर्षेति प्रबलकं नेत्तुं न मां शक्यते,वक्रे हास्यमतो दृषद्यदि यथा नव्यो जिनैर्नाषितः ॥७५॥ अर्थः— एक दिवस नारद मुनि मेघनी पासें आवी कहेवा लाग्यो के, मृत्युलोकने विषे तारो शत्रु मगसेलीयो पाषण छे. ते घणो अहंकार करे छे,अने कहे छे के, मुजने कोइ नेदी न शके. ते वात सांनलीने मेघ पण गर्वें चढी क

पण कुटुंबमां स्नेह सुसंप रहे ते मागो ने ते वात ससराना चित्तमां पण बरोबर उतरी. पछी बीजे दिवसें रात्रें लक्ष्मी आवी अने शेठने कह्युं के, वर माग्य. तेवारें शेठें कह्युं के, महारा कुटुंबमां सुसंप रहे ते वर आप. त्यारे लक्ष्मीयें कह्युं के, हवे माराथी जवाय नहीं, कारण के तमोयें संप माग्यो, तो ज्यां संप छे, त्यां मारे रहेवुंज जोइयें. माटे ज्यां संप त्यां लक्ष्मी रहे छे. कह्युं छे, के ॥ दोहो ॥ शेठें कुटुंब संप मागीयो, लक्ष्मी कहे कर जोड ॥ जाऊं तो जाइ शकुं नहीं,राखी मारी मरोड ॥१॥ श्लोक ॥ गुरवो यत्र पूज्यंते,यत्र वित्तं नयार्जितं ॥ अदंतकलहो यत्र,तत्र शक्र वसाम्यहं॥२॥

दुष्टनुं नाम लेवाथी पण विघ्न थाय ते ऊपर बहोतेरमो दृष्टांत.

॥ कश्चित्पृछति किंगरं वद हयः कस्येति यस्यास्म्यहं, कस्य त्वं तदहं तथापि च तवेशाख्या न किं कथ्यते ॥ सोऽवक्च क्षुधितोस्मि खादिममिदं लाहीश गोत्रं द्रुतं, प्रोक्तं तेन तदा हयेन निहतस्तन्नामतस्तत्फलम् ॥ ७२ ॥

अर्थः—कोइएक पुरुषें सारो घोडो जोयो, त्यारे तेणें ते घोडाना चाकरने पूछ्युं के, भाइ आ घोडो कोनो छे ? गणीयें कह्युं के, जेनो हुं चाकर छुं, तेनो आ घोडो छे. त्यारें फरी गणीयाने पूछ्युं के तुं केहनो चाकर छे ? तेणें कह्युं के, जेनो आ घोडो छे तेनो हुं चाकर छुं. वली ते पुरुषें कह्युं के तुं अवलुं बोलतां ताहरा स्वामीनुं नाम केम नथी लेतो ? त्यारें तेणें कह्युं के हजी दातण कर्युं नथी, तथा जम्यो पण नथी, भूख्यो छुं माटे प्रभातें तेनुं नाम लेवा योग्य नथी. ते सांभली पुरुष बोल्यो, जे तुं जुठुं बोले छे. जो तुं तारा स्वामीनुं नाम लीये, तो तरत तुजने आ सुखडीरें भरेली तबक आपुं. तेवारे तेणें सुखडीनी लालचें पोताना स्वामीनुं नाम लीधुं. एटले तेज समये घोडो भडक्यो, अनें मुखऊपरें पाटु मारी, तेथी सुखडी दसे दिशायें परजा परजा थइ गइ, तबक पण क्यांय जइ पडी. एम केटलाएक अधर्मीनां नाम लेवाथी आप्रकारें विघ्न थायछे. माटें एवा पुरुषनुं नाम खावानी अगाऊ नलेवुं. कह्युं छे के, श्लोक ॥ पापिष्ठनाम न ग्राह्यं प्रत्यूषेऽपि कदाचन ॥ यदुक्तं हि तदा तस्य, हतो घोटकलत्तया ॥ ७२

हवे परजीवनुं मांस सोंघुं ते ऊपर तहोंतेरमो दृष्टांत कहे छे.

॥ नृपः पृछति मांसमौल्यमनुगाल, प्रोचुश्च तेऽल्पं सुतोऽनल्पं वक्त्यभयो निवारयति भो तं दर्शयामि प्रभो ॥ गत्वा सर्वगृहे नृपाय हृदिजं तदेहि न

स्तं पलं, ग्राह्यं लाहि धनं न तेन तदितो लात्वार्पितं नूपतेः ॥ ७४ ॥
अर्थः—एक दिवस श्रेणिकराजा पोताना उमरावो प्रमुखने कहेवा ला ग्यो हमणा कयी वस्तु सोंघी छे, अने सारी छे ? तेवारे उमराव प्रमुखें क ह्युं के,हे महाराज मांस घणुं सोंघुं छे. ते वखत श्रेणिक राजानो पुत्र अ नयकुमार बोल्यो के माहाराज, मांस मोंघुं छे. तेने राजायें कह्युं के, तुं राज बालक सोंघा मह्रोंघामां शुं समजे ? ते वखत अनयकुमारे कह्युं के, ए वातनो निश्चय हुं आपनें थोडा दिवसमां करी देखाडीश. पछी राजाने अनयकुमारें कह्युं के, तमारे जूठी रीतें घरमां मंदवाड जणावी पांच दिवस सनामां आववुं नहीं. तेथी ते वात राजायें कबूल करी ने सनामां न आव्या. त्यारे गाममां खबर पडी के श्रेणिकराजा मांदा छे,एवी प्रसिद्धि थइ. ते वखत अ नयकुमारें युक्ति करीने सर्व उमरावो अने दरबारी मनुष्यो पासें तेमने घेर रा त्रियें जइने कह्युं के हे उमरावो, वैदें कह्युं छे,के उमरावोना कालजानुं मांस राजा खाय तो राजाने करार थाशे. माटे तमे सहु मली पल पल प्रमाण पोतपोतानुं कालजुं काढी आपो. त्यारें कोइयें मांस आप्युं नही. अने सहुयें कह्युं के, अमारे पासे जेटलुं जोइयें तेटलुं धन लीयो, पण का लजुं तो अपाय नहीं. पछी सहु पासेंथी धन लइ राजाने बताव्युं,ने राजा सनामां आव्यो. ते वखतें अनयकुमारें कह्युं के,हे महाराज जुउ वधायें धन घणुं आप्युं, पण मांस कोणें न आप्युं माटे मांस केवुं मोंघुंछे. पार का जीवोनुं मांस सोंघु छे. तेपण जोरावरी जोतां तो मोंघुंज छे. ते सांन ली उमराव सर्व चुपकी करी रह्या आ वात राजायें खरी जाणी कह्युं छे के,स्व मांसं दुर्लनं लोके,लक्षेणापिन लन्यते॥अल्पमूल्येन लन्येत,पलं परशरीरजम्॥

हवे अनव्यजीव श्रीतीर्थंकरना उपदेशथी पण नेदाय
नहीं ते उपर चम्मोतेरमो दृष्टांत कहे छे.

॥ मेघं वक्ति च नारदस्तव रिपुर्मुजाख्यशैलो नुवि, श्रुत्वा कुप्यति सो एणुकस्त्वमसि तं रे याहि मुजागतः ॥ कोऽग्रेयं मम वर्षति प्रवलकं नेत्तुं न मां शक्यते,वक्के हास्यमतो द्रषद्यदि यथा नव्यो जिनैर्नाषितः ॥७५॥ अर्थः— एक दिवस नारद मुनि मेघनी पासें आवी कहेवा लाग्यो के, मृत्युलोकने विषे तारो शत्रु मगसेलीयो पाषण छे. ते घणो अहंकार करे छे,अने कहे छे के, मुजने कोइ नेदी न शके. ते वात सांनलीने मेघ पण गर्वें चढी क

पीडिता, राजा वक्ति निरामयं कुरु न्निषण्णो चेत्स निष्कासितः ॥ ७७ ॥

अर्थः—कोइ एक वैद्य शुक्लध्यानथी मरण पामीने व्यंतर देवता थयो. तेनी पाळल तेहनो पुत्र मुरख हतो. तेनें पुत्रना स्नेहें करी ते देवतायें अमृतनो कुंन्न आप्यो. ते अमृतनुं अंजन कस्याथी सकल रोग नाश पामे. माटे ते पुत्र अमृतथी जगतमां सर्वत्र अत्यंत प्रसिद्ध थयो, अने घणुं इव्य मेलव्युं. एक दिवस ते अमृतनो घडो दासीपासें मंगावीने पोतेंज पोताना शरीरने निर्मल कर्युं. एटले अमृतें करी स्नान कीधुं. तदनंतर ते गामना राजानी राणीने कांइक रोग उत्पन्न थवाथी राजायें ते वैद्य पुत्रनें पूछ्युं, के तमारी पाशे निरोगी थवाय तेवुं उंषध छे ते आपो, अने माहारी राणीने निरोगी करो. त्यारें ते वैद्यपुत्रें अमृत ढोली नाखेलुं होवाथी निरोगी करवाने ना कही. त्यारें राजाए कोपायमान थइ तेने गाम बहार काढी मूक्यो. दोहा ॥ अमृतघडो ते नरवपु, नाखे अकारज काम ॥ आलें जन्म तिणें हारीउं, मूर्खवैद्यसम जाण ॥ १ ॥ स्वर्णस्थाले क्षिपति स रजः पादशौचं विधत्ते, पीयूषेण प्रवरकरिणं वाहयत्येधन्नारं, चिंतारत्नं विकिरति कराद्वायसोड्डायनार्थं, यो दुःप्राप्यं गमयति मुधा मर्त्यजन्म प्रमत्तः॥१॥ कथायुगलऊपरें ए काव्य जाणवुं ॥ इति छहोतेरमो दृष्टांत ७७

हवे मुर्ख शिष्यनो सत्तोतेरमो दृष्टांत कहे छे.

॥ शिष्यान्वक्ति विलंबिताः कुह गुरुः प्रोचुश्च वीक्ष्यामहे, तन्नाटयं हि नटस्य नो जिनमते नापेक्षणीयं कदा ॥ सत्यं तेऽपि तथेति सद्गुरुतटं प्राप्तास्तदा कालके, नत्वा सोपि कृतं न्यपेधि तमतो नाग्रे त्वया दृश्यताम् ॥७८॥

अर्थः—एकदिवस गुरु पोताना शिष्यने कहे छे तुं एटली वार क्यां रोकायो हतो? असुरो केम आव्यो शिष्ये कह्युं जे रस्तामां नाटकीया रमता हता ते जोवा माटे ऊन्नो रह्यो हतो त्यारें गुरुयें कह्युं जे आपणा जैन शाशनमां वादी नवाइआना नाटक प्रमुख जोवा निषेध्या छे. त्यारें शिष्यें ते वात कबुल करी गुरु समीपे आलोच्युं. अने नाटक न जोवानुं गर्ही करी पडिवज्युं वली केटला एक दिवस गयानंतर पाछो वोहोरवा गयो. त्यां वार लागी त्यारें गुरुयें पूछ्युं के केम आज पण विलंब थयो? त्यारें शिष्य बोल्यो के हे गुरुजी? आज नाटकिणी नो नाटक जोवा ऊन्नो रह्यो हतो. त्यारें गुरु कहे के तें मारी पाशें नाटकीया न जोवानुं पडिवज्यो हतो

ने वली केम जोवा रोकायो, त्यारे शिष्य वोल्यो के माहाराज ! में तो ना टकीया जोवा पडिवज्या हता परंतु नाटकणी जोवी पडिवजी नथी. त्या रें गुरुयें कह्युं के नाटकीया न जोवा पडिवज्या तो तेमां नाटकीपण आ वीगइ. कह्युं बे के श्लोक ॥ मुर्खा वरा निःकपटा, ये साधवो नवंति ते ॥ आलोचयंति गुर्वंते, यथा नाटकपश्यकः ॥ १ ॥ ७८ ॥ इतिदृष्टांत ॥

हवे मूर्ख पुत्रनो अष्टोत्तरमो दृष्टांत कहे बे.

॥ दातव्यं पितरौ न वत्स कथितः प्रत्युत्तरं नो कदा, गेहाद्बौ विगतौ तदा जडमतिर्द्वारे जटित्वा स्थितः ॥ तावागत्य सुतं ब्रवीति वहुशो नोद्घाट पो द्घाटति गेहे ह्युत्तरतोः कृतं त इह किं सोऽवग् युवाभ्यां मतम् ॥७ए॥ अर्थः- कोइएक माता पितायें पोताना अविनीत पुत्रने शीखामण आपीजे हे पुत्र कोइ दिवस माता पिता शामुं वोलवुं नहीं, अने पाबो उत्तर पण दें वो नहीं. ते पुत्रें कबुल कर्युं परंतु ते पुत्र जडमति हतो. तेणें ते वचन म नमां राख्युं. पढी एक दिवस माता पिता कांइक कामनें माटे बाहेर ग या, त्यारें पबवाडेथी ते जडमति वालो पुत्र घरनां कमाड वंध करी मांहेवे सी रह्यो. ते जेवारें मातापिता पाबा घेर आव्या त्यारे पुत्रने कह्युं के हे पुत्र ! कमाड उघाड ? कमाड उघाड ? एम घणा शाद कह्या परंतु ते मूढमती वालो पुत्र बोल्यो पण नइ अने कमाड पण उघाड्युं नहीं. त्यारें मातापि ता बापरेथी चडी नलीयां उतारी घरमां आवीने जुए तो त्यां मूर्ख पुत्र हसतो हतो. त्यारें मातापितायें कह्युं के हे मूर्ख ? जाणतो हतो तो पण कां घर उघाड्युं नही ? त्यारें पुत्रें कह्युं के तमेज मने शीखामण आपी बे, जे मा वाप सामुं बोलवुं नहीं. माटे हुं बोल्यो नहीं. ए अविनीत पुत्रनी कथा जाणवी. कह्युं बे के, श्लोक ॥ जडोपि वक्रगश्चैव, यो नवेद् नुवि मानवः ॥ स श्लाघ्यते नैव लोके, यथानूत् श्रेष्ठिनंदनः ॥ १ ॥ ७ए॥

हवे पुण्य कर्यानुं फल अवश्य थाय ते उपर उंगण्याएंसीमो दृष्टांत कहे बे.

॥ श्वाशुर्ये पथि गन्नता सुमुनये कृत्वाऽष्टमं पारणं, दत्वा स्वेष्टगृहे ग तो हि गृहपो मेने वृषं देह्यवक् ॥ लाहि त्वं प्रचुरं न गेहचलितो लात्वोपला नैर्जरान्, रत्नान्याशु कृतानि वीक्ष्य गृहिणी पित्रा तु रम्यं कृतम् ॥ ८० ॥

अर्थः-कोइएक निर्धन जमाइ पोताना ससराने घेर याचना करवा मा टे पोताना गामथी निकलीने पोताना सासराने गामे जाय बे, तेने मार्गें

चालता एक आठमनो पारणाती मुनिश्वर मळ्यो, ते मुनिनें तेणें पारणुं कराव्युं. पछी ससराना घेर तरफ चालवा मांड्यो, एवामां तेना ससरानी कुलदेवीयें जइ ससराने कह्युं के, तह्यारो जमाइ डुःखीयको तह्यारी पासेंथी ड्व्य मागवा आवे छे. परंतु एणे मार्गमां जे धर्म कर्युं छे, ते धर्म जो तु जनें आपे तो तुं ताह्यरा जमाइनें धन आपजे. एवामां ते जमाइ पण ससराने घेर आव्यो. तेवारें ससरायें कह्युं के, मार्गमां तमे जे पुण्य कर्युं छे ते अमोने आपो, अने धन लीयो. पण जमाइयें ते धर्मनुं पुण्य आप्युं नही अने एमज पाछो वळ्यो. मार्गमां नदी आवी. तेमांथी रूडा रूडा तेजदार कांकरा वीणी लइ तेनो कोथळो नरी मस्तकें चढावीनें पोताना गाम तरफ आवे छे, ते वखत मुनिना अधिष्टित देवें ते सर्व कांकराना रत्न करी नाख्या. पछी जेवारें घेर आव्यो तेवारें स्त्रीयें ते कोथळो उखेळी जोयो, तोमांहे रत्न दीठां. तेवारें कहेवा लागी जे माह्यरा बापें घणुंज रूडुं कर्युं देखाय छे. जेमाटे आटलां रत्नो आपणने आपी दीधां छे. तेवारें ते जमाइयें जाण्युं जे मार्गें धर्म कर्युं साधुने आहार दीधो तेना पुण्योदयथी आ फल प्राप्त थयुं जणाय छे. पछी ते सर्व वात पोतानी स्त्रीने कही. माटे धर्म कर्यो होय तो ते कोइ कालें पण फल आप्याविना रहेज नही. कह्युं छे के ॥ धर्मथकी धन संपजे, धर्मैं शिवसुख थाय ॥ कांकर रत्न जञ्या कीयां, देवें धर्मपसाय ॥ १ ॥ धम्मेण कुलप्पसूई, धम्मेण दिव्वरूवसंपत्ती ॥ धम्मेण धणसमिद्धि, धम्मेण सुविछडा कित्ति ॥ २ ॥ ७० ॥

हवे जे न करवा योग्य होय ते नज थाय तेनो एंशीमो दृष्टांत.

॥ श्रेष्ठयंघ्रौ यदि कंटकं हि निशितं नग्नं तदा सेवकान्, गृह्णीताह पतिश्च चर्म बहुलं लोकः किमर्थं तदा ॥ भूम्याछादनहेतवे परपदत्राणाय तं नाऽधुना, भूतं नैव भविष्यतीति किमु भो ते पादरक्षां कुरु ॥७१॥ अर्थः— कोइ एक मूर्ख शेठना पगमां तीखो कांटो भांग्यो, तेनुं डुःख थयुं. त्यारें शेठें पोताना सेवकोने कह्युं के, गामगामथी जेटलां चामडां वेचातां मळतां होय तेटला लावो. सोंघां होय के मोंघां होय. तेनी परवा नहीं पण चामडां लइ आवो, ढील म करो. ते वात एक बुद्धिमान माणसें सांभळी अने शेठने कह्युं के हे शेठ ! एटलां बधां चामडां लइने शुं करशो ? ए नीच व्यापार छे. ते कोण करे ? तेने शेठे कह्युं के मारा पगमां कांटो भांगो

छे माटे उपकार निमित्तें सघली धरती चामडाथी मढावी काढीयें एट
कोइना पगे कांटो भांगे नही. माटें चामडां लीछ. आ वात सांभली ते
द्धिमान माणसें कह्युं के एम कोइ दिवस बन्युं नथी, तेम बने पण नह
अने बनशे पण नही. माटे आपना आवा गांमा विचार मूकी द्यो. अ
बधा जननी वात पडती मुकीने आप चामडे करी आपना पगनुं रक्ष
करो एज योग्य छे. ते वात शेठनें गले ऊतरी ने तेमज कर्युं. कह्युं छे के
श्लोक ॥ चरणे कंटकाभग्ने, श्रेष्ठिना चिंतितं तदा ॥ जंतुत्राणाय सर्व
रूर्वीमाछादयाम्यहम् ॥ १ ॥ दोहा ॥ अणहुंती कीजें नहीं, कीजें होय
जाण ॥ सेवकें साहेबनें कह्यो, तब समज्यो ते जाण ॥ १ ॥ ८१ ॥

हवे भव्यने तरत उपदेश लागे तेनो एक्याशीमो दृष्टांत कहे छे.

॥ राज्यं धर्मरुचेर्ददौ न च ललौ गछामि पित्रा समं, भूत्वा तापसके
गतौ यदि वनेऽमावास्यकायामवक् ॥ छेत्तव्यं नहि पत्रकादिकमृषिं दृष्ट्वा
धर्मेछको,रक्ष्यं त्वेकदिनं च सोऽनिशमहं श्रुत्वा प्रबुद्धस्तदा ॥८२॥ अर्थः-
जितशत्रु नामा राजायें पोताना धर्मरुची नामना पुत्रनें राज्य आपव
मांम्युं, परंतु तेणें राज्य लीधुं नहीं. अने कह्युं जे हे पिता, हुं पण तम
री साथें आवीश, अने तापस थइस. पछी ते पिता अने पुत्र बेहुजण
नि थया. वननेविषे रहे छे. एकदा अमावास्या आवी. त्यारें मोहोटा
नियें कह्युं के, आज अमावास्या छे. माटे वनमां जई फूल पत्र छुंटशो न
ही एटले अनाकुटी करजो. ते वात धर्मरुची सांभले छे, अने वनमां भ्र
मण करे छे. त्यां वनमां भमतां भमतां धर्मरुचीयें एक साधुनें दीठा. सा
धुने जोइने भला धर्मनो वांछक एवो धर्मरुची कहे छे, जे महाराज ! आ
जें अमावास्यानो दिवस छे, माटे तमो पुष्प फल पत्र छुंटशो नहीं हो !
एवुं सांभली साधु बोल्यो जे हे धर्मरुचि ! अमारे सदा अनाकुटी छे. अमो
कोइ वारें पण पुष्पादिकने चूंटता नथी. ए उपदेश सांभली धर्मरुचि अ
त्यंत प्रतिबोध पाम्यो. कह्युं छे के, श्लोक ॥ गुरूपदेशतो धर्मं, केचिज्जानंति
मानवाः ॥ धर्मरुचेरिवान्येच, जातिस्मरणज्ञानतः ॥ १ ॥ ८२ ॥

मनना परिणाम ऊपर प्रसन्नचंद्र राजानो ब्यासीमो दृष्टांत कहेछे.

॥ नत्वा प्रश्नऋषिर्गमिष्यति नृपो वीरं कुहा पृछति, सोवक्त ह्यधुनैव सप्त
मभुवि हेतोः कुतो हइणात् ॥ पश्चादाशु पुनर्दिवाद्यचरमे देवाः क यांत्युत्सवे,

लब्धं तेन सुकेवलं जिनवचः श्रुत्वैति शं श्रेणिकः ॥८३॥ अर्थः—एकदा श्रेणिक राजा श्री महावीर प्रभुनें पूछे छे के हे महाराज? हमणां प्रसन्नचंद्र राजा दीक्षा लेइ वनमां काउसग्ग ध्यानमां सुर्य सामी दृष्टी राखीने एक पगें उभा छे, माटे जो हमणां आउखो बांधेतो क्यां जाय? भगवानें कह्युं जे प्रथम नरकें जाय पछी बीजी त्रीजी चोथी पांचमी छठी अने यावत सातमी नरकें जाय. एम क्रमे क्रमे पूछतां कह्युं त्यारें श्रेणिकराजा फरी पूछेछे के हे महाराज, एहवा तपस्वी ज्यारें नरकें जाय त्यारें धर्माचरण कोण करशे? ए वात सांभली श्री वीरभगवान कहेछे के ताहारा सुमुख अने दुर्मुख नामना जे दूत तेना मुखनां वचन सांभलीने, मननुं संग्राम करे छे तेथी नरकें जाय. वली पाछुं पूछ्युं के हे महाराज! हमणां आयु बांधे तो ते क्यां जाय तेने भगवानें कह्युं के प्रथम देवलोकें जाय. एम बीजे, त्रीजे, यावत पांचमा अनुत्तरविमान पर्यंत कह्युं. एवामां भगवानना समवसरणथी देवता जवा लाग्या. तेवारे श्रेणीकें पुछ्युं के देवता किहां जायछे? तेने भगवानें कह्युं के प्रसन्नचंद राजऋषीने केवलज्ञान उपन्युं छे. तेनो उत्सव करवाने अर्थें जायछे त्यारे राजाये मनमां चिंतव्युं जे भगवंतनां वचन तो अन्यथा थाय नहीं फरतापण नहोय, निरधार वचन होय पण पहेलो तो नरकमां जवा कह्यो. अने पछी देवलोकमां जवा कह्यो वली हमणां केवलज्ञान उपनुं ते संदेह टालवा भगवानने पूछ्युं तेवारे भगवान कहेछे के प्रथम जे में कह्युं के नरकमां जशे ते ताहरा दुर्मुख अने सुमुख दूतनां वचन सांभली मनोयुद्ध करतो हतो तेणेकरी नरकनो जनार थात पण ते मननो संग्राम करते थके हथिआर सर्व नांखी रह्यो त्यारे विचार्युं के जे अवसरें जे आव्युं तेज हथियार माटे हवे मारा माथानो टोप छे तेज नांखुं. एम धारी माथे हाथ घाल्यो तेवारे माथेतो मुंडित केश लुंचित छे माथे टोप तो देखाणुं नही. तेवारे विचार्युं जे अरे आशुं में तो दीक्षा लीधी छे अने आ संग्राम ते वलीशो मांड्यो छे. एम चिंतवी मनःसंग्रामथी उसरवा मांड्युं. त्यारे देवलोकें जाय एवा परिणाम थया एम करतां अनित्य भावनायें चढ्यो जे आ कोना पुत्र, कोना गाम, कोना गाम, केना कोट, कोहोनुं राज्य, एमां माहारुं कांइ नथी हुं ए सर्व वोसरावुं छुं अने वीर भगवान पासें जइने ए कर्म लाग्युं ते आलोचुं एम भावना

यें मनना पर्याय पलटाणा के तुरत केवलज्ञान उपनुं. ए वात सांभली श्रेणिकराजा प्रसन्न थया कह्युं ठे के ॥ सप्तमायुर्दलं कृत्वा, प्रश्नचंद्रनृपो यथा ॥ संक्षिप्त्वा मनसा सद्यः, केवलं लब्धितो वरं ॥ १ ॥ मन एव मनुष्याणां, कारणं बंधमोक्षयोः ॥ यथा आलिंगिता कांता, तथा नालिंगिता सुता ॥ सप्तमे नरके याति, जीवस्तंडुलमत्स्यवत् ॥ २ ॥ इति त्र्यासीमो दृष्टांत ॥ ८३ ॥

हवे जे मुर्ख होये ते पोताना अवगुण न देखे तेनो च्यासीमो दृष्टांत.

॥ लिप्त्वोर्वीं रविमर्चयत्यविरतं स्वे गोमयेनाबला, विट्युक्तेन किलैकदा ह कुरुते नत्वार्चनं वा रवेः ॥ नासाग्रे करयुग्ममेत्य दिवसे दुर्गंधमायाति सा, हायं गूथमयः खगोदय इतोऽभूत्स्वागुणोऽज्ञायि नो ॥ ८४ ॥ अर्थः—कोइ एक स्त्री नित्य प्रतें गायनां ठाणें करी घर लीपीने पठी नित्य सूर्य देवने पूजे सामा हाथ जोडीने दंम्रवत प्रणाम करे. एम प्रति दिवस करतां एक दिवसें उतावलें पाठली रात्रें ठाणने बदले हाथमां विष्ठा आवी तेणें करी घर लीपी सूर्यने दंम्रवत करतां हाथ जोडतां हाथ नासिका पासें आव्या; तेमांथी दुर्गंध आवी, त्यारे कहेवा लागी के हा इतिखेदे आज जे सूर्य उदय पाम्यो ठे, ते विष्ठामय उग्यो ठे, एवी गाल दीधी. वली कहेवा लागी के, दहाडे दहाडे सेवा करतां पण पापीनो जण्यो साहामो दुर्गंध गंधवा लाग्यो एवी रीतें खोटो सूर्यने दोष आप्यो. परंतु पोतानो प्रत्यक्ष दोष हतो तेनो विचार न कस्यो. तेम जे मूर्ख होय तेपण पारका अवगुण देखे, पण पोतानी नूल कांइ देखे नहीं ! कह्युं ठे के श्लोक ॥ कर्मणां दीयते दोषो, न दोषो दीयते शिवे ॥ यथैकया पुरा दत्तः, सूर्यस्य सूर्यनक्तया ॥ १ ॥

हवे नरसा साथे निरसुं थावुं नहीं तेना ऊपर चोर्याशीमो दृष्टांत.

॥ कृत्वोत्सर्गमलं शिलोपरि मुनिस्तस्थौ हि निर्एजको, वक्त्यागत्य विमुंचतां पटशुचिं कुर्वे ततो नाषणम् ॥ दूरे तेन कृतस्तदार्षिरजकौ लग्नौ गले नेदको, निर्ग्रंथस्य च तस्य नो यदि तयोर्मां रक्ष जाने न तं ॥ ८५ ॥ अर्थः— एक नदि कांठे शिला ऊपर कोइ एक मुनि काउसग्ग ध्यानें उनो रह्यो हतो, तेवामां एक राजानो धोबी आव्यो, तेणे ते साधु ने कह्युं के आ शिलाथी उठ, माहारे आंही वस्त्र धोंवां ठे. तो पण ते मुनि कांइ बोल्यो नहीं. त्यारें ते धोबियें रीशथी ते मुनिने धक्को मारी नीचें नांखी दीधो तेथी ते मुनिने पण रीस चडी, अने बेहुजण मांहोमांहे वाथोवाथें आव्या.

ेमां धोबियें मुनिने मार्यो, अने नीचो पाडी तेनी गाती ऊपर चडी बे
ो. त्यारें ते मुनियें शासन देवतानुं स्मरण कर्युं,के हे देव! तुं मारी रक्षा
कर: त्यारें देवें आवी कह्युं के, आमां हुं कोनी रक्षा करुं? जेमाटे बेहुमां
साधु ते कोण, अने धोबि ते कोण छे, ते कांइ जणातुं नथी. कह्युं छे के
श्लोक ॥ कुत्र गतोसि नो देव, वदेदेवस्तदा मुनिं ॥ मुनिरजकयोर्भेदो, ज्ञाय
ते न मयाधुना ॥ १ ॥ कोयती रजको वा कः, संतोषःपोषवांछकः, ॥ कः
पूज्यो वाह्यपूज्योस्ती, त्येवं न्नेदो न दृश्यते ॥ २ ॥ ७५ ॥

हवे चार वस्तु छे ने नथी ते ऊपर पंच्चाशीमो दृष्टांत कहे छे.

॥ नूपोमात्यमवोचदानय पुरात्त्वंत्वब्धिसंख्यानि किं, मस्त्यस्त्यादिमम
स्ति नास्त्यवरकं नास्त्यस्ति नास्तीतरः ॥ नास्ति श्रेष्ठिपणांगने मुनिवरो व्याधो
नृपं दर्शिताः, तान्वीक्ष्याह किमत्र चापरन्नवे इष्टव्यमेतत्खलु ॥ ७६ ॥

अर्थः—एक राजा प्रधानने कहे छे जे, नगरमांथी चार वस्तु लाव. त्यारें प्रधानें कह्युं जे ते वस्तुनां नाम मुजने कहो. ते वखतें राजायें समस्या कही, ते जेम के प्रथम एक वस्तु तो छे ने छे, बीजी वस्तु छे ने नथी, त्रीजी वस्तु नथी ने छे, अने चोथी वस्तु नथी ने नथी, ए चार वस्तु ल इ आव्य. तेवारें प्रधानें एक शेठ, बीजी वेश्या, त्रीजो साधु, अने चोथो वाघरी, ए चारेने तेडी राजा प्रत्यें चारे वस्तु देखाडी, ते वस्तु जोइने रा जायें प्रधानने पूछ्युं के, ए शुं आण्युं. त्यारे प्रधान कहे छे के, आपें कहे ली चारे वस्तु आणी छे. तेमां आपना चारे प्रश्ननी अनुक्रमें चारे वस्तु जाणवी. जेम के प्रथम शेठने छे ने छे, बीजी वेश्याने छे ने नथी, त्रीजा साधुने नथी ने छे, चोथा वाघरीने नथी ने नथी, एम इहन्नव परन्नवनुं कह्युं. तेवारें राजा समज्यो जे ए प्रधान बुद्धिवंत छे ॥ शेठ हमणां पण सुखी छे, अने दान आपे छे, माटे परन्नवें पण सुख पामशे. तथा वेश्या ने हमणां छे परंतु परन्नवें नथी. त्रीजा साधु नें हमणां नथी, ने परन्नवें पामशे. अने वाघरीनें हमणां पण नथी, ने परन्नवें पण मलशे नहीं. क ह्युं छे के, श्लोक ॥ सेवकस्य परीक्षायै, राज्ञा कथितमानवः ॥ समस्यया स्य चत्वारि. शीघ्रं वस्तूनि मे पुरात् ॥ १ ॥ दोहा ॥ सेवकसुबुद्धि समजीने, आणी वस्तु ज चार ॥ इह न्नव पर न्नव कारणें, सुखडुःख तणो विचार ॥ २ ॥

हवे सांभलतां कटुक पण हितकारक थाय एवा वचननो ढाशछमो दृष्टांत ॥ वीरांते परिवारयुक्तनृपतिं दृष्ट्वा सुरो जल्पति, वीर त्वं मर नृप जीव यदि वा जीवाभय त्वं भव ॥ मा त्वं कालिक जीव रे नरपतिः श्रुत्वा सकोपस्त दा, वीरोऽहं ह्यमृतेप्यधो दिवि वृषे पापे त्वधो यात्यतः ॥ ७७ ॥ अर्थः- श्रीमाहावीरस्वामीने वांदीने तेमनी पासें परिवार सहित बेठेला श्रेणिक राजा वगेरेने जोइने, एक समकित दृष्टि देवता बोल्यो के हे वीर! तुं मर पछी राजाने कह्युं के हे राजा! तुं चिरंजीव, पछी अभयकुमार नें कह्युं के तुं जीव भावेतो मर, वली पासें बेठेला कालिकसूरिया कसाइ ने कह्युं के तुं मरीश मा, अने जीवीश मा. आ वात सांभली श्रेणिक क्रोधायमान थयो, अने कहेवा लाग्यो के अरे, ए कोण मिथ्यात्वी देवता छे? तेने भगवानें कह्युं के ए समकितदृष्टी देव छे त्यारें राजा कहे छे के तमने मर एवुं वचन केम कहे छे? त्यारें भगवान कहे छे जे, हे राजा! मुजने कह्युं जे तुं मर, तेनो अभीप्राय ए छे जे तमो मरशो तो मोक्ष जाशो. वली तुजनें कह्युं जे चिरंजीव तेनो अभि प्राय एछे जे, तुं मरीश तो नरकें जाइश, माटे जीवतो रहे. तेटलुंज सुख. वली अभयकुमारनें कह्युं जे तुं मर भावेतो जीव तेनो अभिप्राय ए छे जे मरशे तो देवलोकें जाशें अने जीवशे तो धर्माचरण करशे. अने कालिकसुरिय नें कह्युं के तुं मरीशमां, अने जीवीश मां, तेनो अभिप्राय ए छे जे जो जीवशे तो नित्य पांचशे पांचशे पाडा मारशे, अने जो मरशे तो नरकमां जाशे एम समजवुं माटे एणे जे कह्युं छे ते सर्व खरुं कह्युं छे ए सहुनुं हित वांछक छे. कह्युं छे के, श्लोक ॥ श्रीमद्वीरजिनादीनां, चतुर्णां सदसि मतः ॥ देवेनानिष्टमिष्टं वा, शब्दं श्रुत्वा स कोपवान् ॥ १ ॥ नृपस्तदा जिनोक्तस्तं, सत्योक्तं सत्यवाद्यसौ ॥ शुभेछकः सुवक्ताच, मदादीनां विशेषतः ॥ २ ॥ इति दृष्टांत ॥ ७७ ॥

हवे स्त्री चरित्र उपर राजा भर्तहरीनो सत्याशीमो दृष्टांत कहे छे.

॥ भर्त्रीशस्य विशा स्त्रियेऽमरफलं नृत्यस्य दत्तं तव, वेश्यायास्तु पतेश्च तेन हि फलं ज्ञात्वापि दृष्टा वशा ॥ तत्काख्याहि तया यथास्ति कथितं श्रुत्वा ह चेद् धिग् भवं, त्यक्त्वा राज्यपदं गतो हि विपिने भर्ता ह्यभूत्तापसः ॥७८॥ अर्थः—भर्तहरी नामा राजानें कोइ एक ब्राह्मणे अमरफल आप्युं हतुं, ते फल राजायें पोतानी प्राणवल्लभा पिंगला नामनी राणीनें आप्युं. ते राणी

वळी अश्वपालक साथें व्यभिचार करती हती, माटे ते तेनें प्राणप्रिय हो
वाथी ते फळ तेने आप्युं. अने अश्वपाळें वळी बीजी पोतानी राखेली वे
श्या हती, तेने आप्युं, अने ते वेश्यायें उत्तमफळ मानीने वळी पाछुं न
तेहरी राजाने आप्युं. ते जोइने राजा विस्मय पाम्यो, अने वेश्याने धम
की दइने पूछ्युं के आ फळ तुं क्यांथी लावी? तेवारें वेश्यायें खरेखरुं अ
श्वपाळनुं नाम कही दीधुं पछी अश्वपाळनें राजायें पूछवाथी तेणे कह्युं के
मनें खबर नथी. पण ज्यारें तेनें मारवानी तैयारी करी त्यारे धूजतो धू
जतो कहेवा लाग्यो के, तमारी राणि पिंगलायें आ फळ मने खावाने आ
प्युं हतुं पण ते फळ में मारी राखेली नायकानें आप्युं छे. अने नायकायें
तमने आप्युं. आवी वात सांभळीनें राजा विचारवा लाग्यो के संसार स्वार्थी
नो छे, एम मानी वैराग्य थवाथी जोग ग्रहण करी, राज्य छांडी, क्षमा
आदरी आत्मसाधन करवा वनमां तापस थइने घणी तपस्या करवा ला
ग्यो. कह्युं छे के, श्लोक ॥ यां चिंतयामि सततं मयि सा विरक्ता, साप्य
न्यमिच्छति जनं स जनोन्यसक्तः ॥ अस्मत्कृते च परितुष्यति काचिदन्या,
धिक् तां च तं च मदनं च इमां च मां च ॥ १ ॥ ७७ ॥

धर्माचरण थोडुं थइ शके तो ते पण करवुं तेनो अठ्याशीमो दृष्टांत.

॥ मिष्टान्नं परमंदिरे जडमतिर्भुक्त्वा गतः स्वालये,आगत्यालयजं वशा शु
भद किं सोऽवक्तदन्नं मुखे ॥ नाद्मयन्याहनि खादिमादि रुचिरं भुक्तं तु यस्मि
न्मया, नत्तर्जीवसि सा तदा ह्ठवशात्सोस्तं गतस्तद्रुषे ॥ ७८ ॥ अर्थः—
कोइ एक मूर्ख कोइ पारके घेर खाजा. लाडु, जलेबी, प्रमुख मिष्टान्न ज
मी आव्यो. पछी बीजे दिवसें पोताने घेर जमवानी वेळा थइ, त्यारें ते
नी स्त्रीयें आवीने कह्युं के हे स्वामी! रसोइ तैयार थइ माटे जमवा उठो.
त्यारे तेणे कह्युं के मिष्टान्न होय तो जमवा उठुं. स्त्रीयें कह्यु के ए तो को
इक दिवसें पारके घेर मिष्टान्न जमवानुं मळे परंतु आपणे घेर तो सामा
न्य अन्नपान मळे, तो पण तेणे कह्युं के मने तो मिष्टान्न मळशे तोज ज
मीश. जे मुखें खाजा, लाडु, घेवर खाधां ते मुखें लुखुं अन्न न खाउं. प
छी तेने सर्व कुटुंबनां लोकोयें कह्युं के तमो घेर जमीने जीवता रहेशो, तो
वळी कोइक दिवस मिष्टान्न पण पाछुं मळशे. पण जीवता न रहेशो तो
मिष्टान्न पण क्यांथी खाशो. एम घणोए समजाव्युं परंतु दुराग्रही मूर्ख ते

वात स्वीकारी नहीं, अने जम्यो पण नही. इहथी उपवास करी छेवटे म रण पाम्यो. माटे धर्म जे कांइ थाय ते करवुं. पण एम आग्रह राखवो न ही जे आटलुंज धर्माचरण थइ शके तो करवुं कयुं छे के, श्लोक ॥ येना ननेन मिष्टान्नं, भक्षितं मयि कावले ॥ तस्मिंस्तु वदने भोज्यं, कथमद्य रसोज्झितं ॥ १ ॥ एवं सोपि भव्यमुक्तः, कदाग्रहग्रसितो नरः ॥ अंते संवा संजातो, दुःखभाजनभाजकः ॥ २ ॥ इति आठ्यासीमो दृष्टांत ॥ ७७ ॥

हवे हंस काक अने वगला सरिखा साधुनो नेव्याशीमो दृष्टांत.

॥ गोचर्यां क गृहे गतेन मुनिना नान्नं गृहीतं ततो न्येनानिं द्यित आ दिमोऽपरमुनिः पप्रच्छ किं वो वृषं ॥ गेहेशा सरला त्रिधा वदति तां हंसैकदग्व कवत्, हंसाभः प्रथमो परो ध्विकसमो, बाले बकाभोऽप्यहम् ॥७०॥ अर्थः- कोइ एक साधु गोचरीयें कोइकने घेर वोहोरवा गयो, त्यां ते ग्रहस्थनी स्त्री यें वोहोरावबा मांमयुं, त्यारे ते साधुयें असुजतानी शंका आणी वहोखुं नही, एमज चाल्यो गयो. पछी बीजो साधु वोहोरवा आव्यो तेणे कांइ विचार न करतां तें अन्न लीधुं तेने वोहोरावनारी स्त्रीयें कयुं जे पेहेलो साधु आव्यो हतो तेणे तो वोहोखुं नही, त्यारें ते बोल्यो जे ते साधु ठग हशे, एम करी तेनी निंदा कीधी. पछी वली त्रीजो साधु वोहोरवा आव्यो. तेने पण ते स्त्रीयें अन्न वोहोरावीने पछी पूछ्युं जे हे साधु! तमारो शो धर्म छे? जे कारण माटे पहेलो साधु आव्यो तेणें तो वोहोखुं नहीं एमज चाल्यो गयो. अने बीजो आव्यो हतो, तेणे वाहोखुं, अने आगलासाधुनी निंदा करी. तेनुं कारण शुं? ते कहो. त्यारे ते त्रीजो साधु कहेतो हवो के हे बाइ? सरल स्वभावनी धणियाणी, श्रीजिनशा सनमां त्रण प्रकारना साधु छे. तेमां एकतो हंससरिखा, बीजा काकसरि खा, अने त्रीजा वगलां सरिखा, तेमां प्रथम जे आव्यो ते साधु हंससरि खो जाणवो. बीजो साधु आव्यो ते काक सरिखो जाणवो, अने हे बाइ? त्रीजो हुं आव्यो ते पोतानुं पेट भरनारो वगला सरिखो छुं. श्लोक ॥ चक्रांगकाकबकरूपधरा विचित्राः, संत्यत्र शासनबले मुनयो बलेन ॥ अंत र्बहिर्विशदभावयुता मलीना, ह्यंतर्बहिर्नविशदोनसितोममादृक् ॥ १ ॥७०॥

जे मनुष्य भवपामी धर्ममां आलस करे ते पश्चात्ताप पामेतेनो नेवुंमो दृष्टांत.

॥ निःस्वः स्वित्सदसीश्वरस्य हि गतो राज्ञा तुतस्मै वरो, दत्तो लाहि गृहा

यदीछसि धनं गेहे गतोऽवक् स्त्रियं ॥ तं साप्यानय खादयामि पुरतो चुक्त्वा प्रसुप्तस्तदो, ह्याप्याप्रेष्यत नाद्यमैक्षत तु नो तन्नाप्तमस्ते रवौ ॥ ए१ ॥
अर्थः—कोइ एक पुरुष जन्मदरिद्री हतो ते एक दिवस राजानी सन्नामां मागवा गयो, तेने राजायें पूछ्युं के तुं कोण छे? तेणे कह्युं जे हुं जन्म दरिद्री छुं. त्यारें राजायें तेने वर आप्युं जे आज सांजे सूर्य अस्त पामे, त्यां सुधीमां मारा नंमारमांथी जेटलुं धन तहाराथी लइ शकाय तेटलुं धन तुं लइ जा. एवां राजानां वचन सांनली ते मूर्ख दरीद्री पोतानी स्त्रीनें पूछवा माटे पाछो घेर आव्यो, अने स्त्रीनी आगल राजायें कहेली वात कही. त्यारें स्त्री बोलीजे तमें ते धन तरत लावो. त्यारें दरिद्री बोल्यो जे पेहेलां जमीने पछी जाइश. त्यारें स्त्रीयें तरत रसोइ तैयार करीने तेने जमाड्यो. जमी लीधा पछी कह्युं के मारुं पेट नराणुं छे तेथी एक निद्रा करीने पछी जाइश, एम कही सुतो घणीवार थइ जाग्यो नही. त्यारें तेनी स्त्रीयें जगाडीने मोकल्यो. पण रस्तामां जतां कोइक नाटक थतुं हतुं ते जोवा उनो रह्यो. तेने जोतां जोतां सूर्य अस्त पाम्यो, तेथी धन पाम्यो नहीं आखो जमवारो सोच करतो दरिद्रीनो दरिद्रीज रह्यो. तेम जे पुरुष डुर्लन एवी मनुष्य जन्मनी योगवाइ पामीने धर्म आचरतो नथी, ते मूढ ने ते नाग्यहीन पुरुषनी पेठें नवांते पश्चाताप थाय छे. कह्युं छे के ॥ नृजन्म डुर्लनं प्राप्य, ये धर्मं नाचरंत्यथ ॥ ते नाग्यहीनवत् मूढा, शोचयंति नवांतके ॥१॥ राज्ञोक्तं मूढ लाहित्वं, श्रीगृहात्स्वं तवेछया ॥ नादपत्प्रमादतो मूढः, धर्मोऽप्येवं सदा विधिः ॥ २॥ राजा जिनेश्वरो ह्यत्र, नृनवः कमलागृहम् ॥ इव्यं दानादिकं ज्ञेयं, सार्त्तंमश्चायुरेव च ॥ ३ ॥ विषयादिषु ये सक्ता, स्तथैव कौतुकादिषु ॥ ते हारयंति सर्वस्वं, मानवा मानमोहिताः ॥ ४ ॥ ए१ ॥

हवे नव्यजीवें कोइपण नियम लेवो ते विषे एकाणुंमो दृष्टांत.

॥ क्रोधः स्याद्यदि सप्तपृष्ठकपदं देयं गृहीतं व्रतं, गेहे नूरिदिनात्समागतवरः शय्यां स्वपुत्रस्त्रियौ ॥ सुप्तौ वीक्ष्य वधाय पृष्ठचलितः पुत्रस्तदा बोधितः, मातर्वेक्ति हि सोपि हंति वचनं श्रुत्वा प्रशांतोऽनवत् ॥ ए२ ॥ अर्थः—वंकचूलें गुरुने मुखें एवुं व्रत लीधुं के जेवारें कोइनी उपर क्रोध उपजे, तेवारे छ सात पगलां पाछा नरीने पछी साहामां माणसने प्रहार करवो. एवुं नियम लइने परदेश गयो पछी घणे दिवसें घेर आव्यो. ते वखत पो

तानी स्त्री अने पुत्र ए बेहु एक शय्यामां सुतां हतां तेने जोइ क्रोध चड्यो तेवारे खड्ग काढीने मारवा चाल्यो. तेटलामां पच्चख्काण लीधेलुं सांभर्युं. पछी तुरत सात डगलां पाछो वल्यो तेटलामां छोकरो मा मा एम कहेतो जाग्यो अने कहेवा लाग्यो, के हे माताजी, मुजने कोइ एक पुरुष मारवा आव्यो छे. ते सांभली वंकचूलने क्रोध उपशांत थइ गयो, अने कहेवा लाग्यो, जे अरें में स्त्री अने पुत्रने मार्यां हत तो केटलुं पाप लागत ? अने पश्चात्ताप करवुं पडत परंतु में लीधेलुं पच्चख्काण आडुं आव्युं, तो क्रोध फल न लाग्युं, अने कोइनो घात पण थयो नहीं. ते माटे भव्य जीवें कांइपण नियम अवश्य लेवो. कह्युं छे के ॥ येन यत्रापि हि स्तोकः, कालस्य नियमः कृतः ॥ तस्यापि निष्फलो न स्यात्, सप्तपृष्ठकचोरवत् ॥१॥८१॥ छकायनी हिंसा न छंडाय तो एक त्रसकायनी छांडवी तेनो वाणुमो दृष्टांत.

॥ भूपो वक्ति जनान् न याति पुरुषस्तं हन्मि योप्युत्सवे, अप्रेः षट् न गताः सुता हि पितरौ हंत्याशु ताल्लो तदा ॥ मुंचालाहि धनं तमाहतुरमूं स्त्वं नाथ पंचाधिकं, त्रिद्व्येकं हि सुतं विमुंचति तथा धर्मानुयोगे मुनिः ॥ ८२ ॥ अर्थः–कोइ एक राजा नगरलोकनें कहे छे के हुं उत्सव मांडुं छुं. माटे गामना लोकमांहेलो जे कोइ ते उत्सव जोवा नहीं आवशे, तेने हुं मारीश. एवुं सांभली सर्व लोक उत्सव जोवाने गया, पण एक शेठना छ पुत्र गया नहीं, ते वात राजायें जाणी. तेवारें छए पुत्रने बांधी मगाव्या. वलतां तेना मात पिता आव्यां अने तेणे राजाने आजीजी करी पुत्रोने छोडाववानुं कह्युं, पण राजायें मान्युं नही. तेवारें धन आपवानुं आमंत्रण कह्युं, तोपण राजायें मान्युं नहीं. त्यारें पांच पुत्रोनें मूकवानुं कह्युं, ते पण राजायें न मान्युं. तेवारें चारने मूकवानुं कह्युं. पछी त्रणने, पछी बेने एम विनंती करतां छेवट एक पुत्रने छोडवानुं कह्युं. त्यारें एक पुत्र राजायें जीवतो मूक्यो. तेम साधु पण धर्मनो उपदेश करी कहे के छकाय जीव मारवानुं बहुज पाप छे, माटे छ काय जीवनी रक्षा करवी. तेम छतां जो छ काय जीव उगरी शके नहीं, तो छेवट एक त्रस जीव तो अवश्य उगारवाज जोइयें. कह्युं छे के, श्लोक ॥ संयतिः पितृसदृक्षः, षट्जीवाः पुत्रसन्निभाः ॥ श्राद्धाः नृपतयो ज्ञेयाः, कुटुंबं मुत्सवान्नियमः ॥ १ ॥ घ्नंति षट्कायजीवान्, कुटुंबाश्च श्रद्धालवः ॥ एषां साधो सदोछेद्यो, रक्षैकं रक्षमाघ्नतः ॥ २ ॥

शुजमां सहु सहाय करे पण अशुजमां न करे तेनुं ज्याणुमो दृष्टांत.

॥ मुष्टयामंत्रति जिकुमीट्ट यदि कणं नो लाति किं मानवं, तं मे देहि हाह चेन्यसचिवेशाग्रे गृहेशोदितं ॥ प्रोचुस्ते म्रियतां परान्हि कथितं व्यातन नाशं गतो, दंम्न तेस्ति तदार्पिता स्वमहिला कार्यं न मे वाक्यतः ॥८४॥

अर्थः—कोइ एक शेठने घेर एक जीखारी जीख मागवा आव्यो. शेठें ते ने मुठी जरी अन्न देवा मांमयुं. आमंत्र्यो पण तेणे लीधुं नहीं. तेवारें शेठें तेने कह्युं के शुं तुं घरना माणसोने लइ जवाने विचारतो होय तो कहे? जीखारी बोल्यो के जो हवें पड्यो तो हुं मनुष्य पण लइ जाउं, एम कही शेठना घेर आगल सुतो. तेवारें गामना अधिकारी जे शेठ, कोटवाल, मेता, प्रधान, व्यवहारिया तथा राजा प्रमुख सर्वेंनी आगल जइने शेठें कह्युं के, ए जीखारी घरनां माणस मागे बे, नहीं तो घर आगल मरवाने तैयार थयो बे. तेने सघलायें कह्युं के मरे तो मरवा द्यो. एम ते शेठें सर्वेना मनना जाव लइ लीधा. फरी क्षणेकने आंतरें सर्वेनी आगल जइ बल करीने कह्युं के, एतो मरण पाम्यो. ते सांजली सर्व कोइ बोल्यो के तहारे माथे मनुष्य मार्यानुं खून बेठुं माटे दंम आपतां पण बगरशो नहीं. ते शेठ पाबो घेर आवी पोतानी स्त्री ते जीखारीने देवा लाग्यो. तेणे कह्युं के माहरे स्त्रीनो खप नथी. महारे तो ए मा बेहेन समान बे. एम सहु शुजना सहायक बे. पण अशुजनो कोइ सहायक नथी॥ शुजे कार्ये हि सर्वस्य, सर्वे संति सहायकाः ॥ अशुजे न शतः कश्चित्, धनदश्रेष्ठिनो यथा ॥ १ ॥

हतो ? तेणे कह्युं के हुं स्वर्गे गयो हतो तेने सर्वे पूछ्युं के त्यां तुं शुं खातो हतो तेणें कह्युं के हुं महोटा मोदक खातो हतो अने सुखी हतो. तेने कुटंबी सर्वे कहेवा लाग्यां जे अमोने पण तिहां लइजा. पछी बीजे दिवसें सर्वे कुटंबीउं आवी वाडीमां बेठां. पछी गाय आवी अने चरवा मांमी. ते ज्यारें चरी रही त्यारे ते गायने पुंछडे पहेलो पोते वलग्यो. तेना पगे बीजो वलगो, वली बीजाना पगें त्रीजो वलगो, एम सर्वे जण वलग्या अने गाय आकाशें चाली, तेनी पछवाडे सहु खेंचाता चाल्या. ते जेवारें अर्द्ध मार्गें आव्या. तेवारें जेणे सर्वथी उपरें गायनुं पुछडुं काल्युं छे, तेने एकजणें पूछ्युं के तमें स्वर्गमां लाडु खाधा ते केवडा महोटा हता? ते वारें ते लाडुनो प्रमाण देखाडवा माटे पोताना हाथ पोहोला करतांज सर्वजण नीचे धरतीयें पडी मरण सरण थइ गयां. माटें वगर समयें प्रश्न पूछवुं नहीं. कह्युं छे के, श्लोक ॥ विचार्य वेला वक्तव्यः, संदेहो न यथा तथा ॥ दृष्टांतोऽत्र स्वर्गधेनुः, पुच्छलग्नो जटिव्रजः ॥ १ ॥ सर्वेऽपि लोन्निनो यत्र, मंदबुद्धिं गुरुं श्रिताः ॥ तत्र तैर्नानुगैर्नाव्यं, तां श्रुत्वा मोदकां कथां ॥ २ ॥ ८५ ॥

हवें धननो गर्व न करवा उपर पंचाणुमो दृष्टांत कहे छे.

॥ कश्चिद्वाढ्यनरो दरिद्रपुरुषं हास्यं च मार्गेऽकरोत्, दत्वा तालपुटं निरीक्ष्य निकटे धीरस्तदा वक्ति तं ॥ किं रे द्रव्यमदं करोषि हि गुरोर्वाक्यं श्रुतं नो त्वया, पश्य त्वं जलयंत्रके जलघटी तद्भवे स्याद्धनम् ॥८६॥ अर्थः— कोइएक धनवान् पुरुष हतो. ते कोइ दरिद्री पुरुषने मार्गमां जोइ मनमां अहंकार आणी ताली दइ हसवा लाग्यो. ते वखत कोइक पंमित पुरुष तेनी पासेथी चाल्यो जतो हतो, तेणें ते धनवानने कह्युं के तुं मूर्ख दे खाय छे. जे माटें द्रव्य नो अहंकार करे छे. पण तें सुगुरुनां वचन सांन्ल्यां देखातां नथी. तेम कोइ न्नला माणसनी तें संगत करेली होय एम पण देखातुं नथी. जोके न्नाइ अरहट्टनी घडी अरहट्ट फरवाथी पाणीयें न्नराय छे अने वली खाली थाय छे तेम धन पण अस्थिर छे, ते निरंतर रहेनार नथी. माटें ताहारे अहंकार करवो नहीं. कह्युं छे के, श्लोक। आपजतान् हससि किं द्रविणांध मूढ, लक्ष्मीः स्थिरा न न्नवतीति किमत्र चित्रम् ॥ किं तन्न पश्यसि घटीजलयंत्रचक्रे, रिक्ता न्नरंति न्नरिताः पुनरेव रिक्ताः॥१।

हवे सर्व शास्त्र सांभळवानुं सार परोपकार छे ते उपर एक पंमित अने राजानो मळी छन्नुमो दृष्टांत कहे छे.

॥ नृत्वा कोपि कविस्तदा वृषशतेष्वीशांतिके पंचसु, संप्राप्तो यदि पृछती ति किमिदं तं प्राह सत्पुस्तकम् ॥ श्रोतव्यं नवता क्रमो न सकलं श्रोतुं हयारोहणं, कृत्वा यामि नृपं हि वृत्तशकले यत्कोटिशास्त्रैर्मतम् ॥ ए७ ॥

अर्थः—कोइ एक पंमित पाचशें पोठ पुस्तकनी नरी साथें लइ एक राजा नीपासें आव्यो. ते वखत ते राजा घोडाने पेगडे पग दइ स्वार थइ बाहार जवा तैयार थयो. त्यारें ते पंमित आवी आशीर्वाद दइ उनो रह्यो. तेनें राजायें पूछ्युं जे आ पांचशें पोठीमां शुं नर्युं छे? पंमितें कह्युं के, एमां पुस्तको नर्यां छे. ते तमने संनळाववा माटे लाव्यो छुं. माटे हे राजन्! तमे सांनळो. राजा बोल्यो जें एटला घणां शास्त्र सांनळवानी मारी शक्ति नथी. त्यारें पंमितें कह्युं जे सर्व शास्त्र नही सांनळो तो एनो चोथो नाग सांनळो. राजायें कह्युं जे हमणां तो हुं असवार थइ बाहेर जाउं छुं, माटे ताहरे जे कहेवुं होय ते आटलाज वखतमां कही दे. पंमितें कह्युं के, पांचशें पोठी पुस्तकोमां जे परमार्थ छे ते बे पदमां हुं तमने कहीश, ते तमे ध्यान दइ सांनळो. श्लोक ॥ श्लोकार्द्धं च प्रवक्ष्यामि, यडुक्तं ग्रंथकोटिनिः ॥ परोपकारः पुण्याय, पापाय परपीडनम् ॥ १ ॥ एटले परोपकार करवो ते पुण्य छे. अने परने पीडा उपजाववी ते पाप छे. ए कोटिग्रंथोनो सार छे. एवुं पंमितें कह्युं ते सांनळी राजा खुशी थयो. इति छन्नुंमो दृष्टांत समाप्त ॥ए७॥

हवे सामायिकमां समनाव राखवा उपर सताणुमो दृष्टांत कहे छे.

॥ युद्धं पांमुसुतैर्विधाय दमदंतः सार्द्धसत्रव्रतं, तस्थौ तद्विपिने समीक्ष्य मुनिपं तत्रागताः पांमवाः ॥ पश्चात्कौरवकास्तमश्मनिकरैर्हत्वा गतास्तद्वपु, स्तद्भावः सदृशोऽनवत्तडुपरीत्येवं तु सामायिके ॥ ए८ ॥ अर्थः—पांमुराजाना पुत्र पांच पांमवोनी साथें दमदंत राजायें युद्ध कर्युं, तेमां पांमवो हार्या, नाशी ने कोटमां पेठा. केटलाएक दिवस पछी दमदंत राजायें वैराग्य पामी दीक्षा लीधी. एकदा दमदंतमुनि पांमुराजाना नगरना उपवनमां जइ काउस्सग्गें रह्या. ते वनने विषे पांमवो क्रीडा करवा आव्या, तिहां मुनिने जोइने तेना गुणग्राम कर्या. पाछळथी सो नाइ कौरवो आव्या, तेणें मुनिने देखी क्रोध करीनें सर्व जणें पछरा मार्या, तेथी मुनिनुं शरीर

॥ स्नानार्थं जलमाहरन्निजसुतं दृष्ट्वावदत्तं प्रसूः, मूढस्त्वं कथमा शास्त्रसकलं ज्ञात्वागतः सा पुनः ॥ नार्थीनं यदि दृष्टिवादमखिलं श्रुत्वा क तत्तोशलो, गत्वा पाठय नं मुनिं मम तमो नृत्वान्नवज्ञो वग्म् ॥ ९९ ॥

अर्थः—कोइ एक ब्राह्मण जणीने घेर आव्यो, तेवारें स्नानने अर्थे पाणी मगाव्युं. तेणें एक घडो जरेलो आण्यो ने जोइ पंमितें कह्युं के मारुं स्नान एम न थाय. वडा जरी जरीनें माहरे मस्तके नांख्यो तो स्नान थाय. त्यारे तेनी मातायें कह्युं के तुं मूढ रह्यो देखाय ठे,जण्यो जणातो नथी. तेवारें पुत्र कहेवा लाग्यो के, हुं सघलां शास्त्रो जणी गणी विचारी चर्चा धारीने आव्यो छुं. तो हुं मूर्ख केम छुं? त्यारें मा बोली के, तुं ज्यांसुधी दृष्टिवाद नथी जण्यो, त्यां सुधी कांइ जण्यो कहेवाय नहीं. ते सांजलीनें ते विचारवा लाग्यो जे ए ग्रंथ कोण जणावशे? मातायें कह्युं जे तुं, तोसली आचार्य पासे जा ते जणावशे त्यारें तेणे तेमनी पासें जइने कह्युं,जे मने दृष्टिवाद जणावो? गुरुयें कह्युं जे तुं अमजेवो थाय तो तने जणावीयें. त्यारे ते साधु सरखो थइने जण्यो अने जणीने श्रेष्ठ पंमित थयो, पठी समजीने फरीनें दीक्षा लीधी. अर्थ सर्यो. कह्युं ठे के ॥ किं ताए पढियाए, पयकोडीए पराजूयाए ॥ जं इत्तियं न नायं, परस्स पीडा न कायव्वा ॥ १ ॥ ॥ ९९ ॥ ए विद्या जणवा उपर अठाणुमो दृष्टांत समाप्त ॥

हवे सर्व दानमां महोटुं अजयदान ठे ते उपर एक राजानी चार राणीयोनो नवाणुंमो दृष्टांत कहे ठे.

॥ स्त्रीणामिष्टवरं कदा नृपतिना तुष्टेन दत्तं च तं, प्रोचुस्ता हि वरं हरं न वधतां ज्येष्ठैकधस्त्रोऽर्पितः ॥ तस्य स्वे महिमा तया कृत इतो द्वाभ्यां च तद्वत्परे, स त्रातश्चरमा तदा कलिरजूत्स्तेनेन ता वारिताः ॥ १०० ॥ अर्थः—एक दिवसें कोइ एक राजा पोतानी चार राणीयो उपर तुष्टमान थयो,